पर्यावरण, समाज एवम नये शोध

लेखक :

आचार्य रत्न लाल वर्मा

(पूर्व अधिकारी)

पर्यावरण, समाज एवम नये शोध

लेखक एवं प्रकाशक : आचार्य रत्न लाल वर्मा (पूर्व अधिकारी)
मकान न. 245, बार्ड 5
(राजकीय चिकित्सा महाविद्यालय अस्पताल के सामने)
हमीरपुर (हि० प्र०)
177001 (भारत) India

सर्वाधिक लेखक के पास सुरक्षित

All rights reserved with writer and ISBN number 9789353461829 has also been aloted by gov. of India. No part may be reproduced without the written permission of Author. OR Can USE by quoting the name of Author and this Book.

प्रथम संस्करण 2017

मूल्य गैर व्यावसायिक
ज्ञान प्रसार हेतु (Non Commercial)

संपर्क सूत्र : चलभाष 09418023864
E-mail : rattanlal_80@yahoo. com.

संक्षिप्त परिचय

नाम	आचार्य रत्न लाल वर्मा
जन्मतिथि	18-10-1940
जन्म स्थान	गांव व डाकघर बिझड़ी, तबका जिला कांगड़ा (पंजाब) अब जिला हमीरपुर (हिमाचल प्रदेश)
पता	बार्ड न. 5/245, राजकीय चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल के सामने, हमीरपुर (हिमाचल प्रदेश) 177001
दूरभाष (चलभाष)	094180-23864
शैक्षणिक योग्यता	स्नातक (पंजाब विश्वविद्यालय) पर्यावरण प्रबन्धन पर पाठ्यक्रम पूर्ण किया। परियोजना क्रियान्वयन, मूल्यांकन एवं समीक्षा प्रणाली पर पाठ्यक्रम पूर्ण किया। पत्रकारिता में डिप्लोमा। सरकार तथा अन्य संस्थाओं द्वारा आयोजित अनेकों राष्ट्रीय एवं राज्य सेमिनारों में भाग लिया।
कार्यक्षेत्र	पूर्व अधिकारी अध्ययन, लेखन, शोध, समाज सेवा तथा पर्यावरणीय जागरूकता।
सम्मान एवं उपाधियां	समाज तथा पर्यावरण के क्षेत्र में उच्चकोटि के उत्कृष्ट कार्यों के लिए अनेकों राज्य, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा 24 बार सम्मानित तथा उपाधियों से विभूषित। शताब्दी रत्न, पर्यावण रत्न, राष्ट्र सचेतक, आचार्य, मणिरत्नम, श्रेष्ठ पर्यावरण सेवी पुरस्कार, हिमाचल केसरी, रामधारी सिंह दिनकर सम्मान, साहित्यश्री, हिन्दीभूषण, सुभद्रा कुमारी चौहान सम्मान, हिन्दी रत्न, रोटरी इन्टरनेशनल आदि सम्मानोपाधियों से विभूषित।

उपलब्धियां : समाजसेवा एवं पर्यावरण के क्षेत्र से संबंधित उपलब्धियों का विवरण जो क्रम 2 से 6, 8 से 13 में दिखाई गई हैं तथा जिन्हें जिलाधीश हमीरपुर हि. प्र. द्वारा करवाई गई प्रमाणिकता की जांच में उच्चकोटि की उपलब्धियां पाया गया है। उपायुक्त हमीरपुर (हि. प्र.) ने उपलब्धियों के प्रमाणित होने के बाद पदमश्री पुरस्कार देने की अनुशंसा भी दो बार अपने पत्रांक DCH/Ma-2013.9269 दिनांक 4.10.2013 तथा DCH/M.A. 2013.5967 दिनांक 2.8.2014 द्वारा प्रदेश सरकार को भेजी थी। प्रमाण खण्ड 10 में चित्रित हैं। बिन वेतन, बिन अनुदान, बिन जनभींड़ एवं बिन चंदा प्राप्त इन उपलब्धियों के प्रमाण भी पुस्तक के संबंधित खण्डों में चित्रित किए गए हैं।

1. पर्यावरण के वास्तविक विस्तृत अर्थ तथा पर्यावरणीय समस्याओं के वास्तविक मूल कारण (खंड–1)

2. भूकम्प के समय हिमाचल प्रदेश की जनता के लाखों लोगों की जान-माल की सुरक्षा के हित में 10 वर्षों तक शांतिमय लम्बा अभियान चलाकर हिमाचल प्रदेश सरकार से कानून बनवाने में सफलता प्राप्त की। वर्ष 2010 में देश और विदेश के कई प्रमुख प्रतिष्ठित समाचार पत्रों के सम्पादकीय पृष्ठों पर इस उपलब्धि की विस्तारपूर्वक चर्चा हुई और भूरि–भूरि प्रशंसा की गई। (खंड–3)

3. पॉलीथीन के प्रदूषण को कम करने के लिए ऐसे थैलों पर वर्ष 2003 में सरकार से प्रतिबन्ध लगवाया। (खंड–4)

4. पारिस्थितिकीय तन्त्र तथा किसानों की फसल की रक्षा के अहिंसक समाधान के लिए स्वयं किए सर्वेक्षण के आधार पर परियोजना तैयार कर सरकार को दी। 4 वर्षों की निरन्तर पैरवी करने के बाद अन्ततः सरकार ने यह स्वीकार कर अपने अधिकारियों को इसके कार्यपालन के लिए आदेशित कर दी। (खंड–5)

5. वनों की आग पर तुरन्त नियन्त्रण के सुझाव सरकार के विभिन्न अंगों को दिए जो सरकार ने स्वीकारे और कार्यान्वित किए। (खंड–5)

6. क. सैंकड़ों लोगों तथा हजारों पशुओं की मृत्यु का कारण बनी सतलुज नदी की रहस्यमयी भयंकर बाढ़ के वास्तविक कारणों को उजागर कर जनता के सामने रखा, संदेहों को विराम दिया। (खंड–2)

ख. मानवीय क्रियाओं के कारण पिघलते हिम पर्वत, हिम ध्रुव तथा आगे बढ़ता पानी, समय पूर्व बूढ़ा हुआ हिमालय-नया शोध निष्कर्ष।

ग. पृथ्वी के ध्रुवों का सरकना, विश्व के समय का बदलना, ऋतुओं में परिवर्तन आदि का महत्वपूर्ण शोध एवं निष्कर्ष विश्व के कई वैज्ञानिकों से पहले प्रकाशित किया है। (खंड-2)

7. पर्यावरण हितैषी विकास तथा लोगों की सुरक्षा के हित में मुद्दा उठाकर हिमाचल प्रदेश सरकार से योजना क्षेत्रों का पुनः परिसीमांकन करवाया। 52 गांवों को पुनः योजना क्षेत्र में डलवाया। अन्य उपलब्धियों की प्रमाणिकता के बाद प्राप्त उपलब्धि (खण्ड-7 क)

8. मनुष्य की वर्तमान 21वीं शताब्दी में संभावित विलुप्ति का नया शोध निष्कर्ष विश्व पटल पर कई प्रसिद्ध वैज्ञानिकों से पहले ऊजागर एवं प्रकाशित किया। (खंड 8 घ)

मनुष्य के घातक युग में प्रवेश का विश्व पटल पर नया शोध निष्कर्ष ऊजागर एवं प्रकाशित किया। (खंड 8 ग)

9. प्राकृतिक आपदाओं की तीक्ष्णता बढ़ने तथा वर्तमान शताब्दी में उनके अधिक आने का नया शोध निष्कर्ष। (खण्ड-3)

10. लाखों लोगों की जान-माल की सुरक्षा के हित में हिमाचल प्रदेश के जिला बिलासपुर में पड़ती गोविन्द सागर झील के सेस्मिक जोन को बदलवाने के लिए कार्य। (खण्ड-7 ख)

ज्वालामुखियों के अधिक फूटने तथा उनके नये स्थानों पर फूटने का नया शोध एवं निष्कर्ष प्रकाशित किया। (खण्ड-7 ग)

11. हिमाचल प्रदेश के हमीरपुर जनपद को देश का दूसरा पूर्ण साक्षर जनपद का गौरव दिलाने के लिए स्टार प्रचारक के रूप में बिन भत्ता, हजारों किलोमीटर पैदल चलकर पूरे जिले में सर्वाधिक कार्य किया। 26-12-1994 को यह जिला पूर्ण साक्षर घोषित होकर भारत का दूसरा पूर्ण साक्षर जिला बन गया जो आज शिक्षा का केन्द्र बन चुका है। (खंड-10)

12. कन्या भ्रूण हत्याएं रोकने तथा कुप्रथाओं का रूप लेती रस्मों को स्वयं भी तोड़ा। (खंड-10)

13. क. पिछले 37 वर्षों से सामाजिक कार्यों के अतिरिक्त, पर्यावरणीय समस्याओं, सेवाओं, समाधानों को लेकर लाखों लोगों में जागरूकता बढ़ाते अनेकों लेख, शोधलेख कई राज्यों के प्रतिष्ठित समाचार पत्रों के सम्पादकीय पृष्ठों, पत्रिकाओं, स्मारिकाओं तथा पुस्तकों में निरन्तर प्रकाशित होते आ रहे हैं।

ख. विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में जाकर पर्यावरणीय जागरूकता बढ़ाई।

14. वर्ष 1978-1979-1980 में बिझड़ी में आँखों के निःशुल्क ऑप्रेशन तथा हमीरपुर में रक्तदान के शिविर लगवाए। उस समय ब्लड बैंक की व्यवस्था हमीरपुर (हि.प्र.) में नहीं थी। (खंड-10)

15. भारत में हो रही किसान आत्म-हत्याओं के वास्तविक कारणों को उजागर कर किसानों का आर्थिक संतुलन बैठाने के सुझाव केन्द्र सरकार के समक्ष रखे। (खंड-9)

16. बढ़ते वाहन घटता जीवन (खण्ड-6)

विषय सूची

खण्ड	क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ
1.	1.	**पर्यावरण, विकास और घातक मानवीय लालच - नई परिभाषाएं आदि**	1-11
2.	2.	**मानवीय क्रियाओं के कारण पिघलते हिम पर्वत, हिम ध्रुव, प्रभावित होता भू-सन्तुलन, रहस्यमई प्राणघातक बाढ़ों के कारण तथा नये शोध निष्कर्ष**	12-38
	2.1	साक्ष्य एवं प्रमाण	15-21
	2.2	पर्वतों का कटता सीना और पर्यावरण	22
	2.3	हिमालयी पर्यावरण खतरे में	27
	2.4	फिर आ सकती है भयंकर बाढ़ डगमगा सकता है सन्तुलन भी	34
	2.5	पर्यावरण और पिघलते पर्वत	36
3.	3.	**धरती पर अंधाधुंध मानवीय क्रियाएं, भूकम्पीय आपदाएं, लोगों की जान-माल की सुरक्षा हेतु कानून निर्माण करवाना, कानून निर्माण करवाने संबंधी अभियान की रूप रेखा**	39-109
	3.1	कानून निर्माण करवाए जाने के सरकारी प्रमाण एवं साक्ष्य	47-57
	3.2	पर्यावरण, हम और भूकम्प	58
	3.3	हिमालयी क्षेत्र में बहुमंजिले निर्माण का निर्णय कितना सही कितना घातक	63
	3.4	भूकम्प को न्योता देते हिमाचल के बहुमंजिला भवन	66
	3.5	बांध भी बनेंगे तबाही का कारण	68
	3.6	हिमालयी पर्यावरण के लिए घातक बहुमंजिलता निर्माण	70
	3.7	पर्वत, भवन और भूकम्प	72
	3.8	कांगड़ा के भूकम्प की अनदेखी से होगी भारी तबाही	74
	3.9	भूकम्प-ऊंचे भवन निर्माण पर नियन्त्रण आवश्यक	76
	3.10	खतरे में देव स्थानों का मौलिक स्वरूप	80

3.11 ऊंचे निर्माण पर्यावरण के लिए घातक 82
3.12 भूकम्प की दृष्टि से हिमाचल संवेदनशील 85
3.13 भूकम्प के प्रति लापरवाह होते लोग 88
3.14 बेढंगा निर्माण पर्यावरण के लिए घातक 91
3.15 पर्यावरण तथा रिटैंन्शन पॉलिसी 94
3.16 बन्द हो प्राणघातक निर्माण 97
3.17 सुरक्षित नहीं हिमाचल 100
3.18 भूकम्प का कंपन और आपदा प्रबन्धन 103
3.19 आपदा प्रबन्धन, हम और भूकम्प 106

4. 4. **प्लास्टिक के थैलों का प्रदूषण, इनकी बिक्री और प्रयोग पर प्रथम प्रतिबन्ध सम्बन्धी सामग्री** 110-129
4.1 पॉलीथीन और कैसीनों के प्रदूषण का प्रहार 112
4.2 कैसीनों के दुष्प्रभाव से आंतकित महाभारत की धरती 117
4.3 पॉलीथीन पहुंचा गली-गली 120
4.4 प्रदूषण बढ़ाते हैं प्लास्टिक के झण्डे 122
4.5 जल संकट को गहरा देगा सड़कों पर बिछता प्लास्टिक का कचरा 125
4.6 प्रमाण एवं साक्ष्य 127-129

5. 5. **पारिस्थितिकीय तन्त्र, वन्यप्राणी समस्या के अहिंसक समाधान की परियोजना जो सरकार ने स्वीकार कर कार्यरुप देने हेतु अपने वन्यप्राणी अधिकारियों को आदेशित कर दी। वनों की आग बुझाने के सुझाव जो सरकार ने स्वीकारे। विवशताएं एवं व्यवधान।** 130-174
5.1 परियोजना आदि की सरकारी स्वीकृति एवं आदेश सम्बन्धी सरकारी साक्ष्य एवं प्रमाण 137-143
5.2 वनों की सिकुड़न से आई वन्य प्राणियों पर आफत 144
5.3 हिमाचल में जलते वन और वन्य जीव 146
5.4 मनुष्य के लिए घातक पारिस्थितिकीय अंसतुलन 149
5.5 फसल भी बचेगी और बंदर भी 152

5.6 डगमगाता पारिस्थितिकीय संतुलन 156

5.7 लालच ने पशु-पक्षियों को मारा-पर्यावरण बिगाड़ा 159

5.8 वनों को आग से बचाने में हम कितने गंभीर ? 162

5.9 Project to Protect Immediately the crops without Killing Monkeys 166

6. 6. बढ़ते वाहन-घटता जीवन 175-188

6.1 काफिलों में बढ़ते वाहन घटते धरती और वन 177

6.2 मौत के पैगाम वाहन 183

6.3 पर्यावरण हित में लठियाणी मंदली पुल 186

7. 7. पर्यावरण हितैषी विकास, भावी पीढ़ियों की सुरक्षा के दृष्टिगत योजना क्षेत्रों का पुनः परिसीमांकन करवाना, 52 गावों को पुनः उसमें डलवाना, गोविंद सागर झील के सैस्मिक जोन को बदलवाने हेतु कार्य तथा नया शोध-निष्कर्ष 189-202

7.1 हिमाचल प्रदेश सरकार से योजना क्षेत्रों का पुनः परिसीमांकन करवाया। 52 गावों को सम्मिलित करवाया 190

7.2 सुरक्षात्मक उपायों हेतु गोविंद सागर झील के सैस्मिक जोन को बदलने का मुद्दा। इस हेतु कार्य 191

7.3 ज्वालामुखियों के फूटने का नया शोध एवं निष्कर्ष 192

7.4 भूकम्प न सही हानि रोकें। 193

7.5 उपलब्धी के सरकारी साक्ष्य एवं प्रमाण 196-202

8. 8. पर्यावरण के अन्य अवयव, जलवायु, पेड़-पौधे, धरती की क्षमता, बढ़ता प्रदूषण, जल संकट, ब्रह्माण्ड, ग्लोबल वार्मिंग, त्रुटिपूर्ण परिभाषाएं, नई परिभाषाएं, मनुष्य का आत्मघाती युग में प्रवेश तथा इसी शताब्दी में मानवीय जीवन का संभावित अंत-नये शोध एवं निष्कर्ष 203-345

8.1 पर्यावरणीय समस्याएं, समाधान, नये शोध एवं निष्कर्ष 204

8.2 ग्लोबल वार्मिंग 208

8.3 मनुष्य का आत्मघाती युग में प्रवेश 209

8.4	इसी शताब्दी में मानव की संभावित विलुप्ति का नया शोध एवं निष्कर्ष	213
8.5	धरती पर इसी शताब्दी में मानव की संभावित विलुप्ति के नए शोध एवं निष्कर्षों का उनके प्रकाशन की तिथियों सहित तुलनात्मक अकलन हेतु विवरण	219–226
8.6	मानव की विलुप्ति संबंधी अन्य तुलनात्मक साक्ष्य एवं प्रमाण	227–231
8.7	हम और हमारा पर्यावरण	232
8.8	पर्यावरण का वर्ण	236
8.9	Our Environment	237
8.10	आधुनिकता की होड़ में उपेक्षित हुई प्रकृति	246
8.11	जोन्सवर्ग का विश्व सम्मेलन क्या पर्यावरण को बचा पाएगा।	250
8.12	पेड़ लगाने से परहेज क्यों?	252
8.13	भूमि खनन होगा तबाही का कारण	254
8.14	इसी शताब्दी में छिनेगी मैदानों की हरियाली	256
8.15	एकाएक फटते बादल भविष्य में भारी तवाही मचाएंगे।	258
8.16	हमारी भूमि, हमारा भविष्य	261
8.17	प्रकृति से छेड़छाड़ विकास में बाधक	266
8.18	कहीं लुप्त न हो जाएं पहाड़ों से फसलें	269
8.19	तरसता छोड़ लौटेगा पानी सागर की ओर	272
8.20	जनसंख्या नहीं लालचयुक्त आचरण ने बिगाड़ा पर्यावरण	276
8.21	धरती की क्षमता पहचानने की आवश्यकता	280
8.22	ब्रह्माण्ड के प्रति लालच घातक	283
8.23	जन-जीवन और ग्लोबल वार्मिंग	287
8.24	जल संकट का स्थायी समाधान आवश्यक	291
8.25	पर्यावरण के लिए घातक है सफेदा	294
8.26	जीवन शैली और पर्यावरण	297
8.27	पर्यावरण पर भारी लालच	301
8.28	नाराज प्रकृति का नर्तन जलवायु परिवर्तन	304
8.29	आचरण से उपजा जल संकट	307
8.30	बढ़ती जनसंख्या घटती उत्पादन क्षमता	310
8.31	चाँद मंगल पर उद्योग	314
8.32	सूख जाएंगी नदियां	317

8.33 ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव 320
8.34 जल संकट की आहट 323
8.35 क्यों बदला मौसम 326
8.36 क्या हिमाचल के ग्लेशियर बचे रहेंगे? 329
8.37 आती बाढ़ें, फटते बादल, असहाय मानव 333
8.38 बाढ़ें प्रकृति, समाज और सरकार 337
8.39 पर्यावरण संरक्षण के लिए घर से शुरू हो वृक्षारोपण 340
8.40 आंगन से शुरू हो स्वच्छता 342
8.41 कूड़े-कर्कट से ध्वस्त होता पर्यावरण 344

9. 9. भारत में किसान, आत्महत्याएं फसलों की स्थिति, किसान आत्महत्याएं न रुक पाने के वास्तविक रहस्यमय कारण और समाधान के सुझाव 346-373

9.1 भारत में किसान, उनकी स्थिति, समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव एवं कार्य 347
9.2 समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव तथा कार्य के साक्ष्य एवं प्रमाण 350-351
9.3 गेहूं, धान की फसल इसी शताब्दी में लुप्त हो जाएगी 352
9.4 एक और हरित क्रांति की आवश्यकता 354
9.5 लुप्त हो जाएगा गेहूं 357
9.6 संकट में दाल उत्पादन 360
9.7 उपेक्षित किसान आर्थिक असंतुलन और मंहगाई 363
9.8 आर्थिक सुंतलन के लिए नीति निधारित हो 367
9.9 किसान आत्महत्याएं तथा एक और हरित क्रांति 370

10. 10. कुछ अन्य समस्याओं, समाधानों वाले कार्यों एवं प्रमाणों में से कुछ एक की सांकेतिक झलक 374-400

खण्ड–1

पर्यावरण, विकास तथा घातक मानवीय लालच नई परिभाषाएं

पर्यावरण के कई अवयवों पर खण्ड–8 में भी विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया है।

उत्पत्ति, विकास और ह्रास प्रकृति का शाश्वत नियम है। इसमें मनचाहा अमूल चूल परिवर्तन करना मानवीय सामर्थ्य के दृष्टिगत अत्यंत कठिन है। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश आदि पांच मूल तत्वों या इन में से किसी एक को स्वतन्त्र और प्रकृति से इतर अपने द्वारा मौलिक रूप से सृजित किसी घटक या घटकों के मिश्रण या सहायता से अस्तित्व में लाने की क्षमता का हमारे पास होना अत्यंत कठिन है। परन्तु हमने अपने मनचाहे निरंकुश विकास की यात्रा में प्रकृति प्रदत्त इन तत्वों के मूल गुणों को विकृत कर प्रतिकूल प्रभावोत्पादक अवश्य बना दिया है। यह व्यवहार प्रकृति प्रदत्त ह्रास की प्रक्रिया में तीव्रता ला देने में सहायक बन जाएगा।

इस तथ्य के आलोक में हम जीवनोप्योगी प्राकृतिक अवश्यों एवं संसाधनों के अस्तित्व, उनकी उपलब्धता, उनके मूल गुणों, जनसंख्या के साथ उनके संतुलनात्मक सम्बन्ध तथा समीपस्थ अन्य किसी ग्रह में उपलब्ध संसाधनों के शीघ्र उपभोग की संभावना को समझने के लिए विवश हो जाते हैं। इसी प्रकार हम नये किसी सूर्य, चांद, धरती आदि के निर्माण में मानवीय असमर्थता को समझने के लिए भी विवश हो जाते हैं। धरती सहित इन आकाशीय पिंडों की वास्तविक संरचना इनके भीतरी कारणों, आन्तरिक और बाहरी प्रभावों को समझने के साथ-साथ उनके हम पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव को जानने के लिए भी विवश हो जाना हमारे लिए स्वाभाविक रूप से अनिवार्य हो जाता है।

अपरिवर्तनीय प्राकृतिक सीमाओं का यह अर्थ भी नहीं है कि मनुष्य द्वारा अनुसंधानों, आविष्कारों एवं प्रगति का सिलसिला थम जाना चाहिए या इसकी गति धीमी पड़ जानी चाहिए। यहां इतना अवश्य समझने और उस पर चलने की आवश्यकता तो पड़ ही जाती है कि हम किसी लम्बे काल खंड के पश्चात अपने प्रयासों को मिलने वाली सफलता की संभावना या कल्पना में कहीं निरकुंश मानवीय लालच के कारण समय से पूर्व ही धरती पर वह सब कुछ बिगाड़ या मूल रूप में अनुपलब्ध न कर डालें जो हमारे प्रयासों के सफल न होने की अवस्था में भी हमें तथा भावी पीढ़ियों को जीवन चलाने के लिए चाहिए।

ऐसी अवस्था में समृद्धि की व्याख्या के लिए इस सिद्धान्त का प्रतिपादन अब आवश्यक हो गया है-

''धरती पर मनुष्य को विवेकपूर्ण आचरण एवं व्यवहार के साथ अन्न-धन, सुख-सुविधाओं की वृद्धि, मूल गुण के साथ तथा

अपरिवर्तनीय प्राकृतिक सीमाओं के भीतर करनी चाहिए। समग्र, मानवीय भाईचारे, वांछित जीव-जातियों के वर्तमान एवं भावी संतुलन की चिन्ता करनी चाहिए। उपलब्ध प्राकृतिक तथा उनके अनुगामी कृत्रिम संसाधनों के मौलिक गुण रूप को बनाए रखना चाहिए।''

मानवीय जीवन का उद्देश्य संवेदनशीलता के साथ समग्र वांछित जीव-जातियों के साथ अपना सन्तुलन बैठाकर उनके भावी अस्तित्व को बनाए रखने की चिन्ता के साथ उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग करना है।

The aim of human life is to live and promote life without imposing any threat to the existence of life and to the availability of Natural Resources for the coming generations by improving standard of life above standard of living.

हम बढ़िया घर बनाएं, परन्तु केवल रहने और काम करने की न्यूनतम आवश्यकता को ध्यान में रखकर बनाएं। कपड़ा भी अच्छा बनाएं, परन्तु पहनने, ओढ़ने या अन्यत्र साधारण प्रयोग की आवश्यकता को ध्यान में रखें। गाड़ियां तो रखें या प्रयोग करें, परन्तु आवागमन की न्यूनतम और स्वास्थ्य के हित में पैदल चलने की आवश्यकता को ध्यान में रखें। अन्न उगाएं और उसका उपभोग करें, परन्तु अनावश्यक भंडारण एवं दुरुपयोग न करते हुए पेट भरने की पर्याप्त उचित आवश्यकता का ध्यान रखें। जलाशय बनाएं, परन्तु पानी के सदुपयोग तथा केवल आवश्यक विद्युतीय ऊर्जा का ध्यान रखते हुए ऐसा करें।

पर्यावरण की संक्षिप्त व्याख्या

पर्यावरण एक प्रगाढ़, गूढ और विराट विषय है। इसे ठीक प्रकार समझने के लिए उन कारणों, प्रभावों, स्थितियों और अवस्थाओं पर प्रकाश डालना आवश्यक है जो इसे ठीक प्रकार समझने में हमारी सहायता करते हैं। विषय को इसके वास्तविक अर्थों में समझने में हमसे कहीं-कहीं कमी रहती दिखाई देती है। यही बड़ा वह कारण है जो विश्व भर में लाख प्रयत्न होने पर भी आगे से आगे ध्वस्त होते पर्यावरण के लिए उत्तरदायी है।

इस विषय को इसके वास्तविक रूप में समझने के लिए हमें अपने जीवन की रचना, इसके अस्तित्वकाल, पृथ्वी पर जीवन के लिए उपयोगी संसाधन, पृथ्वी की ज्ञात-अज्ञात रचना, इसकी गतियों, स्थितियों के साथ-साथ उस पर

पड़ने वाले ज्ञात-अज्ञात ब्रह्मडीय प्रभाव को भी जानने की आवश्यकता है।

हम धरती पर इन्हीं संसाधनों, पदार्थों, स्थितियों अवस्थाओं और संतुलनपूर्ण प्रभावों की कृति के रूप में हैं। इन्हें हम प्रकृति के नाम से जानते हैं और अब पर्यावरण के रूप में समझने लगे हैं।

इसलिए पेड़-पौधे, जलवायु, नदियां नाले, पर्वत, हिम, तुषार, झीलें, जल प्रपात, समुद्र, खनिज पदार्थ, मिट्टी, जीव-जन्तु, पशु-पक्षी, समस्त थलचर, जलचर, नभचर, पृथ्वी की गतियां, हमारे समीपस्थ एवं दूरस्थ मानवीय, धरातलीय, आकाशीय प्रभाव आदि सभी पर्यावरण के अभिन्न अंग हैं। **इसलिए ये सभी पर्यावरणीय चिन्तन के विषय हैं। अर्थात् वे सभी सीमित पदार्थ, प्रभाव, अवस्थाएं, गतियां, स्थितियां जो धरती पर जीवन की सहज उत्पत्ति, विकास और ह्रास का कारण हैं, पर्यावरण कहलाते हैं।**

ये सभी अपने मूल गुणों के साथ यदि यथावत बने रहते हैं तो हमारा जीवन भी सुखी शांत और समृद्ध बना रहता है। परन्तु मूल गुणों में यदि परिवर्तन होता है या इनके अस्तित्व को चुनौती मिलती है तो हमारे जीवन पर भी संकट के बादल मंडराने लगते हैं। **आज बढ़ते लालच और अत्यधिक मुद्रास्फीति के कारण गिरते नैतिक मूल्यों से आक्रांत विश्व में जीवन पद्धति की नई और अवैज्ञानिक परिभाषाएं गढ़ दी गई हैं, जो आगे से आगे ध्वस्त होते पर्यावरण के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी हैं।**

गुण दोष के भेद रहित जीवनशैली की दूषित एवं दोषपूर्ण व्याख्या पूरे विश्व में जीवन मूल्यों को आघात पहुंचाती हुई पर्यावरण के लिए घातक बनती जा रही है। अच्छे-बुरे के घालमेल के साथ इससे वास्तविक मानवीय जीवन शैली का विकृत रूप उभर गया है। जीवन मूल्य विकास में बाधक न होकर अत्याधिक उपयोग और दुरुपयोग को रोकने में उपयोगी होते हैं। हम ध्वस्त होते पर्यावरण को बचाने के लिए अपने अत्यधिक लालच पर लगाम न लगाने के स्थान पर बनावटी विकल्प ढूंढने में लग जाते हैं। उससे कालांतर में कई समस्याओं की उत्पत्ति भी हो जाती है। हम अपनी अनावश्यक सुख-सुविधाओं, विलासिताओं एवं निरंकुश स्वार्थ भरे लालच की बार-बार पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों के साथ अनाधिकार वाली सीमा से व्यवहार कर उन्हें नष्ट करने और प्रदूषण बढ़ाने में लगे हैं।

पशु–पक्षियों को शत्रु समझा जा रहा है। उनके रहन बसेरों को उजाड़ा जा रहा है। वन्य प्राणी ही नहीं पालतु पशुओं के कई भोज्य पदार्थ भी हमारे निर्दयतापूर्ण व्यवहार से नष्ट हो गए हैं या हो रहे हैं। पारिस्थिकीय तन्त्र डगमगा रहा है। पशु–पक्षियों की कुछ प्रजातियां या तो लुप्त हो चुकी हैं या विलुप्ति के कागार पर हैं। प्रकृति हमें तथा पशु–पक्षियों को बिना किसी भेद के उनके प्रकृति प्रदत अधिकार के साथ धरती पर रहने का समान अधिकार देती है। प्रकृति ने जीवन की जीवन पर निर्भरता बना रखी है। हम यदि हिंसक बन जाएंगे तो प्रकृति भी हमारे लिए हिंसक बन जाएगी। पशु–पक्षी यदि नहीं रहेंगे तो उससे पहले हम विलुप्त हो जाएंगे।

भारतीय सनातन परम्पराओं में पर्यावरण संरक्षण का स्पष्ट संदेश झलकता है, जिसे जीवन में अंगीकार कर पर्यावरण ध्वस्त होने से बच जाता है। इन परम्पराओं में जलवायु, धरती, पेड़–पौधों, पशु–पक्षियों आदि को सम्मान देना सम्मिलित था। परन्तु आश्चर्य की बात है कि मानवीय मूल्यों को भुलाते और मात्र केवल धनार्जन की ओर बढ़ते मनुष्य ने इसके अर्थों को तोड़–मरोड़ कर प्रस्तुत कर इसकी व्याख्या का सर्वमान्य वास्तविक रूप ही विकृत कर दिया है।

असंतुलित एवं अनियन्त्रित विकास की गाड़ी को तुरन्त संतुलित और नियन्त्रित यदि नहीं किया गया तो ईंधन के भारी मात्रा में प्रयोग, रॉकिटों, वाहनों, कल–कारखानों, यन्त्रों–संयन्त्रों, युद्धक सामग्री, विस्फोटकों, वनों की आग, कूड़ा–कर्कट, फसल जलने से निकलने वाली कार्बनडाईआक्साइड, भाप, झाड़–झंकार, कंकरीट के बढ़ते प्रचलन तथा ग्रीन हाऊस प्रभाव उत्पन्न करने वाले अन्य साधनों से ग्लोबल वार्मिंग में गुणात्मक वृद्धि हो जाएगी। ध्वनि प्रदूषण भी बढ़ जाएगा जो कई रोगों का जनक है। प्रदूषण धरती से व्योम की ओर यात्रा करता जाएगा।

अधिक उपज लेने के लिए प्रयोग किए जा रहे रसायनों तथा विषैले घोलों से मिट्टी प्रदूषित हो रही है। उसकी उपजाऊ शक्ति कम हो रही है तथा निकट भविष्य में उसके अधिक सीमा तक घट जाने की पूर्ण संभावना है। भोज्य पदार्थों में अधिक विष प्रवेश कर जाएगा। स्वास्थ्य पर घातक प्रभाव पड़ेगा, गर्मी भी बढ़ेगी।

ठंडक उत्पन्न करने वाले रैफरिजरेटर, ए. सी. आदि यन्त्रों–संयन्त्रों में प्रयुक्त होती सी. एफ. सी. आदि हाईड्रोफ्लोरोकार्बन गैसों के प्रयोग में वृद्धि के कारण पृथ्वी के सुरक्षा कवच ओजोन गैस की परत भी अधिक ध्वस्त हो जाएगी।

इसके कारण अभी तक पड़ चुका ओजोन परत का छेद और भी विशाल रूप धारण कर लेगा। इससे सूर्य की घातक किरणें अधिक विशालता से धरती में प्रवेश कर जाएंगी।

अत्यधिक गर्मी के बढ़ जाने से जलवायु अधिक सीमा तक प्रदूषित हो जाएंगे। इनका चक्र भी अधिक प्रभावित हो जाएगा। इस समय ध्रुवों की बर्फ भी पिघल रही है। पानी के सुरक्षित भंडार कुछ ग्लेशियर तो अभी पिघल रहे हैं। कुछ पिघल चुके हैं। परन्तु निकट भविष्य में सभी ग्लेशियरों के पिघल जाने की संभावना है। पानी को धरती में समाने से रोकने वाले हमारे विकास के कारण धरती का सारा पानी सागर की ओर लौट जाएगा। संसार के बहुत से सागर तटीय क्षेत्र एवं नगर जलमग्न हो जाएंगे। नदियां, नाले, तालाब, चश्में आदि सूख जाएंगे। जलवायु परिवर्तन तथा बढ़ते प्रदूषण के कारण खाद्य-पदार्थों का उत्पादन बहुत घट जाएगा। खाद्य पदार्थों की कई फसलें उत्पन्न नहीं होंगी वे विलुप्त हो जाएंगी। विषयुक्त खाद्य पदार्थों के निरंतर सेवन से मनुष्य तथा अन्य जीवों के शरीर में विष प्रवेश की मात्रा बढ़ जाएगी। मनुष्य के शरीर में बीमारियों से लड़ने की प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाएगी। बीमारियां और महामारियां नित नये रूपों और प्रभाव के साथ अपना प्रकोप दिखाएंगी। प्राकृतिक आपदाएं बढ़ जाएंगी और अपना विकराल रूप दिखाएंगी। अनेकों जीव-जातियां विलुप्ति की ओर बढ़ जाएंगी। कई पेड़-पौधे, कई जड़ी-बूटियां, फलदार झाड़ियां भी विलुप्ति की सीमा छूने लगेंगी या लुप्त हो जाएंगी। कुछ तो विलुप्त भी हो चुकी हैं।

अमानवीय रूप धारण करने की ओर बढ़ते असीमित लालच के कारण होते खनिज पदार्थों के अत्यधिक दोहन से वे अपना रंग, रूप, गुण और स्थान तीव्रता के साथ बदल देंगे। वे समाप्त प्रायः हो जाएंगे। इनकी उपलब्धता में कमी हो जाने की प्रवल संभावना है। आने वाली पीढ़ियों को लोहा, कोयला, पेट्रोल, गैस, अन्य खनिज पदार्थ, बिजली, पानी आदि पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल सकेंगे।

भारी भवनों, सुरंगों के निर्माण, कट्टान, खदान तथा बड़ी परियोजनाओं से कहीं भारी तो कहीं खोखली होती धरती असंतुलित होती जा रही है। इसके कारण भूकम्पों के अधिक आने तथा उस समय जान-माल की भारी हानि की संभावना बहुत बढ़ गई है। ज्वालामुखियों के चिन्हित स्थानों में फूटने में वृद्धि के साथ-साथ इनके नये स्थानों में फूटने की आशंका भी बढ़ गई है।

परिणाम की विरक्ति एवं पूर्वाभास शून्यता के कारण हो रहे विवेक रहित विकास से मुद्रास्फीति भी बढ़ रही है। बढ़ रही गर्मी के लिए 50 प्रतिशत तक मुद्रास्फीति उत्तरदायी है। यह भी कालांतर में विषैला रूप धारण कर लेगी। इसमें बढ़ोतरी का कारण आवश्यकता न होकर लालच है। बाढ़, अतिवृष्टि, सूखा, भू-स्खलन, भूकंपन तथा अन्य प्राकृतिक आपदाएं आएंगी।

मूलभूत मानवीय गुणों की बंचना में सामाजिक व्यवस्थाओं के प्रांगण में धन यश अर्जित करने के लिए प्रवेश करता मानव विवेक खो बैठता है। **जीवन और स्वास्थ्य के मूल्य पर धन को दी जाती प्रधानता जीवन के अस्तित्व को गौण बनाती जा रही है। अब तो ऐसा लगने लगा है कि सुख-सुविधाएं मानव के लिए न होकर या मानव के वश में न होकर मनुष्य को अपने लिए और अपने वश में करती जा रही हैं।** जीवन के वास्तविक मानदंडों को भूलता, विवेकहीनता और संवेदनहीनता की प्रवृति के वशीभूत होकर मानव पर्यावरण को ध्वस्त करने के मार्ग पर अग्रसर होता जा रहा है।

धन की प्रधानता से सामाजिक आचार-विचार में आती विकृति एवं नैतिक मूल्यों के हो रहे पतन के कारण विवेक को खोता मनुष्य विनाश की ओर तीव्र गति से बढ़ता जा रहा है। सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्थाओं के क्षेत्र में बढ़ते और फैलते प्रदूषण के साथ-साथ आध्यात्मिक क्षेत्र में भी कुछ घिनौने तत्वों ने प्रवेश कर वहां भी प्रदूषण फैला दिया है। जब विकास सहज क्रमिक न होकर अप्रत्याशित और असन्तुलित तीव्र गति से होता है तो व्यवस्थाएं चरमराती हैं। आज ऐसा ही हो रहा है। व्यवस्थाएं असन्तुलित और प्रदूषित होकर अपने वास्तविक मार्ग से भटक रही हैं।

विश्व की जनसंख्या पूर्वानुमान से पूर्व ही 2011 में 7 अरब हो गई थीं। शताब्दी के अन्त तक इसके 12 अरब तक पहुंच जाने का अनुमान लगाया गया है। प्राकृतिक संसाधन घट रहे हैं। असंतुलित और विवेक के मानदण्डों से अछूते विकासयुक्त ज्ञान से ईर्ष्या, द्वेष और अस्वस्थ धनार्जन की प्रतिस्पर्धा के कारण संसाधनों पर कब्जा जमाने के उद्देश्य से अब घोर विश्व युद्ध की संभावना बढ़ती जा रही है। आतंकवाद सिर उठा रहा है। घातक परमाणु बम जैसे हथियारों का निर्माण भी बढ़ता जा रहा है। इन सबके कारण धरती पर जीवन को आघात पहुंचाती अवस्था एक ऐसी सीमा को पार कर जाएगी जहां से वापिस लौटना फिर

मानव मात्र के लिए अत्यन्त कठिन या असंभव हो जाएगा। घर-परिवार, समाज और देश टूटते जाएंगे। सर्वत्र अशान्ति और तनाव फैलते जाएंगे। मनुष्य अपने अस्तित्व को स्वयं ही भीषण आघात पहुंचाता जाएगा।

स्थितियां यदि ऐसे ही जारी रहीं तो शताब्दी के मध्य भाग तक प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण तथा बढ़े हुए प्रदूषण को लेकर जीवन मूल्यों की चिन्ता के साथ संसार यदि अंधाधुंध विकास के पहिए पर दृढ़ता से लगाम भी लगाना चाहेगा तो भी उसे वांछित सफलता मिलने की संभावना बहुत कम ही रह जाएगी।

ठीक यही है कि हम समृद्धि के वास्तविक अर्थों को समझ कर अपने अच्छे आचरणगत व्यवहार द्वारा लालच को लगाम देकर संसाधनों के भावी उपयोग के ध्यान और चिन्ता के साथ धन वितरण (लाभ, मजदूरी, वेतन, एकल या सामूहिक मुद्रा भंडारण) के तौर तरीकों में विवेक का प्रयोग करते हुए वास्तविक सामाजिक एवं व्यक्तिगत संतुलन बैठाएं।

जीवन की वास्तविक गुणवत्ता से भटके आज के ज्ञान पुंज की अधिकतर किरणों ने बढ़ते सीमा रहित और अवांछित लालच के कोहरे के साथ गठबंधन कर भावी मानवीय जीवन के अस्तित्व को विनाश के अंधकार की ओर धकेलना आरम्भ कर दिया है। तीव्रता से ध्वस्त होते पर्यावरण को बचाने के लिए धरती, शिखर सम्मेलन, जलवायु परिवर्तन सम्मेलन या किसी एक देश या समाज द्वारा वर्तमान में जो प्रयास किए जा रहे हैं वे क्या पर्यावरण को बचाने के लिए पर्याप्त और प्रभावशाली होंगे? विश्व से इसे बचाने के प्रयासों से क्या छूटता जा रहा है? इसे समझना आवश्यक है।

ऐसी स्थिति यदि निरंकुश आगे जारी रही, चांद, मंगल पर शीघ्र पर्याप्त उद्योग, बस्तियां बसा लेने के समयपूर्व दिव्य **स्वप्न को देखकर हमने धरती पर संसाधनों को यदि नष्ट कर दिया और चांद, मंगल पर पर्याप्त बस्तियां शीघ्र बन नहीं पाईं तो धरती पर से मानव शीघ्र और सम्भवतः इसी शताब्दी के अन्त तक अपने अस्तित्व को अवसान की ओर ले जाएगा।**

पर्यावरण के अनेकों अवयव हैं। सामाजिक उत्थान द्वारा इसे बचाने की भी कई विधाएं हैं। संकलित पूर्व प्रकाशित लेखों में कुछ अवयवों की स्थिति एवं उनके प्रभाव को आलोकित करने का प्रयास किया गया है। अप्राकृतिक मानवीय

व्यवहार एवं कुठाराघात द्वारा विकृत होते इनके प्रभाव को उजागर किया गया है। सुझाव देते हुए इस बात पर बल दिया गया है कि मनुष्य को धन कमाने की मशीन बनाने से पूर्व मानव बनाने की नितांत आवश्यकता है। क्योंकि धन की तीन गतियां हैं। दान, भोग और नाश। आर्थिक सन्तुलन की स्थापना के लिए इसे समझना आवश्यक है। हमारी सभी व्यवस्थाओं पर धन ने अपना कब्जा जमा लिया है। वे अब घातक रूप धारण कर रही हैं।

विश्व में हुई औद्योगिक क्रान्ति से बहुत पहले पेड़-पौधों, जल, नदियों, जीवों के साथ मनुष्य के आपसी सम्बन्ध को परिभाषित करतीं और सन्तुलन को बनाए रखने वाली अनेकों सनातनी परम्पराएं एवं मान्यताएं भारत में प्रचलित थीं। इनका पर्यावरण संरक्षण की दिशा में महत्त्वपूर्ण योगदान था। परन्तु वास्तविकता के प्रति बढ़ती अज्ञानता, व्यक्तिगत स्वार्थ तथा निरंकुश अर्थ प्रधान वाले एकांगी विकास ने इन पर कुठाराघात कर दिया है।

इस विश्व की ज्ञेय साकार रचनाओं में अधिक बुद्धिमान मानव ही प्रतीत होता है। इसलिए मानवीय जीवन के सार एवं समृद्धि को वैज्ञानिक पुट के साथ परिभाषित करने की आवश्यकता है। इससे ही पर्यावरण के ध्वस्त होने का मार्ग अवरुद्ध किया जा सकेगा।

यह परिभाषा इस प्रकार होनी चाहिए -

''धरती पर विकास के लिए सरल भाव, संवेदनशीलता वांछित सभी जीव-जातियों के संतुलन तथा भावी पीढ़ियों के हित की चिन्ता के साथ सीमित संसाधनों के प्रयोग एवं उपभोग से अधिक से अधिक आनंद प्राप्त करने से सर्वत्र सुख-शांति की व्याप्ति में समृद्धि का अनुभव करना ही मानवीय जीवन का सार है।''

इस परिभाषा को मान्यता दी जानी चाहिए। ऐसा करने से ही संसार में जनवृद्धि की समस्या से निपटने के लिए उत्तम प्रबंधन का मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

जीवन स्तर की परिभाषा इस प्रकार की जानी चाहिए – व्यक्ति जब अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए केवल अति आवश्यक पदार्थों का उपभोग करता है, परोपकार की भावना के साथ अहिंसा के मार्ग द्वारा दूसरों के लिए उनकी उपलब्धता का प्रयास करता और सादगी के साथ जीवन यापन करता है तो वह उच्च जीवन स्तर का धारक कहलाता है।

लेखक के अपने अनुभव, अध्ययन, मनन और चिन्तन से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रकृति चेतन और सजीव है। इससे मिलती ऊर्जा के कारण मनुष्य सहित धरती की जीव जातियां शरीर धारी और प्राणवान हैं। प्रकृति के साथ हमारा वही संबंध है जो संतान का माता-पिता के साथ है। माता से मिलती ऊर्जा ही के कारण हम देह धारी और प्राणवान बने। यहां से मिलती सहज ऊर्जा के विपरीत आगे बढ़ते असीम लालच के कारण यदि हम उसे निर्दयी बनकर नोचते जाएंगे और आघात पर आघात पहुंचाते जाएंगे तो एक दिन वह हमें दुत्कार देगी। हम फिर भी यदि नहीं माने और आगे से आगे उसकी परवाह किए बिना लालच के वशीभूत होना जारी रखा तो वह असहनशील और विवश होकर हम पर भीषण प्रहार कर हमें समाप्त भी कर सकती है। क्या लेखक की यह अवधारणा विज्ञान सम्मत नहीं है?

- वर्ष 1990 से निरन्तर पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरणीय समस्याओं, उनके निदान के उपायों, प्राकृतिक आपदाओं, बढ़ते प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग, जल, ब्रह्माण्ड, जनसंख्या, बाढ़ें, धरती की घटती उत्पादन क्षमता, गिरते मानवीय मूल्यों, बदलती भौगोलिक स्थितियों, हिमालय पर्वत आदि को लेकर लेखक के कई लेख, शोधलेख अनेकों प्रतिष्ठित दैनिक समाचार पत्रों के सम्पादकीय पृष्ठों, पत्रिकाओं, स्मारिकाओं, पुस्तकों, सरकारी रिपोर्टों आदि में समय-समय पर प्रकाशित हुए हैं, उनमें से कुछ को खण्ड-8 में भी संकलित किया गया है।
- जनसंख्या, ब्रह्माण्ड, जीवनशैली, मानवीय जीवन, पर्यावरण आदि को लेकर नई परिभाषाएं गढ़ कर पुस्तक में प्रस्तुत की गई हैं। इन परिभाषाओं के आलोक में पर्यावरण तथा मानव को बचाने के लिए लेखक की पूर्व प्रकाशित तथा यहां संकलित सामग्री द्वारा विज्ञान जगत से नया दृष्टिकोण अपनाने की अपील भी की गई है। संयुक्त राष्ट्र संघ न्यूयार्क को भी वर्ष 2002 तथा 2005 में पर्यावरण तथा मनुष्य को बचाने के सुझाव भेजे हैं। इनका वर्णन सम्बन्धित खण्ड-8 में भी किया गया है।
- भूकम्प सरीखी प्राकृतिक आपदाओं, पारिस्थितिकीय तन्त्र, पृथ्वी के ध्रुवों के स्थान परिवर्तन, ज्वालामुखियों के फूटने, मनुष्य के घातक युग में प्रवेश होने, नदियों के सूखने, धरती के पानी के सागर की ओर लौटने, बदलती भौगोलिक परिस्थितियों, **संसार के समय के प्रभावित होने, ग्लोबल वार्मिंग, प्रदूषण मानव की विलुप्ति आदि को लेकर विश्व पटल को छूते लेखक के कई शोध निष्कर्ष भी उजागर हुए हैं। संसार में अब उजागर हो रहे कुछ शोध निष्कर्षों से लेखक के बहुत पहले प्रकाशित वैसे शोध निष्कर्षों की पुष्टि भी हो जाती है। मानवीय विलुप्ति के शोध एवं निष्कर्ष का उसके प्रकाशन की तिथियों सहित पूर्ण विवरण खंड 8 में है।**

- पर्यावरण के कुछ अवयवों की वर्तमान तथा संभावित भावी अवस्था को सुधारात्मक दृष्टिकोण के साथ आलोकित करने का प्रयास किया गया है। प्राकृतिक आपदा से जान-माल की रक्षा, पारिस्थितिकीय तन्त्र के हित, प्रदूषण को रोकने एवं दूर करने के उद्देश्य से हिमाचल प्रदेश सरकार से नियम एवं कानून भी बनवाए। इन सबका विवरण भी दिया गया है। इनमें से कुछ उपलब्धियों को कई प्रसिद्ध अन्तर्राष्ट्रीय एवं विदेशी समाचार पत्रों ने अपने सम्पादकीय में प्रमुख स्थान देकर इन्हें कोपेनहैग्न पृथ्वी शिखर सम्मेलन के परिणामों तथा लगभग 3 लाख लोगों की मृत्यु का कारण बने हैती में वर्ष 2010 में आए भीषण भूकम्प के परिणामों से जोड़कर देखा गया है। भारत में भी कुछ विख्यात समाचार पत्रों ने अपने सम्पादकीय में लेखक की उपलब्धियों को प्रमुख स्थान दिया है।
- वास्तविक जीवन शैली की परिभाषा खण्ड-8 में संकलित जनसंख्या वाले शोधलेख में दी गई है।
- खण्ड 2 से 9 तक के खण्ड भी पर्यावरण, समाज के साथ-साथ लेखक के नये शोधों एवं निष्कर्षों से संबंधित हैं।

खण्ड–2

मानवीय क्रियाओं के कारण पिघलते हिम पर्वत,

हिम ध्रुव तथा आगे बढ़ता पानी।

समय पूर्व बूढ़ा हुआ युवा हिमालय पर्वत–नया शोध निष्कर्ष।

बदलती भौगोलिक परिस्थितियां, प्रभाव, परिणाम तथा शोध एवं निष्कर्ष।

रहस्यमयी अप्रत्याशित प्राणघातक भयंकर बाढ़ें।

पृथ्वी के हिम ध्रुवों, हिम पर्वतों की बर्फ का पानी में बदलना, पृथ्वी के सन्तुलन एवं गुरुत्वाकर्षण का प्रभावित होना, ध्रुवीय स्थिति में बदलाव आना, विश्व के समय तथा मौसम में परिवर्तन आने के लेखक के इस खंड में संकलित पूर्व प्रकाशित लेखों द्वारा उजागर विश्व पटल पर महत्त्वपूर्ण शोध एवं निष्कर्ष। विज्ञान जगत से अपील।

31 जुलाई की अर्धरात्रि को सैंकड़ों लोगों, हज़ारों पशुओं के प्राण हरने तथा करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति के नष्ट करने का कारण बनी हिमाचल प्रदेश में बहती सतलुज नदी में भयंकर बाढ़ आई थी। दैनिक समाचार पत्रों में प्रतिदिन प्रकाशित होते समाचारों में कई दिनों तक बाढ़ के कारण बताते हुए अधिकतर पड़ोसी देश पर संदेह व्यक्त किया जा रहा था और प्रदेश सरकार द्वारा यह घटनाक्रम केन्द्रीय सरकार के ध्यान में भी लाया गया था। लोक मंचों पर भी अटकलबाजियां लगाई जा रही थीं। चीन को दोष दिया जा रहा था।

प्रस्तुत पूर्व प्रकाशित शोधलेख, "पर्वतों का कटता सीना और पर्यावरण" इस रहस्यमयी बाढ़ के कारणों से सम्बन्धित है। इस लेख में लेखक ने बाढ़ से सम्बन्धित वास्तविक कारण उजागर कर जनता के सामने रखे थे जो कई समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए थे। लेखक ने अनावश्यक संदेहों को नकार दिया था। इस शोध लेख के प्रकाशन के लगभग तीन महीने पश्चात इस बाढ़ के कारणों से सम्बन्धित जो रिपोर्ट रिमोट सैन्सिंग एजेन्सी हैदराबाद ने हिमाचल प्रदेश सरकार को भेजी उसमें बाढ़ के वही कारण बताए गए थे, जिनका वर्णन लेखक के पूर्व प्रकाशित उपरोक्त लेख में हो चुका था।

रिपोर्ट में बताए कारणों को इस पूर्व प्रकाशित शोध लेख में बताए कारणों से पूरी तरह मेल खाने की घटना हिमाचल प्रदेश में प्रसारित, समाचार पत्रों में कई दिनों तक चर्चा का विषय बनी रही थी। इसके प्रमाण चित्रित कर दिए गए हैं।

प्रस्तुत पूर्व प्रकाशित शोध लेखों में **वैज्ञानिकों मान्यताओं के अनुसार युवा कहे जाने वाले हिमालय पर्वत को समय से पहले बूढ़ा होता बताया गया है। मानवीय क्रियाओं से बदलती भौगोलिक स्थितियों के साथ-साथ पर्वत पर पड़ने वाले ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को भी उजागर किया गया है।** सरकारी वैज्ञानिक संस्थान ने भी हिमालय पर्वत की बदलती स्थिति एवं प्रभाव को उजागर करते लेखक के लेख का संज्ञान लिया है। बदल रही प्राकृतिक स्थिति के जारी रहते वर्तमान शताब्दी के मानवीय जीवन की अन्तिम शताब्दी होने का शोध निष्कर्ष भी उजागर किया गया है। प्रकृति की अनुगामी जीवन शैली अपनाने तथा पर्यावरण बचाने के लिए तुरन्त एक सशक्त विश्व पर्यावरण परिषद् के गठन की आवश्यकता का सुझाव दिया गया है तथा

विज्ञान जगत से भी अपील की गई है। संयुक्त राष्ट्र संघ न्यूयार्क को भी अपने पत्रांक **972** दिनांक **21** जून **2002** तथा **1211** दिनांक **8** अप्रैल **2005** द्वारा धरती पर वर्तमान 21वीं शताब्दी में आने वाली घोर संकटपूर्ण स्थिति से अवगत करवाते हुए जीवन के हित में अपने सुझाव भेजकर उनसे धरती के जीवन को बचाने का अनुरोध किया है।

बढ़ती ग्लोबल वार्मिंग और बदलती भौगोलिक स्थितियों के प्रभाव के कारण ऊँचे पर्वतों तथा पृथ्वी के ध्रुवों की बर्फ के तीव्रता के साथ पिघलने से पानी समुद्र की ओर जा रहा है।

19 जुलाई **2004** को दैनिक समाचार पत्र ''दिव्य हिमाचल'', धर्मशाला तथा **20** सितम्बर, **2004** को दैनिक जागरण जालन्धर से प्रकाशित तथा यहां संकलित शोध लेखों में लेखक ने पानी के बदलते प्रभाव तथा स्थिति के कारण पृथ्वी के ध्रुवीय झुकाव, संतुलन एवं गुरुत्वाकर्षण के बदलने से विश्व के समय तथा ऋतुओं में परिवर्तन आने का शोध निष्कर्ष उजागर किया था।

इस शोध निष्कर्ष के उजागर होने पर दैनिक समाचार पत्र पंजाब केसरी, जालंधर ने अपने 26 अगस्त 2004 के अंक में हमीरपुर के हवाले से समाचार प्रकाशित किया था कि इस शोध निष्कर्ष के मूर्तरूप लेने का सत्यापन यदि हो गया तो यह पूर्व प्रकाशित शोध निष्कर्ष महत्त्वपूर्ण शोध कहलाएगा।

अब यह स्थापित हो चुका है कि पानी के सागर की ओर लौटने से पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण, समय एवं ऋतुओं में परिवर्तन आने के संकेत मिल रहे हैं। इस प्रकार लेखक के शोध निष्कर्ष की पुष्टि हो जाती है। संबंधित प्रमाण पृष्ठ 20-21 पर चित्रित है।

पाठकों, शोधकर्त्ताओं एवं विचारकों की सुविधा के लिए उपलब्ध प्रमाणों एवं साक्ष्यों को चित्रित कर दिया गया है। लेखों के प्रकाशन की तिथियों सहित संबधित समाचार पत्र आदि का विवरण लेख के अंत में नीचे दिया गया है। इनके आलोक में वास्तविकता, विश्व पटल पर प्रथम बनती इसकी स्थिति तथा स्तर का आकलन किया जा सकता है।

सतलुज नदी में बाढ़ असंख्य अदृश्य झीलों के खुलने के कारण आई : रिपोर्ट

दिव्य हिमाचल धर्मशाला 5-12-2000

हमीरपुर, 4 दिसंबर (नस)। हाल ही में सतलुज नदी में आई बाढ़ पर राज्य सरकार को जो विवरण राष्ट्रीय रिमोट सैंसिंग (दूर संवेदन) एजेंसी से प्राप्त हुआ है, उसके अनुसार यह प्रलयंकारी बाढ़ वातावरण में हो रही तापमान वृद्धि से बड़े-बड़े हिम खंडों के एकाएक पिघलने व इनके अंदर बनी असंख्य अदृश्य झीलों के एकाएक खुलने तथा अनियंत्रित पहाड़ों का कटान आदि बताया गया है, जबकि सरकारें इसके लिए तिब्बत या चीन में किसी सरोवर बांध के टूटने की आशंका जताती रहीं। उल्लेखनीय है कि ठीक इसी प्रकार का विवरण पर्यावरण विद् आचार्य रत्न लाल वर्मा ने उस समय 'दिव्य हिमाचल' के माध्यम से दिया था। उन्होंने कहा था कि इसके लिए हमें पड़ोसी देशों पर आशंका जाहिर करने के बजाय आत्म चिंतन करना होगा और प्रदेश में हो रहे अनियंत्रित पेड़ों के कटान को रोकना होगा। उन्होंने बताया था कि इसे किसी और मुद्दे से जोड़ने की कोशिश करना अपनी भूलों की पुनरावृत्ति होगी। अतः आज पर्वतों के सीने को चीरने से रोकना होगा। आज 'दिव्य हिमाचल' से एक विशेष भेंटवार्ता में आचार्य रत्न ने बताया कि उनका विशेष ध्यान पर्यावरण सुरक्षा एवं इसके प्रति जनमानस को जागरूक करने में लगा हुआ है। आज हम लोग विकास के नाम पर मानव जाति के दुश्मन बन गए हैं। आचार्य रत्न लाल वर्मा ने अपने अध्ययन, अनुभव व मनन को आधार बनाते हुए कहा कि यदि समय रहते पहाड़ों पर बन रही अदृश्य झीलों व कटान को नियंत्रित करने के उपाए न किए गए तो और भयंकर व हृदय विदारक घटनाएं भविष्य में हो सकती हैं। उन्होंने प्रदेश सरकार से आग्रह किया कि राष्ट्रीय रिमोट सैंसिंग एजेंसी के सहयोग से ऐसी अदृश्य झीलों व पहाड़ों पर रुके हुए जल भंडारों का पता लगाकर समय रहते पग उठाए जाएं।

7-12-2000

...कारण वही निकले जो वर्मा ने बताए थे

हमीरपुर, 6 दिसम्बर (नन्दा) : राज्य में गत अगस्त मास में सतलुज नदी में आई भयंकर बाढ़ के बारे में कई अटकलबाजियां लगाई जाती रहीं हैं। हमीरपुर के प्रमुख पर्यावरण विद तथा विचारक आचार्य रत्नलाल वर्मा ने अपने अध्ययन, अनुभव और चिन्तन के आधार पर बाढ़ के मूल में छिपे रहस्य को खोजकर एक लेख जिसका शीर्षक 'पर्वतों का कटता सीना और पर्यावरण' था, के द्वारा इस बारे सभी अटकलबाजियों तथा सन्देहों को नाकार दिया था। उन्होंने इसका कारण तापमान में एकाएक वृद्धि से बड़े हिमखंडों का पिघलना, पानी के भीतर बनी असंख्य छोटी झीलों के तटबन्धों का एकाएक करके खुलना, पानी में मिट्टी के मिश्रण द्वारा उसके तल को ऊपर उठाना इत्यादि बताया था। यह लेख विभिन्न समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुआ था हाल ही में राष्ट्रीय रिमोट सैंसिंग एजैंसी हैदराबाद की राज्य विज्ञान प्रौद्योगिकी पर्यावरण परिषद द्वारा सतलुज की बाढ़ के कारणों के बारे में जो रिपोर्ट हिमाचल प्रदेश सरकार को सौंपी गई है उसके अनुसार बाढ़ आने के न्यूनाधिक लगभग वही कारण उजागर हुए हैं जिनकी पुष्टि व संकेत आचार्य वर्मा बहुत पहले कर चुके हैं। श्री वर्मा ने रिपोर्ट पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए पर्यावरण बचाने के लिए सही दिशा में सही कदम उठाने का आह्वान केन्द्र तथा राज्य सरकारों से किया है।

पंजाब केसरी जालंधर - हिमाचल पृष्ठ

7 दिसंबर 2000

वीरभद्र के बिना कांग्रेस आधार विहीन

पहाड़ी ख़बर सुजानपुर – शिमला

श्री रतनलाल वर्मा ने बाढ़ के कारण का खुलासा वही किया था जो राष्ट्रीय रिमोट सैंसिंग एजेंसी ने बताया

हिमाचल में गत अगस्त मास में सतलुज नदी में आई भयंकर बाढ़ के बारे में विभिन्न लोगों और समाचार पत्रों ने अटकलबाजियां लगाई जाती रही हैं कि रामपुर बुशहर और इसके साथ लगते क्षेत्र में जो भयंकर बाढ़ आई जिसके कारण नाथपा झाकड़ी परियोजना सहित प्रदेश को भारी नुकसान उठाना पड़ा था प्रमुख लोगों और समाचार पत्रों ने इस बाढ़ के पानी की शक की सुई चीन की तरफ मोड़ दी थी और यह अंदेशा लगाया था कि यह चेनलाइ एक ऐसी किसी झील को तोड़कर या पानी को छोड़कर सतलुज के किनारे रहने वालों के लिए खतरा खड़ा कर दिया था.

परन्तु हमीरपुर के प्रसिद्ध पर्यावरणविद तथा प्रगतिशील विचारक आचार्य रतनलाल वर्मा ने अपने अध्ययन, अनुभव और चिन्तन के आधार पर बाढ़ के मूल में छिपे रहस्य को खोलकर एक लेख जिसका शीर्षक 'पर्वतों का घटता सीना और पर्यावरण' था, के द्वारा इस बारे में सभी अटकलबाजियों तथा सन्देहों को नकार दिया था, उन्होंने इसका कारण तापमान में एकाएक वृद्धि से हिमखंडों का पिघलना, नदियों के भीतर बनी असंख्य छोटी झीलों के तटबंधों का एक-एक करके खुलना, पानी में मिट्टी के मिश्रण द्वारा इसके स्तर का ऊपर उठना इत्यादि बताया था. यह लेख विभिन्न समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुआ था. हाल ही में राष्ट्रीय रिमोट सेंसिंग एजेंसी हैदराबाद को राज्य विज्ञान प्रौद्योगिकी पर्यावरण परिषद द्वारा सतलुज की बाढ़ के कारणों के बारे में जो रिपोर्ट हिमाचल सरकार को सौंपी गई है उसके अनुसार बाढ़ आने के न्यूनाधिक लगभग वही कारण उजागर हुए हैं जिनकी पुष्टि व संकेत आचार्य वर्मा बहुत पहले कर चुके हैं. श्री

दिव्य हिमाचल

धर्मशाला, शुक्रवार, 13 अगस्त, 2004

लापरवाही.

सबसे गंभीर परिस्थिति पाराछू इ... रुपए की यो...

पर्यावरण और दूरसंवेदी सूचनाओं की उपेक्षा के कारण ही आज प्रदेश, बाढ़ और हिम खंडों स्खलनों के खतरों से भयभीत हुआ है। उल्लेखनीय है कि दिव्य हिमाचल ने चार दिसंबर, 2000 को प्रकाशित एक समाचार में खुलासा किया था कि पश्चिमी हिमालय के पर्वत शिखरों पर स्थित कई अदृश्य झीलें सतलुज और अन्य नदियों में बाढ़ का कारण बन सकती हैं। इस संदर्भ में राष्ट्रीय रिमोट सेंसिंग एजेंसी ने प्रदेश सरकार को इसकी सूचना दी थी। रिपोर्ट के अनुसार भू-मंडलीय तापमान के बढ़ने के कारण हिम खंडों के पिघलने व इनके भीतर बनी असंख्य अदृश्य झीलों के खुलने के कारण परिस्थितियां गंभीर बन सकती हैं। इसी के साथ पहाड़ों पर हो रहा अत्यधिक कटान और वनस्पति की तबाही भी इसका कारण बताई जाती रही है, लेकिन समय पर सरकारों द्वारा कदम न उठाए जाने के कारण आज सतलुज नदी और पाराछू झील मानव जाति के लिए खतरा बनती जा रही है।

उल्लेखनीय है कि पर्यावरणविद आचार्य रतन लाल वर्मा ने राष्ट्रीय रिमोट सेंसिंग एजेंसी की रिपोर्ट से पूर्व ही इन संभावनाओं की पुष्टि कर दी थी। उन्होंने कहा था कि यदि पिछले चार वर्षों में इस क्षेत्र में कार्य किया जाता, तो आज यह समस्या खड़ी न होती। उल्लेखनीय है कि 14 फरवरी 2001 को 'दिव्य हिमाचल' में प्रकाशित एक समाचार में स्पष्ट लिखा था कि हिम खंडों के साथ आए मलबे

सतलुज में आई बाढ़ में चीन का हाथ नहीं

शशि भूषण

शिमला, 26 नवंबर। पिछले अगस्त में सतलुज में आई भयावह बाढ़ चीन द्वारा तिब्बत में किसी शरारत का नतीजा नहीं था, बल्कि यह प्राकृतिक आपदा मुख्य रूप से ग्लेशियर पिघलने, नतीजन संबंधित झील से एकाएक पानी बहने और बादल फटने के कारण घटी थी। हैदराबाद की 'नेशनल रिमोट सेंसिंग एजेंसी' (एनआरएसए) ने यह निष्कर्ष निकाला है। इससे इस बाबत लगाए जा रहे तमाम कयासों व अटकलबाजियों पर विराम लग गया है। राज्य साईंस,टैक्नोलॉजी व पर्यावरण परिषद ने एनआरएसए की इस बाबत रिपोर्ट प्रदेश सरकार को सौंप दी है।

गौरतलब है कि पिछले 31 जुलाई व एक अगस्त की रात को सतलुज में भयंकर बाढ़ आ गई थी। मौत के इस तांडव ने सरकारी आंकड़ों के मुताबिक करीब 150 लोगों की जान ली। करीब 1500 मवेशी भी इसकी बलि चढ़ गए और अरबों रुपए की सरकारी व निजी संपत्ति का नुकसान हुआ। बाढ़ का ज्यादा असर किन्नौर, शिमला व कुल्लू जिलों पर पड़ा। इन क्षेत्रों में आज भी स्थिति सामान्य नहीं हो पाई है। इस बाढ़ के तीन रोज बाद स्पीति घाटी के की-गोंपा में बौद्धों का कालचक्र समारोह भी शुरू होना था। अफवाहें उड़ीं कि इस समारोह में खलल डालने के लिए चीन ने तिब्बत में कोई शरारत की। मुख्यमंत्री प्रेमकुमार धूमल ने हालांकि ऐसी आशंकाओं को नहीं माना, लेकिन बाढ़ के कारणों को जानने के लिए उन्होंने विदेश मंत्रालय से मामला उठाया। उधर, राज्य की साइंस, टैक्नोलॉजी व पर्यावरण परिषद ने भी एनआरएसए से बाढ़ के कारण पता लगाने व उसकी रिपोर्ट तैयार करने का आग्रह किया। (शेष पृष्ठ 2 पर)

हिमाचल उजाला
चंडीगढ़ सोमवार 27-11-2000 पृ. 2

सतलुज में आई बाढ़...

रिपोर्ट के मुताबिक सतलुज ताल के आईआरएस-1 सी डब्ल्यूआईएफएस उपग्रह से प्राप्त चित्रों का अध्ययन इशारा करता है कि ग्लेशियर स्रोत की झील एकाएक ज्यादा पानी निकलना व बादल फटना सतलुज में बाढ़ के मुख्य कारण हो सकते हैं, लेकिन ऐसे प्रमाण नहीं मिले हैं, जिससे साबित होता हो कि ग्लेशियर से रुकी झील से अचानक ग्लेशियर फटने के कारण बाढ़ आई हो। इसके अलावा दरिया के बहाव में अचानक रुकावट व बाद में अचानक रुकावट हटने (टूटने) से भी बाढ़ आ सकती थी, लेकिन उपग्रह चित्रों में कहीं भू-स्खलन का प्रमाण नहीं है। इसी प्रकार सतलुज की मुख्य स्रोत मानसरोवर व रकस झीलों से अचानक पानी का बहाव नहीं छूटा। रिपोर्ट में कहा गया है कि जुलाई 28 से पहले उपग्रह (चित्र) फोटो दर्शाते हैं कि सतलुज के ऊपर तिब्बती क्षेत्र में बादलों की जमावट थी, लेकिन बाढ़ के बाद की तस्वीरों में बादलों को फटे-छटे दिखाया गया है। इससे पता चलता है कि उस क्षेत्र में उस दौरान वहां बादल फटे या फिर भारी बरसात हुई। वैसे रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि जमीनी प्रमाण की गैर मौजूगी में ग्लेशियर की वजह से झील में पानी बढ़ने से इसके फटने से बाढ़ आने को एकदम नकारा भी नहीं जा सकता।

TO WHOM SO EVER IT MAY CONCERN.

This is to certify that Acharya Shri Rattan Lal Verma resident of Ward No. 5 Hamirpur (HP) is whole heartily devoted to create general awareness about the environment among the public at large and has been suggesting the measures to control the fast spreading pollution for the last 13 years. His suggestions for the preservation of the environment are valuable and have been recognized by the Scientist of H.P. State Science, Technology and Environment Council and also by the State Pollution Control Board. He launched campaign to make the people aware against the dangers of multy storyed buildings particularly in hilly areas and also the demerits of the use of polly -bags. He also took up the matter with the state Govt. His contribution in finding out the environmental reasons responsible for the last heavy flood in the river Satluj which snatched away the lives of hundreds of people and animals is remarkable . During that period he also played an important role to save the harmony in relations of two countries on the issue of sudden arise of water in river by creating awareness among the masses, through media, seminars and literature . His articles on the subjects were published in many news papers .
He has thus rendered a valuable social service at his own expenses .

I wish him success in his efforts to create awareness among the people about the importance of Environment and Pollution.

30/9/2003
Distt. Planning Officer,
Hamirpur (H.P.)

राज्य विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवम्
पर्यावरण परिषद्, हिमाचल प्रदेश
34 एस.डी.ए. कॉम्प्लैक्स, कसुम्पटी,
शिमला-171009.

STATE COUNCIL FOR SCIENCE
TECHNOLOGY AND ENVIRONMENT
HIMACHAL PRADESH
34 SDA Complex, Kasumpti,
Shimla-171009.

संख्या: एस०टी०ई०(Misc.Env.)/02 - 2145 दिनांक शिमला-9, [illegible]

सेवा में,

श्रीमान आचार्य रत्न लाल वर्मा जी,
जिला लोक साहित्य एवं कला परिषद
समीप क्षेत्रीय अस्पताल हमीरपुर
जिला हमीरपुर 177001, हि० प्र०

विषय : युग-युगीन हिमालय तथा वर्तमान चुनौतियों पर राष्ट्रीय सेमिनार (31-10-2001 to 2-11-2001) में प्रस्तुत शोध पत्र हिमालयी पर्यावरण

मान्यवर,

नमस्कार ।

आपके द्वारा भेजा हुआ लेख हिमालयी पर्यावरण प्राप्त हुआ । मैंने इसे पढ़ा है और बहुत ही दिलचस्प पाया । आपके द्वारा उठाए गए मुद्दे काफी महत्वपूर्ण हैं और इन पर विचार करना अति आवश्यक है । पर्यावरण के प्रति आपकी संवेदनशीलता सराहनीय है । मैं समझता हूँ कि आपके लेख पर्यावरण संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देने में सहायक सिद्ध होंगे । मेरे स्तर पर जो भी सम्भव होगा, आपके सुझावों को कार्यान्वित करने का प्रयत्न करूंगा ।

आशा है कि आप स्वस्थ एवं आनन्दित होंगे ।

भवदीय,

(आर० के० सूद)

विशाल हिमालय के क्षेत्र के विषय में आचार्य रत्न देव वर्मा द्वारा प्रस्तुत आंकड़ें व विश्लेषण न केवल चौंकाने वाले हैं परन्तु पाठक को सोचने के लिये मजबूर कर देते हैं कि यदि यथासमय कार्यवाही नहीं की गई तो पूरे भारत में व पूरे विश्व के लिये कितनी रहस्मयी स्थिति उत्पन्न हो सकती है । वैज्ञानिक ढंग से इकठ्ठे किये गये तथ्यों के आधार पर लेखक ने सिद्ध किया है कि हिमालय के क्षेत्र में पर्यावरण का दोहन पिछले कई वर्षो में सभी सीमायें पार कर चुका हैं । चाहे वाहनों की बढ़ती संख्या हो या जंगलों का लगातार कटना या उद्योगों द्वारा जल के स्त्रोतों का प्रदुषण सब मिलाकर एक अत्यंत भयानक स्थिति उत्पन्न होती हैं ।

आचार्य रत्न देव वर्मा ने अत्यत्न परिश्रम के आधार पर जो जानकारियां साबित की हैं उनमें प्रत्यक्ष रूप से यह बात सामने आती है कि मैदानी क्षेत्रों की तुलना में पहाड़ों में पर्यावरण के साथ छेड़छाड़ न केवल अधिक हुई हैं परंतु प्रकृति से इस खेल का परिणाम भी अत्यंत भंयकर होने वाला है । ये दुष्परिणाम पहाड़ों तक सीमित न रहकर पूरे मैदानी क्षेत्र में भी भविष्य में तबाही मचा सकते हैं ।

इस गूढ़ विश्लेषण को एक गंभीर चेतावनी मानते हुये हिमालय के विभिन्न क्षेत्रों में पर्यावरण प्रदूषण के कुकर्मो को रोकना होगा । इसके लिये पूरे हिमालय के क्षेत्र को एक इकाई मानकर चलना होगा और राज्यों की सीमाओं को भूलना पड़ेगा । क्योंकि पूरे पहाड़ी क्षेत्र की, हिमाचल–कश्मीर से लेकर, आसाम–मेघालय तक की समस्याएं एक समान ही है । समय–समय पर इस बात को वैज्ञानिकों और समाज सुधारकों ने उठाया है और संभवतः समय आ गया है कि पहाड़ी क्षेत्रों की पर्यावरण समस्याओं के निवारण के लिये हिमालय क्षेत्र आयोग बनाया जाये । इसके लिये यूरोप और अन्य देशों के पहाड़ी क्षेत्रों के अनुभवों से भी हमें शिक्षा लेनी होगी ।

ब्रज किशोर कुठियाला
01.01.09
अधिष्ठाता,
मीडिया अध्ययन संकाय,
गुरू जम्भेश्वर विश्वविद्यालय,
हिसार ।

बाढ़ की तबाही बारे पहले ही अगाह किया था आचार्य वर्मा ने

हमीरपुर, 25 अगस्त (नंदा) : आचार्य रत्न लाल वर्मा ने कहा है कि उन्होंने पहले ही आगाह किया था कि समय रहते पहाड़ों पर रुकते पानी तथा भू-कटान को नियंत्रित नहीं किया गया तो भविष्य में फिर बाढ़ें भारी तबाही मचाएंगी। उन्होंने सरकार से आग्रह किया है कि राष्ट्रीय रिमोट सैंसिंग एजैंसी के सहयोग से अदृश्य झीलों तथा पहाड़ों पर रुकते पानी का पता लगाकर समय रहते पग उठाए जाएं। इस पर हिमाचल प्रदेश विज्ञान प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद ने भी पहाड़ों पर रुकते पानी की मौजूदगी को तो माना ही, साथ ही इससे बचाव के प्रति अपनी असमर्थता भी व्यक्त करते हुए भविष्य में प्रलयकारी बाढ़ के पुन: आने की संभावना की पुष्टि की थी। इसमें राज्य तथा केंद्र सरकारों को खतरे की गंभीरता के प्रति लापरवाह रहने की ओर भी इशारा किया गया था। इस प्रकार दोनों ही बार आचार्य रत्न लाल वर्मा द्वारा बताए गए बाढ़ के इन कारणों की पुष्टि हुई। अध्ययन में कुछ तेजी तो आई परंतु बचाव के स्थाई उपाय अमल में नहीं आए। यही नहीं उन्होंने पृथ्वी के ध्रुवीय झुकाव में परिवर्तन आ जाने तथा दिन-रात एवं ऋतु के अंतराल के घटने बढ़ने की बात भी कर दी है। यदि यह बात सच निकली तो एक महत्वपूर्ण खोज कहलाएगी। श्री वर्मा अपने इस तर्क को भिन्न-भिन्न मंचों से उठाते रहे हैं। 31 जुलाई 2000 की आधी रात को सतलुज नदी में भीषण बाढ़ आई थी जिसमें लगभग 200 लोगों तथा 2000 पशुओं के जानें गई थीं, कई करोड़ों की संपत्ति तथा सरकारी परियोजनाओं को हानि पहुंची। नवम्बर 2000 के अंतिम दिनों में राष्ट्रीय रिमोट सैंसिंग एजैंसी हैदराबाद से राज्य विज्ञान प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद के माध्यम से सरकार को बाढ़ के कारणों पर जो रिपोर्ट गई उसमें बाढ़ के ऐसे ही कारणों को उजागर किया गया था।

समाचार पत्र पंजाब केसरी (हिमाचल केसरी)
जालंधर 26 अगस्त 2004
पृष्ठ 5

14-20/10/2003

कवि, साहित्यकार, पर्यावरणविद, समाज सेवक कई सम्मानों से अलंकृत किए जा चुके हैं, आचार्य रतन लाल वर्मा। हिमालय के संदर्भ में आचार्य रतन लाल द्वारा की गई व्याख्या ने वैज्ञानिकों को भी सोचने पर मजबूर कर दिया ...

□प्रतिनिधि

पर्यावरण प्रेम ने पहुंचाया शिखर पर

मिले। आचार्य रतन लाल वर्मा को अब तक लगभग दर्जन से अधिक सम्मान व पुरस्कार मिल चुके हैं और हिमालय के संदर्भ में की गई उनकी व्याख्या ने तो वैज्ञानिकों तक को सोचने पर विवश कर दिया है। 31 जुलाई 2000 को सतलुज नदी में आई बाढ़ को जब कुछ पक्षों द्वारा विदेशी शरारत कहा गया था, तब वर्मा ने इसे बिगड़ते पर्यावरण का प्रतिफल कहा था।

जिसकी बाद में दून संवेदन शोधशाला हैदराबाद ने भी पुष्टि की थी। हिमालय क्षेत्र पर मंडराते खतरों, बहुमंजिला निर्माण, हाउसिंग बोर्ड द्वारा बनाई जा रही कालोनियों को लेकर वर्मा द्वारा की गई टिप्पणियां सरकार को बार-बार संकेत करती रही हैं। श्री वर्मा द्वारा भू-विज्ञानियों द्वारा हिमालय के युवा होने के तर्क को तोड़ते हुए समय से पूर्व बूढ़ा होने का तर्क देकर न केवल हिमालय के स्वास्थ्य पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया, अपितु भू-वैज्ञानिकों को भी पुनर्चिंतन पर मजबूर कर दिया है। पर्यावरणविद आचार्य रतन लाल वर्मा ने पर्यावरण तथा विज्ञान नाम से वेबसाइट तैयार कराई है, जिस पर वर्मा के कार्यों को देखा जा सकता है। श्री वर्मा लगातार पर्यावरण को संवेदनशीलता से देखते हैं। उनका मानना है कि हर व्यक्ति को वन, वनस्पति, वन्य प्राणी और जल के संरक्षण के लिए जागरूक होना होगा, तभी विश्व प्राकृतिक विनाश से बच सकता है। उन्होंने पोलिथीन के प्रयोग को पर्यावरण के लिए घातक कहा है।

जैमिनी अकादमी पानीपत द्वारा रतन लाल वर्मा को आचार्य, पर्यावरण रत्न, शताब्दी रत्न, पदम श्रीलक्ष्मी नारायण स्मृति सम्मान तथा रामवृक्ष बेनीपुरी जन्मशती सम्मान द्वारा अलंकृत किया गया। वाराणसी पर्यावरण अकादमी, विश्वशांति सद्भावना एवं गंगा साहित्य अकादमी द्वारा इन्हें हिंदी रत्न, साहित्य अकादमी प्रतापगढ़ उत्तर प्रदेश द्वारा साहित्यश्री, श्रीचंद महाविद्यालय द्वारा राष्ट्र संचेतक कवि, नागपुर अकादमी द्वारा काव्य वैभव पुरस्कार तथा जबलपुर की अभियान संस्था द्वारा हिंदी भूषण सम्मान से सुशोभित किया गया है। हाल ही में रोटरी क्लब हमीरपुर ने आचार्य रतन लाल वर्मा को उनके पर्यावरण के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य के लिए विशेष सम्मान से सम्मानित किया गया। 14-20/10/2003

News Paper
Dainik Jagran, Dharamshala (H.P.) 16 May 2009

दैनिक जागरण, धर्मशाला (हि०प्र०) 16 मई 2009

पिघलेगी बर्फ तो बदलेगा धरती का गुरुत्व!

- अंटार्कटिका की बर्फ पिघलने से बढ़ेगा उत्तरी गोलार्द्ध के सागरों का स्तर

स्टीव कोनोर, लंदन

16-5-2009

दक्षिण ध्रुव यानी अंटार्कटिका दुनिया की बर्फ के सबसे बड़े भंडारों में से एक है। शोधकर्ताओं के मुताबिक अंटार्कटिका की बर्फ पिघलने से न केवल धरती की गुरुत्वाकर्षण क्षमता बदल जाएगी, बल्कि अंतरिक्ष में उसका घूर्णन (धुरी पर चक्कर लगाना) भी प्रभावित होगा। यही नहीं, विश्व के कुछ तटों पर समुद्र का जलस्तर औसत से कहीं ज्यादा बढ़ जाएगा।

वैज्ञानिकों की मानें तो बर्फ पिघलने के चलते उत्तर अमेरिका के पूर्वी व पश्चिमी तटों पर जलस्तर वैश्विक औसत से 25 फीसदी बढ़ जाएगा। इसके परिणामस्वरूप न्यूयार्क, वाशिंगटन व सैन फ्रांसिस्को जैसे शहरों में भयंकर बाढ़ आ सकती है।

आखिर कैसे बदलेगा गुरुत्व : पश्चिमी अंटार्कटिका की बर्फ गायब होने से दक्षिणी गोलार्द्ध से काफी द्रव्यमान कम हो जाएगा। जाहिर है कि उत्तरी गोलार्द्ध का द्रव्यमान ज्यादा होने के कारण वहां गुरुत्वाकर्षण दक्षिणी गोलार्द्ध के मुकाबले ज्यादा हो जाएगा। इससे न केवल पृथ्वी का घूर्णन प्रभावित होगा बल्कि दक्षिण के मुकाबले उत्तरी गोलार्द्ध के समुद्र तल में भी बढ़ोतरी हो जाएगी।

विश्व की तीन सबसे मोटी बर्फीली परतों में से ... अंटार्कटिका की तह है।

पर्वतों का कटता सीना और पर्यावरण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

हिमाचल प्रदेश के तेजी से प्रभावित होते पर्यावरण को समझने के लिए हमें एक विहंगम दृष्टि डालनी पड़ती है अपनी विशाल धरती के पिंड की बनावट के उस भाग पर जहां यह प्रदेश स्थित है। इसके पूर्व-उत्तर में बर्फ से ढके चांदी की तरह चमकते हिमालय के ऊंचे-ऊंचे शिखरों से फूटते नदी नालों के किनारे लाहुलों और किन्नरों की एक दूसरे से दूरी के अन्तर पर सजी छोटी-छोटी बस्तियां हैं तो पश्चिम दक्षिण में शिवालिक की छोटी-छोटी पहाड़ियों के पठारीय क्षेत्र की कम ऊंची-नीची धरती पर बसी घनी वादियां हैं। पूर्व की ओर हिमालय के उत्तर में अपनी पीठ पर छोटे-छोटे गांवों का बोझ उठाए शिवालिक की पहाड़ियों को छूते-ऊंचे पर्वत हैं तो उत्तर पश्चिम में वादियों से भरी हिम-शिखरों के तल को छूती शिवालिक की वही छोटी पहाड़ियां हैं। छलांग लगाकर भागता हुआ सतलुज, व्यास, रावी तथा उनकी सहायक नदियों का पानी इन्हीं ऊंचे पर्वतों से होकर आता है।

प्रकृति ने यहां धरती की बनावट को स्थानानुसार जीवनपयोगी बना रखा है जिसमें क्षरण अर्थात् परिवर्तन प्रकृति की सहज क्रियाओं जैसे जलवायु द्वारा धीरे-धीरे होता रहता है। यदि अप्रत्याशित ढंग से धरती और इसका पर्यावरण निरकुंश मानवीय क्रियाओं द्वारा प्रतिकूलता के साथ प्रभावित होता है तो उसी प्रतिकूलता के स्वर में उसका प्रत्युत्तर भी क्षण भर में प्रकृति से मिल जाता है जिसका अर्थ निकलता है जान-माल की पूर्ण न हो पाने वाली भारी हानि के रूप में। प्रकृति का यह प्रत्युत्तर मानवीय सोच तथा प्रयोगशाला की पकड़ से फिर परे चला जाता है। शेष रह जाता है कारणों को खोजने और नष्ट होते समय तथा साधनों के साथ निदान को ढूंढने का एक लम्बा सिलसिला। पर्यावरण को इस समय प्रभावित कर रहे हैं जलवायु तथा समाज में बढ़ता प्रदूषण। इसके पीछे है बढ़ती जनसंख्या का बोझ और प्रदर्शनोन्मुख वर्तमान विश्व समाज का रुझान। साथ ही उत्तरदायी है बढ़ती जनसंख्या के बोझ को सहने के लिए उपलब्ध साधनों के सदुपयोग वाली व्यवस्था का अभाव। 1971 की जनगणना के अनुसार इस प्रदेश की जनसंख्या 34,60,434 थी जो 1981 की जनगणना में 42,80,818

हो गई। 1991 की जनगणना के अनुसार यहां आवादी 51,70,877 तक पहुंच गई जो अब उससे बहुत आगे बढ़ चुकी है। विकास में वृद्धि सुख-सुविधाओं की प्राप्ति और प्रदर्शन की बढ़ती असीमित प्यास को मिटाने का कार्य सीमित धरती को करना पड़ रहा है। बढ़ते प्रदूषण और भू-असंतुलन के लिए यही प्रवृत्ति उत्तरदायी है।

नदी घाटी में नित नई चलाई जा रही पन-विद्युत परियोजनाओं के कारण पहाड़ों की छाती में बहुत गहरे तक छेदन किया जा रहा है। लाखों टन मिट्टी कुरेद कर बेझिझक नदी नालों में बहाई जा रही है। इर्द-गिर्द के पेड़-पौधे निर्दयता के साथ नष्ट किए जा रहे हैं। भूमि कटान से नंगा और बिंधता पर्वतों का सीना आए दिन बड़े-बड़े लाहसों अर्थात् कटती मिट्टी के रूप में अपना रुधिर बहाता रहता है। इन परियोजनाओं को बनाते समय पर्यावरण का इतना ध्यान नहीं रखा जाता है जितना बिजली एवं आय की प्राप्ति का रखा जाता है।

ऊंचे-ऊंचे पर्वतों तथा उनकी घाटियों तक पहुंचने के लिए सड़कों का जो जाल बिछता जा रहा है वे अधिकतर किसी न किसी नदी घाटी से होकर ही जाती हैं। इन सड़कों द्वारा हो रहे भूमि कटान का मलबा भी इन्हीं नदियों में जा गिरता है। इससे एक ओर तो नदी का तल ऊंचा हो जाता है तो दूसरी ओर पानी के अन्दर ही अन्दर छोटी-छोटी झीलें भी बन जाती हैं, जो किसी भी समय अपने भीतर जमा पानी को आगे धकेल कर उतराई के इलाकों में बाढ़ जैसी स्थिति उत्पन्न कर देती हैं। यही नहीं बरसात की ऋतु में कहीं-कहीं सड़कों के किनारे किए गए भारी कटान के कारण देत्यकार पहाड़ों का मलवा जान-माल की भी तबाही कर डालता है।

धन कमाने तथा विकास और दिखावे के छलावे में आधुनिक मनुष्य अपने लिए अपने ही अस्तित्व को मिटा डालने वाला तानाबाना स्वयं बुनता और उसमें फंसता जा रहा है। सीमेंट के भारी उद्योगों द्वारा भूमि क्षरण से हानि के साथ वायु प्रदूषण भी बढ़ता जा रहा है। बरमाणा तथा दाड़लाघाट में लगे सीमेंट उत्पादन के भारी उद्योगों को ही लीजिए, इनकी आपसी वायु दूरी भी कम है। इनमें उड़ने वाली मिट्टी के कणों के महीन पाउडर तथा धूएं की लपेट में आस-पास के कई गांव आ जाते हैं, जहां श्वास की बीमारी तथा अन्य रोग हो जाने का भय बना ही रहेगा। **हिम-शिखरों के समीप चल रही परियोजनाओं तथा**

ईंधन का उपयोग करने वाली अन्य गतिविधियों से तापमान में हो रही अविरल वृद्धि के कारण हिमखंडों के एकाएक बड़ी संख्या में पिघल कर नदियों के पानी में अचानक अप्रत्याशित बढ़ोतरी कर डालने से बाढ़ आ जाने और तबाही मचा डालने की आशंका भी बढ़ती ही जा रही है। इस समय प्रदेश में अनेकों जल-विद्युत परियोजनाएं चलाई जा रही हैं और कई प्रस्तावित हैं। नाथपा झाखड़ी, भावानगर, ब्यास-सतलुज लिंक, चमेरा, वैरासूल, कौल डैम, पार्वती, बसपा, पौंग आदि उल्लेखनीय हैं। एक छोटे से प्रदेश में वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों के जीवन की अनदेखी कर विकास के नाम पर मात्र वर्तमान लाभ की परवाह के साथ विपरीत प्रभावों का ध्यान किए बिना एकांगी निखार की चकाचौंध में पर्यावरण और असंतुलन की परवाह न करते हुए नित नई परियोजनाओं की ओर बढ़ते जाना अवश्य ही चिन्ता का विषय है।

पर्यावरण के महत्त्वपूर्ण अवयव पेड़ कम होते जा रहे हैं। 1998-1999 की प्रदेश की आर्थिक समीक्षा रिपोर्ट के अनुसार वनों के अधीन 36,986 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र दिखाया गया है। जबकि प्रदेश का कुल क्षेत्रफल 55,673 वर्ग किलोमीटर है। इससे स्पष्ट आभास मिलता है कि जो भूमि वनों के अधीन दिखाई गई है, उस सारी धरती पर वन हों, यह विश्वसनीय नहीं लगता। फिर 1991-92 से लेकर 1997-1998 तक प्रतिवर्ष जो भूमि वनों के अधीन बताई गई है, उसमें विशेष आपसी अन्तर नहीं है। इन आंकड़ों का व्यवहारिकता तथा उद्देश्यपूर्ण पकड़ के दर्पण में कोई प्रभावपूर्ण अर्थ नहीं निकलता है। चाहिए तो यह कि पेड़ों में कितनी वृद्धि या कमी हो रही है इसकी स्पष्ट आकृति दिखाने के लिए पेड़ों से युक्त भूमि की न्यूनतम इकाई के प्रतिवर्ष के तुलनात्मक आंकड़े दिखाए जाएं ताकि दी गई सूचना पर्यावरण के हित में जनता में अपनी सार्थकता प्रमाणित कर सके। पहाड़ों में बहुमूल्य जड़ी-बूटियों का धन कमाने के उद्देश्य से दोहन किया जा रहा है। उनके विलुप्त होने की आशंका बढ़ती जा रही है। पेड़ों के अंधाधुंध कटान तथा लगने वाले पेड़ों में होती कमी के कारण एक ओर जहां मिट्टी उखड़ती और बहती जा रही है वहीं, दूसरी ओर वनों से कई जानवरों तथा पक्षियों की प्रजातियां भी विलुप्त हो जाने के कगार पर पहुंच रही हैं। शिमला जैसे पर्वतीय नगर में बहुमंजिले असंख्य भवनों के निर्माण से दुर्घटनाओं का भय बढ़ता जा रहा है। फलों तथा फसलों के लिए निरंतर बढ़ता रासायनिक

खाद तथा कीटनाशकों का प्रयोग बीमारियों को बढ़ाने और धरती की उत्पादन शक्ति को नष्ट कर डालने का निमंत्रण देता जा रहा है।

खुदती खानें, सुरंगें और प्रतिदिन नदी नालों से उठती रेत-बजरी न जाने कैसे रख पाएंगे इस संतुलन को यथावत्? कैसे निकल पाएगा स्वच्छ पर्यावरण का पाठ पुस्तक एवं सेमिनार से बाहर और पहुंच पाएगा व्यवहारिकता के प्रांगण तक? कैसे बच पाएगा हमारा शांत सौंदर्य और जीवनधार बढ़ते वाहनों के काफिले से, मादकता की मार और विवेकरहित आधुनिकता के भीषण प्रहार से?

हाल ही में सतलुज नदी में आई भीषण बाढ़ का विनाशकारी तांडव हमने देखा। यह प्रलयकारी घटना प्रकृति से की जा रही अत्याधिक छेड़-छाड़ का ही परिणाम है। रामपुर से लेकर खाब तथा उसके भी आगे नदियों के किनारे बहुत ही कटान किया गया है और किया जा रहा है। सारा मलबा नदी में पड़ता है। जब वर्षा के पानी के बहाव के साथ कटी हुई या लाहसों की नरम मिट्टी भी बहने लगती है तो नदी का तल ऊपर उठ जाता है और उसके वेग में अधिक बल आ जाता है। पहाड़ी से गिरते दो फुट पानी के साथ यदि 100 घनफुट से अधिक मिट्टी का लहासा भी उस पानी के साथ नीचे बहता चला आए तो दो फुट पानी का वह तल 7-8 फुट ऊंचा भी उठ सकता है।

अभी रामपुर में फिर भूमि खिसकने के कारण सतलुज किनारे जान-माल की हानि हुई। सतलुज में आए अत्याधिक पानी को किसी और मुद्दे में उलझा कर समस्या को और जटिल बना देना तर्कसंगत नहीं है। पानी चाहे तिब्बत से आया हो या कहीं और से यह अब इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है। महत्त्वपूर्ण अब यदि कुछ है तो वह यह है कि जिस निर्दयता के साथ पहाड़ कटते जा रहे हैं, वन या पेड़ भी नष्ट होते जा रहे हैं, हम अपने भीतर दिखावे की कभी भी तृप्त न होने वाली भावना को पाले प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट करते जा रहे हैं और विवेक के मानदंडों से दूर निरंकुश गति से प्रकृति के विपरीत आचरण द्वारा अपने लिए विनाश का मार्ग प्रशस्त करने जा रहे हैं उससे बचें कैसे? जनसंख्या के बोझ से निपटने के लिए

साधनों का समुचित सदुपयोग करने वाली व्यवस्था कैसे लाएं?

यह तभी संभव है जब हम अपने विकासोन्मुख सामाजिक परिवेश को संतुलित विकास के साथ प्रकृति का अनुगामी बनाए रखें। अपने भीतर सरलता संवेदनशीलता एवं सह अस्तित्व की संस्कृति को पालें, जिससे हमारी धरती चिरकाल तक अपनी गोद में जीवन का पालन पोषण करती रहे जो समृद्धि शान्ति, उन्नति एवं सौहार्दपूर्ण संतोष के साथ सुखमय हो। परियोजनाओं एवं योजनाओं को बनाने में लगे विशेषज्ञ भी यदि इनके पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव से बचाने वाली सीमा तक अपनी पकड़ बनाने में सफल हों तो हमारा पर्यावरण बच सकता है। तभी चीड़ तथा देवदार के ऊंचे-ऊंचे पेड़ों से ढकी, आम और सेब के बगीचों से सजी, अन्य कई फल-फूलों से लदी, लहलहाती फसलों के साथ ठंडी-ठंडी वायु के संग गुनगुनाती यहां की सौंदर्यमयी स्वर्ग-सम-देव-धरती अपनी सार्थकता को खोने से बच सकती है।

---

1. दिव्य हिमाचल धर्मशाला (हि. प्र.) (संपादकीय पृष्ठ) 1 सितंबर 2000 तत्पश्चात अमर उजाला नाएडा, अजीत समाचार जालंधर, दैनिक जागरण जालंधर तथा अन्य कई समाचार पत्रों में प्रकाशित।
2. लेखक के इस लेख के प्रकाशन के लगभग तीन महीने पश्चात इस बाढ़ के कारणों पर राष्ट्रीय रिमोट सैंसिग एजैंसी, हैदराबाद से जो रिपोर्ट हिमाचल प्रदेश सरकार को आई उसमें बाढ़ आने के वैसे ही कारण बताए गए हैं जो लेखक ने अपने शोध लेख में पहले ही उजागर कर दिए थे। इसके प्रमाण चित्रित कर दिए गए हैं।

हिमालयी पर्यावरण खतरे में

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

उत्तर से सुदूर पूर्व की ओर फैले हजारों किलोमीटर लम्बे तथा सैकड़ों किलोमीटर चौड़े हिम पर्वतराज हिमालय अपने प्रभाव क्षेत्र में प्रकृति द्वारा प्रदत्त जिस पर्यावरणीय व्यवस्था को संजोये है वह इस भू-भाग के लिए ही नहीं अपितु भारतीय उपमहाद्वीप एवं एशिया के अच्छे खासे भाग के लिए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। नदियां, नाले, झीलें-प्रपात, घाटियां-चोटियां, हिम-तुषार, वन एवं वनस्पति, लहलहाते बगीचे, पत्थर-चट्टानें, भालू-रीछ, बाघ, गीदड़, कक्कड़, सकरालू, कस्तूरा आदि सैकड़ों प्रजातियों के वन्य प्राणी एवं पक्षी हिमालयी पर्यावरण के मुख्य अवयव हैं।

हिमालयी पर्यावरण की सजीव छटा की गोद में इस भू-भाग में मानवीय विकास के बीच विभिन्न सभ्यताओं से संस्कृतियां का जो स्वरूप उजागर होता गया उसमें कतिपय उदारवादी भिन्नता के साथ एकरूपता के भी दर्शन होते गये। यहां की प्राकृतिक सीमाओं के भीतर सहज रूप से विकसित, परिष्कृत एवं परिमार्जित होती गई संस्कृति ने समाज में शिष्टता, शान्ति, शालीनता तथा सुरक्षा बनाए रखी। यहां की संस्कृति पर्यावरण संवर्धन एवं प्रकृति के प्रति सम्मान के साथ प्रकृति के ही द्वारा प्रदत्त साधनों का सहज विनीत भाव से उपभोग एवं उपयोग करने की प्रेरणा भी जनमानस को देती रही है।

दीर्घकालीन शान्तिमय मानवीय जीवन के हित में जो अनुकूल था वह इसमें समाता गया और जो प्रतिकूल था उसे सांस्कृतिक प्रवाह ने उगल कर किनारे फैंक दिया। प्राकृतिक सीमाओं के विपरीत सांस्कृतिक परिवर्तन एवं बदलाव का रुझान तथा प्रयास पर्यावरण के लिए उसी प्रकार घातक है जिस प्रकार अनियन्त्रित निरी भौतिकीवादी एवं प्रदर्शन की भावना से आक्रांत एकांगी विकास से उत्पन्न प्रदूषण जीवन के लिए घातक है।

हिमालयी क्षेत्र के साथ-साथ विश्व की बढ़ती जनसंख्या तथा बढ़ते व्यक्तिगत सामर्थ्य के कारण विकास आवश्यक है। इसके बिना बाहरी जीवन का निखार कठिन है। परन्तु विकास के घोड़े एवं गाड़ी में बैठना समय की मांग होने के साथ-साथ जानलेवा दुर्घटना से बचने के लिए उसकी गति को नियन्त्रण में रखने की भी निंतात आवश्यकता है।

हिमालयी पर्यावरण पर विश्लेषणात्मक दृष्टिपात यदि हम करें तो वैज्ञानिक मान्यताओं के अनुसार आज युवा कहे जाने वाले हिमालय पर्वत समय से पहले बूढ़े होते लगते जा रहे हैं। खनन, क्षरण एवं कटान एक ओर इन पर्वतों के सीने को छलनी कर खोखला करता जा रहा है तो इनकी घाटियों एवं तलहटी में बनते जा रहे बांध इनके पैरों को सूजन की तरह भारी बनाते जा रहे हैं। भूमि का एक अच्छा खासा भाग कंकरीट तथा सीमेंट के तले आकर कठोर तथा शुष्क बनता जा रहा है तो शेष की उर्वरा शक्ति एवं वायुमण्डलीय अनुकूलता पर चलने वाले वाहनों में उत्तरोत्तर होती जाती बढ़ोतरी से धुएं, ताप तथा स्थानान्तरित होते पॉलीथीन आदि के कचरे के कारण प्रतिकूल प्रभाव पड़ता जा रहा है। अंधाधुंध होते बहुमंजिले निर्माण से भूकम्पीय त्रास्दी एवं भारी प्राण हानि का भय भी बढ़ता जा रहा है तो नित नई बनती तथा खुद-खुद कर चौड़ी होती सड़कों के कारण वन एवं वनस्पतियों के लिए उपलब्ध भूमि का आकार घटता जा रहा है। विस्फोटों मशीनों तथा अन्य माध्यमों से उत्सर्जित ताप के कारण हजारों सालों से सुरक्षित बर्फ के पहाड़ों के पिघलने का भय उत्पन्न हो गया है तो साथ ही इस प्रकार सागर की ओर बहते अतिरिक्त पानी एवं मिट्टी के तले दबता जाता थल, जलराशि के आकार को भी बढ़ाता जा रहा है। चट्टानें टूटती जा रही हैं, वन कटते जा रहे हैं, तो प्रकृति के अवयव शेर, बाघ, चीते, भालू, रीछ, सकरालू, गीदड़, ककड़, कस्तूरा, अन्य पशु और पक्षी घटते जा रहे हैं। हिमालय सहित सारी धरती का पर्यावरण प्रदूषित तथा असन्तुलन इतना गंभीर होता जा रहा है कि महामारी, भूकम्प, विश्वयुद्ध, गृहयुद्ध, अतिउग्र, आतंकवाद, विषाक्तता एवं वायुमण्डलीय विकृति द्वारा धरती पर विनाश की मात्र कोरी कल्पना न रह कर भविष्य में उद्घटित होने वाला कटु सत्य प्रतीत होता जा रहा है।

हिमालयी क्षेत्र के पर्यावरण को बचाने के लिए उपाय सोचे तो जा रहे हैं और अपनाये जाने के धरातल के चित्र तक खींचे भी जा रहे हैं। परन्तु पर्यावरण के उपायों में सुधार के आवश्यक अवयव, त्याग, न्याय, दया, सरलता की कमी के प्रांगण में, प्रकृति की स्नेहमयी छाया से दूर आगामी पीढ़ियों के जीवन की प्रवाह के वीराने में वर्तमान में अनियन्त्रित असीम विश्वव्यापी भौतिक समृद्धि की प्राप्ति की सोच के चलते, पर्यावरण की समस्या यहां भी गंभीरता की ओर अग्रसर

होती दिखाई देती जा रही है।

हिमालय के पर्यावरण को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाले इस समय निम्नलिखित चार प्रमुख कारण हैं :-

1. द्रूत गति से बढ़ते वाहन

2. भारी तथा निरन्तर कटान से प्रभावित पहाड़, नदी, घाटियां

3. बढ़ती विश्वव्यापी ऊष्णता

4. भूकम्प

1. द्रूत गति से बढ़ते वाहन—यहां के पर्वतीय प्राकृतिक पर्यावरण को तीव्र गति से बढ़ते वाहनों एवं गाड़ियों से हानि पहुँचती जा रही है। पर्वतों के मनोहारी स्थलों का सुरम्य परिवेश सड़कों के बढ़ते जाल के भार तले दब कर घटता जा रहा है।

वाहनों की संख्या में होती वृद्धि द्वारा उसके प्रभाव को जानने के लिए लेखक ने निजी रूप से फरवरी 2001 को हिमाचल प्रदेश के हमीरपुर नगर में प्रवेश करने तथा नगर से बाहर जाने वाले वाहनों का साढ़े सात घंटों के लिए सर्वेक्षण करवाया था। इसके अनुसार इस छोटी सी अवधि में 2226 चौपहिया तथा 663 दोपहिया वाहन नगर में प्रवेश हुए। 2232 चौपहिया तथा 647 दोपहिया वाहन इस नगर से बाहर गये। इस नगर में ही नहीं अपितु जिला में 1987-1988 में केवल एक टैक्सी तथा नगर में चार-पांच कारें ही थीं। इसके दृष्टिगत यह बढ़ोतरी आश्चर्यजनक है। वाहनों की इस बढ़ोतरी को जानने के लिए इसी नगर में अक्तूबर 2001 को पुनः उसी अवधि के लिए सर्वेक्षण करवाया गया। इसके अनुसार 2450 चौपहिया तथा 802 दोपहिया वाहन इस नगर में प्रवेश हुए। 2465 चौपहिया तथा 840 दोपहिया वाहन नगर से बाहर गये।

वर्तमान प्रदूषित सोच के चलते तो बढ़ते विकास का यह पुंज इतना सुविधाजनक नहीं रह पायेगा जितना सुविधानजनक यह इस समय समझा जा रहा है। समय रहते आगे आने वाली भयावह स्थिति एवं खतरे को भांपते हुए एक उचित सोच के साथ इस ओर उचित पग उठाने की आवश्यकता है।

निरन्तर भारी कटान तथा बढ़ती उष्णता

हिमालयी क्षेत्र में सड़कों तथा परियोजनाओं द्वारा होता निरन्तर कटान भावी पीढ़ियों के सुरक्षित जीवन के लिए कोई शुभ लक्षण नहीं माना जाना चाहिए। इसके कारण नदियों के किनारे तथा उनके समीप मिट्टी जमा हो रही है। इस जमा कच्ची मिट्टी की परत पर परत चढ़ती जाती है। यह विश्वव्यापी बढ़ती उष्णता के कारण हिम खण्डों, हिम झीलों तथा भारी वर्षा के अतिरिक्त पानी के साथ गठबंधन कर एक बार नहीं अपितु अनेक बार 31 जुलाई 2000 को सतलुज नदी में आई बाढ़ सरीखी भीषण बाढ़ की तरह तबाही मचा सकती है। इतना ऊंचा पानी का तल अकेली वर्षा या बादल के फटने से नहीं उठ सकता है, जितना ऊंचा 31 जुलाई 2000 की रात्रि को उठा। यह नदी के किनारे मिट्टी की निरन्तर भारी मात्रा में उपलब्धता से हुआ। हिमाचल प्रदेश में 31 जुलाई 2000 की रात्रि को सतलुज नदी में भीषण बाढ़ आई थी जिसने 100 से अधिक लोगों तथा 2000 पशुओं के प्राण हर लिए थे। हजारों मकान पानी में बह गये। नदी के पानी का स्तर कहीं लगभग 70 फुट तक ऊंचा उठा भी बताया गया। यह बाढ़ सभी के लिए रहस्य बनती हुई दूसरे पड़ोसी चीन देश को संदेह के घेरे में ला रही थी। उस समय पर्यावरण के दृष्टिकोण से इस बाढ़ के कारणों पर लेखक ने विस्तृत लेख लिखा जो सितम्बर 2000 के कई दैनिक तथा अन्य समाचार पत्रों के सम्पादकीय परिशिष्टों पर प्रकाशित होता रहा। विदेशी शरारत की संभावना को नकारने के साथ बाढ़ के उपरोक्त वही कारण पहले ही बता दिए थे जो बाद में नवम्बर 2000 के अन्तिम सप्ताह में हिमाचल प्रदेश सरकार को सौंपी राष्ट्रीय रिमोट सैंसिंग एजेंन्सी हैदराबाद की रिपोर्ट में बताए गए थे। यदि बाढ़ का कारण केवल वर्षा और साथ में बादल फटना ही माना जाए तो इससे ऊंचे उठे पानी का तल तुरन्त नीचे नहीं आ सकता है। बाढ़ आने के लेखक के प्रकाशित कारणों तथा राष्ट्रीय रिमोट सैंसिंग एजेंन्सी द्वारा बताए गए कारणों में समानता होने का समाचार हिमाचल प्रदेश में पढ़े जाने वाले हिन्दी के लगभग सभी समाचार पत्रों में प्रमुखता से प्रकाशित हुआ था।

विश्वव्यापी तापमान तथा धरती का कटान यदि यूहीं बढ़ता गया तो सागर का पानी ऊपर आ जाएगा और धरती के जलमग्न हो जाने का भय भी बढ़ जाएगा। मिट्टी द्वारा तबाही की स्थिति को दृष्टिविगत न करते हुए इसके बचाव के नये उपाय ढूंढने तथा उन्हें अपनाने की आवश्यकता है।

भूकम्प

आज जब कभी और जहां कहीं भी भूकम्प से जान-माल की तबाही होती है तो टैक्टॉनिकल प्लेटों के टकराने की बात समाचार पत्रों में प्रकाशित हो जाती है। प्रत्येक बार ऐसा ही होने से भूकम्प आने के अन्य कारणों से लोगों का ध्यान हट जाएगा। यहां यह उल्लेख कर देना इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि हिमालयी क्षेत्र में भूकम्प की अधिक संभावना व्यक्त की जा रही है। हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा में भूकम्प आने की अधिक संभावना इसलिए भी तो है क्योंकि वहां सदियों से मकानों के लिए स्लेटों के कारण खनन भी तो होता चला आ रहा है। मानव जन्य इस कारण पर हमारा अधिक ध्यान क्यों नहीं जाता है? बर्फ के पहाड़ उष्णता के कारण पिघल रहे हैं, चट्टानों और मिट्टी का कितना क्षरण हो रहा है इस ओर भी हमारा समुचित ध्यान क्यों नहीं जाता है?

क्षरण सहज प्राकृतिक क्रिया भी है जो धीरे-धीरे होती रहती है। परन्तु इसे तीव्रता हम देते जा रहे हैं। वर्तमान एकांगी विकासोन्मुख अनियन्त्रित मानवीय प्रवृत्ति इसके लिए दोषी है। धरती के नीचे हलचल है। इसे रोका नहीं जा सकता। वह सदा रहती आई है और रहेगी। **प्रकृति सजीव है। पूरे ब्रह्माण्ड में कुछ भी ऐसा नहीं है जहां हलचल न हो। हलचल के बिना जीवन और उसका विकास संभव है ही नहीं। आवश्यकता है हलचल की प्राकृतिक तीव्रता को बढ़ाने में अपना योगदान कम करने की। इन कारणों को विशेषज्ञ यदि दृष्टिविगत कर देंगे तो साधारण लोगों में जीवन की उचित तथा सुरक्षित जीवन शैली एवं पद्धति को अपनाने के वातावरण का सृजन नहीं हो पाएगा।** इस प्रकार प्रदूषण और असन्तुलन को बढ़ने से रोकने का मार्ग हमसे छूटता चला जाएगा।

निर्बाध अनियन्त्रित बढ़ती भौतिकवादी समृद्धि एवं प्रदर्शन की प्रवृत्ति के कारण धन कमाने के उद्देश्य से पर्यावरण को ध्वस्त करना और पुनः धन कमाने के लिए पर्यावरण को स्वच्छ करने की बात करना कहां तक उचित होगा? इस पर भी मंथन करने की आवश्यकता है। पर्यावरण जैसे अपने तथा अपने बच्चों के जीवन से जुड़े अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं संवेदनशील विषय को किसी स्वार्थ साधन का अंग बनाए जाने से बचाया जाना चाहिए। **हिमालयी पर्यावरण सहित समूचे पर्यावरणीय परिदृष्य को इसके सही अर्थों में समझने**

तथा सही दिशा में सही प्रयत्न करने की नितांत आवश्यकता है। अन्यथा बिना रोकथाम के इस पर होते चहूं ओर से बहुधारी प्रहार के कारण वर्तमान 21वीं शताब्दी धरती पर मानवीय जीवन की अन्तिम शताब्दी बन कर रह जाएगी। फरवरी 2001 को प्रकाशित तथा यहां संकलित ''पर्यावरण, हम और भूकम्प'' लेख में भी लेखक ने यही आशंका व्यक्त की थी। अब दो ही विकल्प शेष हैं एक तो यह कि कभी भी तृप्त न होने वाली असीमित सुख-समृद्धि की प्यास के चलते भावी पीढ़ियों के जीवन की अगली शताब्दी में प्रवेश की परवाह न कर वर्तमान में वैभवशाली तनावपूर्ण जीवन जी लिया जाए या फिर भावी जीवन की परवाह के साथ वर्तमान में नियन्त्रित विकासोन्मुख सुख के साथ शान्तिमय जीवन जिया जाए।

हिमालयी पर्यावरण को बचाने के लिए इसके साथ लगते सभी देशों को सामूहिक प्रयत्न करने की आवश्यकता है। इसी प्रकार धरती के पर्यावरण को बचाने और संभावित विनाश को टालने के लिए संसार के सभी देशों को तुरंत प्रभावशाली सामूहिक प्रयास करने की आवश्यकता है। यह तब ही संभव होगा **जब प्रकृति को सजीव समझने के सिद्धान्त को मान्यता दी जाए।** प्रकृति द्वारा प्रदत्त साधनों के न्यायोचित उपभोग के लिए प्रकृति की अनुगामी सहज एवं साधारण जीवन शैली का निर्धारण किया जाये, उसे ही प्रचारित किया और अपनाया जाए। संतुलनात्मक विकास के लिए प्रकृति को सजीव मानते हुए इस शैली को मान्यता दी जाए।

इसके प्रभावशाली क्रियान्वयन के लिए **समुचित अधिकारों एवं शक्तियों से सम्पन्न एक विश्व पर्यावरण परिषद् के गठन की अब नितांत आवश्यकता है।** अनियन्त्रित विश्वव्यापी प्रकृति विरोधी भौतिक समृद्धि की होड़ के चलते जीवन हेतु प्रदूषण मुक्त पर्यावरण के लिए यह आवश्यक है। अन्यथा महाविनाश तथा पृथ्वी को जीवनविहीन, बंजर एवं अनुत्पादक होने से नहीं बचाया जा सकेगा। यही और केवल मात्र यही उपाय है।

लेखक विज्ञान जगत से अपील करते हैं कि वह यदि बढ़ रहे प्रदूषण और असन्तुलन की वर्तमान स्थिति की गंभीरता को भांपते हुए ऐसा ही सुझाव दें जिसके लिए उनसे विनम्र निवेदन है तो उस पर अवश्य ही कार्यवाही होगी। मानव ही नहीं बल्कि धरती की सारी जीव जाति

की भावी पीढ़ियां इसके लिए उनकी आभारी होंगी। अब समय किसी लम्बे काल के उपरांत होने वाली खोज या प्रयोग के परिणाम द्वारा निकलने वाले उपायों की प्रतीक्षा के लिए शायद कम ही बचा है। हिमालयी क्षेत्र के साथ-साथ सारे संसार के करोड़ों मानव तथा मानव कल्याण से जुड़ी हजारों संस्थायें इस दिशा में साथ देने के लिए आपके ही मार्गदर्शन की राह देख रही हैं। लेखक की यह अपील तथा सुझाव विस्तृत पर्यावरण लेख के साथ इन्टरनेट पर SOS India.com पर भी उपलब्ध है।

---

1. दिव्य हिमाचल धर्मशाला (संपादकीय पृष्ठ) 23 नवम्बर 2001 दैनिक जागरण जालन्धर, नोऐडा (पांचाल) 7 मई 2002 हिमाचल ज्ञान विज्ञान समिति (हमीरपुर) स्मारिका 13-15 जून 2003 में प्रकाशित

   नोट :- ऐसा ही शोध परक पत्र लेखक ने 2 नवम्बर 2001 को राष्ट्रीय सेमिनार (युग-युगीन हिमालय और वर्तमान चुनौतियां) में बाबा बालक नाथ महाविद्यालय चकमोह, हिमाचल प्रदेश में प्रस्तुत किया था। इस सेमिनार में भारत के रक्षामन्त्री, अरुणाचल प्रदेश के मुख्यमन्त्री, हिमाचल प्रदेश के मुख्यमन्त्री तथा निर्वासित तिब्बती सरकार के मन्त्रियों सहित देश भर से विद्वानों ने भाग लिया था।

फिर आ सकती है प्रलयंकारी बाढ़, डगमगा सकता है संतुलन भी

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति अत्यंत विशाल और विराट है। यह अनंत गहराईयों को समेटे है और इसके रहस्य भी असीम हैं। मानव इस विराट प्रकृति की एक रचना है, जो विवश है इसकी विशालता की परिधि की मर्यादित सीमाओं के भीतर विकसित होकर अपना जीवन चलाने के लिए। हम यदि हिमाचल प्रदेश की प्राकृतिक भू-संरचना पर विचारपूर्ण दृष्टिपात करें तो पता चलता है कि इसके उत्तर-पूर्व में पर्वतराज हिमालय के हिमाच्छादित ऊंचे शिखर हैं। यहां न जाने कितने हजारों लाखों वर्षों से बर्फ की परत पर परत चढ़ती आई है, जिसने पहले कभी पिघलने का नाम तक नहीं लिया। यह अलग बात है कि परत पर चढ़ती परत से बोझिल होते हिमखंड पहले भी टूटते रहे हैं।

इसी प्रकार मानवीय पग भी करोड़ों वर्षों से इस धरती को मापते आए हैं। परन्तु धरती पर पड़ते मानवीय इन पगों ने आज एक नया रूप ले लिया है। अपनी अनियंत्रित होती चाल से डगमगाते यह पग अपने सहज जीवनोपयोगी मार्ग से भटके हुए अब जीवनदायी धरा को निर्दयता के साथ रौंद डालने में लगे हैं। बात कोई पुरानी नहीं है। मात्र पिछले 30-40 के दशक के बाद ही की है, जब से मानव प्रकृति की अनुगामी भावना प्रधान आचरणयुक्त जीवन शैली से मुंह मोड़ता-मोड़ता भावनाहीन स्वार्थ रंजित, प्रदर्शनोन्मुख तनावयुक्त, वर्तमान अशांत जीवनशैली की गहराईयों में जाता गया है। परिणामस्वरूप प्रकृति के साथ संबंधों को खोती इस शैली से अनियंत्रित होती गति से इतना ताप उत्सर्जित होना शुरू हो गया कि पर्वतों पर अब बर्फ की जगह पानी की बौछारें पड़ने लगी हैं। ग्रीष्म में पानी की इन बौछारों से पुरानी पड़ी बर्फ भी पिघलने लगी है। यह उष्णता इस गति से बढ़ती जा रही है कि निकट भविष्य में पृथ्वी पर जीवन के झुलस कर समाप्त हो जाने की आशंका भी व्यक्त की जा सकती है। इसे चाहे ग्लोबल वार्मिंग का नाम दें या मानवीय कृत्यों का परिणाम जाने।

इसी बढ़ती विश्वव्यापी ऊष्णता के दर्पण में हिमाचल प्रदेश की सतलुज आदि नदियों में फिर प्रलंयकारी बाढ़ के आने के चित्र को देखा और समझा जा सकता है। प्राकृतिक प्रक्रिया से टकराव व बाढ़ से बचाव के वर्तमान मानवीय

प्रयास दीर्घकाल तक जीवन की रक्षा नहीं कर सकते। मर्यादित प्रकृति के शक्तिशाली पंजों के सामने ये प्रयास बहुत बौने पड़ जाएंगे। **वर्षा की ऋतु में आकाश से पड़ते पानी से बिंधकर पिघलते हिमखंड अपने पीछे रोके पानी को भी एक साथ आगे धकेल देंगे।** इस प्रकार वर्षा के पानी के साथ मिलता यह अतिरिक्त पानी विकासात्मक गतिविधियों की साक्षी में नदी घाटियों के किनारे जमा कटी मिट्टी से गठबंधन करता हुआ नदी के तल को अनुमान से ऊपर उठाकर भारी जान-माल की तबाही कर डालेगा। 31 जुलाई 2000 की अर्धरात्रि को उफनी सतलुज नदी ने सैंकड़ों लोगों तथा हजारों पशुओं के प्राण हर लिए थे। लेखक ने पांच दिसम्बर 2000 को पहाड़ों पर बन रही अदृश्य झीलों व रुके पानी का पता लगाने और उसके उपाय करने का आग्रह सरकारों से किया था। 15 फरवरी 2001 व 16 फरवरी 2001 को इस रुके पानी पर प्रकाशित हिमाचल प्रदेश राज्य विज्ञान प्रौद्योगिकी और पर्यावरण परिषद की रिपोर्ट में भी लेखक की बात एवं धारणा ठीक साबित हुई है। पहाड़ों के हल्का पड़ने और तराई के इलाकों के बोझिल होने से हिमालयी क्षेत्रों का संतुलन भी डगमगा सकता है। **जो हिला सकता है यहां की धरती को भी। यहीं नहीं ध्रुवों के हिम पर्वतों की दिन-रात पिघलती लाखों साल पुरानी बर्फ और पिघलने की इस प्रक्रिया की गति में होती तीव्र बढ़ोतरी से निकलता और आगे जाता पानी समूची पृथ्वी के संतुलन को भी बिगाड़ सकता है। इस प्रकार प्रभावित हो सकता है धरती का ध्रुवीय झुकाव और घट-बढ़ सकता है, दिन रात ग्रीष्म और शरद का अंतराल भी। प्रकृति के विनाशकारी थपेड़ों के आगे बहुत बौने पड़ते हम यदि समय रहते अपनी जीवनशैली की कमियों की ओर झांक लें तो अधिक अच्छा होगा। अन्यथा भावी पीढ़ियों के जीवन के व्यापक हित में हमारा व्यवहार न्यायसंगत नहीं कहला सकेगा।**

दैनिक जागरण जालंधर पंजाब 2 सितम्बर 2004 दिव्य हिमाचल धर्मशाला 19 जुलाई 2004 में प्रकाशित

इस शोध लेख में वर्णित पृथ्वी के संतुलन, पृथ्वी की ध्रुवीय स्थिति तथा विश्व के समय के प्रभावित होने के लेखक के शोध निष्कर्ष की पुष्टि 5 वर्ष पश्चात लंदन के हवाले से 16 मई 2009 को दैनिक जागरण तथा अन्य समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचार से भी हो जाती है। इस समाचार में दक्षिण ध्रुव की बर्फ पिघलने के कारण पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण का बदलना तथा इसका अपनी धुरी पर चक्कर लगाना भी प्रभावित होना बताया गया है। प्रमाण के रूप में इस समाचार का चित्रण पिछले पृष्ठों पर किया गया है।

पर्यावरण और पिघलते पर्वत

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति एक ऐसी ऊर्जा-व्यवस्था है जो सभी पदार्थों, रूप, आकार-प्रकार और सामर्थ्यों की जन्मदाता और उनकी विलुप्ति का कारण है। यह अपने गर्भ में उन सभी असीमित पदार्थों, प्रभावों तथा क्रियाओं को भी समेटे हुए है जिनकी खोज अभी तक शेष है।

यह कह पाना भी संभव नहीं है कि मानव इनके बारे में वर्तमान जीवन की श्रृंखलाओं के इतिहास के इस काल खंड में आगे विशेष क्या और कितना कर पाएगा? यह कहना भी संभव नहीं है कि हम नया लगने वाला जो कुछ बनाने का दावा करते हैं उसका प्रभाव तथा परिणाम सर्वथा वैसा ही बना रहेगा, जैसा आज हमने पाया है, या भविष्य में प्रकृति के अज्ञात किसी प्रभाव द्वारा उसमें अपेक्षा के विपरीत परिवर्तन आ जाएगा।

हम हिमाचल प्रदेश जैसे पहाड़ी प्रदेश के प्राकृतिक आवृत को ही लें तो इसके उत्तर-पूर्व में बर्फ से ढके ऊंचे पर्वत हैं। उत्तर-पश्चिम में वादियों से भरी हुई शिवालिक की पहाड़ियां हैं। पूर्व की ओर हिमालय के पश्चिम दक्षिण में शिवालिक की इन्हीं पहाड़ियों को छूते ऊंचे पर्वत हैं। सतलुज व्यास, रावी आदि नदियों का तीव्र गति से बहता हुआ पानी इन्हीं पर्वतों से होकर आता है। इस प्रदेश में 31 जुलाई 2000 की अर्धरात्रि को आई, सैंकड़ों लोगों और हजारों पशुओं के प्राण हरने वाली सतलुज नदी की भीषण बाढ़ के पश्चात तिब्बत में पारछु नदी में रुके पानी के कारण बाढ़ आने का डर सतलुज नदी के किनारों पर बसे लोगों को रह-रहकर डराता रहा है। बाढ़ से बचाव के प्रयासों से संबंधित सरकारी तन्त्र का ध्यान तथा साधनों का व्यय भी इस दिशा में बार-बार होता रहा है। अब फिर हिमाचल प्रदेश में पारछु झील के पानी द्वारा तबाही की आशंका के समाचारों में तेजी आनी आरंभ हो गई है। इस झील का पता जून-जुलाई 2004 को लगा था। उसके बाद इस झील में पानी की गहराई, इसके आकार में बढ़ोतरी तथा इसके मुहाने पर बने कृत्रिम मलबे के बांध से पानी रिसने लगा। झील द्वारा सतलुज नदी में बाढ़ का खतरा कई बार बना और कई बार

टला। जून 2005 के अन्तिम सप्ताह में इस झील से पानी के बह जाने की सूचना सामने आते ही सरकार ने सावधानी बरती। केन्द्र सरकार भी सतर्क हुई समय रहते प्रशासन ने शलंखर स्पीलो, तगलीं, गछोटू लियों, टापरी, कड़छम, किल्वा, चैलिंग गांव खाली करवा दिए। प्रशासन तथा सेना को सतर्क कर दिया गया। 26-6-2005 को इस झील से निकले पानी से भारी मात्रा में सतलुज नदी में पानी और गाद बहने लगी। हाई अलर्ट कर दिया गया। नदी का जल स्तर 30 से 40 फुट तक ऊंचा उठ गया।

26 जून 2005 को ही झील से निकले पानी से सतलुज नदी में बाढ़ आ गई। खाव, खारो, कड़छम, नोगली, यंगथम, प्वारी, नाथपा झाकड़ी के पुलों को हानि पहुंची। लगभग 7-8 अरब की सम्पत्ति की हानि हुई। सरकारी समाचार के अनुसार 2000 लोग इस बाढ़ से प्रभावित हुए। नदी के किनारे से लोगों को हटाने तथा सरकार द्वारा सर्तकता बरतने से प्राण हानि से बचाव हो गया।

तिब्बत के सीमांत गांव गुमार से इस बाढ़ से भारी तबाही हुई थी। वहां से छः शव सतलुज में बहते देखे गए। समाचारों के अनुसार लगभग 5000 लोगों को नदी किनारे से हटाया गया। उस समय भी 2000 की बाढ़ की तरह इस पानी के आने के बारे में भी अटकलबाजियां लगती रहीं, जबकि यह साफ हो चुका था कि यह झील पारछु नाले पर पहाड़ी के मलवे के गिरने से बनी है। इससे चीन द्वारा हमारे किसी नुक्सान के प्रयास की संभावना रद्द हो जाती है। **इन अटकलबाजियों से ऐसी झीलों के बनने, बाढ़ों के आने तथा अन्य प्राकृतिक आपदाओं द्वारा भारी जान-माल की तबाही के वास्तविक कारणों को समझने, उनका पता लगाने तथा उन्हें दूर करने के उपायों को अपनाने में हम से भूल हो जाएगी। पारछु नाले पर बनी झील का निर्माण वास्तव में एक पर्यावरण की समस्या की ही देन है। हम पर्यावरण जैसे प्रकृति से जुड़े अति महत्त्वपूर्ण विषय को निरंकुश विकास तथा राजनीति के अर्थों में समझने का प्रयत्न कर रहे हैं जो ठीक नहीं है।** यही कारण है कि विश्व स्तर पर लाख उपाय करने पर भी यह समस्या विकट से विकटतम ही होती चली जा रही है। ग्लोबल वार्मिंग का स्तर लगातार बढ़ता जा रहा है। इससे पृथ्वी के ध्रुवों तथा ऊंचे पर्वतों पर जमी लाखों वर्ष पुरानी बर्फ के पिघल जाने की स्थितियां उत्पन्न हो गई हैं। पर्वतों पर बनती झीलों, बाढ़ों तथा मौसम में परिवर्तन का रुझान भी बहुत कुछ इसी कारण से है।

संसार में इस समय डेढ़ लाख के आस-पास हिम खंड़ पिघल रहे हैं। गोमुख ग्लेशियर व एवरेस्ट चोटी (सागर माथा) तथा उसके साथ लगते ग्लेशियर पिघल रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय हिम आयोग की रिपोर्ट के अनुसार भारत के औसत तापमान में अगले कुछ वर्षों में वृद्धि की संभावना है। हिमाचल प्रदेश में भी ग्लेशियर तेजी से पिघलते जा रहे हैं। इससे भविष्य में पन बिजली परियोजनाओं को हानि पहुंचेगी तथा बाढ़ द्वारा अन्य जान माल की तबाही भी होगी। इसे सही दिशा में किए गए प्रयासों द्वारा वर्तमान सोच के चलते कुछ टाला तो जा सकता है पर हमेशा बचा नहीं जा सकता है। पृथ्वी पर तेजी के साथ पिघलते बर्फ के पहाड़ों का पानी, पर्वतों के अन्य ग्लेशियरों और वर्षों के साथ बहती गाद से गठबंधन करता हुआ अब सागर के पानी के तल को अपेक्षा से ऊपर उठा देगा इससे जहां अतिरिक्त भू-भाग पानी में समा जाएगा वहीं अतिरिक्त तथा अचानक जल भार द्वारा भू-गर्भीय हलचल के प्रभावित होने से शीघ्र किसी भूकंप की तीव्रता के बढ़ने की संभावना बढ़ गई है।

इससे निकट भविष्य में बाढ़ों के आने तथा 26-12-2004 को आई सुनामी लहरों सरीखी तबाही तथा ऐसी प्राकृतिक आपदाओं की पुनरावृत्ति की प्रबल संभावना है। इससे पृथ्वी का ध्रुवीय झुकाव तथा समय फिर प्रभावित होगा जो जलवायु के और अधिक परिवर्तित होने का कारण बनेगा। प्रकृति के रहस्य जिस प्रकार गहरे और जटिल है, उसी प्रकार जटिल है इनके सही कारणों तक पहुंचने का मार्ग भी। जुलाई 2004 में भी पारछू झील की चर्चाओं के बीच बर्फ के अत्यधिक पिघलने तथा सागर की ओर जाते इस पानी के कारण पृथ्वी के डगमगाने से ध्रुवों के प्रभावित होने की आशांका लेखक ने 19 जुलाई 2004 तथा 2 सितंबर 2004 को प्रकाशित लेख में व्यक्त की थी। 26-12-2004 की सुनामी के प्रभाव ने इस अनुमान को वास्तविकता का रूप दे दिया। 11 जनवरी 2005 को सुनामी के अध्ययन में लगे वैज्ञानिकों के हवाले से यह समाचार प्रकाशित हुआ कि 26.12.2004 को पृथ्वी डगमगाई, इसके ध्रुव हिल गए तथा दिन-रात का समय भी प्रभावित हुआ। पर्यावरण के अर्थों को लालच भरी समृद्धि के पक्ष में मरोड़ना और उस पर चलना भयंकर प्राकृतिक आपदाओं द्वारा शीघ्र ही महाविनाश का कारण बन सकता है।

दैनिक जागरण धर्मशाला 29 अप्रैल 2006 पृष्ठ 6 पर प्रकाशित

खण्ड-3

धरती पर अंधाधुंध मानवीय क्रियाएं,

बदलती भौगोलिक परिस्थितियां,

पर्वत, भवन और भूकम्पीय आपदाएं।

कारण, घातक प्रभाव तथा सुरक्षात्मक उपाय।

लेखक के पूर्व प्रकाशित शोध लेखों का संकलन।

नए शोध निष्कर्ष:

1. वर्तमान शताब्दी मानवीय जीवन की अंतिम शताब्दी

2. वर्तमान शताब्दी में पृथ्वी अपनी कक्षा से बाहर जा सकती है।

भूकम्प के समय हिमाचल प्रदेश के लाखों लोगों की जान-माल की हानि को कम करने के उद्देश्य से 10 वर्षों तक लम्बा अभियान चलाकर सरकार से कानून बनवाया - (उपलब्धि)

इस खण्ड में कानून निर्माण हेतु चलाए सफल अभियान के अतिरिक्त भूकम्पीय स्थितियों, प्राणघातक ऐसी प्राकृतिक आपदाओं की घटनाओं के विभिन्न कारणों पर प्रकाश डालते हुए उनके प्रति हिमाचल प्रदेश की जनता, विश्व जनसमुदाय, विशेषकर हिमाचल प्रदेश सरकार को जागरूक करते लेखक के कई पूर्व प्रकाशित लेखों, शोधलेखों तथा सरकार द्वारा नियम निर्माण कर दिए जाने के प्रमाणों का संकलन है। भौगोलिक स्थितियों तथा भूकम्पीय संवेदनशीलता को उजागर करते हुए जान-माल की हानि को कम करने के उद्देश्य से निर्माण पर नियन्त्रण करने हेतु सरकार से नियम बनाने की मांग की गई जिसका आरम्भ **23.11.1999** से किया गया था। कई माध्यमों द्वारा मांग पर निरन्तर प्रभावशाली ढंग से बल देना उस समय तक जारी रखा जब तक **2009** में नियम निर्माण नहीं हो गया। हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा वर्ष **2009** में नियम निर्माण कर दिया गया तथा नगर एवं ग्राम योजना अधिनियम **1977** में संशोधन कर निर्माण पर नियन्त्रण हेतु नई धारा 30ए जोड़ दी गई। इस प्रकार प्रभावशाली ढंग से निरंतरता बनाए रखने के साथ एकल प्रयासों की अविरल धारा को बहाता अपनी प्रकार का यह अभियान 10 वर्षों के प्रयासों के बाद सफलता में फलीभूत होकर अपने पड़ाव पर पहुंच गया।

वर्तमान शताब्दी प्राकृतिक आपदाओं तथा मानवीय जीवन की अन्तिम शताब्दी होने के शोध एवं निष्कर्ष इस खंड में संकलित 'पर्यावरण, हम और भूकम्प' शोध लेख में उजागर किए गए हैं। मानवीय जीवन संबंधी अन्तिम शताब्दी होने के 18 से भी अधिक शोधों एवं निष्कर्षों का विवरण खंड 8 के आरंभिक पृष्ठों पर दिया गया है तथा विस्तृत शोध लेख उसके पश्चात संकलित कर दिए गए हैं।

पर्यावरण, भूकम्पीय आपदाएं, जान-माल की भारी हानि, कारण और समाधान

भूकम्प एक ऐसी प्राकृतिक आपदा है जो अचानक अपना घातक रूप दिखाती है। भूकम्पों का इतिहास भी उतना ही पुराना लगता है जितना पृथ्वी का अपना इतिहास। इस आपदा में जान-माल की अधिकतर हानि मकानों के गिरने से उनके मलवे के नीचे दबने से होती है।

भूकम्पीय घटनाओं के कारणों तथा उनके समाधानों को लेकर वर्तमान में उपलब्ध ज्ञान पुंज के आलोक और अर्जित सामर्थ्य के बल पर भूकम्प को रोका नहीं जा सकता। परन्तु अच्छी जागरूकता, सामाजिक तथा सरकारी प्रबन्धन के सहारे इसके द्वारा जान माल की हानि को कम अवश्य किया जा सकता है। भूकम्प कहीं भी, कभी भी और कितनी भी तीव्रता का आ सकता है। इस दृष्टि से संसार का कोई भी स्थान सुरक्षित नहीं है। **विज्ञान इसकी भविष्यवाणी करने में अभी तक असमर्थ है**। इस समय तक हुए अनुसंधानों पर दृष्टिपात करते हुए इस दिशा में किसी निष्कर्ष पर यदि पहुंचना चाहें तो निकट भविष्य में भी शीघ्र ऐसी भविष्यवाणी की संभावना दिखाई नहीं देती है। पिछले कुछ वर्षों से ऐसी भविष्यवाणी के समीप तक पहुंच जाने के संकेत तो कई बार दिए गए। परन्तु वह समय अभी तक नहीं आया। ऐसा प्रतीत होता है कि इस क्षेत्र में शोध बहुत आगे तक नहीं बढ़ पाए हैं।

भूकम्प आने के कई कारण बताए गए हैं। इनका वर्णन यहां संकलित पूर्व प्रकाशित लेखों एवं शोध लेखों में भी किया गया है। परन्तु वर्तमान समय में कोई भी छोटी या बड़ी तीव्रता का भूकम्प जहां कहीं भी आता है तो तुरन्त उसका कारण टेक्टोनिकल प्लेटों का टकराना बताया जाता है। **विद्वानों द्वारा की जाती चर्चाएं भी बहुदा इसी एक बिन्दु पर सिमट कर रह जाती हैं।** ऐसा होने से भूकम्प के अन्य कारणों के प्रति लोग अनभिज्ञ एवं असावधान रह जाते हैं। इन चर्चाओं में शैक्षणिक डिग्री धारकों के अतिरिक्त अन्य अनुभवी लोगों का सहयोग भी कम ही लिया जाता है जिसके कारण भी जनता सुरक्षात्मक उपायों के प्रति जागरूक होने से वंचित रह जाती है। इस तथ्यात्मक कारण के जारी रहते भी शोध शीघ्र आगे बढ़ते दिखाई नहीं देते हैं। ऐसी घटनाओं के

सृजनात्मक एवं सहयोगी अन्य कारणों की ओर ध्यान बहुत कम जाता है।

इस संदर्भ में एक निर्विवाद तथ्य अवश्य उजागर होता है कि पृथ्वी के गर्भ में हलचल है जो भूकम्पीय प्रभाव का सृजन करती है या उसकी तीव्रता बढ़ाती है। घटनाओं के अध्ययन से ऐसा भी प्रतीत होता है कि यह कई बिन्दुओं पर है। टकराने वाले पदार्थ की आमने-सामने या एक से नीचे एक-दूसरे की दूरी का आपसी अन्तर भी भिन्न-भिन्न है। धरती की ऊपरी परत पर मानवीय विकासात्मक गतिविधियां भी ऐसी हलचल के सृजन या उसे बढ़ाने का कारण बन सकती हैं। ऊपरी परत पर बढ़ती असंतुलनात्मक गतिविधियां भी भीतरी समस्थितिक समायोजन द्वारा संतुलन स्थापित करने के लिए भूकम्पीय प्रभाव का सृजन कर सकती हैं या आ रहे भूकम्प का प्रभाव तीव्र कर सकती हैं।

धरती के गर्भ में वास्तविक रूप से क्या-क्या है, कितना कितना, और किस रंगरूप और आकार-प्रकार में है। इसका शत-प्रतिशत ठीक पता किसे भी नहीं है। भारत के जाने माने वैज्ञानिक तथा पूर्व राज्यसभा सदस्य डॉ. कस्तूरीरंगन ने एक बार चंडीगढ़ में एक प्रश्न के उत्तर में कहा था कि हम ठीक प्रकार नहीं जानते हैं कि भूकम्प तथा सुनामी जैसी आपदाएं वास्तव में आती क्यों हैं।

मनुष्य ने आकाश की ओर लम्बी छलांग लगाने के प्रथम पड़ाव में रॉकेटों द्वारा करोड़ों मीलों तक इसकी दूरियों को माप लिया है और यह सिलसिला चांद मंगल से होता हुआ आगे भी जारी है। पहले ही प्रयास में मंगल तक अपना रॉकेटयान भेजने में भारत सफल हो चुका है।

ईश्वरीय कण खोजने के लिए धरती के नीचे 27 किलोमीटर लम्बी महामशीन लार्ज हाईड्रोनकोलाईडर बनाई और लगाई गई। अनेकों देशों के हजारों वैज्ञानिक वर्षों तक इस महाप्रयोग में सफलता पाने के लिए काम करते रहे। इस महामशीन में 2 लाख 98 हजार किलोमीटर प्रति सैकेंड की प्रकाश की गति से 4 जुलाई 2012 को टक्कर करवाई गई। परन्तु जिस धरती पर हम और हमारे सारे वैज्ञानिक रहते हैं उसमें कुछ ही किलोमीटर गहरे अर्थात् 10 कि. मी. से आगे तक न तो हम अपना कोई यन्त्र भेज पाए हैं और न झांक ही पाए हैं। हमारा कोई यन्त्र धरातल से 20 किलोमीटर गहरे तक भी अभी तक नहीं पहुंच पाया है। जबकि पृथ्वी की परिधि 40075 किलोमीटर, व्यास 12756 किलोमीटर और

अर्धव्यास मात्र 6378 किलोमीटर बनता है। ईश्वर तो काल रहित है।

भूकम्पीय घटनाओं की संभावनाओं के ठीक ज्ञान, इनके वास्तविक ठीक-ठीक कारणों तथा सुरक्षात्मक उपायों में रहती कमी तथा बदल रही भौगोलिक परिस्थितियों को आधार बनाते हुए लेखक इस शताब्दी के प्रथम वर्ष के प्रथम मास में इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि 21वीं शताब्दी में ऐसी प्राकृतिक आपदाएं अधिक आएंगी तथा यह शताब्दी ऐसी आपदाओं की शताब्दी बन जाएगी। यह निष्कर्ष 16 फरवरी 2001 को **''पर्यावरण हम और भूकम्प''** शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित और इस पुस्तक में संकलित शोध लेख में उजागर किया गया है। विश्व में अभी तक आए भूकम्पों में कई लाखों लोग मारे जा चुके हैं, कई लाखों घायल हो चुके हैं, कई लाखों अपने घर गांव खो चुके हैं और असंख्य पशु मारे जा चुके हैं।

हिमाचल प्रदेश जैसे पर्वतीय राज्य में सरकार द्वारा निर्माण पर अंकुश लगाने हेतु नियम निर्माण करवाने के लिए लेखक ने अपने एकल प्रयासों से एक लम्बा अभियान चलाया जो 10 वर्षों के निरंतर प्रयासों के बाद सफलता में फलीभूत हुआ तथा जिसकी रूपरेखा आगे प्रस्तुत की गई है।

जर-जर तथा समय से पहले बूढा होते हिमालय के आंचल में बसा हिमाचल प्रदेश पर्वतीय राज्य है,जहां निर्माण ढलानों पर या उनके समीप भी किया जाता है। प्रदेश का 32 प्रतिशत भू-भाग भूकम्प प्रवृत्त अति संवेदनशील जोन न. 5 में आता है तथा शेष सारे का सारा प्रदेश भी जोन न. 4 में है जहां कभी भी बड़ी से बड़ी तीव्रता का भूकम्प आ सकता है।

4 अप्रैल 1905 को प्रदेश के कांगड़ा में बड़ा भूकम्पन हुआ था जिसमें लगभग 20000 लोग मारे गए थे, जबकि उस समय जनसंख्या आज की तुलना में बहुत कम थी। आज जनसंख्या कई गुणा अधिक है। ऐसी स्थिति में यदि वैसा बड़ा भूकम्प प्रदेश में आ जाए तो मकानों के गिरने से प्राण हानि लाखों की संख्या में हो सकती है। इन्हीं कुछ बिन्दुओं के प्रकाश में यह आवश्यक हो जाता है कि मकान कम ऊंचाई वाले और भूकम्परोधी बने। नदी घाटियों के किनारे का निर्माण प्राकृतिक सौंदर्य को निहारने में बाधक न बने। पर्वत शिखरों पर विराजे देवस्थलों के समीप का निर्माण ऐसे स्थानों के मूल स्वरूप को बनाए रखते हुए

किया जाए।

अभियान की रूपरेखा

हिमाचल प्रदेश में हो रहे अंधाधुंध बहुमंजिले भवन निर्माण से यहां के प्राकृतिक सौंदर्य पर लगते ग्रहण तथा भूकम्प के समय जान-माल की संभावित हानियों से चिंतित होकर इसमें कमी लाने के उद्देश्य से निर्माण पर नियन्त्रण के लिए **प्रदेश सरकार से कानून बनवाने के उद्देश्य से विधि व्यवस्था को हानि पहुंचाए बिना, भीड़ इकट्ठी किए बिना कोई चंदा या अनुदान लिए बिना लेखक ने दृढ़ निश्चय के साथ अपनी प्रकार का अनूठा अभियान चलाया। स्वास्थ्य की परवाह किए बिना इसे 10 वर्षों के बहुर्मुखी प्रयासों द्वारा उस समय तक निरन्तर जारी रखा जब तक वर्ष 2009 में सरकार द्वारा नियम निर्माण नहीं कर दिया गया।**

इसका आरम्भ लेखक ने 22-23 नवम्बर 1999 को क्षेत्रीय अभ्यान्त्रिक महाविद्यालय, (अब एन. आई. टी.) हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश में आयोजित राष्ट्रीय सेमिनार से किया जो इस सेमिनार की स्मारिका के पृष्ठ 135-138 पर प्रकाशित पत्र के पैरा 10 में दर्ज है। यह पत्र खंड 8 में संकलित है।

भूकम्प के समय मकानों के गिरने से होती लोगों की जान-माल की हानियों, यहां के पर्वतीय परिवेश के प्राकृतिक सौंदर्य, देव-स्थानों के पर्यटन की दृष्टि से महत्त्व, प्रदेश के क्षेत्र के भूकम्प प्रवृत अतिसंवेदनशील जोन न. 5, 4 में होने के प्रति प्रदेश की सरकार, विधायिका तथा जनता में जागरुकता बढ़ाने के लिए अनेकों लेख, शोधलेख कई वर्षों तक लिखे। ऐसे लेख, शोध-लेख, हिमाचल प्रदेश, चण्डीगढ़, जालन्धर से प्रकाशित तथा उत्तरी भारत के राज्यों में प्रसारित होते अनेकों दैनिक समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, स्मारिकाओं में वर्ष 1999 से लेकर वर्ष 2009 तक निरन्तर प्रकाशित होते रहे। इनमें से कुछ यहां संकलित हैं। यद्यपि ऐसी जागरुकता बढ़ाने वाले लेख/शोध लेखों के प्रकाशित होने तथा पत्र भेजने का क्रम आगे भी जारी है।

भूकम्प के समय अन्य सुरक्षात्मक उपायों एवं सावधानियों का वर्णन भी इनमें किया जाता रहा है। लेखक ने कई बार प्रदेश के मुख्यमन्त्रियों सहित सभी मन्त्रियों, सभी विधायकों, सभी योजनाकारों, विभागाध्यक्षों, सभी जिलाधीशों, विचारकों को भी हजारों की संख्या में पत्र भेजे तथा फैक्सें भेजीं ताकि निर्माण पर नियन्त्रण हेतु

कानून बनाने के वातावरण का सृजन हो। निरन्तर प्रकाशित होती ऐसी प्रैस वार्ताओं, बैठकों, सम्पर्कों का भी सहारा लिया और कभी भी आ जाने वाले भूकम्प के समय जान-माल की भारी हानियों के प्रति सचेत करते हुए कानून निर्माण के लिए अपनी मांग पर बल देना जारी रखा।

कई विधायकों, सरकारी योजनाकारों तथा सरकारी संस्थानों ने भी इस मांग का समर्थन किया तथा इस आशय के पत्र प्रदेश के नगर एवं ग्राम योजना विभाग को भेजे।

सरकार के साथ उत्तरों प्रत्युत्तरों का क्रम भी निरन्तर जारी रहा। प्रदेश के नगर एवं ग्राम योजना विभाग के निदेशक ने सर्वप्रथम अपने पत्रांक हिम/टीपी-पीजेटी 2005/Vol-XIII-379-84 दिनांक 8 अप्रैल 2005 द्वारा सुझावों पर सरकारी सहमति की सूचना 6 वर्षों के प्रयासों के बाद लेखक को दी। 21 मई 2007 को इसी विभाग के प्रधान सचिव ने अपने पत्रांक टीसीपी-एफ (6)-2/2004 दिनांक 21-5-2007 द्वारा सूचित किया कि **कानून निर्माण सम्बन्धी लेखक के सुझावों का सरकारी स्तर पर अध्ययन हो चुका है, उन्हें विकास योजनाओं में सम्मिलित कर लिया गया है तथा आगामी प्रक्रिया के रूप में सरकार के पास विचाराधीन हैं।**

24 मार्च 2008 तथा 13 दिसम्बर 2008 को प्रकाशित समाचार के अनुसार प्रदेश के मुख्यमन्त्री ने बेढंगे, बहुमंजिले निर्माण के कारण प्रदेश के सौंदर्य पर लगते ग्रहण, भूकम्पीय संवेदनशीलता के दृष्टिगत इस पर रोक लगाने तथा कम ऊंचाई के मकान बनाने की ही अनुमति देने का विचार व्यक्त किया।

वर्ष 2009 में इन सुझावों पर कानून निर्माण हो गया। वर्ष 2009 के शीतकालीन विधानसभा सत्र में हिमाचल प्रदेश नगर एवं ग्राम योजना अधिनियम 1977 में संशोधन कर नई धारा 30ए जोड़ दी गई। इसकी अधिसूचना संख्या एल. एल. आर. डी./(6)-5/2009 दिनांक 27 मार्च 2009 के जारी होने के पश्चात विभाग ने निर्माण सम्बन्धी सीमाओं का निर्धारण पत्रांक टीसीपी-ए (3)-3/2008 दिनांक 2 जुलाई 2009 द्वारा कर दिया। विभाग के निदेशक ने अपने पत्र दिनांक 13.08.2009 तथा 12.01.2010 द्वारा इसकी सूचना लेखक को भेज दी। राज्य नगर योजनाकार ने लेखक को जारी पत्र में कानून बनवाने एवं

विभागीय कार्यप्रणाली में सुधार लाने के लिए प्रशंसा करते हुए अभार व्यक्त किया। इस प्रकार 10 वर्षों के अथक निरन्तर बहुंमुखी प्रयासों के बाद यह अभियान सफलता में फलीभूत हो गया।

अप्रैल–मई 2010 में इंग्लैंड, नेपाल, पाकिस्तान, अफ्रीका, बंगलादेश, भारत आदि में प्रकाशित सैंट्रल क्रोनिकल, दैनिक ट्रिब्यून, हमारा महानगर, न्यूज फ्राम बंगलादेश, सिख टाईम्स, फ्रंटियर पोस्त, न्यू नेशन, धानियन जनरल, न्यूज ब्लेज, ओये टाईम्स तथा अन्य कई प्रसिद्ध समाचार पत्रों के सम्पादकीय पृष्ठों पर इस सफल प्रयास की प्रमुखता से चर्चा की गई है। **इन समाचार पत्रों में लेखक के इस कार्य को 3 लाख लोगों की मृत्यु का कारण बने 2010 में हैती में आए भीषण भूकम्प तथा कोपेनहैग्न पृथ्वी शिखर सम्मेलन के परिणामों के आलोक में तुलनात्मक दृष्टि से देखा गया है और प्रशंसा की गई है।**

पाठकों एवं शोधकर्त्ताओं की सुविधा एवमं आकलन के लिए कानून निर्माण सम्बन्धी इस अभियान की सफलता के पक्ष में सरकारी प्रमाण एवं अन्य पत्र भी चित्रित कर दिए गए हैं।

लेखों के प्रकाशन की तिथियों सहित संबधित समाचार पत्र आदि का विवरण संकलित लेख के अंत में नीचे दिया गया है।

- यहां संकलित पूर्व प्रकाशित शोध लेखों के माध्यम से भूकम्प के प्राकृतिक कारणों, कृत्रिम कारणों तथा बचाव के उपायों का तर्क के सहारे यथार्थ के धरातल पर कस कर विशुद्ध विवेचनात्मक विश्लेषण द्वारा वास्तविकता को उजागर करने का प्रयत्न किया गया है। समय स्थान तथा घटना में समानता या भिन्नता के कारण लेखों में कहीं–कहीं पुर्नावृत्ति भी हुई है। पर्यावरण हितैषी विकास, भूकम्प सरीखी प्राकृतिक आपदाओं तथा सुरक्षा को लेकर अन्य उपलब्धिपूर्ण कार्य तथा शोध निष्कर्ष अन्य खण्डों में भी प्रस्तुत किए गए हैं।

अ० शा० पत्र संख्या हिम/टी० पी०/
D. O. No. HIM/T. P./

राज्य नगर योजनाकार
tate Town Planner

नगर एवं ग्राम योजना विभाग
हिमाचल प्रदेश
Town & Country Planning Deptt.
Himachal Pradesh
कार्यालय / Office 2625752
निवास / Residence 2628368
दिनांक शिमला-171009
Dated Shimla-171009, the

मैं, आचार्य रतन लाल वर्मा जी का बहुत आभारी हूं, जिन्होंने नगर एवं ग्राम योजना विभाग की कार्यप्रणाली में सुधार लाने, विनियम, नियम व अधिनियम बनाने, जन साधारण को नियमों से अवगत करवाने तथा उन की अनुपालन सुनिश्चित किए जाने बारे जनता को प्रेरित कर प्रदेश में सुदृढ़ एवं सुनियोजित विकास सुनिश्चित करने में निरन्तर विभाग के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर इसे आगे बढाने में विशिष्ट योगदान दिया है तथा दे रहे हैं । नगर एवं ग्राम योजना अधिनियम में धारा –31 ए का समावेश करवाने में भी उनका योगदान प्रशंसनीय है । विभाग इनके द्वारा किए गए उच्च कोटी के सर्वहिताय कार्यों एवं दिए गए अमूल्य सुझावों की भरपूर प्रशंसा करता है तथा भविष्य में भी उनके पूर्ण योगदान की आशा करता है।

(ए० एन० गौतम)

आचार्य रतन लाल वर्मा
शिवनगर, हमीरपुर (हि०प्र०)

Subject:-Request to change the decision with regard to the construction of multi-storeyed buildings.

Enclosed please find herewith a photo copy of letter dated 13-03-2002 received from Smt./Shri Rattan Lal Verma, Acharya on the subject noted above on which Hon'ble Chief Minister has observed as under:-

"May examine."

The Director of Town & Country Plg., H.P., Shimla is, therefore, requested to please take further necessary action in the matter as per observations of the Hon'ble Chief Minister under intimation to this office.

Under Secretary/~~Special Officer~~ to Hon'ble Chief Minister.

The Director,
Town & Country Planning,
Shimla 171002.

No. [illegible]/45, dated

Copy forwarded to Acharya Rattan Lal Verma, Ward No. 5, Near Regional Hospital, Hamirpur, Himachal Pradesh for information with reference to his letter dated 13.3.2002.

Under Secretary to the Chief Minister

नगर एवं ग्राम योजना विभाग
हिमाचल प्रदेश

संख्याःहिम/टीपी-पीजेटी/डीपी-जनरल/2005-Vol-XIII/ 379-84 **शिमला, दिनांक** 8/4/05

सेवा में,

आचार्य रत्न लाल वर्मा,
क्षेत्रीय अस्पताल के सामने,
वार्ड न०5/215, हमीरपुर-177001.

विषयः **बहुजन घातक बहुमंजिलें (पाँच मंजिलें) भवन निर्माण को रोकने की आवश्यकता।**

सन्दर्भः **आपके पत्र संख्याः1194-2004 दिनांक 24.12.2004 जो माननीय मुख्यमन्त्री हिमाचल प्रदेश को सम्बोधित है तथा प्रतिलिपि इस कार्यालय को पृष्ठांकित है।**

महोदय,

यह विभाग आपके इस कथन से पूर्णतया सहमत है कि "बहुमंजिलें निर्माण वास्तव में आवश्यकता के लिए तो कम परन्तु धन कमाने तथा अपनी आर्थिक सामर्थ्य के प्रदर्शन के लिए ही अधिक किया जाता है। जो भी हो हमारे प्रदेश के अधिकतर भू-भाग के भूकंप के लिए अधिक संवेदनशील माने जाने तथा ऐसी घटनाओं की संभावनाओं की साक्षियों के उजाले में एक अच्छी प्रजातान्त्रिक व्यवस्था से यह अपेक्षा तो रहेगी ही कि वह भूकंप के समय होने वाली प्राण या अन्य हानि से सुरक्षा एवं क्षतिपूर्ति हेतु समय रहते पर्याप्त प्रबन्ध या साधन सुनिश्चित कर लें"।

इस विभाग द्वारा शिमला नगर एवं अन्य नगरों के अध्ययनों के माध्यम से यह तथ्य सामने आया है कि लोगों द्वारा आवश्यकता से कहीं अधिक निर्माण किये गये हैं तथा उपभोक्तावाद एवं शहरीकरण की अन्धाधुन्ध दौड़ में बहुत से निर्माण ऐसे कर लिए हैं जो कि घातक हैं। विभाग प्रयास करने जा रहा है कि ऐसे निर्माणों का शोध संस्था से अनुसंधान कर सही कदम उठाये जायें। जैसा कि लगभग 30 से 40 प्रतिशत निर्मित तल क्षेत्र लगभग खाली पड़ा हुआ है, अतः जरूरत से अधिक किये गये निर्माण पर विकास कर लगाना आवश्यक हो गया है। आपके पत्र द्वारा यह भी पहलु उठाया गया है "ऐसा निर्माण इस पर्वतीय आंचल की प्राकृतिक सुन्दरता, रमणीयता, सांस्कृतिक समृद्धि तथा सामाजिक पर्यावरणीय शांति को ग्रहण लगने जा रहा है।" इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए विभाग योजना क्षेत्रों/ विशेष क्षेत्रों के लिए नियम बनाने हेतु कृत संकल्प है।

27-4-2005

...बासदेव, शकुन आदि ने बताया कि इस ... के लिए कहीं तक नहीं बने हैं। उपलब्ध कराया है। ...

बहुमंजिला निर्माण पर कसा जाएगा शिकंजा

कवायद

- शोध संस्था से अनुसंधान कर कड़े कदम उठाने के प्रयास
- धन कमाने के लिए लोग कर रहे बहुमंजिला निर्माण कार्य
- निर्माण पर 'विकास कर' लगाने के सरकार से संकेत

रविंद ठाकुर

हमीरपुर। अंधाधुंध बहुमंजिला भवन निर्माण से निरंतर बिगड़ रहे पर्यावरण को बचाने के लिए सरकार ने कड़े कदम उठाने का फैसला कर लिया है। इसके तहत बहुमंजिला भवन निर्माण करने वाले लोगों की अब खैर नहीं। सरकार ने उपभोक्तावाद व शहरीकरण की अंधाधुंध दौड़ में किए जा रहे भवन निर्माण का शोध संस्था से अनुसंधान करवाने तथा इस पर विकास कर लगाने के भी संकेत दिए हैं ताकि इस क्रम को रोका जा सके।

निरंतर बिगड़ रहे पर्यावरण को बचाने के लिए हमीरपुर निवासी प्रसिद्ध पर्यावरणविद आचार्य रत्न लाल वर्मा कई वर्षों से इस मुद्दे को सरकार, सेवा व कार्यशालाओं के माध्यम से लगातार उठा रहे हैं ताकि हिमाचल की प्राकृतिक सुंदरता, सामाजिक पर्यावरणीय शांति, सांस्कृतिक समृद्धि तथा भूकंप से निरपराध लोगों के जान-माल की अधिक सुरक्षा निश्चित हो सके। सरकार से भी उन्हें कई बार सकारात्मक जवाब मिलते रहे हैं तथा ऐसे निर्माण को घातक बताते हुए अपने सुझाव उन्हें भेजते रहे हैं। हाल ही में उन्होंने मुख्यमंत्री वीरभद्र सिंह को भी बहुमंजिला निर्माण से हो रहे नुकसान पर अपने सुझाव भेजे थे। मुख्यमंत्री के आदेश के बाद प्रदेश के नगर एवं ग्राम योजना विभाग ने इससे निपटने के लिए कुछ सार्थक पहल करने का मन बनाया है। इससे नगर एवं ग्राम योजना विभाग ने आचार्य रत्न लाल वर्मा को भी पत्र के माध्यम से सूचित कर दिया है। विभाग ने पत्र में वर्मा द्वारा उठाए गए अधिकतर सवालों के साथ अपनी सहमति जताई है।

नगर एवं ग्राम योजना विभाग के निदेशक जे.आर. वर्मा द्वारा उन्हें भेजे गए पत्र में कहा गया है कि विभाग आपके सवालों से सहमत है कि बहुमंजिला निर्माण पहाड़ में आवश्यकता के लिए कम लेकिन धन कमाने तथा अपनी आर्थिक सामर्थ्य के प्रदर्शन के लिए अधिक किए जाते हैं। जो भी हो, हमारे प्रदेश के अधिकतर भूभाग के भूकंप के लिए अधिक संवेदनशील माने जाने तथा ऐसी घटनाओं की संभावनाओं के स्थितियों के उभरने में एक अच्छी प्रशासनिक व्यवस्था से यह अपेक्षा तो रहेगी कि वह भूकंप के समय होने वाली जान या अन्य नुकसान से सुरक्षा एवं क्षतिपूर्ति के लिए समय रहते पर्याप्त प्रबंध या साधन सुनिश्चित कर लें।

विभाग के निदेशक बताया है कि शिमला नगर एवं अन्य नगरों के अध्ययनों के माध्यम से यह तथ्य सामने आए हैं कि लोगों द्वारा आवश्यकता से कहीं अधिक निर्माण किए गए हैं। उपभोक्तावाद एवं शहरीकरण की अंधाधुंध दौड़ में बहुत से निर्माण ऐसे कर दिए गए हैं जो घातक हैं। विभाग प्रयास करने जा रहा है कि ऐसे निर्माणों का शोध संस्था से अनुसंधान कर सही कदम उठाए जाएं। लगभग 30 से 40 प्रतिशत निर्मित तल क्षेत्र खाली पड़ा हुआ है। जरूरत से अधिक किए निर्माण पर विकास कर लगाना आवश्यक हो गया है।

नगर एवं ग्राम योजना विभाग के निदेशक से मिले पत्र की आचार्य रत्न लाल वर्मा ने पुष्टि करते हुए बताया कि विभाग उनके अधिकतर तर्कों से सहमत है तथा इन पर अमल करने के लिए गंभीरता से विचार कर रहा है। वर्मा ने सरकारी संकल्प का स्वागत किया है तथा इसे प्रदेश के लाखों सामान्य लोगों के हित में बताया।

संख्याःटी0सी0पी0–एफ (5)–2/2004
हिमाचल प्रदेश सरकार
नगर एवं ग्राम योजना विभाग ।

प्रेषक,

प्रधान सचिव (न0ग्रा0यो0)
हिमाचल प्रदेश सरकार।

प्रेषित,

आचार्य रत्न लाल वर्मा,
वार्ड न0 5, (245/5)
हमीरपुर, जिला हमीरपुर, हि0प्र0 ।

दिनांक शिमला–21-5-07

विषयः पहाडी प्रदेश में दो मंजिल से अधिक ऊंचे भवन निर्माण तथा रिटैंशन पॉलिसी सरीखी किसी अन्य नियम उल्लंघन की प्रेरणाप्रद नीति को तुरन्त रोकने बारे ।

महोदय,

उपरोक्त विषय पर आपके आवेदन क्रमांक 1503–1507/2007 दिनांक 27.02.2007 के संदर्भ में मुझे यह कहने का निदेश हुआ है कि आप द्वारा दिये गये सुझावों पर सरकार के स्तर पर अध्ययन किया गया और नगर एवं ग्राम योजना विभाग द्वारा नई विकास योजनायें तैयार की है जोकि सरकार के विचाराधीन है, में आपके सुझावों को भी सम्मिलित किया गया है । जहां तक बार–बार रिटैंशन पॉलिसी का सवाल है, के संदर्भ में सूचित किया जाता है कि अभी हाल ही में दिनांक 20.11.2006 को जो अधिसूचना जारी की गई है वह रिटैंशन पॉलिसी नही बल्कि सरकार द्वारा हि.प्र. नगर और ग्राम योजना नियम, 1978 में संशोधन किया गया है ।

भवदीय,

(हस्ताक्षर)
अवर सचिव (न0ग्रा0यो0)
हिमाचल प्रदेश सरकार।

नगर एवं ग्राम योजना विभाग
हिमाचल प्रदेश

संख्या:हिम/टीपी/पीजेटी/जनरल/खण्ड.-xvii 4886-87 दिनांक: 13-8-09

सेवा में,

आचार्य रत्न लाल वर्मा,
वार्ड न0 5, नजदीक क्षेत्रीय अस्पताल,
हमीरपुर, जिला हमीरपुर,
हिमाचल प्रदेश-177001

विषय:- **हिमाचल प्रदेश भूगर्भीय, धरातलीय विशेषताएं विकास तथा बेढंगा बहुजन प्राणघातक निर्माण 1**

महोदय,

उपरोक्त विषय पर प्रधान सचिव **(माननीय मुख्यमन्त्री)** हिमाचल प्रदेश को आपके द्वारा लिखे गये पत्र की छायाप्रति,प्रधान सचिव **(नगर एवं ग्राम योजना)** के कार्यालय से इस विभाग में प्राप्त हुई है। इस सम्बन्ध में सूचित किया जाता है कि प्रदेश की स्थिति भूकम्प के लिए संवेदनशील जोन iv व v में होने के दृष्टिगत हिमाचल प्रदेश नगर एवं ग्राम योजना अधिनियम, 1977 में संशोधन कर एक नई धारा 31-**A** जोडी गई है जिसके अनुसार किसी भी भवन को उपयोग में लाने से पहले आवेदक भवन की स्थिर संरचना का प्रमाण पत्र प्रस्तुत करेगा। इसके अतिरिक्त योजना एवं विशेष क्षेत्रों में विकासात्मक गतिविधियों के संचालन हेतु विकास योजनाएं अधिसूचित की गई हैं जिनमें विभिन्न क्षेत्रों के लिए विनियम दर्शाये गए हैं। अधिसूचित विकास योजनाओं में विभिन्न उपयोगों हेतु विनियम जैसे कि पहुँच मार्ग, मंजिलों की संख्या, एफ0ए0आर0, चारों ओर खाली जगह आदि विनिर्दिष्ट किए गए हैं।

योजना एवं विशेष क्षेत्रों में धरोहर के संरक्षण हेतु धरोहर प्रतिवेदन तैयार करने पर जोर दिया जा रहा है ताकि इन प्रतिवेदनों में विनिर्दिष्ट

Stp-2

नगर एवं ग्राम योजना विभाग
हिमाचल प्रदेश

संख्या: हिम/टीपी/पीजेटी/जनरल/खण्ड-18 - 10897 शिमला, दिनांक: 12-1-10

प्रेषित,

आचार्य रत्न लाल वर्मा,
वार्ड न0 5,
क्षेत्रीय अस्पताल के सामने,
हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश 177001

विषय: हिमाचल प्रदेश भूगर्भीय धरातलीय विशेषताऐं, विकास तथा बेढंगा बहुजन प्राणघातक निर्माण ।

सन्दर्भ: आपका पत्र कमांक 1953 दिनांक 18-8-2009 ।

महोदय,

उपरोक्त के सम्बन्ध में निवेदन है, कि भवन निर्माण पर आपके द्वारा किए गए गहन अध्ययन तथा प्रदेश की स्थिति भूकम्पीय दृष्टि से संवेदनशील जोन 4 व 5 में होने के दृष्टिगत ऊँचें भवनों पर रोक तथा राष्ट्रीय राज्य मार्गों व देव स्थलों आदि पर व्यवस्थित निर्माण आदि पहलूओं पर आपके विचारों से यह विभाग पूर्णतया सहमत है।

नियमों एवं विनियमों के माध्यम से यह विभाग सुदृढ़ तथा पर्यावरण एवं धरोहर आवश्कताओं के अनुरूप सुनियोजित निर्माण सुनिश्चित करने की निरन्तर भरसक कोशिश कर रहा है। निर्माण हेतु प्रस्तावित स्थल के लिए पहुंच मार्ग तथा प्रस्तावित भवन के चारों ओर खुली जगह का प्रावधान इस लिए आवश्यक किया गया है, ताकि सूर्य की रोशनी तथा हवा की उपलब्धता के साथ-साथ किसी भी तरह की आपदा में इनका प्रयोग आपातकालीन पहुँच हेतू किया जा सके।

हिमाचल प्रदेश नगर एवं ग्राम योजना अधिनियम, 1977 की धारा 31-ए के अनुसार किसी भी भवन को उपयोग में लानें से पहले भवन की सुदृढ़ संरचना का प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना अनिवार्य बनाया गया है। सरंचना निरूपण या प्ररूपण तैयार करने के लिए सक्षम विशेषज्ञों का ब्यौरा भी नियमों/विनियमों में दिया गया है।

HOW TO TACKLE NATURAL DISOSTERS SATURDAY APRIL 10th 2010

By TANVEER JAFRI

The entire world witnessed the Copenhagen summit sometimes ago which was organised to find a solution to the problem of global warming and climate change. As expected, the nations at the summit failed agree to a common framework to fight the climate change. Though blame game was on between the nations. Many environmentalists and nature lovers gathered outside the summit venue and called upon nations to stop warming the earth in the name of growth, development and energy production. These protesting environmentalists and NGOs had a long list of such solutions following which the countries can fulfil their energy needs without further warming the earth. But unfortunately, they had no say in the decision making of the nations. Decisions are taken at the political level by the participating leaders.

Besides, global warming our earth is also experiencing a series of earthquakes. Every year there are reports of two or three major earthquakes on some or other part of the world. On January 13 this year, an earthquake of 7.3 Richter scale rocked Haiti, a small Caribbean republic. This, one of the most destructive earthquakes, had its focus near the capital Port-au-Prince just 13 kilometres below the surface. As a result of this earthquake, the entire city got destroyed. Governance and administration got disrupted. Therefore, the US took over the relief works. U.S. President Obama called it as the biggest ever relief operation undertaken by the US. Till now, the Haitians are not being able to live their normal lives. Aid from the whole world is continuing to Haiti. The United Nations has also declared an aid of $10 billion. Recently, chile also became the victim of a powerful earthquake.

The question is what the developed nations are doing to predict the earthquakes and minimise the loss of life & property. Science has identified almost all places in the world which are vulnerable to the earthquakes. Despite this, it seems that not much is being done at the official level to avoid the loss from earthquakes. If at all, any news regarding the study of earth is there, it is the Large Hadron Collider (LHC) experiment being conducted in a 27 km long underground tunnel on French-Swiss border. This machine took 25 years and about $10 billion to be constructed. By this experiment, our scientists are trying to understand the creation of the universe and reason behind the Big Bang that happened around 14 billion years ago. But this costly and time consuming experiment has no such provision through which humans can get to know about the future earthquakes and their magnitude. Some geological experts are of the view that instead of this risky machine, the scientists should have tried to study more about the earth's interior so that people could have been alerted before the disaster and their lives could be saved.

But it is very unfortunate that the capable governments and the scientists conducting experiments at the official level, are working on those projects only which are determined for them. Whereas contrary to this there are many such NGOs and people who from time to time advice their national & state governments regarding the nature and human welfare. In this context, I would like to mention a 70 year old social worker of Himachal Pradesh state in India who spent his entire life in environment protection and wildlife conservation. Born in Hamirpur district of Himachal Pradesh in 1940, Acharya Ratan Lal Verma has been honoured 22 times by national and international organisations for his noble works. Even today, at the age of 70, he is fully dedicated to environments protection, preservation and maintenance of natural landscape and wildlife conservation and regeneration.

Being linked to a hilly region, he has deep interest and knowledge about the sensitivity, natural beauty and maintenance of the hilly regions. Based on his experience, he is trying to make the governments and people aware by the way of writing letters to the state and central governments, writing articles and giving interviews in newspapers and attending environment and nature related seminars. The state of Himachal Pradesh figures in between earthquake Zones 4 to 5 i.e. it is much vulnerable to earthquake. Notwithstanding this fact, no precaution is being taken to minimise the loss from a probable earthquake. In this regard, Verma has launched a campaign. He believes that with the support of the people and the policies of the government, such provisions should be made so that the loss of life and property can be minimised. Verma says that despite Himachal being in a high seismic zone, the construction of tall buildings by the rich people of the state is continuing. According to him, such constructions are either commercially motivated or for the purpose of their economical show off.

Verma is struggling for many years against the present building construction policy of sensitive hilly region. His activeness and repeated pressure on the government has started showing results. The H.P. state government has agreed to set new standards for building construction and amend the related laws. By the efforts of Verma, a new section 31-A has been added to the Himachal Pradesh town and rural planning law 1977, according to which the applicant has to submit the proof of stable foundation of the building before its use. Verma is also trying to convince the government that besides posing the danger to life, these multi story buildings are also eclipsing the natural and scenic beauty, cultural wealth and environmental peace of the state. It would not be wrong to say that unnecessary harmful constructions are being carried on in the mad race of consumerism and urbanisation.

Dedicated environmentalists and people like Verma are a boon to the society because in today's selfish and greedy world, nobody has time to devote his body, mind and money for the environment and nature. But the question is whether Verma alone and a few people like him are enough for the protection of earth and environment and making policies in this regard. Perhaps not, therefore instead of looking towards the government, government institutions and professional scientists, the scientists and environmentalists like Verma should themselves become active for the protection of the earth. It is the responsibility of the UN and other NGOs that they encourage such people from time to time so that other volunteers are also motivate.

Published in April 2010 in editorial pages of many famous Global News Papers published in England, Africa, Bangladesh, Pak, Nepal etc and also in India in Central Chronicle Hamsamachar ... D-Tribune Milap Pahali Khabar etc.

दैनिक ट्रिब्यून 16-4-2010 चंडीगढ़

कैसे हो प्राकृतिक आपदाओं से बचाव ?

तनवीर जाफ़री

पर्यावरण

ग्लोबल वार्मिंग के साथ-साथ हमारी पृथ्वी भूकंप जैसे महाविनाश से भी प्रायः जूझती रहती है। प्रत्येक वर्ष दुनिया के किसी न किसी कोने से भूकंप की घटनाओं के दो-तीन समाचार अवश्य मिल जाते हैं। पिछले दिनों चीन समेत कई देशों में भूकंप आए हैं। गत 13 जनवरी को उत्तर अमेरिकी महाद्वीप के कैरेबियाई देश हेती की राजधानी पोर्ट आफ प्रिंस में 7.3 क्षमता का भयानक भूकंप आया था। इस भूकंप के परिणामस्वरूप पूरा का पूरा हेती शहर तबाह हो गया था।

कुछ समय पूर्व पूरे विश्व की निगाहें कोपनहेगन में हुए उस विश्वस्तरीय सम्मेलन पर लगी थीं जो कि दुनिया में बढ़ती जा रही ग्लोबल वार्मिंग को नियंत्रित करने के उपायों पर चर्चा करने हेतु बुलाया गया था। लेकिन जैसी कि सम्मेलन से पूर्व ही उम्मीद की जा रही थी उसी के अनुसार कोपनहेगन वार्ता लगभग बेनतीजा रही। लगभग सभी देश एक-दूसरे को ग्लोबल वार्मिंग में होती जा रही बढ़ोतरी का ज़िम्मेदार ठहराते रहे। आरोप-प्रत्यारोप की यह स्थिति तो सम्मेलन में भाग लेने वाले राष्ट्र प्रमुखों व राष्ट्र प्रतिनिधियों के मध्य चल रही थी। लेकिन सम्मेलन स्थल के बाहर पूरे विश्व से अपने खर्च पर तमाम कष्ट उठाकर कोपनहेगन पहुंचे अनेक पर्यावरण प्रेमी लगातार इस बात को लेकर प्रदर्शन करते रहे कि ग्लोबल वार्मिंग के लिए ज़िम्मेदार देश विकास तथा ऊर्जा उत्पादन आदि के नाम पर धरती को गर्म करने से बाज आएं। दुर्भाग्यवश उन प्रदर्शनकारियों की हैसियत नक्कारखाने में तूती की आवाज़ मात्र थी। फ़ैसले तो दरअसल वही लिए जाते हैं जोकि शासकीय अथवा राजकीय स्तर पर शामिल होने वाले नेताओं या अधिकारियों द्वारा निर्धारित किए गए हों।

ग्लोबल वार्मिंग के साथ-साथ हमारी पृथ्वी भूकंप जैसे महाविनाश से भी प्रायः जूझती रहती है। प्रत्येक वर्ष दुनिया के किसी न किसी कोने से भूकंप की घटनाओं के दो-तीन समाचार अवश्य मिल जाते हैं। पिछले दिनों चीन समेत कई देशों में भूकंप आए हैं। गत 13 जनवरी को उत्तर अमेरिकी महाद्वीप के कैरेबियाई देश हेती की राजधानी पोर्ट आफ प्रिंस में 7.3 क्षमता का भयानक भूकंप आया था। इस भूकंप के परिणामस्वरूप पूरा का पूरा हेती शहर तबाह हो गया था। वहां की सरकार, शासन व प्रशासन सब कुछ पूरी तरह अस्त-व्यस्त तथा भूकंप से प्रभावित था। इसलिए अमेरिकी राहत कर्मियों को राहत कार्यों की ज़िम्मेदारी अपने हाथों में लेनी पड़ी थी। राष्ट्रपति बराक ओबामा ने वहां चलने वाले राहत अभियान को अमेरिका द्वारा चलाया जाने वाला दुनिया का सबसे बड़ा राहत अभियान बताया था। हेती में जहां लाखों लोगों के मरने व बेघर होने का समाचार था वहीं चिली में भी हज़ारों लोग मारे गए तथा बेघर हुए।

प्रश्न यह है कि उपरोक्त तथा इन जैसे भूकंप की पूर्व सूचना प्राप्त करने के लिए तथा इससे होने वाले जान व माल के नुकसान को कम से कम करने हेतु दुनिया के विकसित देश आखिर क्या उपाय कर रहे हैं? लगभग पूरी दुनिया में विज्ञान उन क्षेत्रों की पहचान कर चुका है जो क्षेत्र कभी भी भूकंप की चपेट में आ सकते हैं। इस जानकारी के हासिल हो जाने के बावजूद ऐसा नहीं लगता कि सरकारी तौर पर भूकंप से होने वाले नुकसान से बचाव हेतु कुछ विशेष किया जा रहा हो। हां, यदि धरती के अध्ययन के विषय में तत्कालीन कोई समाचार प्राप्त हो रहा है तो वह है स्विट्ज़रलैंड में जेनेवा के समीप 27 किलोमीटर लंबी भूमिगत सुरंग में किए गए महाप्रयोग का समाचार। 25 वर्षों में वैज्ञानिकों द्वारा की गई अथक मेहनत के परिणामस्वरूप तैयार हुई इस मशीन की अनुमानित लागत 10 अरब डॉलर बताई जा रही है। वैज्ञानिक दुनिया के इस सबसे बड़े प्रयोग के माध्यम से यह पता लगाने की कोशिश कर रहे हैं कि ब्रह्मांड की उत्पत्ति आखिर कैसे हुई? 14 अरब वर्ष पूर्व बिग बैंग से उत्पन्न हुए ब्रह्मांडों का आखिर रहस्य क्या है? लेकिन इतने खर्चीले तथा इतना अधिक समय लगाने वाली इस महायोजना के समक्ष ऐसा कोई प्रश्न नहीं है जिससे मनुष्य को यह पता चल सके कि धरती में अगला भूकंप कब और कहां आएगा तथा उसकी संभावित तीव्रता क्या होगी। कुछ विशेषज्ञों की राय है कि महाप्रयोग जैसे प्रयोगों से बेहतर तो यही था कि इतने या इससे भी कम खर्च में वैज्ञानिक भूगर्भीय हालात का गहन अध्ययन करने का प्रयास करते। जिससे मनुष्य को भविष्य के ख़तरों से सचेत किया जा सकता तथा उनकी जान व माल की क्षति को भी सीमित किया जा सकता।

दुनिया की तमाम सरकारें तथा राजकीय स्तर पर योजनाएं व महायोजनाएं संचालित करने वाले वैज्ञानिक प्रायः उन्हीं योजनाओं पर कार्य कर रहे हैं जो उनके लिए निर्धारित की गई हैं। जबकि ठीक इसके विपरीत दुनिया में तमाम ऐसे गैर सरकारी संगठन तथा निजी स्तर पर तमाम लोग ऐसे सक्रिय हैं जो समय-समय पर अपनी सीमाओं के अनुसार अपने राज्यों व अपने-अपने देशों की सरकारों को ऐसी सलाह देते रहते हैं जो कि प्रकृति तथा मानव कल्याण से जुड़ी हों। हिमाचल प्रदेश राज्य के हमीरपुर में 1940 में जन्मे आचार्य रतन लाल वर्मा को उनके द्वारा निजी स्तर पर किए गए महत्वपूर्ण कार्यों के लिए राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा 22 बार सम्मानित किया जा चुका है। 70 वर्ष की आयु में वे आज भी पर्यावरण की रक्षा, प्राकृतिक सौंदर्य की रक्षा व रखरखाव तथा वन्य जीव समाज के संरक्षण व उत्थान के लिए पूर्णतया सक्रिय व समर्पित हैं।

भारत का हिमाचल प्रदेश राज्य भूकंपीय दृष्टि से संवेदनशील ज़ोन संख्या 4 व 5 के अंतर्गत आता है। वर्मा का मानना है कि जनता के सहयोग तथा सरकार द्वारा बनाए जाने वाले क़ानूनों के मध्य ऐसे उपाय सुनिश्चित हो जाने चाहिए ताकि भूकंप आने के बावजूद जान व माल की क्षति कम से कम हो। वर्मा का कथन है कि हिमाचल प्रदेश के संवेदनशील ज़ोन में होने की वास्तविकता को नज़रअंदाज़ करते हुए राज्य के धनाढ्य लोगों द्वारा बहुमंज़िला इमारतों का निर्माण कार्य जारी है। इनके अनुसार बहुमंज़िले निर्माण दरअसल आवश्यकताओं के अनुसार तो कम किए जाते हैं जबकि ऐसे निर्माण के पीछे असली मकसद या तो व्यावसायिक होता है या फिर अपनी आर्थिक सामर्थ्य का प्रदर्शन करना। वर्मा के प्रयासों से ही हिमाचल प्रदेश नगर एवं ग्राम योजना अधिनियम 1977 में संशोधन कर एक नई धारा 31-ए जोड़ी गई है। जिसके अनुसार किसी भी भवन को उपयोग में लाने से पहले आर्किटेक्ट भवन की स्थिर संरचना का प्रमाण पत्र प्रस्तुत करेगा।

ज़रूरत इस बात की है कि सरकार, सरकारी तंत्रों तथा पेशेवर वैज्ञानिकों का मुंह देखने के बजाए समस्त वैज्ञानिकों व पर्यावरणविदों को अपनी धरती की रक्षा हेतु सक्रिय हो जाना चाहिए तथा अपनी सामर्थ्य व ज्ञान के अनुसार समय-समय पर पर्यावरण के सरकारी ठेकेदारों को झकझोरते व सचेत करते रहना चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ से लेकर गैर-सरकारी संगठनों तक की यह ज़िम्मेदारी है कि वे ऐसे समर्पित लोगों को समय-समय पर प्रोत्साहित भी करें ताकि अन्य स्वयंसेवी लोगों की भी हौसला अफ़ज़ाई हो सके।

बलदेव शर्मा
सदस्य विधान सभा
अध्यक्ष
हि० प्र० राज्य सहकारी कृषि एवम्
ग्रामीण विकास बैंक सीमित,
शिमला-171009.

हिमाचल प्रदेश

☎: शिमला : 881633
नदौनता : 42058 (R)
बड़सर (मैहरे) : 88496 (O)
लज्याणा : 42996
बैंक : 221552, 221137
फैक्स नं० : 0177-220503
गांव लज्याणा, डा० गाहली कोहलवीं,
तह० नादौन, जिला हमीरपुर (हि० प्र०)
पिन-174 405
न्यू जवाहर लाल नेहरू विधायक सदन,
विधान सभा, सैट नं० 303,
शिमला-171 004.

दिनांक 26-3-2001

आपका पत्र मिला। सरकार द्वारा लिए गये 5 मंजिला भवन निर्माण के विषय में आपके सुझाव को माननीय मुख्य मन्त्री जी से अवश्य विचार विमर्श किया जायेगा तथा पूर्ण रूप से सही निर्णय पर विचार किया जाने की उम्मीद है। अभी के समय में बहुसंख्यक लोगों के हित में तीन मंजिला भवन निर्माण के पूर्व निर्णय को ही बहाल करने हेतु विचार का हेतु जोर दिया जायेगा।

धन्यवाद।

आपका
(बलदेव शर्मा)

आचार्य रत्न लाल शर्मा
वार्ड नं० 5 समीप क्षेत्रीय अस्पताल
हमीरपुर जिला हमीरपुर हि०प्र०

उपाध्यक्ष

हिमाचल प्रदेश विधान सभा,
कौंसिल चैम्बर,
शिमला-171 004.

अ०शा०प०सं०:नि०स०(उपाध्यक्ष)/-विविध
दिनांक 24-3-2009

प्रिय श्री रत्न लाल वर्मा जी,

आपका पत्र दिनांक 17-2-2009 जोकि हिमाचल प्रदेश भूगर्भीय, धरातलीय विशेषताएं विकास तथा बेढंगा बहुजन प्राणघातक निर्माण के सम्बन्ध में है, धन्यवाद सहित प्राप्त हो गया है और मैंने उसका अवलोकन भी कर लिया है । इस संबंध में मैंने संबंधित विभाग को आवश्यक कार्रवाई करने हेतु पत्र लिख दिया है ।

शुभकामनाओं सहित,

आपका,

(खीमी राम)

आचार्य रत्न लाल वर्मा,
वार्ड नं०: 5, क्षेत्रीय अस्पताल,
हमीरपुर, ज़िला हमीरपुर, हि० प्र० ।

दैनिक जागरण 1-2-2005

ऊंचे भवन निर्माण पर रोक लगाए सरकार : रत्न लाल

जागरण प्रतिनिधि, हमीरपुर

हिमाचल का अधिकार भाग भूकंप की दृष्टि से अधिक संवेदनशील है। पृथ्वी की ऊपरी सतह पर हो रहे परिवर्तनों से भूकंप की तीव्रता बढ़ भी सकती है। यह बात यहां पत्रकारों से प्रसिद्ध पर्यावरणविद् आचार्य रत्न लाल वर्मा ने कही। उन्होंने कांग्रेस सरकार से मांग की है कि पहाड़ी प्रदेश में दो या तीन मंजिल से अधिक ऊंचे भवन निर्माण पर तुरंत प्रतिबंध लगाया जाए। सरकार के बहुमंजिले भवन निर्माण के स्पष्टीकरण के प्रश्न में वर्मा ने सरकार को इन निर्देशों की व्यवहारिकता पर ध्यान देने का आग्रह किया है, ताकि आंकड़े और परिणाम मात्र कोरी कल्पना ही न रह जाएं। प्रदेश राज्य विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद, राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और नगर योजना विभाग से भी उन्होंने ऊंचे भवन निर्माण को रोकने का मुद्दा उठाया है।

■ पर्यावरण संतुलन बिगड़ने का रत्न लाल का अनुमान सही साबित हुआ

वर्मा ने कहा कि समुद्री जल ने लाखों लोगों की जान लील ली, यदि पर्वतों में भूकंप आया तो अधिक प्राण जा सकते हैं। प्राकृतिक आपदा और उथल-पुथल के आगे दुनिया की हर तकनीक छोटी पड़ती आई है।

गौर रहे कि प्रदेश में बाढ़ व पहाड़ों पर रुके पानी से संबंधित रत्न लाल वर्मा के अनुमान पहले भी ठीक प्रमाणित हुए हैं। जुलाई 2004 में प्रकाशित अपने शोध लेखों में उन्होंने पृथ्वी के डगमगाने, ध्रुवीय झुकाव में अंतर आने, दिन-रात के समय के प्रभावित होने की बात लिख डाली थी। उनका अनुमान भी सही निकला है। सुनामी के अध्ययन में लगे वैज्ञानिकों ने हाल ही में कहा है कि 26 दिसंबर को पृथ्वी डगमगाई और ध्रुवों पर प्रभाव पड़ा है।

पारदर्शी व भ्रष्टाच

अनूप पुजारी, सुजानपुर (हमीरपुर)

सौम्य व हंसमुख स्वभाव के धनी

प्राकृतिक आपदाओं के लिए अलग कोष स्थापित हो

दिखावे के लिए कर रहे लोग भवन निर्माण : रत्नलाल वर्मा

भास्कर न्यूज ◆ हमीरपुर, 16 मई

प्रदेश में लोग अब भवन निर्माण दिखावे के लिए कर रहे हैं। सरपल्ला पैसे को लोग इस काम में लगाकर कंकरीट जंगलों का निर्माण कर रहे हैं, जो हिमाचल जैसे छोटे पहाड़ी राज्य की प्राकृतिक जलवायु के अनुकूल नहीं है। यह बात प्रसिद्ध पर्यावरण विद आचार्य रत्नलाल वर्मा ने पत्रकारों से बातचीत में कही।

उन्होंने कहा कि जिन लोगों की आवासीय जरूरतें पूरी हो जाती हैं, वे लोग भी बहुमंजिला भवन बनाकर अपने आसपास कंकरीट के जंगल खड़े कर रहे हैं। भीड़-भाड़ वाले क्षेत्रों में निर्माण की गति सबसे तेज है। प्रदेश सरकार को भी उन्होंने अपने पत्रों में साफ किया था कि यहां अधिकतम तिमंजिला भवनों के निर्माण का कानून बनाया जाए। जिसके कुछ पहलुओं को प्रदेश सरकार ने स्वीकार भी किया है। वर्मा ने कहा कि प्राकृतिक आपदाओं के लिए प्रदेश में एक अलग कोष की स्थापना की जाए। जो लोग कानूनों को ताक पर रख कर बहुमंजिला भवनों का निर्माण कर रहे हैं, उनसे सरकार अग्रिम राशि वसूल कर इस कोष में डाले। ग्लोबल वार्मिंग के लिए मनुष्य ही जिम्मेदार है। उसी के कारण प्रकृति में बदलाव आ रहा है।

हिमाचल की सुंदरता उसके पहाड़ों से ही है और यदि इनका स्वरूप बिगाड़ा गया तो ये यहां के लोगों के लिए हितकारी साबित नहीं होगा। बहुमंजिला निर्माण मुद्दे पर लोगों को जनजागरण अभियान द्वारा जागरूक किए जाने की आवश्यकता है।

15-2-2009 तथा अन्य में प्रकाशित

निर्माण के लिए शीघ्र बने कानून : वर्मा

भास्कर न्यूज. गलोड़

प्रदेश में जगह-जगह बेतरतीब और प्राणघातक भवन निर्माण बेरोकटोक जारी है। भवन और अन्य निर्माण यदि इसी तरह जारी रहा तो भूकंप आने की स्थिति में यहां शहरों और गांवों में जानमाल की भारी क्षति होगी। हजारों-लाखों लोग बेघर हो जाएंगे। क्योंकि प्रदेश का हर कोना भूकंप की दृष्टि से संवेदनशील है। जारी बयान में पर्यावरणविद आचार्य रतनलाल वर्मा ने कहा कि अब कस्बे शहर बनते जा रहे हैं। वाहनों की संख्या और जनसंख्या दिनों-दिन बढ़ रही है। सुविधाओं की मांग भी बढ़ रही है। निर्माण यदि व्यवस्थित नहीं किया गया तो न लोगों के जीवन की रक्षा होगी और न ही सड़कों और रास्तों को स्थान मिलेगा। जनसुविधाओं को भी ग्रहण लग जाएगा। ऐसे में शहरों, गांवों, राष्ट्रीय राज मार्गों तथा पहाड़ों की चोटियों के देवस्थानों पर भविष्य में होने वाले निर्माण को कानून द्वारा व्यवस्थित करना सरकार का कर्तव्य और दायित्व है। इसलिए जनता और भावी पीढ़ियों के जीवन की रक्षा एवं जनसुविधाओं के हित में इस व्यवस्था के लिए शीघ्र नियम-निर्माण बनाने होंगे। वर्मा ने सभी पक्षों व वर्गों से अपील की है कि दलगत व वर्गगत भावना से उपर उठकर इस प्रकार के कानून के निर्माण में अपना समर्थन जुटाएं। ताकि जनता के व्यापक हित की रक्षा को सके। उन्होंने कहा कि ऐसा करना अब समय की मांग है और जनता एवं भावी पीढ़ियों की सुविधाओं के हित में है।

...र उजाला 17-2009

बहुमंजिला इमारतों का निर्माण रोके सरकार : रत्न

कार्यालय प्रतिनिधि

हमीरपुर। पर्यावरणविद रत्न लाल वर्मा ने कहा है कि शहरों में धड़ल्ले से हो रहे बहुमंजिला इमारतों के निर्माण कार्य पर सरकार को शीघ्र शिकंजा कसना चाहिए। वर्मा ने भूकंप की घटनाओं पर गहरी चिंता जताई है।

शुक्रवार को यहां पत्रकारों से बातचीत करते हुए रत्न लाल वर्मा ने कहा कि भूकंप के नजरिए से हिमाचल के पहाड़ी क्षेत्र अति संवेदनशील हैं। यहां बहुमंजिला इमारतें बनाने से खासा नुकसान हो सकता है। उन्होंने कहा कि राज्य सरकार ने भीड़-भाड़ वाले क्षेत्रों में बहुमंजिला इमारतों के निर्माण पर रोक लगाने के निर्देश भी जारी किए हैं लेकिन सरकार के इन आदेशों को लोगों ने नजरअंदाज कर दिया है। वर्मा ने कहा कि बहुमंजिला भवनों के निर्माण कार्य में जुटे लोगों के खिलाफ सख्त कार्रवाई की जानी चाहिए। रत्न लाल वर्मा ने इस संबंध में राज्य सरकार को भी एक शिकायत पत्र भेजा है।

उन्होंने कहा कि सरकार को भवन आपदा कोष का प्रावधान करना चाहिए जिसके तहत जब भी भवन का निर्माण कार्य शुरू किया जाए तो इससे पहले ही कोष में राशि जमा करवाने की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि आपदा के समय तत्काल सहायता दी जा सके। राज्य सरकार द्वारा पालीथिन बैगों पर पूर्णतया प्रतिबंध लगाने का स्वागत करते हुए वर्मा ने कहा कि इस कदम से बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण को रोकने में काफी हद तक सफलता मिलेगी। स्कूलों में पर्यावरण विषय का पाठ्यक्रम बनाने के लिए उच्च स्तरीय कमेटी का गठन किया जाना चाहिए। पर्यावरण प्रदूषण पर चिंता जताते हुए वर्मा ने कहा कि विश्व के सभी देशों को एकजुट होकर इस विकराल समस्या से निपटने के लिए विश्व पर्यावरण परिषद का गठन करना चाहिए।

पर्यावरण, हम और भूकम्प

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

गुजरात की भूकम्प त्रासदी ने वहां के प्रभावित क्षेत्रों के लोगों पर भीषण वज्रपात कर हजारों लोगों के प्राण हर लिए और लाखों को घायल कर दिया। जो बच गए वे अन्य लाखों लोगों की तरह अपने भाई-बहनों, माता-पिता, पति-पत्नी के वियोग की अग्नि में तपते, अपंगता की चक्की में पिसने और आजीवन रह-रह कर अपने मानस पटल पर इस प्राकृतिक आपदा की भयंकर आकृति की अनुभूति करते रहने के लिए विवश हो गए। भले ही जहां तक संभव हो सका लोगों को बचाने तथा उन्हें सहायता तुरंत प्रदान करने में लोग दिल खोलकर आगे आते रहे और यह सिलसिला अभी तक निरंतर जारी है। इस प्रलयंकारी घटना ने पूरे देश को झकझोर कर तो रख ही दिया है, साथ ही समूचे विश्व की मानव जाति को यह सोचने के लिए भी विवश कर दिया है कि अंततः भूकम्प आता क्यों है। इससे बचाव तथा इसकी पूर्व सूचना देने की विधि अभी तक खोजी क्यों नहीं गई है? जबकि मानव नित नई-नई खोजों, आविष्कारों एवं प्रौद्योगिक प्रगति के साथ द्रुत गति से विकास के पथ पर बढ़ता हुआ ब्रह्मांडियां, ऊंचाईयों की गहराईयों में घुसता चला जा रहा है।

वैज्ञानिक मान्यताओं के अनुसार धरती की भीतरी सतह में प्लेटें हैं जो भूगर्भ के विशाल गर्म सागर पर तैरती रहती हैं। इन प्लेटों की मोटाई सामान्य रूप से 100 किलोमीटर आंकी गई है। जब दो प्लेटों के बीच के अंतर के कारण ये प्लेटें आपस में टकराती हैं या एक दूसरी के ऊपर चढ़ जाती हैं तो भूकंप आ जाता है। ज्योतिष से संबंध रखने वाले कुछ विद्वान भूकंप को हमारे सौर मंडल के ग्रहों के अनिष्टकारी प्रभाव का परिणाम भी मानते हैं। कब, कहां और कितनी तीव्रता का भूकंप आएगा, इसे बताने में विज्ञान अभी असमर्थ है। **अर्थात् इसकी सही भविष्यवाणी करना संभव नहीं है**। हाल ही में हिमाचल प्रदेश सहित हिमालय के दूसरे क्षेत्रों में भूकम्प आने के जो समाचार प्रकाशित हो रहे हैं वे केवल मात्र पहले आए भूकंप की तीव्रता, स्थान, अनुमान एवं अटकलों पर ही आधारित हैं जो सच भी हो सकता है। इस समय जो चर्चा जोरों पर है वह है भूकम्प रोधी मकान बनाने की, बने हुए मकानों की भूकम्प रोधी

क्षमता को मापने की, उसे बढ़ाने की और आपदा प्रबंधन की। परन्तु यहां प्रश्न यह भी तो उत्पन्न हो रहा है कि क्या भूकंप रोधी मकान बन जाने से मानव जाति भूकंप के भय एवं विनाश से मुक्त हो जाएगी और भूकंप का अन्तिम क्या यही निराकरण है?

पृथ्वी की भीतरी सतह में किसी हल-चल से भूकंप आता है। इसे तो वैज्ञानिक आधार मिल गया है। परन्तु क्या धरती की ऊपरी सतह की प्रभावशाली क्रियाएं धरती की भीतरी सतह और उसकी क्रियाओं को प्रभावित नहीं करतीं? इस ओर विशेषज्ञों का समुचित ध्यान संभवतः अभी तक गया नहीं है। भूकम्प के मोटे पुराने इतिहास पर यदि हम दृष्टि डालें तो प्रचार माध्यमों में प्रसारित आंकड़ों के अनुसार विश्व की छठी शताब्दी में विध्वंसकारी दो भूकम्प आए। 9वीं शताब्दी में एक, 11वीं में एक, 13वीं में एक, 16वीं में दो, 18वीं में पांच, 19वीं में नौ और 20वीं में उन्नीस विनाशकारी भूकम्प आए। 21वीं शताब्दी के प्रथम वर्ष के प्रथम मास में ही दो विनाशकारी भूकंप विश्व को झेलने पड़ गए। भारत में 6 या इससे अधिक तीव्रता वाले 18वीं शताब्दी में एक, 19वीं शताब्दी में तीन, बीसवीं में नौ भूकम्प आए। 21वीं शताब्दी के प्रथम वर्ष के प्रथम मास में ही गुजरात में भीषण चेतावनी देने वाला प्रलयकारी भूकंप आ गया है। इतनी ढेर सारी जानकारी तथा प्रकृति की चेतावनी के उपरांत भी यदि हम भूकंप के अन्य वास्तविक कारणों की खोज वर्षों जाने वाली प्रक्रिया में करते रहे तो मानव के एकांकी ज्ञान द्वारा वास्तविक जीवन पटल पर पर्यावरण की धुंधली एवं खंड-खंड होती आकृति जनसाधारण को स्पष्ट दिखाई दे जाने से अब रुक नहीं पाएगी।

हम कितनी निर्दयता के साथ पृथ्वी के भीतर के पदार्थों का दोहन करने और अपनी निरंकुश प्रवृत्ति के कारण उन्हें नष्ट करने में लगे हैं। प्रतिदिन कितना तेल पैट्रोल तथा दूसरा तरल भूमि के गर्भ से निकाला जा रहा है। बड़ी मात्रा में खनिजों और तरल पदार्थों का भूमि के भीतर छिपा भंडार कम होता जा रहा है। धरती के ऊपर बहु-उद्देशीय पनबिजली परियोजनाएं तथा नित नए बनते बांध धरती को कहीं खोखला तो कहीं भारी बनाते जा रहे हैं। अनावश्यक बढ़ता बहमुंजिले भवनों का बेढंगा निर्माण, भारी भरकम कारखाने, प्रतिदिन कटते दैत्याकार पहाड़ और भारी मात्रा में उठती रेत-बजरी के रूप में हो रही क्रियाओं की प्रतिक्रिया के कारण धरती की भीतरी सतह

भी प्रभावित हो रही है, जिसके परिणामस्वरूप असंतुलन द्वारा भूकम्प की संभावनाएं बढ़ती जा रही हैं। भूकम्प के पुराने आंकड़े इस बात के प्रबल साक्षी हैं कि जब से धरती पर मानव ने अपने आराम, अनावश्यक एवं अत्याधिक सुख-सविधाओं और विलासिताओं के लिए कठोर हृदय से धरती से क्रूरता का व्यवहार करना आरंभ किया है, तभी से भूकम्पों की संख्या भी बढ़ी है। यदि यह सच नहीं होता तो विकास की आधारशिला और शिखर की ओर ले जाने वाली 20वीं शताब्दी में इतने भूकम्प कभी भी नहीं आते। **21वीं शताब्दी के तो आरंभ होते ही अलसल्वाडोर और गुजरात में आए प्रलयंकारी भूकंपों ने इस शताब्दी को महाविनाशकारी प्राकृतिक आपदाओं की शताब्दी बन जाने की मानो चेतावनी ही दे डाली है। इससे इस बात की पुष्टि हो जाती है कि एकपक्षीय मानवीय विकास जन्य अनियंत्रित एवं असंतुलित विकास तथा केवल मात्र धनार्जन की ओर बढ़ता ज्ञान और विशिष्टता का रुझान धरती पर भावी जीवन को अब शीघ्र नष्ट कर देगा।**

प्रदर्शन की भावना से आक्रांत होकर प्रकृति द्वारा प्रदत्त सहज जीवन शैली से विमुख होते और अपने मनचाहे अर्थों वाली अपरिभाषित जीवन शैली के लिए हम कीट-पतंगों की तरह बढ़ती इच्छाओं एवं विलासिताओं से पराभूत होकर भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित एवं विकसित होते प्राकृतिक संसाधनों को अपनी अन्यायपूर्ण प्रवृत्ति के आचरण द्वारा छीनने की प्रक्रिया में सार्थक जीवन की गुणवत्ता के अर्थ ढूंढने में लगे हैं। जो ठीक नहीं है। यह भी एक बिडंबना ही है कि विश्व पटल पर विकसित हुआ बहुर्मुखी ज्ञान का पुंज एकांगी निखार की चकाचौंध में तनावयुक्त जीवन शैली से होता हुआ धनार्जन की कभी भी तृप्त न होने वाली अभिलाषा की पराभूति में दीर्घकालीन सुख एवं शांतिमय जीवन की दिशा के मार्ग से भटकता जा रहा है।

इतिहास साक्षी है कि शासक भी प्रतिस्पर्धा की होड़ और अपनी महत्वकांक्षा की हिलोरों के भंवर में फंसकर प्रकृति की कल्याणकारी सुख एवं शांतिमय जीवन यापन की पद्धति का मार्ग दिखाने और वहां तक ले जाने की क्षमता की परिधि के पथ से भटकते रहे हैं। उनके परामर्शदाता दरबारी विद्वान भी धन कमाने और पद के लालच में अनुचित को उचित की पटरी पर दिखाने के प्रयत्न में लगे रहे। विध्वंस एवं विनाश का मुंह देखने के पश्चात अपने में त्याग के

वास्तविक रूप से परिवर्तन लाकर औरों को न्यायपूर्ण, कल्याणकारी एवं सुखमय मार्ग की ओर ले जाने के लिए समर्पित होने वाले सम्राट अशोक और विक्रमादित्य जैसे शासक तथा विदुर जैसे आचरणवान विद्वान एवं स्पष्ट नीतिवान परामर्शदाता विश्व में कम ही हुए हैं।

प्रकृति की यह भी तो नियति ही है कि तनावयुक्त सुख की प्राप्ति से सराबोर होकर आज के विराट् ज्ञान का पुंज अपने धवल प्रकाश की परत के नीचे अंधकार की काली छाया की एक दूसरी परत को भी साथ-साथ धकेलता चला जा रहा है। यदि प्रकृति के प्रति हमारी सोच और व्यवहार में अब भी कोई बदलाव नहीं आया तो गुजरात और हिमाचल ही नहीं, बल्कि महाविनाशकारी प्राकृतिक आपदाओं की चपेट में विश्व के सभी देश आ जाएंगे **और धरती का मानवीय जीवन इसी शताब्दी में महाविनाशकारी लीलाओं में से होता हुआ संभवतः संपूर्ण विनाश की भेंट चढ़ जाएगा। इसका रूप भूकम्प, प्रदूषण, महामारी, विश्वयुद्ध, आतंकवाद, उष्णता, वायुमंडलीय विकीरणता, अराजकता, विषाक्तता सभी कुछ हो सकता है।**

इस महाविनाश से बचने के लिए धरती एवं प्रकृति को चेतन, संवेदनशील एवं सजीव समझने के सिद्धान्त को तुरंत मान्यता देने की नितांत आवश्यकता है। प्रकृति में चेतना, संवेदनशीलता और सजीवता का सामर्थ्य मानव से कहीं अधिक है। विश्व को अब प्रत्याशित इस महातांडव के नर्तन की थिरक को समझ लेना चाहिए और इस सिद्धान्त को अविलंब मान्यता दे देनी चाहिए। तभी मानव संतुलित विकास के साथ प्रकृति का अनुगामी होकर शांतिमय दीर्घकालीन जीवन की ओर बढ़ता हुआ भावी पीढ़ियों को उनके जीने के अधिकार से वंचित करने से बच सकेगा। महाविनाश को टालने का केवल यही मार्ग है। बहुमंजिले भवनों के निर्माणा, विलासिताओं पर आवश्यक सीमा तक प्रतिबंध होना चाहिए और उपरोक्त के अनुरूप सही जीवन शैली को भी अब मान्यता दे देनी चाहिए जिसका संकेत कर दिया है।

इस समय पर्याप्त अधिकारों एवं शक्तियों से संपन्न एक विश्व पर्यावरण परिषद के गठन की नितांत आवश्यकता है, जिसमें आर्थिक संपन्नता के अतिरिक्त जनसंख्या के आधार पर भी सभी देशों को प्रतिनिधित्व दिया जाए। पर्यावरण एकल देशों के एकाकी प्रयत्नों से कहीं अधिक सभी देशों के सामूहिक प्रयत्नों

से सही और प्रभावशाली रूप से बच सकेगा। अपने देश में सरदार सरोवर तथा टीहरी, जैसे बड़े बांधों तथा परियोजनाओं पर विचार की एक और विहंगम दृष्टि यदि डाल ली जाए तो कोई बुरा नहीं है। प्रबंधन पर हुए व्यय की तुलना में लोगों के जीवन के मूल्यों का कद तो कहीं ऊंचा ही आंका जाना चाहिए। अब दो ही विकल्प शेष हैं या तो भावी पीढ़ियों के जीवन के अधिकार को छीनते हुए एवं उनके जीवन को अंधकारमय बनाकर प्राकृतिक सीमाओं की अवहेलना कर स्वयं पूर्ण सुख-सुविधाओं के साथ अनावश्यक विलासितापूर्ण जीवन जी लिया जाए या फिर भावी पीढ़ियों के जीवन पर दया कर उनके जीवन की परवाह करते हुए अपनी विलासितापूर्ण इच्छाओं पर अंकुश लगाकर बाहरी गुणवत्ता के स्थान पर वास्तविक जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाते हुए प्रकृति द्वारा प्रदत्त सरल जीवन शैली के साथ जीया जाए। जिससे संसाधनों का अनावश्यक उपभोग, एवं दुरुपयोग रुक सके।

एक पथ के दो पाट।
चुनाव हमारे हाथ।।

दिव्य हिमाचल, धर्मशाला शुक्रवार, 16 फरवरी, 2001 (संपादकीय पृष्ठ), दैनिक जागरण जालंधर 3 मार्च 2001 तथा अन्य कई पत्रों में प्रकाशित

इस लेख में प्रकाशित वर्तमान शताब्दी के महाविनाशकारी शताब्दी बन जाने के उजागर किए गए शोध निष्कर्ष की अब कई स्थानों पर चर्चा हो रही है।

हिमालयी क्षेत्र में बहुमंजिले निर्माण का निर्णय कितना सही कितना घातक ?

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

स्वार्थ रंजित भावना से युक्त चेहरों द्वारा अर्जित एवं निर्मित वोट प्रधान तराजू में लगे प्राकृतिक सीमाओं की अवहेलना के पलड़ों में न्याय जब तुलता है तो निर्बल निरपराध का गला घुटता है। एक ओर आज पर्यावरण को बचाने के लिए बड़े-बड़े सेमीनार सरकारी और अर्द्ध-सरकारी व्यय पर किए जा रहे हैं। दूसरी ओर इन्हीं सेमीनारों की अध्यक्षता करने या इनमें मुख्य अतिथि बनकर आने वाले मन्त्री, मुख्यमन्त्री या अधिकारी समय आने पर न केवल पर्यावरण की रक्षा से मुंह मोड़ लेते हैं बल्कि ऐसे निर्णय लेने या उनका मार्ग प्रशस्त करने से भी पीछे नहीं रहना चाहते जो पर्यावरण को ही ध्वस्त कर डालने का कारण बन जाते हैं। ऐसा ही कुछ निर्णय हाल ही में हिमाचल प्रदेश सरकार ने भवनों की मंजिलें बढ़ाने संबंधी निर्माण पर लिया है।

थोड़ा ही समय गया, गुजरात में 26 जनवरी 2001 को भीषण भूकम्प आया, जिसने न केवल भारत बल्कि समूचे विश्व की मानवता को झकझोर कर रख दिया है। हजारों लोग एकाएक भारी भवनों के गिरने से दब कर मर गए। पूरे भारत में भूकंपरोधी मकानों की रचना के साथ कम ऊंचाई के भवन निर्माण की बात होने लगी। अनेक विशेषज्ञों का ध्यान इस पर कई दिनों तक केंद्रित रहा।

वैज्ञानिकों ने पूरे देश को भूकंप की तीव्रता की संवेदनशीलता के दृष्टिकोण से जोन न. 5,4,3 तथा जोन न. 2 के क्षेत्रों में बांटा है। इनमें सैस्मिक जौन न. पांच और चार में अधिक तीव्रता के भूकंप आने का अनुमान व्यक्त किया गया है और हिमाचल प्रदेश का अधिकतर भाग तो अधिक विनाशकारी इन्हीं क्षेत्रों के अन्तर्गत पड़ता है। इसलिए तो विशेषज्ञों के परामर्श पूर्ण संकेत के पश्चात ही हिमाचल प्रदेश को अप्रैल 2001 में इस प्रदेश में तीन मंजिलें (2+एक गैरेज) भवन निर्माण से अधिक निर्माण पर रोक लगानी पड़ी। हिमाचल प्रदेश सरकार के अपने सरकुलर के अनुसार इस प्रदेश में चार से छह मंजिल तक निर्माण घातक बताया गया है। विडम्बना देखिए कि उसी सरकार ने कुछ लोगों या संस्थाओं या फिर स्वयं के लाभ

सूचक विचारों के बोझ को न सहते हुए जनवरी 2002 में हिमाचल प्रदेश में पांच मंजिलें भवन निर्माण का निर्णय ले लिया। जून के आस-पास उस निर्णय पर रोक लगा डाली। रोक का यह सफर अभी कुछ आगे बढ़ भी नहीं पाया था कि सरकार ने जुलाई में फिर बहुमंजिलें भवन निर्माण का निर्णय ले लिया।

लाभ-हानि तथा कर्त्तव्य के परिपालन के दृष्टिकोण से इस निर्णय को भूकंप के अनुमान के दर्पण में अति संवेदनशील इस प्रदेश की कसौटी पर कस कर यदि देखें तो पता चलेगा कि हमारे पड़ोसी राज्यों पंजाब तथा हरियाणा की अपेक्षा यहां भूमि अधिक और आबादी कम है। यह स्थिति भी मंजिलें बढ़ाने में सहायक नहीं है। इस स्थिति के चलते संभावित भूकंप के खतरों की चपेट वाले इस पर्वतीय प्रदेश में क्या ऐसा निर्णय उचित है? पुराना अनुभव बताता है कि सरकार तथा सरकार की संस्थाएं कई स्थानों पर हो रहे अनियमित निर्माण को नहीं रोक पाई है। ऐसे में क्या यह सुनिश्चित हो पाएगा कि सरकार बहुमंजिलें निर्माण की कुछ लोगों को छूट देकर अधिक लोगों द्वारा उपयोग किए जाने वाले जीवनदायक परम आवश्यक पर्यावरण को इन गिने-चुने मुट्ठी भर लोगों द्वारा ध्वस्त किए जाने से बचा पाएगी।

क्या निर्दोष लोगों की जान-माल की रक्षा घटना के घटित होने से पूर्व करना सरकार का प्रथम कर्त्तव्य या उत्तरदायित्व नहीं है। क्या सरकार को लाखों सामान्य लोगों के प्राणों को जोखिम में डालकर मात्र केवल कुछ लोगों की सम्पत्ति की बढ़ोतरी की ही परवाह करनी चाहिए। क्या प्रजातांत्रिक व्यवस्था का तकाजा मात्र कुछ प्रभावशाली लोगों के बल प्रभाव के सहारे निर्बलों को उनके जीवन के अधिकार से वंचित कर देना होना चाहिए। क्या विधान में इंगित सबके लिए कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को मात्र केवल कुछ लोगों के लिए संपत्ति अर्जन का मार्ग प्रशस्त करने के अर्थों में देखा जाए। **क्या मानवता प्रधान भावना के मार्ग से भटकती स्वार्थ एवं धन लिप्सा प्रधान, वर्तमान राजनीति का रुझान पर्यावरण संरक्षक कल्याणकारी राज्य के मार्ग में बाधक नहीं बनता जा रहा है?** कांगड़ा, किन्नौर में पहले ही आए भूकंपों ने आगे के संकेत दे डाले हैं। प्रदेश में जगह-जगह हो रहा भूमि कटान भी कई प्रकार की आपदाओं को निमंत्रण देता जा रहा है। सुरंगों तथा बांधों से कहीं धरती हलकी तथा कहीं भारी होकर असंतुलन को जन्म देती जा रही है। ऐसे में शिमला-मनाली आदि नगरों में चट्टानों तथा ढलानों पर कटान के सहारे हो

रहा ऊंची मिनारों वाला गगनचुंबी निर्माण भावी दुर्घटनाओं का सहज ही संकेत देने से कैसे रुक सकेगा।

क्या सरकार के पास ऐसी व्यवस्था है जो भूकंपीय तीव्रता या उसके प्रभाव को रोक पाए और यदि नहीं तो भूकंपीय त्रासदी के अनुमान के उजाले में कुछ लोगों के आर्थिक हित में लिया गया बहुमंजिलें निर्माण संबंधी निर्णय अधिक लोगों की समझ में आने से अब रुक भी नहीं पाएगा।

निष्पक्ष, कर्त्तव्य निर्वाह की भावना के वीराने में मात्र केवल पद और धन प्राप्ति के लिए सत्ता या राजनीति में आने की बहुत से नेताओं में आज बढ़ती प्रवृत्ति देश और प्रदेश के लिए कदापि अच्छी नहीं है। लोकहित के नाम पर मुद्दों को मात्र केवल वोट बटोरने के लिए उठाना, अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए भावना शून्यता में मात्र उन्हें साधन बनाना, अब कितनी दूर तक और आगे लोक हित कहलाएगा। यह प्रश्न अब अपना उत्तर चाहता है।

लोकहित के नाम पर वही मुद्दे आज मुद्दा बनते हैं जो लोगों को बहका-फुसलाकर मत बटोरने का साधन बन सकें। बहुजन कल्याणकारी लोकहित के वास्तविक वे मुद्दे जो लोगों को बहकाने-फुसलाने के काम न आएं, इन नेताओं के लोकहित के मुद्दों की परिधि से बाहर रह जाते हैं। उनमें ऐसे नेता रुचि लेते ही नहीं। इस प्रकार त्यागमय मानवीय भावना के मार्ग से भटकती जाती भारतीय राजनीति की वर्तमान रुझान वाली यात्रा क्या अब बहुत अधिक आगे निकल पाएगी।

दैनिक जागरण जालंधर दिनांक 9 सितंबर 2002 में प्रकाशित

भूकंप को न्यौता देते हिमाचल के बहुमंजिला भवन

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

भूकंप भी सारे विश्व के लिए एक ऐसी प्राकृतिक आपदा है; जिसका समाधान किसी के पास नहीं है। यहां तक कि हजारों-लाखों लोगों के प्राण हरने वाली इस घटना की भविष्य वाणी तक करने में विज्ञान बिल्कुल असमर्थ है। केवल पुरानी घटनाओं के आंकड़ों एवं कुछ धरातलीय अनुमान के आधार पर ही विज्ञान भूकंप की तीव्रता के दृष्टिकोण से धरती को पांच क्षेत्रों में बांट पाया है, जिन्हें सैस्मिक जोन कहा जाता है। इनमें जोन न. 4 तथा 5 में अधिक विनाशकारी भूकंप आने का अनुमान लगाया गया है, जो कहीं भी और किसी भी क्षण आ सकता है।

हिमाचल प्रदेश का अधिकतर भाग महाविनाशकारी इसी प्रकार के भूकंपों के क्षेत्रों में आता है जो पलक झपकते ही किसी भी समय अचानक हजारों-लाखों की संख्या में हिमाचली लोगों के जीवन को काल का ग्रास बना सकते हैं।

आज कुछ लोग अधिक संपन्नता के बोझ को अधिक भारी बना डालने की अभिलाषा के कारण ऊंचे भवनों के निर्माण के पक्ष में तर्क दे रहे हैं लैंड स्केपिंग की तकनीक तथा जापान में बनते भूकंपरोधी भवनों का। परन्तु इस प्रकार तर्क देते समय यह तथ्य भुला दिया जाता है कि यह प्रदेश पर्वतीय है, जहां लोग अधिकतर ढलानदार स्थानों पर या उनके समीप बसे हैं। इस पहाड़ी राज्य की अपनी अलग प्रकार की भौगोलिक सीमाएं, विशेषताएं तथा अनिवार्यताएं भी हैं। इसकी तुलना समतल परिस्थिति वाले क्षेत्र से नहीं की जानी चाहिए।

भूकंप से अधिक जान-माल की हानि पृथ्वी के हिलने से नहीं होकर गिरते मकानों के मलबों के नीचे लोगों के दबने के कारण होती है। यही नहीं ढलानदार स्थानों, शिखरों तथा उनके समीप होता अनियंत्रित भारी भरकम और बोझिल निर्माण भूमि संतुलन को प्रतिकूलता के साथ प्रभावित करता हुआ भूकंप का कारण भी बनता जा रहा है, जिसकी ओर न तो सरकार का ध्यान गया है और न ही विशेषज्ञ अपना प्रभावशाली एक स्वरी मत ही बना या उसे व्यक्त कर पाए हैं।

यह स्थिति किसी विडंबना से कम नहीं है, जो प्रदेश के लाखों लोगों के जीवन को जोखिम और खतरे में डालती जा रही है। गुजरात की भूकंप त्रासदी के पश्चात इस प्रदेश की पूर्व सरकार को अप्रैल 2001 को दो जमा एक (तीन) मंजिलों से अधिक निर्माण पर प्रतिबंध लगाना पड़ा। जून 2001 के आस-पास रोक के निर्णय पर फिर रोक लगा डाली। रोक पर रोक के ठेलमठेल के बीच पुनः बहुमंजिले निर्माण का निर्णय लेकर उस सरकार ने पहाड़ी प्रदेश में खतरनाक ऊंचे निर्माण का मार्ग प्रशस्त कर डाला। प्रदेश की राजधानी शिमला तो स्वयं एक पहाड़ी शिखर पर स्थित है। सरकारी तथा निजी दोनों ही क्षेत्रों में मकान भारी और ऊंचे बनते जा रहे हैं। मकानों की मंजिलें गिनती में दर्जन के आंकड़े को छूने लगी हैं।

भूकंप रोधी भवन की तकनीक के संतोष के साथ ऊंचे भवन निर्माण का रुझान बड़ी तेजी के साथ हर जगह जारी है। अनुमान से अधिक तीव्रता का भूकंप आया तो भूकंप रोधी भवन भी धराशायी होने से बच नहीं पाएंगे और पलक झपकते ही लाखों लोगों के प्राणों को हर लेंगे। अरबों-खरबों की सम्पत्ति नष्ट हो सकती है तथा शेष बचे घायल या स्वस्थ लोगों के पुनर्वास की विकट समस्या खड़ी हो सकती है जिसका सामना करने के लिए प्रदेश के पास सामर्थ्य बहुत ही कम है। इससे तो यही अच्छा है कि समय रहते परिस्थितिनुकूल वांछित जीवन शैली का प्रचार किया जाए और बहुमंजिले निर्माण पर प्रतिबंध लगाया जाए।

दिव्य हिमाचल 1-7-2003 (संपादकीय पृष्ठ) दैनिक जागरण 7 जुलाई 2003 में प्रकाशित

बांध भी बनेंगे तबाही के कारण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

पहाड़ों, कल कारखानों तथा फसलों में नए प्राण फूंकने के लिए बने बांध, पानी में डूबी हिमाचल प्रदेश की लाखों बीघा भूमि और उजड़े हजारों परिवारों के निरपराध लोग। कई विवश हुए प्रकृति की सौंदर्यमयी और शांत छटा वाली अपनी जन्मभूमि से सैंकड़ों मील दूर राजस्थान की आग उगलती तपती रेत पर बसने के लिए तो कई इसी जन्म भूमि के मोह जाल में फंसे, साधनहीनता की बेड़ियों से जकड़े, विवश हुए इन्हीं पहाड़ियों में भटकने के लिए। मैदानों को तो मिली लहलहाती फसलें और मिले कल कारखानों वाले व्यापारी सामान के बाजार। परन्तु हिमाचल प्रदेश को मिला पलायन करते लोगों के पुश्तैनी घरों का विछोह और ऊंचे भारी बांधों के विशाल जलाशयों के कारण भूकंपीय त्रासदी की संभावित या अनुमानित सौगात, जो बदल सकती है दूसरों को सौभाग्यशाली बना देने वाले अपने प्रदेश के लाखों लोगों के भाग्य को दुर्भाग्य में भी। बांध तथा कृत्रिम गहरे विशाल भारी गाद से बोझल होते जलाशय भूकंप की तीव्रता को प्रभावित न करते हों या फिर भूमि के संतुलन को प्रभावित कर भूकंप के आने का स्वयं कारण न बनते हों, इसे ठीक नहीं माना जाना चाहिए।

भूमि के भीतर हल चल है इसका अंतर क्रियाशील और संवेदनशील है। यही संवेदनशीलता और भीतरी क्रियाशीलता भूमि की बाहरी तह को अपनी सहज प्रकृति से हिला डालती है। परन्तु पृथ्वी की इस मर्यादित क्रियाशीलता को आज मानव अपनी सामूहिक अप्राकृतिक क्रियाओं द्वारा जब प्रतिकूलता से प्रभावित करता है तो संवेदनशीलता के कारण पृथ्वी भी अपना उत्तर देती है, जिसकी परिणति फिर होती है, भूकंप के रूप में, प्रभावित होते हैं एक साथ लाखों लोग, दिखाई देते हैं लाशों के अंबार और सुनाई देती हैं लोगों की चीत्कार।

लंबी लकड़ियों के एक मन के बोझ के एक सिरे पर बंधता आधे किलो का भार लकड़ियों को उठाने वाले की चाल या पगों को जब डगमगा सकता है तो लाखों करोड़ों क्विंटल अतिरिक्त भार वाले बांध अपनी कृत्रिम क्रिया से प्रकृति की सहज क्रिया को चुनौती देने के कारण भूकंप के आने या उसकी तीव्रता को बढ़ा कर भी बहुत भारी जान माल की तबाही कर डालने का कारण

बन सकते हैं। इस पहाड़ी प्रदेश में भाखड़ा बांध, चमेरा बैरा स्यूल हाईडल प्रोजेक्ट, नाथपा-झाकड़ी, पौंग बांध, पंडोह आदि कई बांध बने हैं और आगे भी इन बांधों की संख्या में बढ़ोतरी का सिलसिला निरंतर जारी है।

महाराष्ट्र के लातूर उसमानाबाद में भूकंप से भारी जान माल की हानि हुई। राहत सामग्री उपलब्ध करवाने तथा उजड़े लोगों को मकान बनाने का बहुत प्रचार और काम भी हुआ। परन्तु इस बात पर बहुत ही कम अर्थात् नगण्य चर्चा हुई कि भूकंप का केन्द्र बांधों तथा परियोजनाओं से भी घिरा हुआ था।

हमें ऐसी जीवन शैली की ओर भी जाना होगा, जो बड़े बांधों के बिना भी जीवन की गाड़ी को आगे धकेल सके। आज **जहां कहीं भी भूकंप आता है सारा दोष टैंकटेनिकल प्लेटों को देकर अन्य कारणों से मुंह मोड़ते हुए विनाश का द्वार खुला रख दिया जाता है। विशेषज्ञों को भी इस दिशा में अपनी एक स्पष्ट राय व्यक्त करनी चाहिए।**

दिव्य हिमाचल धर्मशाला 10.07.2003

हिमालयी पर्यावरण के लिए घातक बहुमंजिला निर्माण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

यद्यपि प्रदेश में हिमाचल प्रदेश की सरकार ने पॉलीथिन के थैलों की बिक्री व प्रयोग पर प्रतिबंध लगाकर लेखक के स्वर की मांग की पूर्ति के साथ जन कल्याणकारी अपनी भावना का परिचय दिया है। सख्ती से लागू होते इस प्रतिबंध के कारण यहां के शहर, कस्बे व गांव में फैल रहे प्रदूषण को लगाम लगने लगी है तथा पर्वतों की सुंदरता को पॉलीथिन के ग्रहण से बचाने की आशा जगी है।

पहाड़ों के सौंदर्य व शांतिमय जीवन को बचाने की दिशा में अब अंधाधुंध बहुमंजिले भवन निर्माण पर अंकुश लगाने की आवश्यकता है। जीवन की सुरक्षा के साथ इस अंकुश से यहां के पर्यटन उद्योग पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। पर्वतीय भवनों तथा मैदानी भवनों के रंग-रूप तथा आकार-प्रकार का अंतर यदि मिट जाएगा तो गर्मी की तपन से तपते मैदानों के लोग यहां क्या देखने आएंगे?

हिमाचल प्रदेश का अधिकतर भू-भाग वैसे भी भूकंप की दृष्टि से अधिक संवेदनशील है। जहां किसी भी समय बड़ी तीव्रता का भूकंप आ सकता है। गुजरात भूकंप त्रासदी में भवनों के गिरने के कारण हुई हजारों लोगों की मौत से पाठ सीखकर प्रदेश में बहुमंजिले भवन निर्माण पर प्रतिबंध तो लगा। परन्तु उसे तुरंत हटा भी दिया। इस मामले पर लेखक ने पुनः प्रतिबन्ध लगाने **के लिए अपने तर्क देते हुए यह मुद्दा तत्कालीन मुख्यमन्त्री के साथ उठाया था। सैंकड़ों पत्र व फैक्सें उस समय के मंत्रियों, विधायकों तथा प्रशासकों को भेजीं। उत्तरो-प्रत्युत्तरों का आदान-प्रदान भी हुआ। प्रतिबंध पुनः तो लगा, परन्तु उसे भी फिर तुरन्त उठा दिया गया।** आवास वाला क्षेत्र पहाड़ी परिवेश में ढलानदार या ऐसे स्थानों के ही समीप है, जहां भूकंप द्वारा भवनों के गिरने के कारण भारी प्राण हानि हो सकती है।

जिस प्रकार ऊंचे भवनों के पक्ष में तर्क आते हैं वैसे ही तर्क प्लास्टिक के थैलों को बनाए रखने के लिए भी दिए जाते थे। कभी इन लिफाफों से खाद बनाने की बात की जाती थी तो कभी रिसाईक्लिंग के प्रोजेक्ट बनते थे। हैरानी की बात तो

यह भी थी कि इन्हें मिट्टी में दबा डालने तक का सुझाव भी कुछ सामर्थ विशेषज्ञों की ओर से आ जाता था।

लेखक ने प्रकाशित लेखों तथा सेमिनारों में दिए अपने वक्तव्यों द्वारा ऐसे सुझावों की अनुपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए इन थैलों को बंद करने तथा सूती थैलों के प्रयोग पर ही सर्वथा बल डाला है।

दैनिक जागरण जालंधर, 1 जुलाई 2004 में प्रकाशित

पर्वत, भवन और भूकंप

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

पर्वतों की भौगोलिक स्थिति, लोगों के जीवन की आवश्यकताएं तथा धरातलीय संतुलन मैदानों से भिन्न होता है। इसलिए पहाड़ों की मनमोहक सुंदरता, जलवायु तथा सांस्कृतिक भिन्नता एवं शालीनता समतलीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए आकर्षण का केन्द्र बनी रहती है। यही वह मुख्य कारण भी है जो यहां के पर्यटन उद्योग को बढ़ाने में सहायक है। परन्तु विडंबना देखिए कि इतनी विभिन्नता होने पर भी पहाड़ों के विकास की बातें मैदानों की भाषा में की जाती है और उसी में समझी जाती हैं। इस प्रक्रिया के कारण आधुनिकता के नाम पर पर्वतीय आंचल की स्नेहमयी, शीतल, शांत और मनमोहक सुंदरता तो नष्ट होती ही जा रही है, परन्तु जीवन पर प्राण घातक खतरा भी मंडराता और बढ़ता जा रहा है। यह खतरा किसी भी दिन और किसी भी क्षण हजारों लाखों लोगों को अपने शक्तिशाली पंजों में जकड़कर उनके प्राण हर लेने का कारण बन सकता है। आर्थिक सामर्थ्य के बल पर आधुनिकता के रंगों के साथ पर्यावरण को नष्ट करना ठीक नहीं है।

हिमाचल प्रदेश में भी धन कमाने और सुविधाएं जुटाने के नाम पर बड़ी-बड़ी परियोजनाएं लगी हैं। ऐसी अन्य परियोजनाओं के लिए भी ऊंचे स्वर से विकास का डंका भी बजाया जा रहा है। दूसरी ओर पर्वतीय शांति, संस्कृति एवं सुंदरता के प्रति हमारा मोह घटता जा रहा है। घटते इस मोह के कारण हम जीवन सुलभ प्राकृतिक सीमाओं की अवहेलना द्वारा यहां की भौगोलिक छाप पर धड़ा-धड़ सीमेंट-कंकरीट का लेप लगाकर इस देवभूमि की पावन धरा को ऊंची-ऊंची मीनारों वाले मकानों के बोझ तले दबाकर मैदानों और पर्वतों के अंतर को मिटाने में लगे हैं। प्रकृति मिटे या न मिटे परन्तु इसे मिटाने की कल्पना करने वाले स्वयं मिटते आए हैं। आवश्यकता से दूर आर्थिक प्रर्दशन और लालच के लिए होता निर्माण बहुत घातक सिद्ध हो सकता है।

हिमाचल प्रदेश का अधिकतर भू-भाग भूकंप की दृष्टि से बहुत संवेदनशील है। यहां किसी भी दिन और किसी भी क्षण बड़ी तीव्रता का भूकंप आ सकता है। 26 दिसंबर को सुनामी लहरों ने समुद्र तटीय क्षेत्रों के लाखों लोगों के प्राण हर लिए। कई लाख लोगों को संपत्तिहीन, घायल और वियोग में तड़पने के लिए

विवश कर दिया। वहां जीवन की इतनी हानि मकानों से तो नहीं, अधिकतर पानी से हुई। परन्तु इस प्रदेश में यदि बड़ी तीव्रता का भूकंप आया तो भारी भरकम ऊंचे मकानों के गिरने से असंख्या लोग अंतहीन निद्रा में चले जाएंगे।

इस समय संसार में ऐसी कोई टेकनॉलजी विकसित नहीं है जो भूकंप की सही भविष्यवाणी कर सके। संसार में ऐसा कोई स्थान नहीं जो इस दृष्टि से सुरक्षित हो। इस प्रदेश में भविष्य में आने वाला भूकंप धरती की सतह पर बढ़ते असंतुलन के कारण तीव्रता को बढ़ा भी सकता है। अपने संतुलन को बनाए रखने में लगी प्रकृति भूकंप के समय ऐसा कर सकती है।

इस पर भी विडम्बना देखिए कि प्रदेश में दो या तीन मंजिल से अधिक ऊंचा निर्माण भीड़-भाड़ वाली जगहों पर भी धड़ल्ले से जारी है। लाटूर, उसमानाबाद और समुद्र तटीय क्षेत्रों की भूकंप त्रासदी के पश्चात भी यहां की सरकार और जनकल्याण से जुड़ी संस्थाएं मूक दर्शक और मौन न रहें तो अधिक अच्छा होगा। कल्याणकारी राज्य में नेताओं का प्रथम उद्देश्य जन कल्याणकारी नीतियों का निर्माण और उन्हें लागू कराने का होना चाहिए। चुनाव जीतना उसके बाद होना चाहिए। स्वर्गीय मोरार जी देसाई, पूर्व प्रधानमन्त्री तथा हरियाणा के पूर्व मुख्यमन्त्री चौधरी बंसी लाल ने भी जनकल्याणकारी नीतियों को लागू करने के कारण सरकार यदि खोई तो सामाजिक उत्थान की लहर पर इन्हीं नीतियों के कारण वे करोड़ों लोगों द्वारा याद भी किए जाएंगे। राष्ट्र पिता महात्मा गांधी की श्रृंखला में उनका नाम दीर्घकाल तक अपनी छाप छोड़ेगा।

अत: हिमाचल प्रदेश सरकार को तुरंत निर्णय पर पहुंच कर प्रदेश में दो तीन मंजिल से अधिक ऊंचे निर्माण पर शीघ्र प्रतिबंध लगा देना चाहिए। कल्याणकारी राज्य की प्रजातान्त्रिक सरकार से सामान्य लोगों को भूकंपीय दुर्घटना से पहले सुरक्षात्मक पगों की अपेक्षा तो रहेगी ही। सरकारी तथा निजी संस्थाओं को भी चाहिए कि वे सरकार पर ऊंचे निर्माण के लिए दबाव न डालें तथा सरकार को ऐसे ऊंचे निर्माण को प्रतिबंधित करने के लिए सहयोग दें। यह भी एक मानव सेवा ही है।

दैनिक जागरण जालंधर जनवरी 2005 में प्रकाशित

कांगड़ा के भूकंप की अनदेखी से होगी भारी तबाही

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

आदिकाल से ही धरती ने न तो हिलना छोड़ा है और न ही मनुष्य ने इस पर चलना व बसना ही छोड़ा। यह अलग बात है कि धरती के हिलने को तीव्रता देने और उससे होने वाली तबाही को बढ़ाने में मानव का योगदान बढ़ गया है। प्राकृतिक आपदाओं की भयानक व भीमकाय आकृति के आगे मनुष्य जितना बौना पहले था उतना आज भी है, भले ही विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने उन्नति की ऊंचाईयां छू ली हैं। सागर का जल जहां-जहां धरती की ओर बढ़ा लोगों को वहां से हटना ही पड़ा है। कई नदियों के बढ़ते और ऊंचे उठते जलस्तर के कारण से भी लोगों को दूर ऊंची जगहों पर जाना पड़ा है। हम अपने हठ पर अड़े रहकर शक्तिशाली प्राकृतिक घटनाओं का प्रतिरोध नहीं कर सकते। मनुष्य हमेशा ही प्रकृति की घटनाओं व अपने कार्यों के दुष्परिणामों से शिक्षा भी लेता आया है। सम्राट अशोक ने कलिंग युद्ध में जब लाखों लोगों के मरने का समाचार सुना व हजारों चिंताओं को एक साथ जलते देखा, असंख्य विधवाओं व अनाथ बच्चों की चीत्कार सुनी तो उनका हृदय द्रवित हो गया।

4 अप्रैल सन् 1905 को कांगड़ा में भीषण भूकंप आया था। हजारों की संख्या में प्राण हानि हुई और वन भी तबाह हुए। विनाश की वह कहानी आज भी लोगों की जीभ पर है। भले ही भौतिक सुख की वृद्धि में व्यस्त लोग ऐसी दुर्घटना से होने वाली व्यापक प्राणहानि व चीत्कार का पूर्वानुमान लगाने के लिए समय न निकाल पाते हों।

हिमाचल का अधिकतर भू-भाग भूकंप के दृष्टिकोण से बहुत संवेदनशील है। यहां कभी भी किसी भी तीव्रता का भूकंप आ सकता है। लाटूर और उसमानबाद की भूकंप त्रासदी से सीख लेने की बात आई तो प्रदेश सरकार ने दो मंजिलों से अधिक ऊँचे भवन निर्माण पर रोक लगाने का निर्णय ले लिया, परन्तु प्रभावशाली लोगों तथा कुछ संस्थाओं के दबाव में आकर तुरंत ही निर्णय को बदल भी दिया। यह बात भुला दी गई कि हिमाचल की अधिकतर धरती ढलानदार है। यहां यदि अधिक तीव्रता का भूकंप आया तो ऊंचे मकानों के गिरने से कितनी जानें जाएंगी उसका अनुमान भी लगाया जा सकता है। भूकंपरोधी बहुमंजिलें भवनों से पर्वतीय इलाकों में भूकंप के समय प्राणों की उतनी रक्षा

सुनिश्चित नहीं की जा सकती जितनी दो मंजिले भवनों से सुनिश्चित हो सकती है।

प्रदेश में भीड़भाड़ वाले स्थानों पर दो या तीन मंजिल से ऊंचा भवन निर्माण जारी है। बहुमंजिले भवन निर्माण पर तुरंत रोक लगानी चाहिए, नहीं तो बड़े भूकंप में भारी तबाही होगी। सुनामी में यदि चेतावनी देने और प्रभावशाली पग उठाने में तुरंत निर्णय लिए जाते तो लाखों में हुई प्राण हानि को कम किया जा सकता था। जनहित एवं सामान्य लोगों के प्राणों की रक्षा के हित में कठोर निर्णय लेना सरकार का कर्त्तव्य है। संस्थाओं को सरकार को सहयोग करना चाहिए। भूकंप कहां, कितना और कब आएगा ठीक प्रकार नहीं कहा जा सकता। इसकी संभावना को टाला भी नहीं जा सकता। जुलाई 2004 में अपने शोधलेख में लेखक ने जल के कारणों से पृथ्वी के डगमगाने, इसके ध्रुवों व दिन-रात के समय के प्रभावित होने की बात प्रकाशित की थी।

दैनिक जागरण जालंधर 25.02.2005 में प्रकाशित

भूकंप : ऊंचे भवन निर्माण पर नियंत्रण आवश्यक -आचार्य रत्न लाल वर्मा

मानव आदिकाल से आज तक प्राकृतिक आपदाओं एवं दुर्घटनाओं से डरता ही आया है। भले ही विज्ञान ने इस युग में चांद और मंगल पर बस्तियां बसाने की योजनाओं पर विचारों का सिलसिला जारी कर दिया है। परन्तु जिस पृथ्वी पर हम हजारों वर्षों से रहते आए हैं, उसकी भीतरी शक्तियों और आकृतियों का सही-सही ज्ञान प्राप्त करने में हम अभी तक सफल नहीं हो पाए हैं।

महाराष्ट्र के लाटूर उसमानावाद में आए भूकम्प में हजारों लोग मरे। 26 जनवरी 2001 को गुजरात के भुज में एक भीषण भूकम्प ने लगभग 18 हजार लोगों को देखते ही देखते गिरते मकानों तले दब कर मौत की नींद सुला दिया। 26 मार्च 2002 को हमारे पड़ोसी अफगानिस्तान का नाहरीन शहर भूचाल से पूरी तरह नष्ट हो गया। पांच हजार लोग मारे गये। कई हजार घायल हो गए। 26 दिसम्बर 2004 को हिन्द महासागर में आए भीषण भूकम्प से उठी सुनामी लहरों से मारे गए लाखों लोगों की याद को तो अभी कोई भूला भी नहीं है।

चार अप्रैल 1905 को हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा में आए विनाशकारी भूकम्प के सौ वर्ष पूर्ण होने के कारण इस जिले के साथ-साथ पूरे प्रदेश और अन्य पहाड़ी क्षेत्रों में भूकम्पीय घटनाओं की आंशका पर चर्चा जोरों पर है। कांगड़ा में भी उस समय 20000 लोग मारे गये थे। इन चर्चाओं ने किन्नौर और उत्तरकाशी के भूकम्प की याद भी ताजा कर दी है।

भरमौर, किन्नौर, मिजोरम आदि में भूकम्प के झटके अनुभव किए जा रहे हैं। इसी प्राकृतिक विभीषिका की आशंका की छाया में हिमाचल प्रदेश के पालमपुर में 4 अप्रैल 2005 को भूकंप पर एक तीन दिवसीय बहुचर्चित अन्तर्राष्ट्रीय कार्यशाला आरम्भ हुई जो 6 अप्रैल को सम्पन्न हो गई। इस कार्यशाला में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के लगभग 200 भू-विशेषज्ञों ने भाग लिया। लोगों में ऐसी दुर्घटनाओं के शक्तिशाली पंजों की प्राणघातक मार से मुक्ति के उपायों की आशा जगी। **परन्तु जिस आशा और उत्साह के संचार के बीच इस कार्यशाला का आयोजन हुआ वैसा उजला प्रकाश बंद कमरे में हुई इस कार्यशाला से बाहर निकल न सका।**

भूकम्परोधी भवन निर्माण एवं बिल्डिंग कोड को लागू किए जाने का संदेश अवश्य बाहर निकला। व्यक्तिगत सूझबूझ अपनाने, दवाईयों के भंडारण तथा वितरण की व्यवस्था के होने का प्रचार भी अन्य कई मंचों से हुआ। परन्तु भूकम्प के कारण जानमाल की रक्षा के यदि केवल ये ही उपाय हैं तो इनका प्रचार तो गुजरात भूकम्प त्रासदी के बाद से पूरे देश में होता रहा है। दवाइयों के भंडार तथा ऊंचे भवनों में रहते वितरक कहां तक सुरक्षित रह पाएंगे, यह भी तो कोई नहीं जानता। क्योंकि ऐसा कोई स्थान है ही नहीं जिसे भूकम्प के दृष्टिकोण से सुरक्षित कहा जा सके। धरती के बहुत नीचे क्या कितना, किस रूप में है, इसका ठीक पता किसे भी नहीं है। कैलिफोर्निया इन्स्टीच्यूट ऑफ टैक्नालॉजी के वरिष्ठ वैज्ञानिक प्रो. स्टीवसेन का भी यही कहना है। **पालमपुर में हुई इस कार्यशाला में भाग लेते सैंकड़ों देशी-विदेश विशेषज्ञों के द्वारा भूकम्प से पूर्व सावधानी सम्बन्धी अर्थपूर्ण किसी संदेश का हजारों-लाखों लोगों तक भी अभी न पहुंच पाना सौ करोड़ के इस देश में आश्चर्य की बात है। भूकम्प का भय तो बढ़ा परन्तु पूर्व सूचना तन्त्र पर प्रगति आगे बढ़ न सकी।**

इससे तो यह अधिक अच्छा होता यदि इस कार्यशाला में प्रमाणित डिग्री धारी विशेषज्ञों के साथ-साथ प्राकृतिक संवेदनाओं का व्यावहारिक ज्ञान तथा अनुभव रखने वाले लोगों को भी बुलाया जाता। इससे कोई सर्वमान्य हल चाहे निकलता या न निकलता, परन्तु यह निश्चित था कि इससे अब तक के प्रचारित या कुछ नए उपायों को तुरन्त अपनाए जाने का मार्ग अवश्य प्रशस्त हो जाता। कोई स्पष्ट संदेश जाता। खोज को नई दिशा मिलती।

इस समय इसका केवल यही हल है कि पहाड़ी इलाकों में दो मंजिल से अधिक ऊंचे भवन निर्माण पर तुरन्त प्रभावशाली ढंग से रोक लगा दी जाए। आवश्यकता के अनुसार निर्माण की सीमा भी निश्चित कर दी जाए। इससे हिमालयी क्षेत्रों की नैसर्गिक सुन्दरता बचेगी, पर्यटन को बढ़ावा मिलेगा और शांतिमय छटा बनी रहेगी। इस समय यही उपाय है जिससे पहाड़ी प्रदेशों एवं क्षेत्रों के जान-माल की अधिक सुरक्षा हो सकती है।

भूकम्प कभी भी, कहीं भी आ सकता है। इसकी समय सीमा निश्चित नहीं की जा सकती है। फिर भी हिमाचल प्रदेश का कांगड़ा 1905 के भूकम्प की

शताब्दी के पूरा होने से डरा है तो शिमला भारी कंकरीट की बहुमंजिली इमारत रूपी बारूद के ढेर से सजा है।

हर बार छोटी-बड़ी जगह आते भूकम्प की तीव्रता को टैक्टॉनिकल प्लेटों की हरकत के साथ जोड़ दिया जाता है। यह तभी संभव हो सकता है यदि इस पृथ्वी की गतिशीलता के लिए केवल इसकी भीतरी शक्तियां ही काम करती हों और यही शक्तियां इसका संतुलन भी बनाए रखती हों। इन शक्तियों के रूप रंग और सही आकार प्रकार का भी किसी को पता हो। कैलिफोर्निया इन्स्टीच्यूट आफ टैक्नॉलाजी के वरिष्ठ वैज्ञानिक प्रो. स्टीवसेन का भी कहना है कि पृथ्वी की ऊपरी सतह से थोड़ा ही नीचे से आगे का सही-सही किसे भी पता नहीं है।

पूर्व आंकड़ों के विश्लेषणों के आधार पर वैज्ञानिकों ने हिमाचल प्रदेश, गुजरात, बिहार, उत्तरांचल प्रदेश के क्षेत्रों में भूकम्प का भय बताया है। हिमालय की तराई के क्षेत्र लगभग हर जगह भारी बोझ तले दबते जा रहे हैं। कहीं बड़े बांधों में अपार जल भरा है तो कहीं भारी निर्माण और अन्य गतिविधियों ने मैदानों के समीप के इन क्षेत्रों में एकाएक भारी बोझ लाद दिया है। भूमि क्षरण के कारण कट कर प्राकृतिक रूप से आगे जाती मिट्टी भी इन्हीं जलाशयों में रुकती जाती है। ऐसे में भूमि की भीतरी क्रियाओं द्वारा आता बड़ा भूकम्प भूतल पर बढ़ते कृत्रिम बोझ से अपनी तीव्रता बढ़ा भी सकता है। यदि ऐसा होता है तो इन क्षेत्रों के समीप के मैदानी इलाके भी हिल सकते हैं। भूतल पर एकाएक होते परिवर्तनों पर सौर ऊर्जा का कोणीय प्रभाव भी अपना रंग डाल सकता है।

धरती की गतिशीलता लाखों वर्षों से मर्यादा की परिधि के भीतर रहती आई प्रतीत होती है। यही स्थिति अन्य ग्रहों की भी है। टैक्टानिकल प्लेटें ही हर बार भूकम्प का यदि कारण हैं तो गति के मर्यादित स्वरूप के कारण इसकी समय सीमा निश्चित हो जानी चाहती थी, जो है नहीं। इसका **सीधा अर्थ निकल जाता है कि इस शोध में कुछ कमी है तथा पृथ्वी की भीतरी हलचल को बाहरी कारण भी प्रभावित करते हैं। धरती की ऊपरी सतह का समय-समय पर भारी या हल्का पड़ना पड़ोसी अन्य ग्रहों की कोणीय दूरी या समीपता तथा सूर्य ऊर्जा में होते किसी परिवर्तन से भी यह भीतरी हलचल प्रभावित हो सकती है।** कांगड़ा, नाहरीन, अफगानिस्तान,

इंडोनेशिया, ईरान, गुजरात में आए भूकम्प सुबह, सायं या रात को ही क्यों आए। इस दिशा में भी पर्याप्त विचार मंथन की आवश्यकता है। इस पर विचार मंथन से भूकम्प की समय सीमा का मार्ग प्रशस्त हो जाएगा।

दैनिक जागरण जालंधर 20 अप्रैल 2005 में प्रकाशित

खतरे में देव स्थानों का मौलिक स्वरूप

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

देव स्थानों के प्राकृतिक स्वरूप की रक्षा के लिए यदि तुरंत पग नहीं उठाए गए, तो लोगों की आस्था की वास्तविकता को बचाना कठिन हो जाएगा।

अद्भुत प्राकृतिक तथा मनमोहक नैसर्गिक छटा के कारण हिमाचल प्रदेश के बहुत से पर्वत शिखर दैविक चमत्कारों के केन्द्र बने हैं। प्राकृतिक मौलिकताओं की विशेषताओं ही के कारण इनमें से कुछ तपस्वियों की तपोस्थली भी रहे हैं। कुछ समय पूर्व तक तो ये देव स्थल धर्मावलंबियों के लिए ही महत्त्वपूर्ण रहे। परन्तु आवागमन के शीघ्रगामी साधनों तथा शिक्षा के बढ़ते प्रचार के कारण अब दूर-दूर से पर्यटक भी इन स्थानों के दर्शनों के लिए आने लगे हैं।

ऐसे पर्यटकों को इन स्थानों की भौगोलिक स्थिति, इनका रूप-स्वरूप, यहां की प्राकृतिक छटा तथा एक विशिष्ट मानवीय सभ्यता की छाप अपनी ओर आकर्षित करती आ रही है। परन्तु दिशाहीन आर्थिक समृद्धि तथा धार्मिकता पर दिखावटी आधुनिकता के चढ़ते पुट के कारण अब इन स्थानों के प्राकृतिक स्वरूप एवं पर्यावरण पर खतरा मंडराने लगा है। बाबा बालकनाथ की तपोभूमि, हमीरपुर के दियोटसिद्ध के शिखर की गुफा में विराजमान बाबा जी की पिंडी की शोभा को वहां की पहाड़ी की चोटी, गरुने की झाड़ी, कुछ दूरी का सीढ़ीनुमा पैदल रास्ता तथा शाहलताई का प्राचीन बरगद का पेड़ चार चांद लगा देते हैं। यदि किसी कारण यहां की मौलिक मानवीय छाप, चोटी, चीड़ के पेड़, गरुने की झाड़ी बरगद का पेड़ अपने मौलिक स्वरूप या अस्तित्व को खोने लगे, तो इस देव स्थान की शोभा और आकर्षण में अंतर तो पड़ ही जाएगा। इस समय हर मनचाहे निर्माण से इस पहाड़ी का मौलिक स्वरूप ढकने लगा है। जिला मंडी के रिवालसर की तीर्थ स्थली का अपना महत्त्व है, जिसके कारण यह बौद्धों, हिन्दुओं तथा सिखों की श्रद्धा का केन्द्र है। इस स्थान की झील तथा झाड़ीदार टीला यदि अपनी मौलिकता खो दें, तो लोगों के आकर्षण का आधारभूत ढांचा खिसक जाएगा। इससे श्रद्धालुओं और सैलानियों पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है। मनचाहे निर्माण तथा बढ़ते वाहनों से यहां की मौलिक छाप प्रभावित होने लगी है। जिला बिलासपुर में श्री नयना देवी जी शक्तिपीठ मंदिर आनन्दपुर साहिब के सामने एक ऊंचे पर्वत पर विराजमान है। पर्वत की बहुत ऊंची यह

चोटी दूर-दूर तक दिखाई देने के कारण अपना विशेष महत्त्व रखती है। यहां कुछ वर्ष पूर्व भू-स्खलन के कारण बहुत सी मिट्टी नीचे लुढ़क गई थी। परन्तु सरकारी तथा स्थानीय प्रयासों द्वारा मजबूत दीवार देकर मिट्टी के कटाव को रोक कर इस शिखर की रक्षा की गई। यहां बनते कंकरीट के भारी भरकम भवनों के निर्माण से इस चोटी का स्वरूप अब बिगड़ रहा है। साथ ही अन्य प्रकार की पर्यावरण विरोधी विकासात्मक गतिविधियों के कारण हजारों टनों का अतिरिक्त भार भी इस पहाड़ी पर लदता जा रहा है।

इससे चोटी के धंसने या भूकंप के समय अधिक प्राणहानि का खतरा तो बढ़ेगा ही, साथ ही यहां की प्राकृतिक सुंदरता तथा मौलिक विशेषता को भी ग्रहण लग जाएगा। कांगड़ा के ज्वालामुखी या ज्वालाजी मंदिर की जगती ज्योति पर मानवीय कारणों से कोई विपरीत प्रभाव यदि पड़ जाए, तो यह अत्यंत चिंताजनक तथा श्रद्धालुओं और पर्यटकों के आगमन पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। इसी प्रकार पहाड़ी छाप के विपरीत होता ऊंचा निर्माण भी वहां की प्राकृतिक सुंदरता को कम करता हुआ एक दिन वहां के आकर्षण को घटाएगा। ऊना जिला में श्री चिन्तपूर्णी जी शक्तिपीठ के इर्द-गिर्द की प्राकृतिक शोभा तथा सुन्दरता को भी इसी संदर्भ में समझा और देखा जा सकता है। ऐसे देव स्थानों के प्राकृतिक स्वरूप और पर्यावरण की रक्षा के लिए यदि तुरंत पग नहीं उठाए गए, तो लोगों की आस्था की वास्तविकता को बचाना और पर्यटन को बढ़ाना कठिन हो जाएगा।

दैनिक जागरण जालंधर तथा दिव्य हिमाचल धर्मशाला 21.06.2005 (सम्पादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

ऊंचे निर्माण पर्यावरण के लिए घातक

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

परिवर्तनशीलता प्रकृति तथा मानव दोनों में ही रहती आई है। यह दृष्टव्य प्रकृति का शाश्वत नियम है। यह परिवर्तनशीलता प्रकृति में मर्यादा की परिधि के भीतर रहती आई है। परन्तु मनुष्य में यह परिवर्तनशीलता मर्यादा की परिधि से बाहर जाती और अविश्वसनीय होती देखी जाती है। परिवर्तन से जहां विकास होता तथा निखार आता है, वहीं परिवर्तन अवनति और अंत की ओर भी ले जाता है। इन्हीं कुछ तथ्यों के दर्पण में हम भारत के कुछ मैदानी और हिमाचल प्रदेश सहित अन्य पर्वतीय राज्यों में पिछले कुछ दशकों से आए पर्यावरण संबंधी परिवर्तनों पर विचार करते हैं। हम इस निष्कर्ष पर अवश्य पहुंच जाएंगे कि मैदानी इलाकों की अपेक्षा पर्वतीय क्षेत्रों में अधिक परितर्वन आया है। यद्यपि लोग यही समझते और सीखते आए हैं कि पहाड़ों में सदा दूसरे क्षेत्रों की अपेक्षा पर्यावरण अधिक संरक्षित, समृद्ध बना रहता है। लेखक का विचार इससे भिन्न है। पर्यावरण, मात्र वन, पेड़ पौधे, हरियाली, ठंडी हवा और जनसंख्या ही नहीं है। यह इससे भी आगे बहुत कुछ है। आज पहाड़ी क्षेत्रों का पर्यावरण मैदानों के मुकाबले अनुपतिक रूप से अधिक तीव्रता के साथ ध्वस्त होता जा रहा है। जलवायु बदल रही है। मौसम बदल रहे हैं। वनों, पेड़-पौधों, फलों-फसलों, फूलों-कांटों, झाड़ियों, लताओं, नदियों-नालों, घाटियों-चोटियों, खेतों-खलिहानों, ताल-तलइयों, आहारों और व्यवहारों में परिवर्तन की ब्यार बड़ी तीव्र गति के साथ चल रही है। यहां पर परिवर्तन के केवल एक ही बिंदु का वर्णन ही किया जा रहा है। वह है भवन निर्माण के क्षेत्र में पहाड़ों के गांवों में आया एक भारी परिवर्तन। इसने हिमाचली तथा ऐसे दूसरे राज्यों के जीवन को विनाश के द्वार के समीप ला खड़ा कर दिया है। लेखक पंजाब के होशियारपुर शहर के एक कॉलेज में साठ के दशक में पढ़े हैं। उस समय पंजाब के कुछ गावों में घरों की बनावट, आकार-प्रकार और ऊंचाई को देखा है। हिमाचल प्रदेश के शहरों, कस्बों तथा गांव-गांव में बनते दो-तीन, चार, पांच या इससे भी अधिक ऊंची मंजिलों के मकानों के निर्माण को ढलानों एवं भीड़-भाड़ वाली जगह होते भी देखा है। यहां जीवन की चिन्ता के बिना कस्बे-कस्बे और गांव-गांव में नए बनते तथा अनावश्यक रूप से कंकरीट की परतों से लदते भारी भरकम मकानों का लेखक को पता है।

लेखक को यह भी पता है कि यहां बनावटी विकास तथा समाज में बढ़ते आर्थिक सामर्थ्य के प्रदर्शन के लिए ऊंचा तथा आवश्यकता से अधिक निर्माण हो रहा है। बढ़ते धन के कारण लोगों को प्राणों की अपेक्षा दिखावे तथा कंकरीट से अधिक मोह होता जा रहा है। परन्तु लेखक आश्चर्यचकित रह गये हैं, अब पंजाब तथा हरियाणा के कुछ गांवों के मकानों को देखकर। वहां के गांवों के मकानों के आकार, प्रकार, रंगरूप, ऊंचाई ओर बनावट में आज भी कोई अधिक अंतर नहीं आया है। जिस आकार और ऊंचाई के मकान वहां 47 वर्ष पहले देखे थे, लगभग उसी प्रकार के आज भी मकान एक मंजिले ही हैं। नंगल-रोपड़ रोड़ पर अलीपुर गांव है। यहां मकान आज एक मंजिले ही दिखाई दिए। सरदार नछतर सिंह ने बताया कि इस गांव में लगभग 125 घर हैं। तीन मंजिल का घर तो गांव में एक भी नहीं है। इसी क्षेत्र में अंबूजा फैक्टरी के समीप लोधी मंजर गांव है। इस गांव में लगभग साढ़े सात सौ घर हैं, जो एक मंजिले हैं। दो मंजिल के घर का तो गांव में कोई स्थान है ही नहीं। रोपड़ थर्मल प्लांट के समीप नौहों गांव है। सरदार नछतर सिंह ने बताया कि यहां लगभग 100 घर हैं, जो एक मंजिले ही हैं। रोपड़-नूरपुर बेदी रोड़ के किनारे बजरोड़ गांव है। इस गांव में लगभग 500 घर हैं। दो मंजिला घर कठिनता से ही मिलेगा। इस गांव के सुरजीत सिंह ने बताया कि गांव के सारे घर सादा हैं और तीन मंजिल का पूरे गांव में एक भी घर नहीं है। इसी सड़क के किनारे सखली गांव है। इसमें लगभग 600 घर हैं। दो मंजिल का बिरला ही घर होगा। गुन्ने गांव में लगभग 150 घर, सिद्वपुर गांव में 180 और गोपालपुर में लगभग 100 घर हैं। आजमगढ़ में लगभग 200 घर हैं। होशियारपुर जिले के मुकेरियां के चक्का पिंड, लालड़ियां, गुरदासपुर, किशनपुर आदि गांवों में भी एक मंजिला घर ही हैं। यहां भी घरों का रंग-रूप और लोगों के पहनावे में सादगी है। हरियाणा के यमुनानगर जिले के खारवाणा गांव में 800 से अधिक घर हैं। पास में भूखंडी और छहरौली गांव हैं। श्री देशराज ने बताया कि इन गांवों में घर अधिकतर एक ही मंजिले हैं। हरियाणा-पंजाब की भूमि समतल है। वहां पक्के मकानों का प्रचलन बहुत पुराना है। फिर भी मैदानी राज्यों के गांवों के घर कम ऊंचाई वाले ही हैं जबकि हिमाचल प्रदेश में घर ऊंची-नीची जगहों पर बने हैं और उनकी ऊंचाई भी आवश्यकता से अधिक है। इनके आकार-प्रकार और लोगों के पहनावे से बनावट और दिखावट ही झलकती है। प्रकृति के प्रति प्रेम, समर्पण तथा हजारों

साल पुरानी सरलता की भावना लोगों के मन से अब दूर होने लगी है। दिखावे की भावना से आक्रांत होकर ध्वस्त होता पर्यावरण यहां भूकंप के समय एक बड़े विनाश को निमंत्रण देता जा रहा है। यहां का अधिकतर क्षेत्र भूकंप की दृष्टि से बहुत संवेदनशील है। लेखक द्वारा 1999 से लेकर 2005 तक अनावश्यक तथा ऊंचे निर्माण पर रोक लगाने के मुद्दे को लगातार कई मंचों से हिमाचल प्रदेश सरकार के साथ उठाया जाता रहा है ताकि भूकंप के समय जान-माल की कम हानि हो। कई बार मुख्यमन्त्री सहित सभी मंत्रियों, विधायकों, प्रशासकों एवं योजनाकारों को भी अनेकों पत्र भेजकर इस पर विधि निर्माण करने का आग्रह किया।

कुछ वर्षों तक तो लेखक को ऊंचे निर्माण के पक्ष में ही सरकारी उत्तर मिलता रहा। परन्तु 8 अप्रैल, 2005 को लेखक को भेजे पत्र द्वारा सरकारी विभाग के निदेशक ने ऊंचे निर्माण को रोकने सम्बन्धी सुझावों को मान लिया। सुझावों पर स्वीकृति की मोहर लगाते हुए तथा बहुजन घातक बहुमंजिले ऐसे निर्माण कार्य को रोकने के लिए आवश्यक नियम निर्माण करने के लिए विश्वास देने की कृपा तो कर दी। परन्तु ऐसा होने पर भी बहुमंजिला निर्माण रुकता दिखाई नहीं देता। यह तो ठीक है कि आवश्यक नियम निर्माण के लिए वांछित औपचारिकताएं पूर्ण करने के लिए समय चाहिए। परन्तु यह सब कुछ हमसे किसी बड़े भूकंप की प्रतीक्षा तो नहीं करवा रहा है। प्रकृति हमारी किसी विवशता या औपचारिकता में लगने वाले समय या त्याग की भावना को खोते सामर्थ्य पर कोई छूट नहीं करेगी। कहीं लोगों की चीत्कार सुनने के बाद सरकार को नियम निर्माण का संकल्प फिर तो नहीं दोहराना पड़ेगा।

दैनिक जागरण, धर्मशाला 29 दिसंबर 2005 (सम्पादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

भूकंप की दृष्टि से हिमाचल संवेदनशील

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति का आचरण तथा व्यवहार धरती पर जीवन के आदि काल से मर्यादा की परिधि के भीतर रहता आया है। उत्पत्ति, विकास, घर्षण और अंत भी इसी परिधि के भीतर की सहज प्रक्रियाएं हैं। धरती क्यों फटती है? क्यों डोलती और क्यों कांपती है? इस पर पुरानी मान्यताओं और वैज्ञानिक तर्कों में बहुत अंतर है। भूकंप आने के कारण संसार में पहले भी अनुसंधान और चर्चा के विषय थे। परन्तु गुजरात के भुज, सुनामी, पाकिस्तान के मुजफ्फराबाद तथा ईरान में आए भूकंपों ने इन अनुसंधानों तथा चर्चाओं को तेज कर दिया है। इसकी भविष्यवाणी की संभावनाओं को खोजने तथा उसकी सफलता तक पहुंच जाने की बातें भी ऊंचे स्वर के साथ होने लगी हैं। सच पूछा जाए तो अभी तक भविष्यवाणी तो क्या उसके समीप तक भी मानव पहुंच नहीं पाया है। जाने-माने वैज्ञानिक तथा राज्यसभा सदस्य डॉ. कस्तूरीरंगन ने हाल में ही चंडीगढ़ में पत्रकारों से कहा कि हम ठीक से नहीं जानते कि सुनामी, भूकंप आदि प्राकृतिक आपदाएं क्यों आती हैं।

इस शताब्दी में आज तक जितने भी भूकंप आए उनका कारण विशेषज्ञों ने टेक्निकल प्लेटों का टकराना ही माना है। बड़ी टेक्निकल प्लेटों की संख्या सात बताई गई है। पृथ्वी के गर्भ में इन की गहराई 720 किमी के आस-पास तथा मोटाई 100 से 150 किमी तक बताई जाती है। इन प्लेटों को एक दूसरी की ओर, एक दूसरी से विपरीत तथा एक दूसरे के साथ एक ही दिशा की ओर यात्रा करते गतिशील होता बताया गया है। जब गतिशील प्लेटें एक दूसरे की ओर आपस में टकराती हैं तो उससे उत्पन्न कंपन को भूकंप का कारण माना जा रहा है। प्लेटों की यात्रा की गति 2 से.मी. से 20 से.मी. तक प्रति वर्ष बताई गई है। यह भी माना जाता है कि भारत इंडो आस्ट्रेलियन प्लेट पर टिका है। यह प्लेट युरेशियस प्लेट के नीचे धंस रही है। हिमालयी क्षेत्र को इन दोनों प्लेटों का संगम स्थल माना जाता है।

हिमाचल प्रदेश का लगभग 32 प्रतिशत क्षेत्र भूकंप के दृष्टिकोण से अधिक संवेदनशील जोन पांच में आता है। इस जोन में कांगड़ा का लगभग 98.6 प्रतिशत, कुल्लू का 53 प्रतिशत, मंडी का 97 प्रतिशत, हमीरपुर का 90 प्रतिशत,

ऊना का 37 प्रतिशत और बिलासपुर का 25 प्रतिशत भाग दिखाया गया है। चंबा का कुछ भाग भी जोन पांच में है। परन्तु जिला बिलासपुर का वह भाग, जो भाखड़ा बांध के पानी और गाद से भरा है जोन चार में आ रहा है। एक अनुमान के अनुसार भाखड़ा बांध के कारण इस क्षेत्र की धरती पर 900 करोड़ टन के आस-पास अतिरिक्त बोझ लद गया है। ऐसे में यहां की धरती न केवल आने वाले किसी बड़े भूकंप की तीव्रता को बढ़ाएगी, बल्कि स्वयं भारी दबाव के कारण भूकंप को उत्पन्न करने में सहायक सिद्ध होगी। यहां आने वाला भूकंप पंजाब के कीरतपुर, आनंदपुर साहिब और नंगल की धरती को हिलाकर वहां भी हानि पहुंचा देगा। इसी प्रकार करोड़ों टन के अतिरिक्त बोझ के नीचे दबी कांगड़ा के पौंग बाध की धरती भारी दबाव के कारण असन्तुलन एवं कंपन द्वारा होशियारपुर जिले के हाजीपुर, मुकेरियां को हिलाकर वहां भी जान माल की तबाही कर देगी।

भूकंपों द्वारा तबाही के संदर्भ में हम 20वीं शताब्दी में आए भूकंपों पर यदि दृष्टि डालें तो पता चलता है कि इस शताब्दी में संसार में नौ बड़े भूकंप आए जिनसे साढ़े 9 लाख से भी अधिक लोगों के प्राण चले गए। परन्तु आश्चर्य की बात है कि वर्तमान शताब्दी के पांच वर्ष ही पूरे हैं और इसके बीच भूकंपों से चार लाख से भी अधिक लोग मारे जा चुके हैं। गुजरात के भुज की भूकंप त्रासदी के तुरंत पश्चात लेखक ने भूकंप के मानव निर्मित कारणों पर 16 फरवरी **2001 को प्रकाशित लेख 'पर्यावरण, हम और भूकंप में प्रकाश डाला था। वर्तमान शताब्दी को भूकंप सरीखी प्राकृतिक आपदाओं की शताब्दी की संज्ञा दी थी। बचाव के उपायों पर भी ध्यान आकृष्ट किया था। वर्तमान शताब्दी के प्रथम वर्ष के फरवरी मास में प्रकाशित इस लेख में लेखक ने अत्यधिक भूकंपों के आने की** संभावनाओं तथा अन्य कारणों को व्यक्त करते हुए मानवीय जीवन के बाइसवीं सदी में प्रवेश को असंभव सा बता दिया था। धरती पर जीवन की रक्षा के लिए एक सशक्त विश्व पर्यावरण परिषद के तुरंत गठन का सुझाव भी दिया था तथा संयुक्त राष्ट्र संघ को दो बार भेजे अपने पत्रों द्वारा भी इसके गठन की अपील की थी। टेक्टानिकल प्लेटों की गति तथा भविष्यवाणी का अपूर्ण ज्ञान सर्वदा प्राण-हानि से नहीं बचा सकता है और न ही बड़ी प्लेटों की अनुमानित टक्कर को रोकना मानव मात्र के वश में है। इसकी आगे भी कोई संभावना नहीं है।

यह भी सर्वदा उचित नहीं लगता कि भूकंप के कारण मानवीय प्रकृति विरोधी गतिविधियां न होकर केवल कुछ और ही हों। यदि हम गहराई से विचार करें तो पता चलेगा कि जानवरों अर्थात कई पशु-पक्षियों को भूकंप का पहले ही पता चल जाता है। वे इधर-उधर भागने लगते हैं। कुंओं का पानी ऊपर से नीचे हो जाता है या उसका रंग बदल जाता है। इसलिए तो चीन में सैकड़ों की संख्या में गहरे कुएं खुदवाए गए हैं। कई कुओं की गहराई हजारों फुट में है। इसका यह भी अर्थ निकलता है कि भूकंप के झटके से पहले धरती से निकलने या धरती में प्रवेश करने वाली गैसीय या विद्युतीय ऊर्जा की गंध या रंग का इन पशु-पक्षियों को पता चल जाता है।

कुओं के पानी के तल तथा रंग को बदलती यही ऊर्जा भूकंप का कारण भी हो सकती है। हम अपने सुख के लिए जिस प्रकार धरती के प्राकृतिक रूप-स्वरूप को बिगाड़ रहे हैं, इस पर कृत्रिम रूप से भारी बोझ लाद रहे हैं, उससे भूकंपों की संख्या बढ़ जाएगी। **इनका कारण चाहे टेक्टानिक प्लेंटे ही सहीं। परन्तु हम अभी भी बचाव के वास्तविक कारणों को अपनी दृष्टि से ओझल करते रहे तो पृथ्वी भारी झटकों के कारण इस शताब्दी में ही अपनी कक्षा से बाहर भी आ सकती है।** गति तथा दिन-रात के समय का अंतराल भी बदल जाएगा। जीवन विहीनता की स्थिति आ सकती है। लेखक ने 19.07.2004 तथा 2.09.2004 को दिव्य हिमाचल धर्मशाला तथा दैनिक जागरण जालंधर में प्रकाशित तथा खंड 2 में संकलित अपने शोध लेख 'फिर भी आ सकती है भारी बाढ़, डगमगा सकता है संतुलन भी' में जल के कारणों से पृथ्वी के डगमगाने, ध्रुवीय झुकाव में अंतर आने तथा दिन-रात के समय के प्रभावित होने की बात उजागर की थी।

दैनिक जागरण धर्मशाला 26 जनवरी 2006 (सम्पादकीय पृष्ठ)

भूकंप के प्रति लापरवाह होते लोग

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति के बीच प्रकृति द्वारा तथा प्रकृति ही की उच्च रचना होने के कारण मनुष्य जीव जगत में सर्वाधिक बुद्धिमान तथा समर्थ प्राणी कहलाता है। नित नई खोजों तथा विकास की आगे से आगे बढ़ती ऊंचाइयों के कारण मानव ने अपने इस सामर्थ्य को सिद्ध कर भी दिया है। परन्तु इतने पर भी वह प्रकृति की कई रहस्यमयी क्रियाओं तथा उनके प्रभाव की तीक्षणता के आगे बहुत बौना और पंगु ही दिखाई देता है। प्रकृति की इस प्रकार की घटनाओं को लेकर हम भूकंप पर बात करें तो मनुष्य जितना समझदार और सावधान लगता है, उतनी अधिक हानि इस त्रासदी में उसकी ही होती है, जबकि दूसरे जीव जंतु अपेक्षाकृत कम मरते देखे जाते हैं। हम भूकंप से हजारों साल पहले जितना डरते थे आज भी उससे कम नहीं डरते हैं। यह अलग बात है कि धन-संपत्ति इकट्‌ठी करने में निष्प्राण मशीन की तरह दिन रात क्रियाशील रहते हुए हम इस डर के बारे में सोचने और बचाव के उपाय अपनाने के लिए समय ही नहीं निकाल पाते हैं। इन सब से एक बात निश्चित रूप से स्पष्ट हो जाती है कि भूकंपीय त्रासदी को ठीक प्रकार समझने तथा बचाव हेतु अपनाए जाने वाले तौर-तरीकों के बारे में हमारे दृष्टिकोण में कोई भारी कमी है।

आठ अक्तूबर 2005 को पाकिस्तान के इस्लामाबाद मुज्जफराबाद में भूकंप के समय लगभग 50000 लोग गिरते भवनों के नीचे दबकर मर गए। जीवित बचे लाखों लोगों को कई कष्ट झेलने पड़े। जम्मू कश्मीर में भी लगभग 1500 जाने चली गईं। इसे राष्ट्रीय आपदा घोषित करना पड़ा। हमारे प्रधानमन्त्री ने प्रभावित क्षेत्रों का दौरा किया। जम्मू-कश्मीर राज्य के लिए 500 करोड़ रुपए के अतिरिक्त पैकेज की घोषणा हुई। इस भूकंप के समय हिमाचल प्रदेश भी हिल उठा था। हजारों लोग घरों से बाहर आ गए थे। यहां के शहर कस्बे और गांव में भूकंप के झटके महसूस किए गए।

26 दिसंबर 2004 को भूकंप के समय आई सुनामी लहरों ने लाखों प्राणियों को खुले में भी मौत की नींद सुला दिया था। कोई भीतर था या बाहर था सुनामी लहरों के वेग ने इन सब में भेद कम ही किया, जो भी पकड़ में आया, सागर के पानी ने उसे अपने में समेट लिया। फलोरिडा विश्वविद्यालय के जाने माने

भू-गर्भ वैज्ञानिक रोजन बिलहम ने दिसंबर 2005 में कहा कि हिमालयी क्षेत्र की धरती के नीचे भारी उथल-पुथल हो रही है जिसके कारण यहां भारी तीव्रता के भूकंप के आने की आशंका है।

इटली के एक वैज्ञानिक रसल डोना पैत्रोव ने भी अपनी पुस्तक 'माउंटेन विद अनलिमिटिड मिजरीज' में खुलासा किया है कि धौलाधार और पीरपंजाल के पहाड़ों में अपेक्षा से अधिक लावा भरा पड़ा है। यद्यपि धरती के नीचे सही-सही क्या और किस रूप में है इसका किसी को भी पता नहीं है। परन्तु फिर भी अध्ययन और चिंतन पर आधारित वैज्ञानिकों द्वारा व्यक्त भारी तीव्रता के भूकंप की संभावना की अनदेखी करना उचित नहीं होगा। 26 जनवरी 2001 की गुजरात की भूकंप त्रासदी के पश्चात पूरे देश और विशेष कर हिमाचल प्रदेश में कई सेमिनार हुए और कई कार्यशालाओं का आयोजन हुआ जिन पर करोड़ों रुपयों एवं अन्य साधनों का व्यय हुआ। देश-विदेश से विद्वान यहां आए, परन्तु इतने पर भी देश और हमारे इस पहाड़ी प्रदेश को कोई विशेष लाभ नहीं पहुंचा। हर प्रकार के आयोजित होते सेमिनारों तथा प्रचारित होती भवन निर्माण तकनीकों के कारण लोग भूकंप के प्रति वास्तविक सावधानियों को अपनाने के बारे में लापरवाह होते जा रहे हैं। वे न ऊंचे भवन निर्माण से रुकते हैं और न घरों के समीप पर्याप्त खाली जगह ही छोड़ते हैं। निर्माण आवश्यकता के लिए तो कम परन्तु दिखावे और अपने आर्थिक सामर्थ्य के प्रदर्शन के लिए अधिक किया जाता है। लोगों में धन छुपाने के लिए निर्माण करने की बढ़ती प्रवृत्ति भी ऐसे निर्माण को सही ठहराने तथा सरकार को अपने पक्ष में प्रभावित करने से पीछे रहती दिखाई नहीं देती है। दिशा से भटकते हमारे प्रयत्नों का एक कारण यह भी है कि पर्यावरण को बचाने का उत्तरदायित्व लेने की बात आज ऐसे लोग भी करने लगे हैं जो स्वयं पर्यावरण को ध्वस्त करने के मार्ग पर बढ़ते जा रहे हैं। उन्हें पर्यावरण बचाव को आचरण में ढालना तो कम परन्तु पर्यावरण को ध्वस्त कर धन कमाना तथा सेमिनारों की शोभा बढ़ाना अधिक लाभदायक लगता है। भूकंप के दृष्टिकोण से घातक बहुमंजिले भवनों से लाभ उठाने वाले बहुत ऊंचे निर्माण को नियंत्रित करने के पक्ष में कैसे होंगे? पर्यावरण को ध्वस्त कर धन कमाने वाले पर्यावरण संरक्षण हेतु कारगर प्रयत्न कैसे कर पाएंगे? इस पर भी विचार मंथन की आवश्यकता है। पालमपुर में अप्रैल 2005 को भूकंप पर एक तीन दिवसीय कार्यशाला आयोजित हुई। इसमें सैकड़ों देशी-विदेशी विद्वानों ने भाग

लिया। परन्तु प्रकाशित समाचार के अनुसार लाखों, करोड़ों रुपए के व्यय का कारण बनी इस कार्यशाला से उतना उजला प्रकाश नहीं निकल सका जितनी लोगों को आशा थी।

हाल ही में प्रदेश के 25 चयनित स्थानों पर जीपीएस मशीनों की स्थापना की बात प्रकट हुई है। इन मशीनों से वैज्ञानिक ढंग से कुछ सैकेंड पहले भूकंप का एहसास हो जाने की बात कही गई है। प्रारंभिक दौर में इन मशीनों को केवल सरकारी स्कूलों में लगाने की बात की गई है।

इस परियोजना पर दो करोड़ रुपए व्यय होने का अनुमान है। प्रति मशीन आठ लाख रुपए की लागत का अनुमान है। प्रदेश के कुछ स्कूलों में ऐसे यंत्र लगाए भी जा चुके हैं। यह एक अच्छा प्रयास है जो भूकंप के समय तुरंत सचेत करने का काम करेगा। भूकंपरोधी तकनीक तथा उन मशीनों की स्थापना से भूकंप के समय कम जान-माल की तबाही होगी, ऐसी आशा करनी चाहिए। जहां ऐसे प्रयास एक सराहनीय पगों की श्रेणी में हैं, वही लोगों का भूकंप से बचाव के अन्य तरीकों से हटता ध्यान भी कम चिन्ता का विषय नहीं है।

इसके कारण लोग अन्य उपायों को अपनाने में असावधान होने लग गए हैं। इन उपायों के साथ-साथ दूसरे अधिक कारगर उपायों को भी अपनाना अधिक श्रेष्ठ होगा जैसे गोविंद सागर झील के पानी के नीचे आए भू-भाग को पानी और गाद के बोझ के भारी दबाव के कारण जोन न. 4 के बजाए जोन पांच में रखा जाना चाहिए। इस पहाड़ी प्रदेश में दो मंजिल से अधिक ऊंचे निर्माण पर रोक लगानी चाहिए। सादे भवन निर्माण तथा व्यक्तिगत आवश्यकता को निर्धारित करने का प्रचार किया जाना चाहिए। पेट्रोल पंपों के निर्माण के लिए ढलानदार भूमि का चयन रोका जाना चाहिए। प्रदेश के लोगों में दिखावे की बढ़ती प्रवृत्ति की हानियों को उजागर किया जाना चाहिए। इससे संसाधनों का अधिक दोहन होता जा रहा है। भूकंप के समय बिजली की लाईन तथा गहरे पानी से दूर हट जाना चाहिए। संभव हो तो तुरंत घर से बाहर खुले में आ जाना चाहिए।

दैनिक जागरण धर्मशाला 15 जून 2006 (सम्पादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

बेढंगा निर्माण पर्यावरण के लिए घातक

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

किसी भी देश की राजकीय व्यवस्था के आकलन के लिए हमें वहां के शासकीय प्रबंधन द्वारा नियम के निर्माण तथा उसके परिपालन के परिदृश्य की ओर देखने की आवश्यकता पड़ती है। विधि का सही दिशा में निर्माण, आचरणगत व्यवहार द्वारा उसका ठीक परिपालन ही किसी देश या प्रदेश विशेष के अच्छे प्रभावशाली प्रबंधन को सुनिश्चित और परिलक्षित करता है।

राजतंत्र में किसी देश विशेष का लिखित या अलिखित विधान, नियम तथा आज्ञा के परिपालन की कसौटी पर खरा इसलिए नहीं उतरा करता था कि उस समय लोग अशिक्षित या भीरू प्रकृति के थे। बल्कि इसलिए क्योंकि उस समय के विधान को अपने निर्माण के स्त्रोत से स्वच्छ भावना, आचरणगत दृढ़ता तथा त्याग का बल मिलता था। प्रशासक स्वयं आचरणवान तथा अनुकरणीय बन कर लोगों से भी वैसी अपेक्षा रखते थे तथा उसकी प्राप्ति में सफल होते थे। परन्तु आज ऐसा नहीं है।

भावनागत स्वच्छता तथा आचरण के गिरते स्तर के कारण अच्छी प्रशासकीय व्यवस्था वाली विधि तथा आदेशों की अवहेलना के बीज स्वयं प्रशासकीय व्यवस्था के धरातल पर प्रस्फूटित हो रहे हैं। हम अपने देश की ही बात करें तो स्वतन्त्रता आन्दोलन का सूत्रपात अंग्रेजी प्रशासकों की भेदभावपूर्ण, अन्यायपूर्ण तथा दमनकारी नीतियों के कारण हुआ। आचरणगत भारतीय सामाजिक व्यवस्था वाले उस समय के विश्वसनीय व्यवहार ने इस आन्दोलन को ऊर्जा प्रदान की और उसके प्रवाह में निरंतरता को भी बनाए रखा। प्रशासकीय व्यवस्था के प्रति करोड़ों लोगों के अविश्वास की परिणति ही फिर भारत की स्वाधीनता में हुई। स्वतंत्र भारत में एक शांतिमय जयघोष के साथ आचरणयुक्त प्रशासकीय प्रबंधन की प्रजातांत्रिक सरिता बह निकलती। इस सरिता का प्रवाह स्वाधीनता के प्रारंभिक कुछ दशकों तक तो स्वच्छ तथा निर्बाध बना रहा। परन्तु उसके पश्चात बढ़ते मानवीय लालच तथा घोर व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण गिरते आचरण ने सरिता के उस प्रवाह को अब मटमैला और विकृत सा कर डाला है। इसके कारण अब विधि के निर्माण तथा उसके परिपालन, दोनों ही में कभी-कभी भावनागत आचरण की भारी कमी साफ झलकती है। नैतिक बल के धरातल पर

टिका अच्छे आचरण के भवन का बड़ा भाग अब ध्वस्त होता जा रहा है।

इस गिरते नैतिक बल के कारण नियम निर्माण की प्रक्रिया भी प्रभावित हो रही है। इस प्रक्रिया में भी अब कभी-कभी व्यक्तिगत स्वार्थ एवं पक्षपात की भावना प्रभावी हो जाती है। इससे कुछ गिने-चुने लोग तो प्रसन्न हो जाते हैं। परन्तु ऐसे सरकारी पगों के कारण कुछ समय पश्चात लाखों-करोड़ों सामान्य लोगों के कष्ट एवं दुख बढ़ जाते हैं। सेवाकाल में बढ़ोतरी देने और वेतन बढ़ाने में स्वयं कानूनों का निर्माण करने वालों के वेतन भत्ते, सुविधाएं आदि बढ़ने से कभी-कभी ऐसा ही आभास होने लगता है। सामान्य नियम जन सामान्य द्वारा ही परिपालन का विषय बनकर रह जाते हैं और एक अलग प्रकार का संदेश भी समाज को दे डालते हैं। इससे असंतोष तथा अविश्वास की भावना उत्पन्न हो जाती है। शासनीय व्यवस्था के प्रति अविश्वास तथा असंतोष की यही भावना फिर परिवर्तन, अस्थिरता, आतंकवाद आदि विकृतियों को जन्म देती है।

हम देश एवं प्रदेश में इस समय इसी प्रकार की सामाजिक पर्यावरणीय स्थिति में से गुजर रहे हैं। इन्हीं कुछ पहलुओं को हम हिमाचल प्रदेश भवन निर्माण संबंधी सरकारी नियमों तथा उनके परिपालन के संदर्भ में देखते हैं। इस प्रदेश के शिमला, मंडी, हमीरपुर, सोलन आदि जिलों के गांवों, कस्बों तथा जिला मुख्यालयों ने नए-नए तथा बड़े नगरों का रूप ले लिया है। इनका आकार भी दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। लोगों के बढ़ते आर्थिक सामर्थ्य के कारण बहुत से स्थानों पर अंधाधुंध भवन निर्माण हो चुका है तथा होता भी जा रहा है। प्रदेश का नगर एवं ग्राम योजना विभाग निर्माण को व्यवस्थित तथा नियंत्रित तो करना चाहता रहा है। परन्तु बढ़ती औपचारिकता, राजनैतिक सूझबूझ, समानता तथा भावनागत स्वच्छता के ऊपर गिरते परदे के प्रभाव से आक्रांत यह विभाग भी असमर्थ सा प्रतीत होता जा रहा है। हिमाचल प्रदेश के शहरी क्षेत्रों में हिमाचल प्रदेश नगर एवं ग्राम योजना अधिनियम 1977 लागू है। परन्तु भवन निर्माण पर इसके क्रियान्वयन को देखने का उत्तरदायित्व नगर एवं ग्राम योजना विभाग का न होकर नगर परिषदों के कार्यकारी अधिकारियों का है।

हाल ही में विभाग द्वारा नई रिटेंशन पॉलिसी तैयार की गई है। इस पॉलिसी को वर्ष 2004 में बनी रिटेंशन पॉलिसी से भिन्न बताया गया है। इस प्रकार की पॉलिसी का निर्माण तथा उसका क्रियान्वयन अवैध भवन निर्माता को लागू

नियमों की शर्तों में कुछ प्रतिशत की छूट देकर उसे नियमित एवं वैध बनाने के लिए होता है। वर्तमान पॉलिसी कब बनेगी, कब लागू होगी, कितनी छूट होगी यह तो समय बताएगा। इस प्रकार की व्यवस्था से जहां एक ओर कुछ लोगों को राहत एवं सुविधा मिल जाती है वहीं दूसरी ओर कई लोगों को अनियमित कार्य करने या नियमों की अवहेलना करने की प्रेरणा भी मिल जाती है। सरकार की किसी नीति विशेष से यदि अनियमितता या नियम की अवहेलना को बढ़ावा मिलता हो तो उस नीति के इस पहलू को भी दृष्टि-विगत नहीं किया जाना चाहिए। अंधाधुंध निर्माण को नियमित करने से जहां पर्यावरण ध्वस्त होगा वहां समाज को नियम की अवहेलना का संदेश भी जाएगा। सरकार एक ओर ऊंचे निर्माण पर अंकुश लगाने के लिए प्रयत्नशील लगती है तो दूसरी ओर अनियमितता को नियमितता में बदलने के रास्ते भी खुले रखना चाहती है। इससे सरकार में बैठे या उसे प्रभावित करने वाले उन लोगों को भी लाभ पहुंचने का द्वार खुल जाता है जो नियम के पालन को गंभीरता से नहीं लेते हैं।

ऊंचा तथा बेढंगा निर्माण अब भी जारी है। हमारा समाज नियमों की अवहेलना की ओर इसलिए भी बढ़ जाता है क्योंकि सामर्थ्यवान कुछ लोग तथा प्रशासनिक एवं सरकार चलाने के बोझ को उठाए कुछ नेता भी ऐसा करने से पीछे नहीं रहते हैं। पर्यावरण को ध्वस्त करने वाले बीजों के अंकुर भी अधिक यहीं से फूटते हैं। सरकार को तुरंत नियम निर्माण द्वारा प्रदेश में दो मंजिल से अधिक ऊंचे निर्माण पर रोक लगा देनी चाहिए।

दैनिक जागरण धर्मशाला (हि.प्र.) अगस्त 31-8-2006 (संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

पर्यावरण तथा रिटेंशन पॉलिसी

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

बड़े-बड़े पेड़ों में लगते फलों को इन्हें लगाने वालों ने तो कम ही खाया है। परन्तु इन फलों को स्वाद के साथ गले तक पेट भरने का काम दूसरे लोगों ने ही किया है। इन पेड़ों को लगाने की परंपरा निरंतर जारी रहे, तो ऐश-ओ-आराम एवं विलासिता, भरे रहन-सहन को लिए स्वादिष्टता के साथ पेट को गले तक भी भर लेना कोई बुरी बात नहीं समझी जाएगी। परंतु विडंबना तो उस समय सामने आती है जब इस परंपरा की कड़ी टूट जाती है। इसमें ध्यान देने वाली बात यह है कि जो लोग विलासितापूर्ण रहन-सहन के लिए केवल अपना पेट भरने में ही लग जाते हैं, उनमें त्याग व मूल्यगत आचरण की भावना बहुत कम ही पनपा करती है। त्याग, सरलता व नैतिक मूल्य विहीनता के कारण ऐसे लोग फलों को स्वाद भरे आनंद के साथ चालाकी से अधिक खा तो सकते हैं, परन्तु दूसरों को ऐसे फल उपलब्ध करवाने के लिए त्याग द्वारा नया कुछ भी नहीं कर सकते हैं। यही नहीं, ऐसे लोग दूसरों को अच्छे कार्य की ओर प्रवृत्त करने के लिए कोई प्रेरणाप्रद उदाहरण भी प्रस्तुत नहीं कर सकते। ऐसा ही अब हमारे कुछ नेताओं के साथ भी है।

आज जहां-तहां जनसेवा का दम भरते कई नेताओं के उपदेश व व्यवहार के बीच की खाई बढ़ती जा रही है। यदि खाई की गहराई और फासला यूं ही बढ़ता गया, तो पर्यावरण तो ध्वस्त हो ही जाएगा, साथ ही भविष्य में देश के प्रजातांत्रिक ढांचे व समग्र भारतीय भाईचारे को भी किसी अनहोनी की नजर लग जाएगी। अशांति बढ़ती जा रही है, दलगत व वर्गगत भावनाएं उभर रही हैं। पक्षपात व न्याय में देरी तनाव व उग्रता को जन्म देते जा रहे हैं। समाज, प्रशासन एवं शासन में उच्च पदों पर बैठे कई लोग अपने अच्छे आचरण की अनुपस्थिति द्वारा लोगों के विश्वास को आघात पहुंचा रहे हैं। महाभारत के युद्ध की समाप्ति के बाद युधिष्ठिर को उपदेश देते हुए भीष्म पितामह ने कहा था कि यदि हम सुख-सुविधाओं के लिए धर्म का पालन नहीं करते तो धर्म का मानना या नहीं मानना एक समान ही है। ऐसे ही कुछ बिन्दुओं के उजाले में हम प्रदेश सरकार द्वारा हाल ही में लिए गए रिटेंशन पॉलिसी संबंधी निर्णय पर दृष्टि डालें तो साफ दिखाई देगा कि नियम की पालना करवाने वाले स्वयं ही नियमों का उल्लंघन करने की भावना लोगों

के मन में डाल रहे हैं। इस पॉलिसी द्वारा कुछ धन की अगुवाही से अनियमित निर्माण को सरकार द्वारा नियमित कर दिया जाएगा।

प्रदेश की भौगोलिक स्थिति को भूकंप के दृष्टिकोण से देखें तो कांगड़ा का पूरा जिला, मंडी व हमीरपुर का भी लगभग पूरा क्षेत्र ही अति संवेदनशील भूकम्प प्रवृत्त जोन नंबर पांच में आता है। चंबा, कुल्लू व ऊना के कुछ क्षेत्र भी इसी जोन में है। शेष सारे का सारा हिमाचल भी सुरक्षित न होकर जोन नंबर चार में है। हाल ही में कुछ विशेषज्ञों ने भी प्रदेश में ऊंचे निर्माण को घातक बताया है। लेखक के 6 वर्षों के निरंतर प्रयास के बाद आनाकानी करती सरकार अंत में लेखक के ऊंचे निर्माण को रोकने संबंधी तर्कों से अप्रैल 2005 को सहमत हो गई। साथ ही इस दिशा में नियम निर्माण का संकल्प भी व्यक्त कर अपने पत्रांक हिम/टी सी/पीजेटी/डीपी/जनरल/2005-379-84 दिनांक 8 अप्रैल 2005 के द्वारा लेखक को अश्वस्त किया गया। प्रदेश सरकार ने भी निर्माण के कारण पर्यटन स्थलों के बिगड़ते स्वरूप पर विभाग से चिंता जताई। चार-पांच मंजिला भवन निर्माण रोकने व केवल दो मंजिला भवन निर्माण करने हेतु नियम बनाने पर विचार की बात भी कही।

प्रदेश की भौगोलिक संरचना व भूकंपीय संवेदनशीलता के दृष्टिगत यहां कम ऊंचे व हल्के भवन निर्माण की तकनीक अपनाने की चर्चाएं जोरों पर हैं ताकि भूकंप आने की स्थिति में जानमाल की हानि कम हो। उधर, इस नई पॉलिसी द्वारा अनियमित बेढंगे निर्माण पर नियमितता की मोहर लग जाएगी। पर्यावरण की रक्षा की चिंता करने वाली सरकार स्वयं इसकी असुरक्षा की प्रेरक सी लगती जाएगी। **इस प्रकार के निर्णय होने से पर्वतीय प्रदेश में भूकंप आने की स्थिति में जान-माल की अधिक हानि की संभावना बढ़ जाएगी। नियम पालन करने वालों को आघात पहुंचेगा और कानून का उल्लंघन करने वालों को सौगात मिल जाएगी।** नियम व आज्ञा का पालन करवाना सुनिश्चित करने वालों पर भी बुरा प्रभाव पड़ेगा। पक्षपात मुट्ठी भर लोगों को तो प्रसन्न कर सकता है, परंतु लाखों में रोष उत्पन्न कर जाएगा।

ऐसा निर्णय पर्यावरण रक्षा, न्याय व शासकीय गुणवत्ता, के तराजू पर अपना संतुलन खो देगा। कड़वे निर्णय के कारण पूर्व में देश के एक प्रधानमन्त्री कुछ समय के लिए अपने पद से वंचित अवश्य हुए, परन्तु कुछ ही समय बाद उनके पक्ष में भारी जीत ने अपना शंखनाद किया।

नगरों में बैठे कानून का उल्लंघन करने वाले एवं प्रभावशाली लोग पूरा

हिमाचल या देश नहीं है। बढ़ती जन-जागरुकता के इस समय में किसी गलत निर्णय द्वारा प्रदेश या देश के चुनावों को जीतने की भावना पालना व्यर्थ भी हो सकता है। विवेक, पर्यावरण व उच्च शासकीय गुणवत्ता को खोते निर्णय बड़े चुनावों में हार का भी कारण बन सकते हैं। क्या हमारे नेता देश की राजधानी दिल्ली में निर्माण से उत्पन्न स्थिति पर वहां लागू उच्चत्तम न्यायालय के निर्णय से भी कोई सीख नहीं लेना चाहते हैं?

देश-प्रदेश पर्यावरण व नेताओं के स्वयं के व्यापक हित में यही अच्छा होगा कि 13 नवंबर की रिटेंशन पॉलिसी संबंधी निर्णय पर पुनर्विचार हो। अन्यथा भविष्य में भी अवैध निर्माण को एक और रिटेंशन पॉलिसी द्वारा वैध बनाए जाने का ही संदेश जाएगा जो किसी भी तरह उचित नहीं होगा।

दैनिक जागरण धर्मशाला दिनांक 30.11.2006 (संपादकीय पृष्ठ पर) प्रकाशित

बंद हो प्राणघातक निर्माण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

समग्र पुष्ट-अपुष्ट मानवीय इतिहास पर यदि विहंगम दृष्टि डालें तो पता चलता है कि ऐतिहासिक पुरातन घटनाओं की भविष्य में भी पुनरावृत्ति होती आई है। ऐसी ही स्थिति प्राकृतिक घटनाओं की भी रहती आई है। इसी ऐतिहासिक तथ्य को ध्यान में रखते हुए हमारे बहुत से पूर्व के शासक एवं प्रशासक भूतकाल की उन घटनाओं से ही सीख लेकर भविष्य के लिए नीति निर्धारण एवं नियम निर्माण का कार्य करते आए। उनके इस प्रकार के आचरण के कारण उन नीतियों के क्रियान्वन के परिणाम भी अच्छे निकले।

परंतु जैसे-जैसे जन कल्याणकारी व्यवस्था के प्रबंधन में लगे प्रशासकों और शासकों ने वास्तविक कल्याण की समष्टिगत भावना के ऊपर व्यक्तिगत भावना का आवरण डालकर लोक कल्याण का प्रदर्शन करना चाहा वैसे-वैसे साधारण लोगों की सुख शांति कम होती गई और व्यक्तिगत आचरण भी गिरता चला गया। उन्होंने जीवन के लिए सुविधाओं की गिनती चाहे बढ़ा दी हो। परंतु इस धरती पर वास्तविक जीवन का कार्यकाल तथा तनावमुक्त क्षणों की गिनती बड़ी सीमा तक घटा डाली है। वास्तव में आज राजनेताओं का गिरता स्तर भी सुख-शांति तथा सुरक्षा के लिए घातक बनता जा रहा है। उन्हें उच्च आचरणगत त्याग तथा निःस्वार्थ लोक कल्याण की चिन्ता कम और अपनी व्यक्तिगत सुविधाओं, स्वार्थों और चुनाव जीतने की चिंता अधिक सताती है। ऐसे ही कुछ कारणों से आज समग्र समाज सहित पूरी मानवता ही विध्वंस की ओर बढ़ती जा रही है।

इसी संदर्भ में हम जीवन-मृत्यु से संबंध रखने वाली भूकंपीय त्रासदी तथा उससे सुरक्षा के लिए किए जाने वाले सरकारी प्रयासों का भावनागत यथार्थ के धरातल पर आंकलन करते हैं। यह सारे संसार में प्रमाणित तथा सर्वविदित तथ्य है कि भूकंप के समय अधिकतर लोग भवनों के गिरने के कारण उनके मलबे के नीचे दबकर ही मरते हैं। यह तथ्य इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि हिमाचल एक पहाड़ी प्रदेश है तथा इसका अधिकतर भूभाग भूकंपीय दृष्टिकोण से अधिक संवेदनशील है। 26 जनवरी, 2001 की गुजरात भूकंप त्रासदी के

पश्चात हिमाचल प्रदेश सरकार का ध्यान भी ऊंचे भवन निर्माण के खतरों की ओर आकर्षित हुआ। सरकार ऊंचे निर्माण पर कभी प्रतिबंध लगाती, तो कभी उसे उठाती रही। लेखक ने 1999 से ऊंचे निर्माण की हानियों को उजागर करता लेखन तथा वाक अभियान चलाया। लेखों, सेमिनारों, हजारों की संख्या में लगातार छह वर्षों तक सरकार को लिखे जाते रहे पत्रों तथा उनकी प्रतिक्रियाओं से जो तथ्य सामने आए वह अधिकतर यही थे कि लोगों और सरकार को प्राणों की अपेक्षा विकास के नाम पर वाहवाही लूटने, धन कमाने तथा वोटों का ध्यान रखने की चिन्ता अधिक है। सरकार ने लेखक को ऊंचे निर्माण को रोकने के लिए नियम निर्माण का आश्वासन भी लिखित रूप में दिया। सरकारी बयानों द्वारा भी नियम निर्माण का संकल्प सामने आया। परन्तु यह सब कुछ अधर में लटकता प्रतीत होता रहा है।

सरकार ने उल्टे नियमों के विरुद्ध किए गए निर्माण को नियमित करने तथा नियम का उल्लंघन करने वालों की वोट हित में अधिक परवाह करते हुए रिटेंशन पालीसी के नाम से उन्हें एक भेंट सी परोस डाली। इसका सुखद पहलू यह है कि हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय ने इस पॉलिसी के अन्तर्गत राहत देने या नियमितीकरण से पहले उच्च न्यायालय से स्वीकृति लेने का आदेश जारी कर दिया है। यह अवश्य ही स्वागत योग्य है। **नैतिकता तथा प्राणों से बढ़कर बहुमूल्य और महत्त्वपूर्ण संसार में कोई भी दूसरी वस्तु नहीं है। पूरे विश्व को भूगर्भीय हलचलों तथा उन पर पड़ने वाले अदृश्य बाह्य प्रभावों की सही-सही न तो जानकारी है और न ही इनसे बचाव के किसी पूर्व सूचना तंत्र का विकास ही हो पाया है, तो ऐसे में सरकार का ऊंचे और बेढंगे भवन निर्माण को रोकने के लिए नियम निर्माण की प्रक्रिया को पूर्ण न करना अवश्य ही चिंता तथा जनसेवा के वास्तविक रूप पर प्रश्नचिन्ह लगाने वाला विषय बन जाता है।**

यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया वाकले यूएसए तथा इंस्टीटयूट ऑफ हिमालयन जीयोलॉजी के वैज्ञानिकों के संयुक्त शोध अभियान में सम्मिलित वैज्ञानिक डा. पी. बैनर्जी के साथ बातचीत के संदर्भ में 6 सितंबर 2006 को प्रकाशित एक समाचार के अनुसार भारतीय उपमहाद्वीप में और विशेषकर हिमालयी क्षेत्र में

भारी भूकंप आने का अनुमान है। उन्होंने इसकी समय सीमा तो नहीं बताई, परन्तु भारतीय प्लेट का हिमालयी मुख्य बाऊंड्री थ्रस्ट से टकरा कर उसके नीचे घुसना इसका कारण बताया। 10 दिसंबर 2006 को मंडी, सुंदरनगर और बिलासपुर में भूकंप के झटके लगे। 25 दिसंबर को मंडी में पुनः झटके लगे और 4 जनवरी 2007 को नए वर्ष के प्रथम सप्ताह में मंडी तथा होली में फिर भूकंप के झटकों का समाचार सुनने के लिए मिला।

पृथ्वी के ध्रुवों तथा ऊंचे पहाड़ों पर हजारों वर्षों से जमी बर्फ अब उष्णता के बढ़ने के कारण दिन-रात तीव्र गति के साथ पिघलती जा रही है। इस बर्फ के पिघलने से जहां पृथ्वी के ध्रुव कुछ हल्के होंगे, वहीं सागर का जलस्तर बढ़ेगा तथा पृथ्वी के मध्य भाग पर भारी बोझ का दबाव भी बनेगा। हम चाहे जिस भी दृष्टिकोण से देखें, पर्वतों पर बनते ऊंचे बेढंगे प्राणघातक निर्माण पर रोक लगाना मानवता तथा अच्छी शासकीय व्यवस्था के हित में आवश्यक है। इसलिए सरकार को इनके लिए अधिक समय खोए बिना नियम बनाने और लागू कर देने चाहिएं।

दैनिक जागरण 11 जनवरी 2007 (संपादकीय पृष्ठ पर) प्रकाशित

सुरक्षित नहीं हिमाचल

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मानव अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों के बल पर प्रकृति के रूप, रंग और प्रभाव को जानने के लिए तीव्र गति के साथ आगे बढ़ता जा रहा है। परन्तु प्राकृतिक रहस्यों का रूप रंग और प्रभाव भी गूढ से गूढ़तर होता ही दिख रहा है। जीवन की वास्तविक सुख शांति को खोजने और उसे प्राप्त करने में वह आज भी उतना ही प्रयत्नशील है जितना हजारों वर्ष पूर्व रहा होगा। इस रहस्य को खोजने के लिए जेनेवा में एलएचसी के नाम से लगी महामशीन भी 10 सितंबर 2008 को आरंभ हुई। महाप्रयोग की यात्रा सफलता से पूर्व ही हांफ कर बंद हो गई, जबकि इसके निर्माण में 80 देशों के हजारों वैज्ञानिक 20 वर्षों तक लगे रहे। इसी प्रकार भू-गर्भीय रहस्यों और हलचलों की सच्चाईयों का वास्तविक ज्ञान मनुष्य के लिए आज भी उत्सुकता का विषय बना हुआ है। इन्हीं कुछ तथ्यों के उजाले में हिमाचल प्रदेश के भू-पटल पर पड़ने वाले इन्हीं अज्ञात भू-गर्भीय रहस्यों के ज्ञात और घातक प्रभाव पर दृष्टि डालते हैं।

प्रदेश का 32 प्रतिशत क्षेत्र भूकंप की दृष्टि से अति संवेदनशील जोन 5 में आता है। इसमें ऊना का लगभग 37 प्रतिशत तथा कुल्लू का लगभग 53 प्रतिशत क्षेत्र सम्मिलित है। इस क्षेत्र में 9 या इससे भी अधिक तीव्रता का भूकंप कभी भी आ सकता है। ऐसा भूकंप क्षण भर में लाखों की संख्या में भी प्राण हानि कर सकता है। शेष समूचा क्षेत्र भी असुरक्षित जोन 4 में है। कई हजार लोगों के प्राण हरने वाले 4 अप्रैल 1905 के कांगड़ा भूकंप की विनाशगाथा अब भी कई लोगों को याद है। भूकंपीय घटनाओं एवं भूगर्भीय हलचलों के वास्तविक कारणों तथा उनकी समय सीमा का आज भी किसी को सही ज्ञान नहीं है। **जो कुछ बताया और समझाया जाता है वह सब पुरानी घटनाओं के विश्लेषण पर आधारित है। भारत के जाने माने वैज्ञानिक डा. कस्तूरीरंगन ने भी कहा है कि हम ठीक प्रकार से नहीं जानते हैं कि भूकंप और सुनामी जैसी आपदाएं क्यों आती हैं।**

7 सितंबर 2008 को भूकंप के झटकों से हिमाचल प्रदेश सहित पूरा उत्तरी भारत हिल उठा। अक्तूबर 2008 को मंडी और शिमला में ऐसे झटके लगे। 4 जनवरी 2009 को मुंह अंधेरे कांगड़ा तथा चंबा में झटके अनुभव किए गए। 26

जनवरी 2001 के गुजरात भूकंप में महाविनाश ने पहली बार संसार को संदेश दिया कि भूकंप के समय अधिक प्राण हानि मकानों के गिरने से होती है। उधर, प्रदेश में बेढंगा तथा ऊंचा बहुमंजिला निर्माण जारी है। नगर हो या गांव, राज्य राज मार्गों के किनारे हों या राष्ट्रीय राजमार्गों के किनारे, सब ओर भूकंप के घातक प्रभाव की अनदेखी ही दिखाई देती है। अवैध निर्माण करने वालों में लोगों के साथ-साथ सरकारी विभाग भी सम्मिलित होते दिखाई देते हैं। शहरों तथा उच्च मार्गों के किनारे बने अवैध तथा बेढंगे भवनों की संख्या हजारों में है। अकेले शिमला नगर में ही ऐसे निर्मित भवन हजारों के आंकड़े को छूते हैं।

एक समाचार के अनुसार अवैध निर्माण के विरुद्ध सरकार द्वारा कार्यवाई न किए जाने से अप्रसन्न उच्च न्यायालय ने सरकार से जवाब-तलब किया है। नगर तथा ग्राम योजना विभाग ने भी ऐसा निर्माण करने वालों को बिजली तथा पानी के कनेक्शन नहीं देने के सख्त निर्देश जारी किए हैं। परन्तु, पुराना अनुभव बताता है कि ऐसे निर्देशों के रहते भी कुछ प्रभावशाली लोग कनेक्शन ले लेने का प्रबंध करते दिखाई दे जाते हैं। ऐसे निर्माण को प्रोत्साहन सरकार की ओर से भी उस समय मिल जाता है जब रिटेंशन पालिसी के नाम से कुछ अनियमित भवनों को नियमित कर डालने वाली नियम उल्लंघन को प्रेरित करने वाली कोई नीति बना दी जाती है। **कभी-कभार, एकाध बार साधनहीन लोगों की सहायतार्थ ऐसी नीति यदि बना दी जाए तो शायद बात समझ में भी आ जाती है परन्तु यह स्वभाव ही बन जाए, वह तो ठीक नहीं। इससे प्रशासकीय समस्याएं और बढ़ेंगी जो सरकार या नेताओं के सिरदर्द का कारण बनेंगी। इससे पड़ोसी को कठिनाई होती है तथा नियम का पालन करने वाले भी हतोत्साहित होते हैं।** नगर तथा ग्राम योजना विभाग सामान्य लोगों की सुविधा, यहां की सुंदरता की रक्षा तथा भूकंपीय त्रासदी द्वारा कम प्राण हानि हेतु जो कुछ सुधार प्रस्तावित करता है उसे ऐसी पॉलिसी चट कर जाती है। ऐसी पॉलिसी पांच बार तो आई, पर परिणाम विशेष नहीं निकले। राष्ट्रीय सिस्मिक सलाहकार प्रो. ए. एस. आर्य ने भी कहा था कि हिमाचल प्रदेश में भूकंप से हानि के बचाव के उपाय पर्याप्त नहीं हैं। कांगड़ा भूकंप के सौ वर्ष पूरे होने पर तथा उसके बाद इस प्राकृतिक आपदा से बचाव हेतु करोड़ों रुपयों के व्यय को वहन करते सेमिनार भी हुए। परंतु बंद कमरे के इन सेमिनारों से कोई ठोस परिणाम निकलता प्रतीत नहीं हुआ।

भूकंप की आशंका के दृष्टिगत ऊंची चोटियों, देव स्थलों तथा समतल स्थानों पर एक और दो मंजिल से अधिक ऊंचे निर्माण पर रोक लगनी चाहिए। ऊंचाई के अनुसार मकान के चारों ओर पर्याप्त खाली स्थान छोड़ी जानी चाहिए, ताकि जब कभी मकान का मलबा गिरे तो प्राण हानि न्यूनतम हो। राष्ट्रीय उच्च मार्गों के समीप होने वाले निर्माण को व्यापारिक तथा आवासीय कालोनियों के रूप में व्यवस्थित किया जाना चाहिए। नियम के उल्लंघन की प्रेरणा देने तथा नियम पालन करने वालों को कष्ट देने वाली कोई नीति न बनाई जाए। **जान-माल की हानि को रोकने हेतु नियम निर्माण का सरकारी विभाग द्वारा भरोसा तो लेखक को कई बार दिलाया जाता है। परंतु नियम कब बनेगा और वह कब लागू होगा यह देखना अभी शेष है। मुख्यमंत्री का 24 मार्च 2008 को शिमला तथा 13 दिसंबर को धर्मशाला से प्रकाशित बयान कि प्रदेश में बहुमंजिले भवन अब नहीं बनेंगे इस दिशा में कुछ राहत का संकेत देता है। यद्यपि होगा क्या, यह भविष्य के गर्भ में है।**

दैनिक जागरण धर्मशाला 21 जनवरी 2009 (संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

भूकंप का कंपन और आपदा प्रबंधन

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

भूकंप के बारे में बड़े-बूढ़े भी अपने बचपन से सुनते आए हैं। परंतु उस समय बहुत दूर आते भूकंप के समय जान-माल की हानि का समाचार या तो मिलता ही नहीं था या फिर अधिक देरी से मिला करता था। भूकंपों का इतिहास भी शायद उतना ही पुराना है, जितना पुराना पृथ्वी के अस्तित्व का इतिहास। हमारी धरती ने अपने वर्तमान स्वरूप तक आते-आते न जाने कितने बदलाव झेले होंगे। मनुष्य बदलावों के कारक वास्तविक कारणों का साक्षी तो है ही नहीं, केवल ज्ञात ऐतिहासिक घटनाओं एवं धरातलीय बदलावों के विश्लेषण के आधार पर अनुमान ही लगा सकता है। पृथ्वी के भीतर कितनी और कैसी हलचल है। किस रंग-रूप में है? सही-सही किस आकार और प्रकार में है? किस पदार्थ और सामग्री की है? ठीक-ठाक या शत-प्रतिशत किसे भी पता नहीं है। इसलिए इस सच्चाई को सामने रखकर ही हमें आपदा प्रबंधन का रास्ता चुनना चाहिए अन्यथा हमारे प्रयासों का परिणाम और समस्या का निदान चिरस्थाई नहीं हो सकता। पुरानी भूकंपीय घटनाओं की ओर न जाकर हम मात्र आठ महीने पुरानी कुछ घटनाओं पर दृष्टिपात करते हैं। 2 अक्तूबर 2012 को हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा में भूकंप के झटके आए। 30 दिसंबर 2012 को शहरी विकास नगर नियोजन एवं आवास मंत्री के बेतरतीब भवन निर्माण को रोकने के निर्देश का समाचार छपा। 11 फरवरी 2013 को हिमाचल प्रदेश में फिर भूकंप ने अपने प्रभाव का आभास कराया। 16 अप्रैल 2013 को ईराक-पाक में 7.8 की तीव्रता का भूकंप आया था। उस समय लगभग 90000 लोगों के मरने तथा हजारों के लापता होने का समाचार था। 17 अप्रैल 2013 को 3.9 की तीव्रता के भूकंप से चंबा जिला हिल उठा। 15 जून 2013 को 3.5 की तीव्रता के भूकंप ने उत्तराखंड वासियों को डरा दिया। 3 जुलाई 2013 को इंडोनेशिया के अरोज राज्य में 6.1 की तीव्रता से आए भूकंप में प्रथम दृष्टि में 29 लोगों के प्राण जाने का समाचार पढ़ने को मिला। 22 जुलाई 2013 को चीन के गांसू प्रांत में 6.6 की तीव्रता के भूकंप के समय प्रथम दृष्टि में 90 लोगों के मारे जाने व 600 के घायल होने और 1200 मकानों के ध्वस्त होने के समाचार ने इस प्राकृतिक आपदा के डर को लोगों के मन में रेखांकित कर दिया। 17.07.2013 को प्रकाशित समाचार ने 15

जुलाई 2013 की रात्री को प्रदेश में आए 3.8 की तीव्रता के भूकंप की सूचना बिखेर डाली। अगस्त 2013 के प्रथम सप्ताह में लोगों ने प्रदेश में भूकंप के झटकों से अपने शरीर को असंतुलित होते देखा।

हम आपदाओं के पश्चात् के प्रबंधन पर कई योजनाएं बनाते हैं। भारत के प्रत्येक राज्य में आजकल आपदा प्रबंधन पर ध्यान दिया जा रहा है। हिमाचल प्रदेश में आपदा प्रबंधन प्राधिकरण अस्तित्व में है। यह एक अच्छा पग है। इससे प्रभावितों को तुरंत राहत देना सरल बन जाता है। परंतु वर्तमान समय में विडंबना यह है कि आपदाओं की संख्या और उनका रूप गिनती में बढ़ता ही जा रहा है। आपदाएं नए-नए द्वार खोलती जा रही हैं। **प्राकृतिक आपदाओं के भिन्न-भिन्न रूपों की संख्या और उनका घातक प्रभाव यदि यूं ही बढ़ता गया, तो अपनी मुट्ठियों में राहत सामग्री लिए हम अपनी भुजाओं को कहां तक फैला पाएंगे? हमें कुछ और भी सोचना और उस पर चलना होगा।**

1905 की कांगड़ा भूकंप त्रासदी में लगभग 20 हजार लोगों के मारे जाने का अनुमान था। उस समय अर्थात् 1901 की जनगणना में जनसंख्या 20 लाख से कम थी। आज प्रदेश की जनसंख्या 69 लाख के आसपास है। ऐसे में वैसी ही तीव्रता का भूकंप यदि आ गया तो प्राण हानि लाखों में हो सकती है। 2001 की गुजरात भूकंप त्रासदी के बाद हमने अन्य विकल्पों पर अधिक ध्यान देने के स्थान पर भूकंपरोधी तकनीक के सहारे से भवन निर्माण पर ही अधिक ध्यान देना आरंभ किया। 7 मार्च 2013 को धर्मशाला छावनी क्षेत्र की कजलोट पंचायत की टीहरा लाईन में भूस्खलन में अनेकों मकान धराशायी हो गए। **भारी वर्षा से मिट्टी यदि कटती गई और ऐसे में भूकंप आ गया, तो यह तकनीक भी काम नहीं आएगी। इस पर गहन चिंतन की आवश्यकता है।**

साठ के दशक में हमीरपुर के चमलाड़ी रोपड़ी गांव में आए भूस्खलन से सारे गांव के घर 10 से 15 फुट नीचे धंस गए परन्तु मरा कोई नहीं था। इसका कारण था मकानों के हल्के भार का। लेखक उस समय बिझड़ी स्कूल के छात्र थे और हमें लोगों की सहायता के लिए 8-9 किलोमीटर दूर वहां लाया गया था। लेखक ने वह दृश्य

स्वयं देखा है। लोग सजग थे। घरों से बाहर निकल गए थे। इस आपदा का प्रभाव कम हो इसलिए आवश्यक है कि भवन निर्माण में भारीपन और बहुत ऊंचाई न दी जाए। चारों ओर जगह खाली छोड़ी जाए। घर के सामने पर्याप्त खुली जगह हो। सुंदरता तथा आर्थिक प्रदर्शन के लिए अनावश्यक रेत-कंकरीट का प्रयोग न किया जाए। अनावश्यक रेत-कंकरीट के प्रयोग को खनन नियमों के अंतर्गत लाया जाए। ढलानों तथा शिखरों पर विराजे देव स्थानों पर केवल एक मंजिल की स्वीकृति ही दी जाए। भवनों का आकार भी अनावश्यक न बढ़ाया जाए, उसे रोका जाए। सरकारी भवनों को अपवाद में न रखा जाए। भूकंपीय आपदा के घातक प्रभाव को कम करने के लिए यह सब आवश्यक है। इसके साथ ही आवश्यक है कि हम बढ़ते अपने आर्थिक सामर्थ्य का सदुपयोग वास्तविकता को समझते हुए विवेक के सहारे अपने और अपनी भावी पीढ़ियों के सुरक्षित जीवन के हित में करें।

भूकंप को लेकर शोध बहुत आगे तक नहीं बढ़ पाए हैं। भूकंप की भविष्यवाणी की आशा में प्राणघातक भारी निर्माण की ओर बढ़ते जाना औचित्यपूर्ण नहीं कहलाएगा। विज्ञान भूकंप की भविष्यवाणी करने में अभी तक समर्थ नहीं है। बढ़ती शिक्षा के उजाले को ढकती दिखावे और लालच के अंधकार की काली छाया से बचाया जाना चाहिए। भूकंप को तो नहीं रोका जा सकता है। परन्तु इसके घातक प्रभाव को कम किया जा सकता है। क्या हिमाचल प्रदेश राज्य आपदा प्रबंधन द्वारा उन्हें एक वर्ष पूर्व जिला सांख्यकी कार्यालय हमीरपुर के माध्यम से भेजे **लेखक के सुझावों पर गंभीरता से ध्यान देगा? सीमित साधनों वाली सीमित धरती असीमित इच्छाओं का बोझ नहीं उठा सकती है। इस पर पूरे विश्व को चिंतन करना चाहिए। सीमित में असीमित को असीमित को सीमित में समा डालने की मानवीय चेष्टा से 21वीं शताब्दी में मानवीय जीवन के अंत के बाद ही धरती पर 22वीं शताब्दी का सूर्य अपनी किरणें बिखेरेगा।**

आपका फैसला शनिवार 31 अगस्त, 2013 (संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

आपदा प्रबन्धन, हम और भूकम्प

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मनुष्य आदिकाल से ही समस्याओं का सामना करता आया है। इनके समाधान के लिए जब कभी वह दृढ़-निश्चय के साथ सतत् प्रयत्नशील हुआ तो सफलता भी मिली। प्राकृतिक आपदाओं से बचाव के लिए उनकी प्रस्तुति और प्रभाव की घातकता के दृष्टिकोण से उसने कई मार्ग एवं उपाय भी खोज निकाले। इस प्रयास में जब कभी वह विफल यदि हुआ भी तो भी उसने प्राकृतिक आपदा की सीमा रेखा के अनुकूल अपने आपको ढालकर अपनी सुरक्षा सुनिश्चित कर ली। संसार ने कुछ ही समय पूर्व स्विटजरलैंड में जेनेवा के समीप आज तक के सबसे बड़े महाप्रयोग को देखा। यह महाप्रयोग धरती में 100 मीटर नीचे 27 कि.मी. लंबी सुरंग में सम्पन्न हुआ। इस महाप्रयोग में 113 दशों के 10 हजार से अधिक वैज्ञानिक वर्षों तक लगे रहे। 100 से अधिक भारतीय वैज्ञानिकों ने भी इसमें भाग लिया। निष्कर्ष एवं परिणाम के प्रभाव के महत्त्व को पाठकों के ऊपर छोड़ते हुए यहां केवल इस तथ्य को उजागर करना चाहता हूं कि जिस धरती पर हम निवास करते हैं उस धरती पर भूकंपीय आपदा से प्रति वर्ष हजारों की संख्या में लोग मर जाते हैं, घायल हो जाते हैं और बेघर हो जाते हैं। ऐसी आपदाओं से बचने के लिए विशेष कुछ नहीं किया जा रहा है।

पृथ्वी के गर्भ में सही-सही क्या-क्या है, किस रंग, रूप में है, किस आकार, प्रकार में है और उसकी ठीक-ठीक आपसी दूरी कितनी है, इसे जानने-समझने में हम पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पाए हैं। **यही बड़ा वह कारण है जो भूकंप की सही भविष्यवाणी करने के मार्ग में अवरोधन बनकर खड़ा है। इस दिशा में शोध बहुत आगे तक नहीं बढ़ पाए हैं। पृथ्वी के गर्भ की ओर 10 किलोमीटर से बहुत आगे तक न तो हम कोई यंत्र भेज पाए हैं और न झांक ही पाए हैं।**

भूकंप एक ऐसी प्राकृतिक आपदा है जिस पर मानव का कोई नियंत्रण नहीं है। संसार का कोई भी स्थान भूकंप की दृष्टि से सुरक्षित नहीं है। भूकंपीय घटना के घटित होने से पूर्व की भविष्य वाणी के अपुष्ट समाचारों से भूकंप पूर्व के जान-माल की सुरक्षा के स्थायी प्रबंधन की ओर प्रशासन तथा लोगों का ध्यान

कम हो सकता है। असावधानी के कारण प्राण हानि बढ़ सकती है। आपदाओं से सुरक्षा के उपायों से पूर्व प्रबंधन की योजना बनाते समय आधी-अधूरी भविष्यवाणी पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए।

इस समस्या की गंभीरता का अनुमान तो इस बात से भी लगाया जा सकता है कि हमारी धरती पर बार-बार और कभी-कभी एक ही स्थान पर कई बार भूकंप आते जा रहे हैं। पिछले तीन वर्षों में ही भूकंप ने धरती को कई बार कंपाया। 16 अप्रैल 2013 को ईरान, पाकिस्तान में 7.8 की तीव्रता का भूकंप आया। कई लोग मारे गए, अनेकों घायल हुए और अनेकों ही बेघर हो गए। 21.04.2013 को प्रकाशित समाचार में चीन के सिचुआन प्रांत में 7 तीव्रता के भूकंप से 130 के मरने और 3000 के घायल होने का समाचार छपा। 6 जून 2013 को 4.7 की तीव्रता के भूकंप से हिमाचल प्रदेश की धरती के हिलने का समाचार प्रदेशवासियों ने पढ़ा। 27 जून 2013 को उत्तराखण्ड में फिर 3.5 तीव्रता का भूकंप आया। 16 जुलाई 2013 को हिमाचल प्रदेश में फिर भूकंप के झटके लगे। 23 जुलाई, 2013 को मिले प्रथम दृष्टि के समाचार से चीन में गांगसू प्रांत में 6.6 तीव्रता के भूकंप में 90 लोगों के मरने और 600 के घायल होने की जानकारी मिली। 3 अगस्त 2013 को हिमाचल प्रदेश में फिर भूकंप आने का समाचार आया। 16 अक्तूबर 2013 को फिलीपिंस में 7.2 तीव्रता के आए भूकंप का समाचार प्रकाशित हो गया। उसमें प्रथम दृष्टि में 93 लोगों के मारे जाने की जानकारी दी गई। 25 अप्रैल 2015 को नेपाल में आए भूकंप में लगभग 8500 लोग मारे गए और हजारों घायल हुए, हजारों ही बेघर हो गए।

7 अक्तूबर 2013 को नई दिल्ली से प्रकाशित समाचार ने हिमालयी क्षेत्र में 8 या इससे अधिक तीव्रता के भूकंप के भी आ जाने की संभावना व्यक्त कर दी। इस जानकारी में 8 या 9 लाख लोगों के मारे जाने की आशंका भी व्यक्त की गई है। 26 अक्तूबर 2015 को अफगानिस्तान-पाकिस्तान में 7.5 तीव्रता का भूकंप आया। सैंकड़ों मारे गए, अनेकों घायल और बेघर हुए। उसका केन्द्र हिन्दुकुश की पहाड़ियों में फैजाबाद बताया गया था। यह वही स्थान था जहां 2005 में आए भूकंप में 73000 लोग मारे गए। 04.01.2016 को पूर्वोत्तर में 6.8 तीव्रता का भूकंप आया। प्रथम दृष्टि में ही 9 लोगों के मारे जाने और 90 के घायल होने का समाचार मिला। 06.01.2016 को आसाम 4 की तीव्रता के भूकंप से कांप गया।

7 जनवरी 2016 को नई दिल्ली से प्रकाशित समाचार के अनुसार भारत के गृह मंत्रालय के आपदा प्रबंधन के विशेषज्ञों ने चेतावनी दी है कि बिहार, उत्तर प्रदेश, दिल्ली सहित पहाड़ी राज्यों में शीघ्र 8.2 या इससे अधिक तीव्रता का भूकंप भारी तबाही कर सकता है। इसी भयंकर प्राकृतिक आपदा के समाचार के बीच 16 जनवरी 2016 को चंडीगढ़ से भूकंप की पूर्व सूचना देने वाले किसी यंत्र के विकसित हो जाने का आकर्षक समाचार प्रकाशित हो गया। **लगभग ऐसा ही समाचार वर्ष 2007 में भी प्रकाशित हुआ था। ऐसा लगता है कि इन समाचारों में भूकंप की पूर्व सूचना देने वाले जिस यंत्र या प्रणाली की बात की जाती है वह वास्तव में धरती के नीचे भूकंप की घटना के घटित हो जाने के बाद ही सूचना दे पाते हैं। भूकंप कहां, कब और कितनी तीव्रता का आएगा इसे बताने में विज्ञान अभी तक असमर्थ है।**

भूकंप, सरीखी प्राकृतिक आपदाओं से स्थायी बचाव की हमारी तैयारी बहुत कम है। इनसे सुरक्षा के लिए सरकारी व्यय के सहारे सरकारी प्रस्तावों या ऐसी परियोजना को केन्द्र में रखकर बड़े-बड़े सेमिनार किए जाते हैं। इनसे सुरक्षा के जो उपाय एवं निष्कर्ष उभर कर आते हैं, उनके आवृत में वह व्यापकता एवं समस्या के निदान के प्रति झुझारूपन बहुदा होता ही नहीं है जो होना चाहिए। इन उपायों में कमी इसलिए भी रह जाती है क्योंकि ऐसी गोष्ठियों या सेमिनारों में सरकारी प्रभाव क्षेत्र के बाहर के उन लोगों का सहयोग कम ही लिया जाता है जो समस्या के समाधान का अपेक्षाकृत कहीं अधिक प्रभावोत्पादक मार्ग दिखाने का सामर्थ्य रखते हैं। इसका कारण यह भी लगता है कि समाधान के लिए चिन्हित किए गए सरकारी लोग व्यक्तिगत स्वार्थहित में उनसे अधिक योग्य लोगों का सहयोग लेना पसंद ही नहीं करते हैं। इनमें अधिकतर वे ही लोग होते हैं, जिनकी सरकार या उसके द्वारा प्रायोजित विशिष्ट लोगों से समीपता होती है। **ध्वस्त होते पर्यावरण एवं प्राकृतिक आपदाओं से बचाव यदि नहीं हो पाएगा तो मानव इसी शताब्दी में धरा से लुप्त हो जाएगा।** अच्छा यही होगा कि सरकारी एजेंसियों पर पूरी निर्भरता न रखते हुए सामाजिक संस्थाएं तथा एक अकेले वे लोग आगे आएं जो मानवता के हित में अधिक संवेदनशील हैं। जान-माल की भारी हानि के कारण रूदन, क्रन्दन और विलाप करते हजारों लाखों लोगों की अश्रुधारा के सामने सरकारी विफलता और

असमर्थता के हाथ खड़े करने से अच्छा तो यही है कि विरोध का सामना कर प्राण घातक ऊंचे निर्माण पर प्रतिबंध लगाया जाए। जिसकी ऊंचाई की सीमा रेखा पर लगाए गए लेखक के प्रश्नचिन्ह सरकारी, दस्तावेजों में हैं। अच्छे नेताओं का कर्त्तव्य असुरक्षात्मक कार्यों से बाहावाही द्वारा चुनाव जीतना ही नहीं होना चाहिए। **सुरक्षात्मक पगों के कारण उत्पन्न क्षणिक रोष के प्रहार से चुनाव हारना भी उनका कर्त्तव्य होना चाहिए। ऐसे उपायों के चिरकालिक प्रभाव के कारण कुछ देर बाद स्थितियां स्वतः ही उनके पक्ष में हो जाएंगी।** भूकंपीय आपदा के लिए अलग राहत, कोष बनाया जाए जिसे समय-समय पर ऐसे लोगों से कर वसूली द्वारा भरा जाए और उसे प्रभावित लोगों की तुरंत सहायता के प्रयोग में लाया जाए।

हिमाचल दस्तक धर्मशाला (हि.प्र.), (सम्पादकीय पृष्ठ) 4 अप्रैल 2016 तथा हिमाचल केसरी धर्मशाला (हि. प्र.) में प्रकाशित

खण्ड-4

प्लास्टिक के थैलों तथा ऐसे कचरे
से बढ़ता और फैलता प्रदूषण-**Pollution**

इनकी हानियों को उजागर कर वर्ष 1999 से इन पर
प्रतिबन्ध
लगाने की मांग भी वर्षों तक जारी रखी।

वर्ष 2003 में हिमाचल प्रदेश सरकार ने इनकी बिक्री
तथा प्रयोग पर प्रथम प्रतिबन्ध लगा दिया - उपलब्धि

इस खंड में वर्ष 1999 से लगातार प्लास्टिक के थैलों तथा ऐसे कचरे के प्रयोग से फैलते प्रदूषण, इनकी रोकथाम, इन पर प्रतिबन्ध लगाने की मांग, हिमाचल प्रदेश तथा हरियाणा की सरकारों द्वारा खोले जाने वाले जुए की तरह के कैसीनों के खेलों से युवाओं पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को उजागर करते पूर्व प्रकाशित लेखों का संकलन किया गया है।

सर्वप्रथम 22-23 नवम्बर 1999 में आर. ई. सी. (अब एन. आई. टी.) हमीरपुर (हि०प्र०) में हुए राष्ट्रीय सेमीनार में प्रस्तुत अपने पत्र में लेखक ने प्लास्टिक के थैलों पर प्रतिबन्ध लगाने की मांग की थी तथा यह सेमिनार की स्मारिका के पृष्ठ 138 पैरा 10 में प्रकाशित है। उसके पश्चात हिमाचल प्रदेश सहित पंजाब से प्रकाशित होने वाले कई दैनिक समाचार पत्रों में निरन्तर प्रकाशित अपने लेखों द्वारा बढ़ते ऐसे प्रदूषण की हानियों के साथ-साथ हिमाचल और हरियाणा में चलाए जाने वाले जुआघरों जैसे कैसीनों के खेल से मानवीय जीवन पर पड़ते इनके दुष्प्रभाव के प्रति सरकार तथा जनता को जागरूक करते रहे हैं और सरकारों से इन पर प्रतिबन्ध लगाने की मांग बार-बार करते रहे हैं। लेखक के ऐसे शोधलेख, 19 अप्रैल 2001, 28 मई, 2001, 29 मई 2001, 15 सितम्बर 2003, 11 दिसम्बर 2003, 6 मई 2004, 8 मई 2004 को दिव्य हिमालय के सम्पादकीय पृष्ठ, दैनिक जागरण जालंधर तथा अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। हिमाचल प्रदेश सरकार ने वर्ष 2003 में पॉलीथीन के थैलों की बिक्री तथा प्रयोग पर कानून द्वारा प्रथम प्रतिबन्ध लगा दिया था। हिमाचल प्रदेश तथा हरियाणा में सरकारों द्वारा चलाए जाने वाले कैसीनों के खेल का प्रस्ताव भी अधर में लटक गया था।

लेखों के प्रकाशन की तिथियों सहित संबधित समाचार पत्र आदि का विवरण लेख के अंत में नीचे दिया गया है।

पॉलीथीन और कैसीनों के प्रदूषण का प्रहार

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए अति रुग्णावस्था में औषधि का प्रयोग तो आवश्यक हो ही जाता है। परन्तु कभी-कभी घर बैठे इसका प्रयोग करते रहने से भी काम नहीं चलता और हमें जाना पड़ता है किसी चिकित्सालय में। कई बार इतना कर देने से भी रोग से मुक्ति नहीं मिलती। हम फिर कुछ समय के अन्तराल के पश्चात् आजीवन निरन्तर किसी प्रयोगशाला से परीक्षण करवाते रहने और परहेज के साथ किसी दवा विशेष का प्रयोग करते रहने के परामर्श के साथ घर लौट आते हैं। हम बार बार विषैले पदार्थों का सेवन करते जाएं तो क्या एक बार किसी चिकित्सक की दवा ले लेने से काम चल जाएगा? अलकोहल, वसा और तनाव से छुटकारा पाने का कोई यत्न न करें तो क्या बड़े-बड़े चिकित्सालय और चिकित्सा विशेषज्ञ हृदय रोगों से मुक्ति दिलाने में सफल हो सकेंगे? यदि ऐसा होता तो विकास की ऊंचाइयों को छूती वैज्ञानिक विशिष्टता के आधुनिक इस युग में चिकित्सा सुविधाओं पर हजारों करोड़ रुपये व्यय करने पर भी बढ़ते रोगों और रोगियों की इतनी भीड़ कदापि न देखी जाती जितनी आज यह देखी जा रही है। बीमारी और परहेज की इन्हीं कड़ियों को आज पॉलीथीन के थैलों का बढ़ता प्रयोग आगे बढ़ा रहा है।

निर्बाध गति से फैलते इन थैलों का जाल अपने अन्तर में भावी रोगों की ऊर्जा छिपाए एक गंभीर समस्या बनता जा रहा है। प्रतिदिन गलियों में, नालियों के किनारे, सार्वजनिक स्थानों के समीप या सड़कों के किनारे मृत्यु के घाट उतारे मुर्गों के फैले पंखों की तरह इन लिफाफों के ढेरों को हवा के झोंकों के साथ इधर-उधर होते और गंदगी फैलाते बार-बार देखा जा सकता है। यही नहीं, नालियों के किनारे गंदे पानी के बहाव को बांध की तरह रोके सारी गंदगी का वहीं भंडारण करते और दुर्गंध छोड़ते ये थैले आने-जाने वालों का ध्यान सरलता से अपनी और आकृष्ट करते रहते हैं। इनके लगे ढेरों के किनारे और कूड़ादानों के समीप दुर्गंध के सहारे वहां उड़ते मच्छरों के दलों की शरणस्थली बने इन लिफाफों में झांकती आधुनिकता को सरलता से देखा जा सकता है। शिमला हो या डल्हौजी, धर्मशाला हो या कसौली, कश्मीर हो या उत्तरांचल के रमणीय स्थल, मनाली हो या अन्य तीर्थस्थल सभी जगह न गलने और न सड़ने वाले

प्लास्टिक के इन थैलों की व्यापकता वहां की स्वर्गसम अमृतमयी आभा पर हलाहल की बूंदें छिड़कती जा रही हैं। प्रदर्शन और आचरण में जो अन्तर आज देखा जा रहा है उसकी आकृति तो उस समय स्पष्ट दिखाई दे जाती है जब हम प्राकृतिक सुन्दरता का आनन्द लेने इन स्थानों पर तो आते हैं पर अपने प्रदूषण प्रिय बनते जा रहे संस्कारों के कारण औरों की सांसे रोके रखने के लिए वहां भी यह गंदगी छोड़ जाते हैं। सीवरेज तक को भी ये लिफाफे प्रभावित करते जा रहे हैं।

प्रति क्षण प्रतिदिन लाखों करोड़ों में होता इनका प्रयोग श्वेत वस्त्रों की बंचना में गन्दगी को लपेटे शहरों से गांव-गांव होता हुआ उस सड़ांध को घर-घर पहुंचाता जा रहा है। तर्क के मानदंडों की अवहेलना में केवल आधुनिकता के नाम पर आधुनिकता से पराभूत संकुचित मानसिकता के वशीभूत गंदगी के इन वाहकों का प्रयोग अनियन्त्रित ऐसे ही यदि जारी रहा तो उससे लोगों के स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर विपरीत जो गंभीर प्रभाव पड़ेगा, उसका पूर्वानुमान अभी से ही लगाया जा सकता है। फैलते जा रहे इस प्रदूषण से मुक्ति पाने के लिए विशेषज्ञों द्वारा जो उपाय बताए जा रहे हैं वे हैं : इन लिफाफों को इकट्ठा कर खाद बनाना, इनसे चट्टाईयां बनाना और इन्हें गढ़ों में दबाना। यहां विचारणीय यह है कि बताए जा रहे ये उपाय भी तर्क की कसौटी पर अपना रंग बदल देंगे। इन उपायों से प्रदूषण से न तो मुक्ति ही पाई जा सकती है और न वांछित सीमा तक यह घट ही सकता है। क्योंकि इतनी बड़ी संख्या में इनका इकट्ठा करना और नष्ट करना संभव नहीं है। प्लास्टिक के इन थैलों को बंद करने की कहीं से मांग यदि उठती भी है तो सरकार ऐसे रंगीन लिफाफों पर प्रतिबंध लगा कर इसकी इतिश्री करती हुई अपना पल्लू झाड़ लेती है।

इन लिफाफों के बदले रंगों को आज की आवश्यकता बता दिया जाता है। न जाने हमें यह क्यों समझ नहीं आता है कि जिन देशों ने पॉलीथीन के थैलों के प्रयोग को बंद या कम कर दिया है वहां के लोग भी तो खाना खाते और घरों में रहते ही होंगे। वह भी तो सामान लाते ले जाते होंगे। **क्या हमारी मानसिकता को बाजार पर कब्जा जमाए लोगों ने इतना निर्बल बना दिया है? ऐसा लगता है कि कुछ व्यापारियों, नेताओं और विशेषज्ञों के गठबंधन के टूटने तक इनके प्रयोग का बढ़ता प्रवाह थमेगा नहीं।**

ऐसा भी लगता है कि धन कमाने की होड़ में विशिष्टता प्राप्त करते जा रहे व्यापारिक संस्थानों का कुछ विशेषज्ञों के साथ बनता जा रहा घनिष्ठ गठबंधन साधारण लोगों को अपने बाजारू मायाजाल के वशीभूत करता जा रहा है।

हमारी निर्बल पड़ती मानसिक शक्ति इस बाजारू मायाजाल द्वारा हमसे वह सब कुछ करवाती जा रही है जो अनावश्यक या अनुचित हम करना नहीं चाहते हैं। उचित के पक्ष और अनुचित के विपक्ष में डटे रहने की हमारी मानव सुलभ सुशक्ति भी श्रीहीन होकर किनारा करती जा रही है। पर्यावरण जैसे महत्त्वपूर्ण विषय के अर्थों में जो व्यापकता और विराटता है उसके दृष्टिगत इसे सरकारी तन्त्र के भरोसे पूरी तरह छोड़ना अनुचित है।

न्यायपालिका की सीमा रेखा को छोड़कर इस तंत्र के पास इसे समझने और बनाए रखने की न तो पूर्ण इच्छा शक्ति है और न है इसके अनुकूल प्रबन्धन का सामर्थ्य। विशेषज्ञों के पास भी कभी-कभी कोई कमी रह जाती है और इसके कारण अनुकूल परिणाम नहीं पाने के कारण बाद में वे भी अपना मत बदलते आए हैं।

अकेले ढाका नगर में प्रतिदिन लगभग 60 लाख थैले प्रयोग में लाए जाते हैं। भारत में भी स्थिति इससे मिलती-जुलती ही है। एक सर्वेक्षण के अनुसार 4,12,000 की जनसंख्या वाले हिमाचल प्रदेश के जिला हमीरपुर में लगभग 1 लाख प्लास्टिक के लिफाफों की प्रतिदिन खपत होती है। सरकाघाट और घुमारवीं तहसील में भी खपत का लगभग यही अनुपात है।

प्रदेश के शेष भागों में भी स्थिति इससे अच्छी नहीं है। पंजाब के जालन्धर तथा अन्य नगरों में तो प्रदूषण के बाहक कलयुगी ये थैले नालियों के गंदे पानी के बहाव को अवरुद्ध कर उसे गलियों और सड़कों में फैला देते हैं। यही नहीं अपने में कूड़ा-कचरा लपेटने की वरदानी शक्ति रखते ये लिफाफे सीवरेज की गंदगी के निकास को बंद कर कुछ समय के लिए लोगों के लिए असुविधाजनक विवशता ला डालने का भी पूर्ण सामर्थ्य रखता हैं। ऐसे में फैल रहे इस प्रदूषण के तले पंजाब की कुछ सैन्य छावनियों के नागर प्रबंधन द्वारा इन लिफाफों पर प्रतिबंध लगाने का पग उजाले की किरण का आभास देता हुआ सराहनीय प्रयास है। लोगों को प्रतिदिन बाजार से घर लौटते समय हाथों में दो-दो, तीन-तीन,

चार-चार ऐसे लिफाफे उठाए देखा जा सकता है। कार्यालयों में काम करने वाले कुछ लोगों तथा स्कूल कालेजों की बड़ी कक्षाओं में जाने वाले विद्यार्थियों के हाथ भी इन मुलायम और कड़कते थैलों से सजे देखे जा सकते हैं। फैलाए गए इस मायाजाल से बाहर निकल कर सूती थैलों के प्रयोग द्वारा बाजार से साग-सब्जी और दूसरे सामान को जगह-जगह परिचितों और अपरिचतों को गिनाने एवं दिखाने से भी हम बच सकेंगे। सूती थैलों में घर पहुंचते सामान के कारण प्रतिदिन करोड़ों की संख्या में प्रयुक्त होकर प्रदूषण को बढ़ाते इन प्लास्टिक के थैलों की संख्या में भारी कमी आएगी।

अपनाई जाने वाली परहेज की इसी प्रक्रिया द्वारा समस्या का समाधान संभव हो सकेगा। इससे उपजी व्यवहारिक क्षमता हमारी मानसिकता को सबल करती हुई हमें अन्य प्रकार के प्रदूषण से लोहा लेने का भी सामर्थ्य प्रदान करेगी। यही नहीं लाभ हानि की इस यात्रा में सूती थैलों के उत्पादन तथा विपणन से हमारे समाज के आर्थिक रूप से निर्बल या बेरोजगार लोगों को भी रोजगार के अवसर प्लास्टिक के थैलों की अपेक्षा अधिक प्राप्त होंगे। इस दिशा में अब तक किए गए उपायों के लेखों-जोखों का अनुमान यदि लगाया जाए तो रंगीन लिफाफों पर लगे तथा लगने वाले प्रतिबंध से इनकी बढ़ती संख्या में न तो कोई कमी आई और न इस प्रकार आगे कमी आने की कोई संभावना ही है। बंद हुए या होने वाले रंगीन इन थैलों का स्थान सफेद थैले ले लेते हैं।

गैर-सरकारी संस्थाओं एवं पर्यावरण प्रेमियों की चिन्ताओं से इन थैलों के विरुद्ध उठती एकल या सामूहिक आवाजों को अधिक सहारा नहीं मिल पा रहा है। इस प्रकार सांसें रोकने को विवश करती फैलती जा रही इस गंदगी को रोकने के लिए कोई प्रभावशाली उपाये तो अभी तक सामने आ नहीं सके किन्तु सामाजिक प्रदूषण को एक पग और आगे बढ़ाने के लिए कैसीनो के नाम से एक निशंक प्रहार हिमाचल की प्राकृतिक भव्यता और रमणीयता वाले पर्यावरण पर होने जा रहा है। धन कमाने के उद्देश्य से पर्यटन स्थलों के होटलों में विदेशी सैलानियों के लिए कैसीनों के नाम से खुलने वाले इन जुआ घरों से यहां की पर्वतीय शांति तथा शिष्टता एवं शालीनता से मंजी संस्कृति पर भीषण वज्रपात होगा। यहां का विशिष्ट सुसंस्कृत सामाजिक परिवेश अशिष्टता, अनाचार और अश्लीलता की चपेट में आ जाएगा।

हिम युवाओं पर इसका विपरीत पड़ता प्रत्यक्ष और परोक्ष अनिष्टकारी प्रभाव फिर रोका नहीं जाएगा। ऐसे में सभ्य तथा सुसंस्कृत समाज इन प्रश्नों के उत्तर तो सरकारी प्रबन्धन से अवश्य चाहेगा ही कि क्या धन कमाने के लिए विपरीत पड़ने वाले प्रभाव की भी प्रवाह नहीं करना हमारी निपट विवशता बनती जा रही है?

क्या विदुर जैसे आचरणवान विद्वान स्पष्टवादी कुशल परामर्शदाताओं की कमी पड़ती जा रही है? क्या प्रबंधन तथा उसके लिए उत्तरदायी व्यवस्था अकुशलता से पराभूत है? क्या धर्नाजन भावी युवा भारत के अच्छे संस्कारों के वर्जन में हो? प्रबंध में पराभव का मूल्य क्या निरीह समाज को चुकाना चाहिए? धन के लिए हुए गठबंधन के टूटने तक क्या करोड़ों लोग पॉलिथीन के प्रदूषण से आक्रांत ही रहेंगे और पशु मरते ही रहेंगे?

जो लोग अपनी संस्कृति को बचाने, स्वदेशी और नैतिकता को अपनाने का ढोल उछल-उछल कर लंबी आयु तक पीटते रहे, शक्ति संपन्न होने पर प्रमाणिकता की कसौटी पर वे आज क्या रंग दिखा रहे हैं? विश्व पटल पर महाभारत जैसे ग्रंथ पर गर्व का शंखनाद करने वाले हम क्या द्रोपदी के चीर हरण से कुछ सीखना नहीं चाहते?

दिव्य हिमाचल (संपादकीय पृष्ठ) धर्मशाला 19 अप्रैल 2001 तत्पश्चात दैनिक जागरण जालंधर 28/29 मई 2001 और अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित (हिमाचल प्रदेश, पंजाब, जम्मू-कश्मीर सहित अन्य राज्यों में प्रसारित)

कैसीनों के दुष्प्रभाव से आतंकित महाभारत की धरती

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मानव वन्य जीवन के मार्ग से आगे बढ़ता हुआ सरकारों के वर्तमान स्वरूपों, द्वारा सभ्यता के विकास के आज के पड़ाव तक पहुंचा है। परन्तु युगों की यह लंबी तथा बोझिल यात्रा कई बिन्दुओं एवं ठिकानों पर उसे शासकों की अकुशलता द्वारा पतन का द्वार भी दिखाती रही। इसका कारण चाहे राजाओं, नवाबों एवं बादशाहों में मानवीय विकास जन्य सूझ-बूझ एवं कुशलता की कमी रही हो या फिर उनके निम्नस्तरीय विलासिताओं अर्थात ऐशो-आराम के प्रति सीमा से आगे बढ़ता आकर्षण रहा हो। स्वार्थ साधक और चाटुकारतापूर्ण व्यवहार वाले दरबारियों पर उनकी निर्भरता रही हो या फिर स्वयं उनकी अकर्मण्यता उस अवनति का कारण बनी हो।

उन्नति, अवनति और दिन-दुगुनी रात-चौगुनी तरक्की करती समस्याओं का अंबार शिक्षा के घने उजाले में प्रजातंत्रीय व्यवस्था के वर्तमान युग में भारत में भी सरलता से देखा जा सकता है। विश्व शताब्दी पुरुष हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का यह देश अहिंसा के पुजारी उस महान राष्ट्र नायक की नीतियों एवं सिद्धान्तों की वर्तमान युग में भी आवश्यकता एवं सार्थकता का संदेश पूरे संसार को तो दे गया। परन्तु स्वयं उस महानायक के त्याग बलिदान और अहिंसा के मार्ग से भटक गया।

बापू के नशाबंदी, बाल मजदूरी और अन्य कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने में आज हमें हिचकिचाहट यदि है तो वह इन कार्यक्रमों की सार्थकता या प्रभाव को लेकर नहीं है, बल्कि हमारे स्वयं के भीतर त्याग एवं बलिदान की घटती भावना के कारण है। हम ऐसी समस्याओं के दुष्परिणामों के ऊपर नहीं जाते हैं, केवल अल्पकालिक धनार्जन की भावना एवं अपनी परियोजनाओं के लिए धन जुटाने के उद्देश्य से सदियों के लिए कराहती तड़पती मानवता का मार्ग खोल कर अपने सहित सारे समाज का अनिष्ट कर देने पर उतारू हैं।

अकुशलता, पद लिप्सा तथा सुगम एवं सरल ढंग से धन बटोरने की बढ़ती अभिलाषा के कारण भी धन तथा परियोजनाओं के लिए अन्य स्त्रोत एवं साधन उपलब्ध करवाने के मार्ग हमसे इस लिए छूट जाते हैं क्योंकि हम स्वयं सत्यनिष्ठ प्रयत्न तथा समर्पण से दूर ही रहना पसंद करने लगे हैं। इसलिए 1977 में केन्द्र में बनी देसाई सरकार भी तो 1980 में नशाबंदी का शिकार होकर गिर गई थी।

हाल ही में हिमाचल प्रदेश में भी पर्यटक स्थलों पर विदेशियों के लिए कैसीनो अर्थात जुआ जैसा खेल खिलवाने की सरकार ने बात की ही थी कि प्रदेश के बुद्धिजीवियों तथा सामान्य लोगों ने डट कर उसका विरोध किया। यहां भी सरकार उस प्रभाव के पीछे राजस्व द्वारा धन की उपलब्धता को कारण बताने का राग अलापती और इसके ताने-बाने पर अपनी कुशलता का ढोल पीटती रही।

ऐसा ही निर्णय हरियाणा की सरकार ने हाल ही में शायद इस लिए ले लिया कि वह लोगों या विदेशियों को जुआ जैसा कैसीनों का खेल खिलवा कर एक बहुत बड़ी राशि राजकीय कोष के लिए प्राप्त कर सकेगी। इस खेल से समाज का कितना अनिष्ट होगा? कितने हरियाणवी युवा जाने-अनजाने रूप से इस खेल की ओर आकर्षित होकर अपना भविष्य नष्ट करेंगे? कितने परिवार बदहाल और कंगाल हो जाएंगे? इसका लेखा जोखा राजकीय प्रबंधन के किस अवयव को करना था?

सरकार ने जन कल्याणकारी अपने दायित्व को पूरा यदि करना हो तो ऐसे कार्यों से मिलते राजस्व के कारण बिगड़ती स्थिति को पुनः व्यवस्थित करने के लिए बाद में उस पर धन का कितना बोझ पड़ेगा? इस ओर शायद योजनाकारों का ध्यान गया ही नहीं। उन्हें मात्र अल्पकालिक लाभ की परिकल्पना ने दीर्घकालीन दायित्व के परिपालन के अपने मार्ग से पीछे धकेल दिया। अपने पड़ोसी राज्य हिमाचल की नकल की अपेक्षा हरियाणा यदि अपनी कोई अन्य मौलिक परियोजना बनाता तो कितना अच्छा होता। वर्ष 2000 में हरियाणा में 50 लाख पर्यटक आए परन्तु विदेशी पर्यटकों की संख्या मात्र हजारों में रही। लगभग यही स्थित वर्ष 2001 की भी है।

विदेशियों को कैसीनो जैसा जुआ खेलने की सुविधा देने हेतु सात सौ करोड़ रुपये का बिल पास हो गया। इतनी भारी भरकम राशि से कोई अन्य परियोजना भी तो चलाई जा सकती थी। योजनाकारों को राजस्व जुटाने के लिए अच्छे विकल्प ढूंढने चाहिएं।

इतनी बड़ी राशि को यदि कुशलता तथा अच्छी प्रशासकीय एवं तकनीकी सूझ-बूझ के साथ अन्य किसी ढंग से व्यय किया जाए तो इससे कैसीनों की अपेक्षा अधिक लाभ लिया जा सकता है। आवश्यकता है तो केवल पद पाने या बचाने के मोह जाल से ऊपर उठकर सुगम धनार्जन की पिपासा को लगाम देते हुए पर्याप्त

समय के साथ भवन में बैठकर सही सोच और सही दिशा के साथ योजना बनाने की। जिसकी कमी व्यवस्था के वर्तमान वातावरण में अब अखरती और अगणित समस्याओं को जन्म देती जा रही है।

अपनी इस कमी ही के कारण महाभारत के रण क्षेत्र तथा गीता की उद्‌गम हरियाणा की इस धरती को हम क्या कैसीनों के दुष्प्रभाव से अक्रांत कर कलंकित कर देना चाहते हैं और उस युग की शतरंजी चालों से आज भी कुछ सीखना नहीं चाहते हैं? निर्मिष भोजी नर-नारियों की प्रसिद्ध रही इस धरती के पथ भ्रष्ट होते युवाओं के अश्रु क्या अब कैसीनों जैसे जुआघरों में गिरेंगे? नेता या योजनाकार किसी योजना के भविष्य में पड़ने वाले समाजघातक दुष्परिणामों की चिन्ता यदि नहीं करेंगे तो इस प्रकार तीव्रता से प्रदूषित होते पर्यावरण के कारण क्षीण एवं नष्ट होती मानवता की रक्षा अब कैसे संभव हो सकेगी?

दैनिक जागरण जालंधर 11 दिसंबर 2002 में प्रकाशित तथा पंजाब, हिमाचल प्रदेश तथा पड़ोसी राज्यों में प्रसारित।

पोलिथीन पहुंचा गली-गली

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

हमीरपुर जहां अपनी कुछ महत्त्वपूर्ण विशिष्टताओं के कारण प्रदेश में अग्रणी जिला बनकर उभरा हुआ है, वहीं खंड-खंड होती मानवीय सभ्यता में भी पीछे नहीं रह पा रहा है। वह भी समय था, जब दूसरे स्थानों की तरह यहां के लोग भी किसी हाट-बाजार से किसी सामान या खाद्य पदार्थ को किसी कपड़े से बांधकर या बर्तन में ढक कर घर तक लाना मानवीय सभ्यता का एक अभिन्न अंग माना करते थे। इस समय को गए कोई युग नहीं बीता, बल्कि लेखक की तरह कइयों ने अपने जीवन में यह सब कुछ देखा और किया है। परन्तु विकास के वर्तमान काल में भी जर्जर होती सभ्यता के अवयवों के कारण आज इस जिले में भी सामान को सलीके के साथ घर तक लाने वाली उस परंपरा का स्थान ले लिया है पोलिथीन के चमकते लिफाफों ने। यहां के कस्बे-कस्बे, गांव-गांव और घर-घर में इनका प्रचलन दिन दुगनी, रात चौगनी तरक्की करता चला गया है। गंदगी के बाहक इन लिफाफों का आधिकाधिक प्रयोग करना लोग अपनी शान समझने लगे हैं। घर आती प्रत्येक वस्तु को रास्ते में आने-जाने वालों को दिखाना और गिनाना न जाने लोगों को क्यों अच्छा लगने लगा है? शायद यहां भी लोग सुसंस्कृति एवं पर्यावरण प्रिय मानवीय सभ्यता से मुंह मोड़कर पुनः वन्य परिवेश की ओर लौटने की तैयारी में हैं। इतना ही नहीं, हमीर होटल से कुछ सौ मीटर ही की दूरी पर हमीरपुर नादौन मार्ग के बाई ओर पड़े अधजले इन लाखों लिफाफों के ढेर पर ढेर और उस पर चढ़ती मिट्टी की परत-दर-परत को सरलता से देखा जा सकता है। नगर के समीप लगते गौड़ा गांव के नाले में भरे पड़े इन लिफाफों में भी चमक-दमक वाली आधुनिकता के दर्शन खुली आंख से किए जा सकते हैं। मानवीय सभ्यता के वास्तविक अवयवों से विमुख होते हमारे चेहरों के रंग के कारण इन लिफाफों का इकट्ठा किया जाना और संपूर्ण रूप से नष्ट किया जाना, अपने आप में एक जटिल समस्या और कोरी कल्पना है। लिफाफों से बढ़ती गंदगी के लिए नगर परिषद या किसी पंचायत को दोष देना न तो तर्कसंगत होगा और न इन संस्थाओं के सामर्थ्य के ही वश में होगा। इनकी प्रतिदिन की खपत एक लाख से कम नहीं लगती। नगर परिषद को दी जाने वाली भूमि भी इसके लिए कम पड़ती जाएगी। कुछ लोग, संस्थाएं एवं

अधिकारी विशेष अवसरों पर इन लिफाफों से फैलते प्रदूषण से मुक्ति के लिए इनकी खाद बनाने या इनकी रिसाइक्लिंग द्वारा भी पर्यावरण की स्वच्छता का प्रदर्शन करते हैं। परन्तु वास्तविक उद्देश्य की प्राप्ति के निर्जन में आचरण विहीन दोहाई देने से भी तो कोई लाभ नहीं होगा। प्रचार भी अधिक और परिणाम भी शून्य में विलीन। यदि इस प्रकार के इतने साधन तथा मंचों एवं अवसरों का प्रयोग सूती थैलों के प्रयोग के लिए किया जाए तो अच्छे परिणाम साकार होकर मूर्तरूप धारण करेंगे। पहले ऐसा होता, तो अब तक पोलिथीन के इन लिफाफों का कितना ही प्रयोग कम हो चुका होता। हम सूती थैला उठाने से परहेज कर इन लिफाफों से प्यार करते हैं और फिर इनके नष्ट करने की बात की दुहाई देने को अपनी विद्वता और समाज सुधार का दर्पण समझते हैं, जो कदापि उचित नहीं लगता। झूठी इस शान के खंड-खंड होते अवयवों का उस समय पता चलता है, जब लेखक हमीरपुर की सब्जी या अन्य दुकान से सामान लेने जाते हैं, तो दुकानदार चेहरा देखकर पोलिथीन का लिफाफा पीछे हटा लेते हैं। परन्तु वहां से आने-जाने वालों की नजरें लेखक के हाथों में लटके सूती **थैले का पीछा उस समय तक करती रहती हैं, जब तक लेखक उनसे दूर नहीं चला जाता। सरकार ने इनके प्रयोग और बिक्री पर प्रतिबंध की घोषणा कर दी है। परंतु इसका परिणाम तो तब ही सामने आएगा, जब सरकार के निर्देश धरातल पर सार्थक होंगे, यहां की गलियां, सड़कें, नाले इन लिफाफों की गंदगी से बढ़ते और फैलते प्रदूषण से बच सकेंगे।** इससे मानवीय उस सभ्यता में भी फिर से नए प्राण आएंगे, जिसके निर्बल होते अवयवों के कारण हम कई समस्याओं से जूझ रहे हैं।

दिव्य हिमाचल धर्मशाला 15 सितंबर 2003 हमीरपुर टूडे में प्रकाशित।

प्रदूषण बढ़ाते हैं प्लास्टिक के झंडे

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

आज धरती पर जीवन को सबसे बड़ा खतरा यदि कोई है तो वह किसी भयानक युद्ध से तो कम परंतु प्रदूषण तथा भूमि असंतुलन से अधिक है। अब तो पूरे संसार में पर्यावरण के बारे में जागरुकता अभियान जलाए जा रहे हैं। सेमिनारों व गोष्ठियों पर करोड़ों रुपए व्यय किए जा रहे हैं। राज्य प्रमुखों की भागीदारी के साथ पृथ्वी सम्मेलनों का भी आयोजन किया जाता है। घोषणाएं की जा रही हैं। प्रदूषण से मुक्ति द्वारा पर्यावरण को बचाने के लिए सभी देश नए-नए कानून बना रहे हैं। इसे व्यापक विषय का रूप मिलता जा रहा है। न्यायपालिका सचेत है, विधायिका सचेत हैं और सचेत सी लगती हैं, कार्यपालिका भी जो स्वयं विधायिका ही के अंग के रूप में व्यवस्थित हैं।

इस प्रदूषण को दूर करने की दिखावटी और अनमनी सी भावना का तो उस समय पता चलता है जब हमारे देश में विधायिका के लिए चुनाव लड़ने वाले स्वयं प्रदूषण फैलाने से पीछे नजर नहीं आते। इस समय हिमाचल प्रदेश, पंजाब, जम्मू-कश्मीर में चुनाव प्रचार जोरों पर है। हर जगह पार्टियों के चुनाव चिन्ह प्लास्टिक के झंडों के रूप में लटक रहे हैं। शहर-शहर, गांव-गांव यहां तक कि गली मुहल्लों और सड़कों के किनारे पार्टियों के प्यारे ये चुनाव चिन्ह प्रदूषण बढ़ाने के लिए कई हजारों की संख्या में लटके तथा बिखरे पड़े हैं। कहीं-कहीं तो अपनी-अपनी पार्टी के चिन्ह के अधिक प्रदर्शन की होड़ के कारण सघन रूप से लटकी असंख्या इन मालाओं के अनगिनत झंडों की काली छाया के रूप में दिन के उजाले में भी अंधेरा सा दस्तक देता प्रतीत होता है। उस समय ऐसा लगता है मानों रुतवे में ऊंचे उठने की लालसा में मानवीय संवेदना इनके दिल से नीचे गिरती जा रही है।

यही प्लास्टिक प्रदूषण को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने, उसे सुरक्षित रखने तथा बढ़ाने का इतना सशक्त साधन है कि उतना कोई और शायद नहीं है। परन्तु इतने पर भी प्रदूषण को रोकने के लिए कानून बनाने वालों की कुर्सी पर बैठने के लिए चुनाव लड़ने वाले तीव्र गति से फैल रहे प्रदूषण की गंभीरता को यदि नहीं समझेंगे तो उनके हाथों पर्यावरण सुरक्षित भी कैसे रह सकता है। यह प्रश्न एक दिन बड़े जोर के साथ अवश्य उठ खड़ा होगा। इनके

दबाने से भी यह फिर दबेगा नहीं। लेखक ने सन् 1990 सितंबर में लिखा था कि पर्यावरण की समस्या इतनी गंभीर तथा विषय अतिशीघ्र इतना महत्त्वपूर्ण हो जाएगा जिस पर सभी देशों का अत्याधिक श्रम, धन तथा समय व्यय होगा। यह लेख सर्वप्रथम दैनिक वीर प्रताप जालन्धर के 8.10.1990 के अंक में और उसके पश्चात कई समाचार पत्रों तथा सेमिनारों की स्मारिकाओं में विस्तृत रूप में प्रकाशित हुआ था।

वह समय अब बहुत निकट आ गया है और उठते जा रहे हैं कई प्रश्न अपना उत्तर ढूंढने के लिए। हिमाचल प्रदेश में भी चुनावी मौसम इन दिनों गर्म है। यहां भी 10 मई को लोक सभा के लिए मतदान होगा। पार्टी चिन्हों के प्रदर्शन के रूप में हजारों की संख्या में जगह-जगह लटकते प्लास्टिक के बहुरंगी ये झंडे अपनी होड़ में यहां के प्राकृतिक सौंदर्य से आगे निकल जाना चाहते हैं। पर्वतीय होने के कारण इस प्रदेश का अधिकतर भाग भूकंप की दृष्टि से अति संवेदनशील क्षेत्र में आता है। भूकंप की यहां बार-बार चेतावनी भी आ रही है। अधिकतर जनसंख्या भी ढलानदार स्थानों या उनके समीप है। जहां भूकंप के समय भारी जान-माल की तबाही की आशंका है। इतने पर भी यहां जगह-जगह बहुमंजिला निर्माण निर्बाध जारी है। ऐसा निर्माण भूचाल के समय सर्वाधिक प्राण हानि का कारण बन सकता है।

आधुनिकता की अंधी दौड़ के कारण यहां के नगरों, उप नगरों एवं पर्यटन स्थलों में प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। भारी खदान कटान एवं परियोजनाओं के कारण भूमि संतुलन भी बिगड़ता जा रहा है। प्राकृतिक जल स्त्रोत तेजी के साथ सूखते जा रहे हैं। परन्तु विडंबना देखिए कि इतने पर भी प्रदेश के बड़े राजनीतिक दलों ने पर्यावरण जैसे महत्त्वपूर्ण मुद्दे पर इस प्रकार चुप्पी साध रखी है मानों लोगों के जीवन की सुरक्षा वोटों के आगे बौनी पड़ गई हो। ऐसा लगता है कि आज कुछ नेताओं को मानवता की रक्षा के मुद्दों की अपेक्षा वोट बटोरने के लिए बहकाने, फुसलाने वाले मुद्दों की अधिक चिन्ता है।

वोट बटोरने के काम न आने वाली आवश्यक मानवीय बातें इनके मुद्दों की परिधि से बाहर रह जाती हैं। यदि नेताओं ने पर्यावरण रूपी मानवीय पक्ष को नहीं समझा तो यह प्रदेश बहुत शीघ्र अपनी प्राकृतिक सुंदरता तो खो ही देगा, जीवन भी कठिन और जोखिम का सोपान बनकर रह जाएगा। विनाशकारी बाढ़

के कारणों तथा प्रदेश में घटती फसलों की विशेष किस्म की मात्रा को उजाले में लाते हुए लेखक ने प्रदेश में ज्वलंत प्रमाणों के साथ भावी पर्यावरणीय संकट की ओर संकेत भी कर दिया है।

दिव्य हिमाचल धर्मशाला संपादकीय पृष्ठ पर 6 मई 2004 तत्पश्चात दैनिक जागरण जालन्धर तथा अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित

जल संकट को गहरा देगा सड़कों पर बिछता प्लास्टिक का कचरा

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति ने धरती के विशाल पिंड को जीवन योग्य बनाए रखने के लिए जल, वायु, तेज व प्रकाश का जो अथाह भण्डार उपलब्ध करवाया है उसमें कमी या बढ़ोतरी करना मानव के वश में तो है नहीं, पर हां वह अपने अच्छे-बुरे आचरण से उसकी उपलब्धता की प्रक्रिया व स्थानान्तरण को अवश्य प्रभावित करने में स्वतंत्र बना रहता है। सागर से बादलों के रूप में आने वाला पानी आकाश से धरती पर जब बरसता है तो इसका कुछ भाग धरती के भीतर चला जाता है, जो वर्ष भर हमें पीने व फसलों को देने के लिए मिलता रहता है। जल का शेष भाग प्रकृति के सहज मर्यादित परिवर्तन द्वारा पुनः सागर में लौट जाता है।

पानी की घटती उपलब्धता और बढ़ती इसकी मांग के कारण आज कई राज्यों के बीच संघर्ष के बीजों के अंकुर फूटते दिखाई दे रहे हैं। फूटते इन अंकुरों से हिमाचल में घटती पानी की उपलब्धता दूसरे राज्यों के बीच किसी भीषण संघर्ष को जन्म दे सकती है। वैज्ञानिक ऊंचाईयों के युग में भी मानव इस पृथ्वी से बाहर न तो जल के अन्य किसी स्त्रोत को खोज पाया है और न ही प्रकृति के मूल इस आवश्यक तत्व के निर्माण की कोई प्रक्रिया ही सामने आई है। भविष्य में दूर तक भी इसके निर्माण की कोई संभावना दिखाई नहीं देती है। भले ही मानव चंद्रमा के बाद मंगल ग्रह पर पांव धरने की पूरी तैयारी में लगा है। इसमें पांव धरने से आगे के प्रयासों की सफलता अनिश्चतता के आवृत से बाहर नहीं लगती है।

पानी की आने वाली न्यूनता से संप्तत हम आज अपने हाथ में ज्ञान के पुंज की ऊंची ध्वजा लिए भी गलती पर गलती करते जा रहे हैं। हम जल की उलब्धता की डगर को कंटकमय बनाते जा रहे हैं और बढ़ते जा रहे हैं, धरती पर जीवन के अब अंत ही की ओर।

हम प्लास्टिक के थैलों के दोषों की बात यदि करें तो एक ओर हिमाचल जैसे सुंदर पर्यटक स्थलों व सुरम्य घाटियों के प्रदेश ने इन थैलों के प्रयोग व बिक्री पर प्रतिबंध लगाकर प्राकृतिक सुंदरता को कुछ सीमा तक बचाने का

सशक्त व सराहनीय प्रयत्न किया है। इससे धरती अब कुछ साफ-सुथरी दिखने लगी है। यहां की हजारों किलोमीटर लंबी सड़कें, खेत-खलियान, नाले-नालियां, बगिया एवं घर-आंगन भी साफ दिखने लगे हैं। दूसरी ओर प्लास्टिक के कचरे को सड़कों पर बिछाने का सुझाव भी आजकल दूसरे राज्यों में ऊंचे स्वर के साथ दिया जा रहा है।

सड़कों की काली स्याही पर प्लास्टिक की चमकीली इस परत को बिछाने एवं चढ़ाने के पीछे जो तर्क दिया जा रहा है वह है चढ़ती ऐसी परत से सड़क की आयु का अधिक होना व सड़क पर पानी आदि से बार-बार पड़ते गड्ढों से छुटकारा पाना। सड़कों पर मुलायम चढ़ती इस परत से लंबी होती इसकी उम्र के दर्पण में इस प्रयोग की आकृति तो उजली दिखाई दे सकती है। परन्तु धरती पर आज बढ़ती और चढ़ती सीमेंट कंकरीट की परत दर परत एक ओर अच्छे-खासे भाग को अपने नीचे ढक देगी। दूसरी ओर हजारों लाखों किलोमीटर लंबी सड़कों पर बिछती एवं चढ़ती प्लास्टिक के कचरे की परत से वर्षा के पानी के भूमि के भीतर सामने की संभावना और भी कम हो जाएगी।

कचरे को बिछाने योग्य बनाने की प्रक्रिया से उत्पन्न होने वाला अन्य कोई विपरीत प्रभाव भी तो हो सकता है, जो लंबे समय के पश्चात अपना घातक रूप दिखा डाले। इसके साथ ही कचरे को बिछाने योग्य बनाने की प्रक्रिया व प्रयोग से होने वाले भावी किसी कुप्रभाव का जोखिम भी बढ़ जाएगा।

दिव्य हिमाचल धर्मशाला के (संपादकीय पृष्ठ) 3 सितम्बर 2004 तत्पश्चात दैनिक जागरण जालन्धर 11 सितम्बर 2004 तथा अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित

Ph : Offi. 22313
Resi 22830

MUNICIPAL COUNCIL HAMIRPUR

R. K. Sharma
Executive Officer,

Ref. No.............
Dated 30/9/2003

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि आचार्य रत्न लाल वर्मा, निवासी हमीरपुर (हि॰प्र॰) लोगों में पर्यावरण के बारे में जागृति पैदा करने के लिए पिछले कई वर्षों से अभूतपूर्व कार्य करते आ रहे हैं। कई मंचों, सेमिनारों, लेखों तथा अभियानों, प्रचार माध्यमों द्वारा इन्होंने पर्यावरणीय खतरों तथा प्रदूषण से बचने के उपायों एवं सुझावों के बारे में जनता के एक बड़े भाग को शिक्षित एवं जागृत किया है। पॉलीथीन के थैलों पर रोक, पहाड़ों में बहुमंजिले भवन निर्माण के खतरों, घटते जल स्तर, हिमालय पर्वत को पेश खतरों तथा हाऊसिंग बोर्ड की आवासीय कालोनियों में पेड़ लगाने आदि के लिए इनका योगदान प्रशंसनीय और उल्लेखनीय है। 2000 की सतलुज नदी की विनाशकारी बाढ़ के कारणों के बारे में इनकी सोच तथा अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण रहा है। सरकार ने पॉलीथीन बैग पर प्रतिबन्ध की घोषणा कर दी है। पर्यावरण को बचाने तथा प्रदूषण पर नियन्त्रण के लिए प्रकृति के अनुकूल जीवन शैली को अपनाने हेतु इनका साहित्य भी निरन्तर कई दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित होता रहता है। हिमाचल के साथ-साथ दूसरे राज्यों में भी पर्यावरण सम्बन्धी जागरूकता का इनका योगदान प्रभावशाली ढंग से पहुंच रहा है।

आर. के. शर्मा

प्रमाणित किया जाता है कि हमीरपुर के वार्ड नम्बर 5 के निवासी श्री रत्न लाल वर्मा पिछले कई वर्षों से निरन्तर पर्यावरण संरक्षण के लिए कार्य कर रहे हैं। नदियों में अचानक आती बाढ़ के कारणों को खोजने, पर्वतीय इलाकों में बहुत ऊंचे भवन निर्माण कार्य के रूझानों को कम करने, पॉलिथीन के थैलों के प्रचलन को कम करने और घरों के समीप वृक्षारोपण आदि के लिए अपने लेखों के द्वारा लोगों को प्रेरित करने में इनका योगदान बहुत महत्वपूर्ण रहा है। पर्यावरण जागरूकता के लिए श्री वर्मा निरंतर प्रयत्नशील हैं और इस पुनीत कार्य को जारी रखने की आशा के साथ इस दिशा में किये जा रहे उनके प्रयत्नों की सफलता की कामना करता हूं।

दिनांक 2.6.2003

जिला लोक सम्पर्क अधिकारी,
हमीरपुर।

NATIONAL SEMINAR

ON

ENVIRONMENT HAZARDS & SUSTAINABLE

DEVELOPMENT

November 22-23, 1999

Organized by Regional Engineering College

(Now NIT) Hamirpur (HP) – 177005

In Collaboration with

All India Council for Technical Education (AICTE) Council for Science and Industrial Research (CSIR) Centre for Urban and Rural Environment Research, Panchkula Chandigrah Regional Chapter, Institute of Town Planners (India)

Paper as Published on Pages 135-139
Our Environment

By

Acharya Rattan Lal Verma

(Suggesting many other Measures and also Demanding Imposition of Immediate Ban on Production and Use of Poly Bags as Published under para 10 of paper on pages 135-139 and reproduced in Chapter-8 of this Book)

कृपया मादक पदार्थों से सावधान रजिस्ट्रेशन न० 2/96

सर्वहित सुधार सभा हमीरपुर

(हिमाचल प्रदेश)

सन्दर्भ.............................. दिनांक..............................

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि आचार्य रत्न लाल वर्मा, निवासी हमीरपुर (हि॰प्र॰) पिछले 12-13 वर्षों से लगातार पर्यावरण जागरूकता तथा संरक्षण के लिए कार्य कर रहे हैं। पहाड़ों में बहुत ऊंचे भवनों के रूझान को कम करने, हाऊसिंग बोर्डों की कालोनियों में पेड़ लगाने, पॉलीथीन के प्रयोग पर अंकुश लगाने, हिमालय पर्वत के गिरते स्वास्थ्य को समझाने तथा बचाने के लिए इन्होंने उल्लेखनीय कार्य किया है। हिमाचल प्रदेश में सतलुज नदी में जुलाई 2000 को भीषण बाढ़ के कारण सैंकड़ों लोग और हजारों पशु मारे गये थे। उस समय विदेशी शरारत की भी बात हो रही थी। इन्होंने जनता के सामने पानी आने के सही कारण रखे तथा दूसरे देश के साथ सम्बन्धों को बिगड़ने से बचाया। बाद में रिमोट सैंसिंग एजेंसी हैदराबाद से आई रिपोर्ट में बाढ़ के वही कारण बताये गये जो इन्होंने बताये थे। पर्यावरण पर वैज्ञानिकों द्वारा भी इनके लेख रूचि के साथ पढ़े जाते हैं तथा वे उनपर कार्यवाही करते हैं। आगे आने वाले पर्यावरणीय खतरों से जीवन को बचाने के लिए प्रकृति के प्रति प्रेम तथा उसके अनुकूल जीवन शैली को अपनाने का भी प्रचार कर रहे हैं। ग्लेशियरों के पिघलने के कारणों तथा भूमि के गिरते जल स्तर को बचाने के लिए इनके सुझाव महत्वपूर्ण हैं। समय-समय पर अपने व्यय पर ही पर्यावरण सम्बन्धित समस्याओं तथा सुझावों को कई स्थानों, सेमिनारों, मंचों पर तथा अभियानों द्वारा भी उठाते रहे हैं। हिमाचल प्रदेश के साथ-साथ दूसरे राज्यों के लोगों में भी अपने प्रयत्नों से पर्यावरण सम्बन्धी जागरूकता पैदा करते रहे हैं। जो पुनीत और बहुत प्रशंसनीय काम है।

सभा आगे भी पर्यावरण सम्बन्धी इनके प्रयासों की सफलता की कामना करती है।

8/10/03

खण्ड-5

इस खण्ड में पारिस्थितिकीय तन्त्र (Eco-System) के महत्व पर प्रकाश डाला गया है।

विराट् प्रकृति के प्रांगण में पेड़ पौधों और प्राणियों का क्या स्थान और आपसी क्या सम्बन्ध है उसे लेखक के पूर्व प्रकाशित तथा यहां संकलित शोध लेखों द्वारा आलोकित करने का प्रयास किया गया है।

(1) वन्य प्राणी समस्या के अहिंसक समाधान के लिए लेखक ने स्वयं सर्वेक्षण कर एक परियोजना तैयार की जो हिमाचल प्रदेश सरकार ने स्वीकार कर अपने अधिकारियों को कार्यपालन के लिए आदेशित कर दी - *उपलब्धि*

(2) वन तथा वन्य जीव क्यों जलते हैं? मनुष्य तथा जीव-जंतुओं का आपसी क्या संबंध है?

वनों की आग बुझाने के सुझाव भी लेखक ने हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखण्ड की सरकारों को भेजे जो हिमाचल प्रदेश सरकार ने स्वीकार कर अपना लिए हैं - *उपलब्धि*

पारिस्थितिकीय तन्त्र को लाभ पहुंचाते उपाय, अधिकारवादी दृष्टिकोण, अह्म या अधिक परिश्रम से किनारा करने के कारण किस प्रकार दृष्टिविगत कर दिए जाते हैं या स्वार्थवश बड़े विलम्ब के बाद सरकारी संज्ञान का अंग बनाए जाते हैं। लाभों से वंचित क्यों रहना पड़ जाता है? पर्यावरण को आंच क्यों पहुंचती है? इसकी झलक भी इस खंड में मिल जाती है। मानवीय जीवन के अंत संबंधी नया शोध एवं निष्कर्ष भी उजागर किया गया है।

आज से लगभग 150–160 वर्ष पूर्व आरम्भ हुई औद्योगिक क्रांति से बहुत पहले पेड़–पौधों तथा पशु–पक्षियों को बनाए रखने वाली विभिन्न परम्पराएं प्रचलित थीं जो भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग थीं। बहुत से पेड़–पौधों तथा जीवों को सम्मानीय स्थान प्राप्त था। उन्हें पूजा भी जाता था। बहुत से लोग भोजन करने से पूर्व उसका एक भाग पशु–पक्षियों को दिया करते थे या उस समय उसे संरक्षित कर बाद में उन्हें दे देते थे। बहुत से उत्सवों तथा धार्मिक अनुष्ठानों पर तो इस परम्परा का दृढ़ता से पालन होता था। गाय, कुत्ता, बैल, चींटियां, काग आदि पशु–पक्षी इस परम्परा के आवृत में सदा ही रहे हैं। इसी प्रकार स्थानानुसार पेड़–पौधे पूजे भी जाते थे। उन्हें लगाना और संरक्षित रखना पुण्य का कार्य समझा जाता था। इनमें पीपल, बड़ आदि की गणना की जा सकती है। रास्तों के किनारे बड़े–बड़े छायादार वृक्ष लगाना, उनके चारों ओर लोगों के विश्राम के लिए टयाला या चबूतरा बनाने की परम्पराएं तो सामान्य रूप से प्रचलित थीं। परन्तु आज ये परम्पराएं हांफती एवं दम तोड़ती दिखाई देती हैं। पहले वनों की आग बुझाने के लिए समीप के गांवों के लोग स्वतः वनों को चले जाया करते थे। वे आग को पूरी तरह बुझा देने के बाद ही घर लौटा करते थे। परन्तु आज ऐसा नहीं है।

अब वनों को आग यदि लग जाए तो वे धड़ाधड़ जलने लगते हैं। लोग आग बुझाने अब नहीं जाते हैं। बड़े भारी सरकारी साधनों के व्यय करने के बाद भी विभाग को आग बुझाने में विलम्ब हो जाता है। सरकारी तन्त्र के पास वह सामर्थ्य अब बहुत कम बचा है जो लोगों में स्वेच्छा से आग बुझाने की प्रवृत्ति का पुनः जागरण कर सके। ऐसा भी लगता है कि कहीं–कहीं सरकारी तन्त्र संभवतः जनता के बीच से आते अच्छे और प्रभावशाली उपायों को अपने अधिकारवादी दृष्टिकोण, या किसी स्वार्थवश या अहम के कारण अपनाने से आनाकानी करने लगता है। शायद उन्हें बिन सरकारी व्यय बाहर से आते कारगर सुझाव अच्छे नहीं लगते होंगे। सरकारी कोष पर बोझ बढ़ाना या हानि होते देखना अच्छा क्यों लगता होगा?

हम पशु–पक्षियों को अपना शत्रु समझने लगे हैं। हमने उनके बहुत से रैन–बसेरे अपने लालच भरे स्वार्थ के कारण उजाड़ दिए हैं और आगे भी उजाड़ते जा रहे हैं। इनकी बहुत सी प्रजातियां विलुप्ति के कगार पर हैं। कुछ लुप्त भी

हो चुकी हैं। हिमाचल प्रदेश के वनों में कक्कड़, शलगर, भग्याड़ (भेड़िये) सकरालू, वन-बिल्ले आदि बहुतायत में थे जो अब लुप्त हो चुके हैं। पालतु पशुओं की संख्या भी बहुत कम ही रह गई है।

पेड़-पौधों की कुछ प्रजातियां भी विलुप्ति के कगार पर हैं। इनमें बणा, वसूटी, कुआर (धृत कुमारी), सांसपाई, वरया, पुठकण्डा आदि हैं। गरने की फलदार झाड़ियां तो वनों में करोड़ों की संख्या में थीं, कैंथ, मलियां, आखे आदि फल बहुतायत में पाए जाते थे जिन्हें बन्दरों सहित दूसरे जीव भी खाकर अपना पेट भरा करते थे। परन्तु इनकी संख्या वनों में अब नगण्य ही रह गई हैं।

प्रकृति ने धरती पर जीवन की जीवन पर निर्भरता बना रखी है। यहां पशु-पक्षी, पेड़-पौधे पहले आए। इन्होंने मानवीय जीवन के पनपने के लिए आधार का निर्माण किया। उसके बाद ही हम आए। यह आधार यदि निर्बल पड़ा या खिसक गया तो हमारा अस्तित्व भी खतरे में पड़ जाएगा। इसलिए इस पारिस्थितिकीय तन्त्र का विकास तथा संरक्षण हमारे अपने जीवन के हित में है। वह भी केवल आवश्यक ही न होकर परम आवश्यक है।

तीव्र गति के विकास से आकर्षित आज के मनुष्य में आगे से आगे लालच बढ़ रह है। बढ़ते इस लालच के रंग को और गहरा कर रही है बढ़ती जनसंख्या और गिरते मानवीय मूल्य। इस प्रकार त्याग सरलता तथा सर्वहिताय की भावना के खोते सामर्थ्य के कारण मनुष्य जीवन और संसाधनों के आपसी संतुलन को बनाए रखने में असफल होता जा रहा है। लालच के कारण आज जनसंख्या की वास्तविक परिभाषा न तो गढ़ी जा रही है, न समझी ही जा रही है और न प्रकृति के प्रहार की चेतावनी ही उसे ठीक प्रकार समझ आ रही है। इसके कारण वन कट रहे हैं, पशु-पक्षी विलुप्त हो रहे हैं और जनसंख्या सता रही है। स्वतन्त्रता के समय भारत की लगभग 70 प्रतिशत धरती पर वन थे। परन्तु अब यह अनुमान है कि यह अनुपात घटकर अब लगभग 35 प्रतिशत रह गया है। हम पर्यावरण एवं पारिस्थितिकीय तन्त्र के संतुलन को बचाने के लिए कितने गंभीर हैं यह इन उदाहरणों से समझा जा सकता है।

वनों को आग से बचाने के सुझाव

लेखक ने वनों की आग को शीघ्र बुझा देने के सुझाव हिमाचल प्रदेश सरकार के सम्बन्धित मन्त्री, प्रधान मुख्य अरण्यपाल सभी जिलाधीशों सहित सभी जिलों

के वन मण्डल अधिकारियों को अपने पत्रांक 1348–1380 दिनांक 30 जनवरी 2006 तथा 1538–1578 दिनांक 20.06.2006 के द्वारा भेजे। उत्तराखण्ड सरकार को भी इन्हें भेजा ताकि पर्यावरण तथा सरकारी सम्पत्ति की कम हानि हो। परन्तु केवल हिमाचल प्रदेश के एक वन मण्डल अधिकारी बिलासपुर ने अपने स्तर पर इनको लागू कर देने की सूचना लेखक को अपने पत्रांक 7347/**RK 1348-60/**आर.के. दिनांक 27 मार्च 2006 के द्वारा दी। प्रदेश स्तर के कार्यालय तथा अन्य ने कोई रुचि दिखाई हो, ऐसा नहीं लगा। परन्तु कुछ वर्षों बाद प्रदेश स्तर के कार्यालय से उन सुझावों को लागू करवाने की बात सामने आई जैसा कि लेखक के 12.1.2006, 16.09.2006, 12.3.2010 को प्रकाशित तथा यहां संकलित लेखों में इस वास्तविकता का उल्लेख है। ऐसा शायद इसलिए होगा कि किसी को यह पता न चले कि ये आग बुझाने वाले सुझाव वास्तव में किसी अन्य स्त्रोत से आये थे। इससे कर्त्तव्यनिष्ठा के स्तर की झलक तो मिल ही जाएगी यह भी पता चल जाता है कि अह्म के आगे सरकार या जनसम्पत्ति को पहुंचता लाभ किस प्रकार बौना पड़ जाता है।

"फसल तथा बंदर दोनों को तुरंत बचाने वाली परियोजना"

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

बंदरों द्वारा की जाती फसलों की बरबादी के कारण कुछ लोगों के दबाव में हिमाचल प्रदेश सरकार ने इन्हें मारने की अनुमति देने की योजना बना दी। समस्या के हिंसक समाधान से चिंतित होकर लेखक ने अपने साधनों द्वारा सर्वेक्षण कर बंदरों को मारे बिना फसलों को तुरंत बचा लेने वाली एक विस्तृत परियोजना बनाई जिसकी रूपरेखा यहां संकलित है जो 3 जून 2006 को प्रकाशित लेख में भी उजागर की गई थी। यह बंदरों को मारे बिना फसलों को तुरंत बचाने वाली परियोजना के नाम से बनाई गई थी। प्रदेश सरकार के मुख्यमंत्री सहित संबंधित उच्च अधिकारियों एवं हिमाचल प्रदेश के सभी वन मंडल अधिकारियों को यह परियोजना सर्वप्रथम लेखक ने अपने पत्रांक 1541-1563 दिनांक 20.06.2007 द्वारा भेजी तथा बंदरों को मारे बिना फसल को तुरंत बचाने वाली इस परियोजना को कार्यरूप देने का अनुरोध किया। प्रधान सचिव वन हिमाचल प्रदेश ने भी अपने पत्रांक एफएफईबी-एफ(6)5 98-11 दिनांक 7.7.2007 द्वारा इसका संज्ञान लिया है। इस प्रयोजना की विस्तृत रूप-रेखा अलग से संकलित की गई है तथा कुछ विवरण "फसल भी बचेगी और बन्दर भी" शोध लेख में भी दिया गया है।

वर्ष 2007 से समय-समय पर नियुक्त प्रदेश के प्रधान मुख्य अरण्यपालों (वन्य प्राणी) की ओर से साकारात्मक उत्तर मिलते रहे। वर्ष 2008 में वन मंत्री से इसे लागू करने का विशेष अनुरोध किया तथा उनसे इस पर चर्चा का समय मांगा। मन्त्री जी ने लेखक के पत्र का संज्ञान लेते हुए विभाग को निर्देश दिए जो मन्त्रालय के क्रमांक न्यू ओ.सा.नि. स.व.म./08/वन दिनांक 31.3.2008 में निहित है। वन मंत्री के आदेशानुसार परियोजना का आंकलन करने के पश्चात 05.09.2008 को अरण्यपाल वन्य प्राणी, धर्मशाला ने लेखक के साथ वन मंडलाधिकारी हमीरपुर के कार्यालय में बैठक कर लम्बी चर्चा की। इस बैठक में वन मण्डल अधिकारी वन्य प्राणी, हमीरपुर असिस्टेंट कजंरवेटर तथा कुछ जनप्रतिनिधि भी उपस्थित थे। इनमें पूर्व लेखा अधिकारी अमर चंद, पूर्व नियोजन अधिकारी रिपु दमन सिंह, कै. मानचंद आदि थे। इसमें समस्या पर विस्तृत चर्चा हुई तथा संतुष्ट होकर अरण्यपाल ने pilot आधार पर इस परियोजना को कार्य रूप देने के लिए

अपने पत्रांक DIII-13(Vol.II)-4170-71 दिनांक 18.12. 2008 द्वारा प्रस्ताव स्वीकृति हेतु सरकार को भेज दिया। मेरे 50 से भी अधिक पत्रों के भेजे जाने तथा अनेकों बैठकें होने पर भी सरकार द्वारा वर्ष 2011 तक कोई ठोस कार्यवाही नहीं हुई। केवल पत्राचार ही जारी रखा।

सरकार द्वारा बंदरों को मारने की अनुमति देने के कारण 'बंदरों तथा फसलों दोनों को' बचाने के मार्ग निकालने हेतु माननीय उच्च न्यायालय शिमला द्वारा सरकार को दिए गए आदेशों के परिपालन के लिए सरकार ने 06.04.2011 को शिमला में एक उच्च स्तरीय कार्यशाला का आयोजन किया। यह कार्यशाला प्रदेश सरकार के मुख्य सचिव की अध्यक्षता में हुई तथा इसमें सरकार पर मुकद्दमा करने वाली देश-प्रदेश की संस्थाओं, किसानों के कल्याण से जुड़ी संस्थाओं, पशु कल्याण से जुड़े लोगों, हिमाचल प्रदेश के प्रधान सचिव वन, सभी वरिष्ठ वन्य प्राणी अधिकारियों, हरियाणा, पंजाब तथा उत्तराखंड सरकारों के प्रमुख वन्य प्राणी अधिकारियों ने भाग लिया। इस कार्यशाला में लेखक को विशेष रूप से आमंत्रित किया गया तथा वहां अपनी "बंदर तथा फसल दोनों को तुरंत बचाने वाली परियोजना" की लेखक ने स्वयं पैरवी की।

इसके परिणामस्वरूप प्रदेश सरकार ने केवल लेखक की इस परियोजना को स्वीकृति प्रदान करते हुए अपने अरण्यपाल तथा वन मंडल स्तर के अधिकारियों को इसे Pilot आधार पर कार्यान्वयन करने के आदेश दे दिए।

इसके लिए स्थान भी चिन्हित कर लिया गया था। परन्तु किन्हीं कारणों से विभाग कार्य को आगे नहीं बढ़ा सका। वर्ष 2016 में वनमंत्री ने फिर सुझाव मांगे। लेखक द्वारा वनमन्त्री हिमाचल प्रदेश को वस्तुस्थिति से अवगत करवाने हेतु पत्र भेजने के बाद वन मंडल अधिकारी वन्य प्राणी हमीरपुर ने सरकार के आदेश पर लेखक के साथ पुन: सितम्बर 2016 में दो बार बैठकें की। परंतु सरकार द्वारा कार्यन्वयन के लिए Pilot Basis पर वर्ष 2011 में स्वीकृत तथा वन्य प्राणी अधिकारियों को आदेशित इस परियोजना पर कार्य फिर भी आगे नहीं बढ़ाया गया।

सरकार को भेजे पचासों पत्रों, विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों के साथ हुई दर्जनों बैठकों, प्रकाशित लेखक की प्रैंस वार्ताओं लम्बी चर्चाओं तथा **इस प्रकार 4 वर्षों के निरंतर सैंकड़ों प्रयासों के पश्चात अपनी उपरोक्त परियोजना को सरकार से उनके पत्रांक बन्दर उत्पात 234-37 दिनांक 18.4.2011, FAX**

– PCCF-WL-SHIMLA.0177.2624193 दिनांक 1 मई 2011 तथा बन्दर उत्पात 785 दिनांक 30 अप्रैल 2011 द्वारा स्वीकृत और सरकारी वन्य प्राणी अधिकारियों को आदेशित करवाकर लेखक ने इसे अंतिम पड़ाव पर पहुंचा दिया। इसके पश्चात सरकार एवं राज सत्ता में बैठे जन प्रतिनिधियों का दायित्व था कि वे आदेशों की परिपालना करवाते। क्षेत्रीय अधिकारियों के पास तो पेड़-पौधों एवं वनों की देख-रेख का दायित्व है परंतु सरकार के वन्य प्राणी शाखा में अधिकारियों और कर्मचारियों की बढ़ती भारी संख्या है। इसे प्रदेश में हो रहे वन्य प्राणी सम्बन्धित कार्य के संदर्भ में समीक्षात्मक दृष्टिकोण से देखा जाना उचित लगता है। सरकारी तंत्र को कभी-कभी कठिन परिश्रम से आक्रांत एवं बंचना के कारण धरातलीय वास्तविकता का ठीक-ठीक ज्ञान शायद नहीं होता है। इसके कारण भी समस्याएं अनसुलझी रह जाती हैं। यह स्थिति भी ठीक न होकर जनता पर भारी पड़ती दिखती है। स्थितियां यदि ऐसे ही जारी रहीं और हमने अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं किया तो पशु-पक्षी विलुप्ति की ओर बढ़ जाएंगे। पशु-पक्षियों की यह विलुप्ति मनुष्य पर भारी पड़ेगी।

किसानों को अहिंसक ढंग से राहत पहुंचाने, फसल, पर्यावरण और परिस्थितिकीय तंत्र को बचाने में हम यदि गंभीर नहीं हुए, कठिन काम करने और कुशलता के साथ अपना दायित्व निभाने में टाल-मटोल करते हुए संसाधनों पर स्वयं भी भारी बोझ बनते रहे तो प्रकृति हमें क्षमा नहीं करेगी। **इसके परिणामस्वरूप इसी शताब्दी में अपने अवसान के साथ हमें परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं।**

जिनके कंधों पर पर्यावरण को बचाने का दायित्व है वे इसे बचाने के प्रति पूर्ण रूप से गंभीर यदि नहीं हुए तो संसार में ध्वस्त होते पर्यावरण को कैसे बचाया जा सकता है। यह प्रश्न देश और संसार की नीति-निर्धारक संस्थानों से उत्तर चाहता है।

(पाठकों शोधकर्त्ताओं एवं विचरकों की सुविधा एवं आंकलन के लिए बंदर तथा फसल दोनों को तुरंत बचाने वाली परियोजना का अंग्रेजी में अनुवाद, इसकी सरकारी स्वीकृति, एवं कार्यन्वयन हेतु सरकारी आदेश के साथ वनों की आग बुझाने के सुझावों एवं उपायों संबंधी प्रमाण भी चित्रित कर दिए गए हैं। संबधित समाचार पत्र आदि का विवरण भी लेख के अंत में नीचे दिया गया है।)

कार्यालय वन, पर्यावरण तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मन्त्री हिमाचल प्रदेश

संलग्न पत्र आचार्य रत्न लाल वर्मा, प्रान्तीय अध्यक्ष, जैमिनी अकादमी, हिमाचल प्रदेश शाखा, क्षेत्रीय अस्पताल के सामने वार्ड न0 5, हमीरपुर से माननीय वन मन्त्री महोदय को प्राप्त हुआ जिसके साथ इन्होंने बंदरों आदि जगली जानवरों द्वारा फसलों को पहुँचाई जा रही हानि एवं आतंक से बचने के लिए परियोजना तैयार की है, की प्रतिलिपि साथ सलग्न की है । माननीय मन्त्री महोदय ने चाहा है कि अतिरिक्त मुख्य सचिव, वन, उक्त मामले में उचित कार्यवाही करें जैसी कि आज दिनांक 29फरवरी 2008 को वन विभाग की समीक्षा बैठक में चर्चा हुई ।

अतिरिक्त मुख्य सचिव, वन, हिमाचल प्रदेश सरकार कृप्या उक्त मामले में उचित कार्यवाही करे जैसा कि माननीय मन्त्री महोदय ने चाहा है तथा की गई कार्यवाही से इस कार्यालय को भी सूचित करें ताकि माननीय मन्त्री महोदय को वस्तुस्थिति से अवगत कराया जा सके ।

निजी सचिव
वन मन्त्री,हि0प्र0।

अतिरिक्त मुख्य सचिव, वन,
हिमाचल प्रदेश सरकार ।

यू0ओ0स0नि0स0 / व0म0 / 08 / वन / 627 दिनांक 3/03/08

प्रतिलिपि आचार्य रत्न लाल वर्मा, प्रान्तीय अध्यक्ष, जैमिनी अकादमी, हिमाचल प्रदेश शाखा, क्षेत्रीय अस्पताल के सामने वार्ड न0 5, हमीरपुर को सूचनार्थ प्रेषित है ।

निजी सचिव
वन मन्त्री,हि0प्र0।

No.WL/Human Animal Conflict/WLM/ 7983

Himachal Pradesh Forest Department
Dated Shimla-171001, the 22.3.11

To

Acharya Rattan Lal Verma,
Opposite Zonal Hospital, Ward No. 5.
District Hamirpur-177001.

Subject: **One Day Consultative Workshop on Human-Monkey Interface at Armsdale Building, HP Secretariat Chhota Shimla on 6th April, 2011.**

Sir/Madam,

As per the directions of the Hon'ble High Court in CWP No. 8149 of 2010 titled *People for Animals Vs State of HP and others* the Wildlife Wing of HP Forest Department is organizing one day consultative Workshop on Human-Monkey & other wild animals conflict issues as per details below.

Date:	**6th April, 2011**
Venue:	**Conference Hall, Armsdale Building,**
	HP Secretariat, Chhota Shimla-171002
Time:	**10.00 AM onwards**

Wildlife Wing is keen to address human monkey and other wild animals conflict issues with the effective participation and support of all stakeholders. You being an important stakeholder in identifying a tangible and practical implementable solution to the problem of human animal conflict, you are invited to attend the workshop to give your valuable inputs and suggestions. Your contribution is highly solicited in this workshop.

You are, therefore, requested to attend the Workshop on aforesaid venue, date and time. For any details in this regard please feel free to contact this office on telephone no. **0177-2624193/2625205**.

Kindly confirm your participation at the earliest.

Yours Sincerely

(signature) 27/3/11

PCCF (WL)-cum-Chief Wildlife Warden
HP Talland, Shimla-171001.

संख्या - बन्दर डब्याट /

हिमाचल प्रदेश वन विभाग
वन्य प्राणी प्रभाग

दिनांक, शिमला - 1 15.4.11

प्रेषक :- प्रधान मुख्य अरण्यपाल
वन्यप्राणी एंव
मुख्य वन्यप्राणी संरक्षक
हि० प्र०

प्रेषित :- अरण्यपाल हमीरपुर

विषय :- बन्दरों को मारे बिना फसलों को तुरन्त बचाने की परियोजना - बन्दर सर्वेक्षण रिपोर्ट।

आपन :- आशीष रतन लाल वर्मा, निवासी प्रदीप अस्पताल के सामने वार्ड नं० 5 हमीरपुर (हिमाचल प्रदेश) द्वारा तैयार की गई 'बन्दरों को मारे बिना फसलों को तुरन्त बचाने की परियोजना' आपको आगामी कार्यवाही हेतु भेजी जाती है। कृपया इस परियोजना को कार्यरूप देने हेतु वनमण्डलाधिकारी हमीरपुर को कहा जाये। इनसे परियोजना को कार्यरूप देने के लिए किसी भी तरह की तकनीकी सलाह की आवश्यकता हो तो अरण्यपाल (वन्यप्राणी) धर्मशाला व वन मण्डलाधिकारी (वन्यप्राणी) हमीरपुर से प्राप्त करें। अतः कृत कार्यवाही से इस कार्यालय को अवगत कराया जाये।

संलग्न : उपरोक्त

ओ० गुलाटी
16/4/11
प्रधान मुख्य अरण्यपाल (वन्यप्राणी)
एवं मुख्य वन्यप्राणी संरक्षक, हि० प्र०

पृष्ठांकन संख्या - बन्दर डब्याट / 234-37 दिनांक 18/4/11

प्रतिलिपि निम्नलिखित को प्रेषित है :—

1. अरण्यपाल (वन्यप्राणी) धर्मशाला व वन मण्डलाधिकारी (वन्यप्राणी) हमीरपुर को आशीष रतन लाल वर्मा द्वारा तैयार की गई परियोजना सहित भेजी जाती है। इस परियोजना को क्रियान्वित करने और अरण्यपाल हमीरपुर व वन मण्डलाधिकारी हमीरपुर किसी भी प्रकार की तकनीकी सहायता की आवश्यकता हो, तो कृपया इन्हें पूरा सहयोग दें।
2. वन मण्डलाधिकारी हमीरपुर को आशीष रतन लाल वर्मा की परियोजना सहित प्रेषित है। कृपया इस परियोजना

पृष्ठ - 1

हिमाचल प्रदेश वन विभाग, वन्य प्राणी प्रभाग
संख्या-बन्दर उत्पात/ 185

प्रेषक:-

प्रधान मुख्य अरण्यपाल (वन्यप्राणी)
एवं मुख्य वन संरक्षक हि०प्र० ।

प्रेषित:-

आचार्य रत्न लाल वर्मा
क्षेत्रीय अस्पताल के सामने वार्ड न0 5
हमीरपुर जिला हमीरपुर हिमाचल प्रदेश ।

दिनांक, शिमला-1, 30.4.11

विषय:- श्री वी. के. सिंह अरण्यपाल (वन्य प्राणी) उत्तरी वृत तथा आचार्य रत्न लाल वर्मा के साथ 05.09.2008 को हमीरपुर में बन्दर तथा फसल दोनों को बचाने वाली रत्न लाल वर्मा द्वारा बनाई परियोजना पर विस्तृत चर्चा हेतु हुई बैठक तथा इसके कियान्वयन की दिशा में उस पर विभाग द्वारा तैयार अनुमान (धनराशि) की स्वीकृति के सम्बन्ध में ।

महोदय,

आपके पत्र संख्या 211-2011 दिनांक 14.04.2011 व इस कार्यालय के पृष्ठाकंन सम संख्या 234-37 दिनांक 18.04.11 के सन्दर्भ में ।

2. उपरोक्त विषय के सन्दर्भ में सूचित किया जाता है कि आपके पत्र संख्या शून्य दिनांक शून्य द्वारा भेजी गई परियोजना "बन्दरों को मारे बिना फसलों को तुरन्त बचाने हेतु" स्वीकृत कर Pilot Bassis पर कार्य करने हेतु अरण्यपाल हमीरपुर को इस कार्यालय के पत्र संख्या बन्दर उत्पात/ 233 दिनांक 18.04.2011 द्वारा भेजी जा चुकी है । साथ ही अरण्यपाल हमीरपुर को इस परियोजना को वन मण्लाधिकारी हमीरपुर द्वारा कार्यरुप देने हेतु आवश्यक निर्देश दिए गए हैं । अतः इस बारे अरण्यपाल हमीरपुर से सम्पर्क करें ।

भवदीय,

प्रधान मुख्य अरण्यपाल (वन्यप्राणी)
एवं मुख्य वन संरक्षक हि0प्र0 ।

पृष्ठाकंन संख्या: बन्दर उत्पात/ दिनांक

प्रतिलिपि अरण्यपाल हमीरपुर को इस कार्यालय के पत्र संख्या बन्दर उत्पात/ 233 दिनांक 18.04.2011 के सन्दर्भ में सुचनार्थ एवं आवश्यक कार्यवाही हेतु प्रेषित है ।

प्रधान मुख्य अरण्यपाल (वन्यप्राणी)
एवं मुख्य वन संरक्षक हि0प्र0 ।

3-5-2011

नसबंदी करवा कर फैंसिंग में रखे जाएंगे 500 बंदर

मिलेगी राहत बिझड़ी में शुरू होगा पायलट प्रोजेक्ट, वन विभाग की प्रोजेक्ट को स्वीकृति, रतनलाल वर्मा ने तैयार किया है प्रोजेक्ट, साल में खर्च होंगे 23 लाख

भास्कर न्यूज़ | हमीरपुर

बंदरों को मारे बगैर फसलों को बचाने की परियोजना के लिए हमीरपुर जिला के बिझड़ी में विशेष पायलट प्रोजेक्ट की शुरुआत शीघ्र ही हो रही है। इस पायलट प्रोजेक्ट की प्रधान अरण्यपाल(वन्य प्राणी) ने स्वीकृति प्रदान कर दी है। प्रोजेक्ट को लेकर वन, अरण्यपाल और वाइल्ड लाइफ ने कई बैठकें कर इसे क्रियान्वयन के लिए सारी योजना को आखिरी रूप दे दिया है।

इस विशेष परियोजना में नसबंदी करवा कर 500 बंदरों को फैंसिंग एरिए में रखा जाएगा। यदि यह परियोजना कामयाब रही, तो ऐसा प्रदेश के अन्य उन इलाकों में भी होगा, जहां बंदर किसानों के लिए सिर दर्द बने हुए हैं। प्रोजेक्ट को शुरू करने के लिए बीते रोज अधिकारियों की विशेष बैठक हो चुकी है, अब 10 मई को अरण्यपाल हमीरपुर के नेतृत्व में गठित टीम बिझड़ी में उस क्षेत्र का दौरा कर, प्रोजेक्ट को अमलीजामा पहनाने की दिशा में काम करेगी।

शुरुआती खर्च सरकार का बाद में पंचायत के हवाले

प्रोजेक्ट पर शुरुआती खर्चा सरकार करेगी, बाद में इसे स्थानीय पंचायतों के हवाले किया जाएगा। प्रोजेक्ट का फैंसिंग एरिया कितना होगा, कहां होगा, इसकी पहचान भी आचार्य रतनलाल वर्मा ने की हुई है। वर्मा बीते तीन साल से इस प्रोजेक्ट पर काम कर रहे हैं। लंबे प्रयासों के बाद इस पर विभाग और सरकार ने मोहर लगाई है।

एक बंदर पर रोजाना खर्चेंगे 10 रुपए

फैंसिंग एरिए पर 35 लाख का खर्च होगा, लेकिन यह अनुमान 3 साल पुराना है, लिहाजा यह खर्च 50 लाख तक पहुंचेगा। हरेक बंदर पर रोजाना 10 रुपए खर्च होगा, यानि डेढ़ लाख प्रति माह बंदरों पर खर्च होगा। साल भर का खर्च 23 लाख बैठेगा। दरअसल हरेक बंदर का नसबंदी का कुल खर्चा करीब एक हजार रुपए बनता है। प्रोजेक्ट का मकसद तमाम बंदरों को फैंसिंग एरिए में रखना है ताकि वे फसलों को न उजाड़ें। परियोजना में कई बातें हैं जैसे बंदर अरण्य(घेरे में या खुले में) नसबंदी, फलदार पौधे, रोजगार, पर्यटन को बढ़ावा, बंदरों के लिए भोजन सामग्री एवं इससे आय आदि शामिल किया गया है। विभागीय गिनती के मुताबिक प्रदेश में कुल 3 लाख बंदर हैं। बंदरों को मारे जाने को लेकर हाइकोर्ट ने प्रतिबंध लगाया है। उस दिशा में ही यह परियोजना पायलट आधार पर शुरू की जा रही है। प्रोजेक्ट तैयार करने वाले रतनलाल वर्मा का कहना है कि उनके प्रयासों को लंबे समय बाद कोई पड़ाव मिला है। वे बंदरों को मारने के विरोधी रहे हैं।

केंद्रीय स्वीकृति रहेगी महत्वपूर्ण

फैंसिंग एरिए में बंदरों को रखने के लिए वाइल्ड लाइफ विभाग को केंद्र से स्वीकृति लेनी पड़ेगी। क्योंकि बंदरों को खास एरिए में प्रतिबंधित कर निश्चित क्षेत्र में सीमित करके रखा जाएगा। यह स्वीकृति अभी मिलनी बाकी है। यदि स्वीकृति मिल गई, तभी यह प्रोजेक्ट फाइनल रूप में सामने आएगा।

10 मई तक आएगी टीम

कंजरवेटर संजय सूद ने बताया कि प्रोजेक्ट पर काम शुरू हो गया है। प्रधान मुख्य अरण्यपाल (वन्य प्राणी) एवं मुख्य वन संरक्षक हिमाचल प्रदेश के आदेशों के तहत पायलट आधार पर आगामी 10 मई को एक टीम बिझड़ी क्षेत्र में जाएगी। प्रोजेक्ट के बेसिक आधार पर काम शुरू करेगी। उसकी सारी रिपोर्ट पंचायतों की राय के आधार को सरकार को भेजेगी ताकि काम शुरू हो सके।

दैनिक भास्कर (हिमाचल) - शिमला 6-5-2011
दि भास्कर 6 मई 2011

तथा दैनिक जागरण
अमर उजाला
दिव्य हिमाचल
पंजाब केसरी
आपका फैसला

क्रमांक संख्या 7345/RK
वन विभाग हिमाचल प्रदेश
दिनांक बिलासपुर 27/03/2006

प्रेषक:-

वन मण्डलाधिकारी
बिलासपुर वन मण्डल
बिलासपुर हि॰प्र॰

प्रेषित:-

आचार्य रतन लाल वर्मा
प्रिया आर्ट पैलेस के सामने
हमीरपुर – 177001

विषय:-

वनों को आग से रक्षा हेतु समाचार पत्रों के सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित जानकारी।

महोदय,-

उपरोक्त पत्र संख्या 1340-60 दिनांक 30-1-2006 के सन्दर्भ में।

2. उपरोक्त पत्र द्वारा दैनिक जागरण में दिन 12-1-2006 को प्रकाशित लेख जो कि वनों को आग से रक्षा हेतु सम्बन्धित है इस कार्यालय में प्राप्त हुआ है। आपके द्वारा प्रकाशित लेख में वनों-आग से रक्षा हेतु किए गए सुझाव बहुत सराहनीय हैं। इन सुझाव को कारगर ढंग से लागू करने हेतु सम्बन्धित कर्मचारियों को निर्देश दे दी गई हैं। आगामी आपके सुझाव में यह भी लाया जाता कि हर वर्ष जंगलों को कन्ट्रोल बर्निंग व फायर लाईनों का रख रखाव किया जाता है। अतः आपसे अनुरोध है कि भविष्य में भी आपके बहुमूल्य सुझावों से वन विभाग को अवगत करवाते रहें।

भवदीय

वन मण्डलाधिकारी
बिलासपुर वन मण्डल
बिलासपुर (हि॰प्र॰)

दैनिक जागरण हमीरपुर 4-2-2006

लगाने के निर्देश दिए गए हैं।

4 Feb-2006 - JAGRAN

जनता भी उठाए वन रक्षा की जिम्मेदारी : वर्मा

हमारे प्रतिनिधि, हमीरपुर

पर्यावरणविद् आचार्य रत्न लाल वर्मा ने जंगल में लगने वाली आग पर चिंता जताते हुए कहा कि प्रति वर्ष वनों में आग से करोड़ों रुपए की वन संपत्ति जल कर राख हो जाती है। उन्होंने कहा कि वनों में आग पहले भी लगती थी, लेकिन लोग वनों में आग लगते ही आग बुझा देते थे। आज स्थिति यह है कि वनों में लगी आग बुझाने में लोग दिलचस्पी ही नहीं लेते हैं।

प्रदेश सरकार को भेजे जंगल की आग से रक्षा के सुझाव

उन्होंने कहा कि वनों में लगी आग को बुझाने का कार्य वन विभाग या वन निगम के कर्मचारियों के भरोसे ही रहता है। इसमें भी व्यक्तिगत कुशलता का स्तर व सरकारी छुट्टियों की बढ़ती संख्या के कारण बाधा पहुंचती रहती है। बिरोजा के कारण आग चारों और फैल जाती है और लंबे समय तक लगी रहने से सैकड़ों पेड़ व वन्य जीवों को जला डालती है। वर्मा ने बताया कि उन्होंने सरकार व जनता के सामने वनों की आग से रक्षा के सुझाव रखे हैं। आग से रक्षा का दायित्व उन लोगों को दिया जाना चाहिए, जो वनों से धन कमाते हैं।

पंचायतों को भी वनों की रक्षा में भागीदार बनाया जा सकता है। जो लोग चीड़ के पेड़ से बिरोजा निकालते या निकलवाते हैं, उन्हें भी इस दायित्व के घेरे में लाया जाए। जहां संभव हो घास का लोगों को अधिकार दिया जाना चाहिए, ताकि लोग समय समय पर चीड़ के गिरे सूखे पत्तों व सूखी झाड़ियों को हटाते रहें।

इसके लिए यह आवश्यक है कि पेड़ों से बिरोजा निकासी की निविदाओं का निपटारा प्रति वर्ष दिसंबर मास में किया जाए व उनमें आग बुझाने के उत्तरदायित्व व इसके बदले में दी जानी वाली सुविधाओं का वर्णन हो, जिससे संबंधित लोगों का आग बुझाने की योजना बनाने तथा प्रबंध के लिए पर्याप्त समय मिल सके। इस समय यह निविदाएं बिरोजा निकासी के समीप के समय में ही ली जाती है।

बिरोजा की निकासी मार्च में आरंभ होती है व इसके साथ ही आग का डर भी शुरू हो जाता है। उन्होंने बताया कि अपने कई सुझाव उन्होंने मुख्यमंत्री, प्रधान मुख्य अरण्यपाल, जिलाधीशों व सभी जिलों के वन मंडल अधिकारियों को पत्रों भेजे हैं। (15)

पर्यावरणविद आचार्य रत्न लाल वर्मा हमीरपुर में पत्रकारों को संबोधित करते हुए।

वनों की सिकुड़न से आई वन्य प्राणियों पर आफत

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

किसानों के लिए जंगली पशु-पक्षी उनके खेतों की लहलहाती फसलों को बर्बाद कर उन्हें हानि पहुंचाने का कारण बनते जा रहे हैं। पहले वनों के समीप एक-दूसरे से प्रयाप्त अंतर पर जो इक्का-दुक्का घर हुआ करते थे, वे आज छोटे-मोटे गांव का रूप धारण कर चुके हैं। वनों की इस प्रकार होती सिकुड़न तथा चप्पे-चप्पे पर मानवीय हस्तक्षेप के कारण वनों में अपना बसेरा करने वाले पशु-पक्षियों के लिए अपने आहार की खोज में तय किया जाने वाला रास्ता अब इन छोटे-मोटे गाँवों से होता हुआ पुराने उन बड़े गांवों तक पहुंचता जा रहा है, जहां पहले बंदर या गीदड़ तक फटका नहीं करते थे। वन्य प्राणियों के इस प्रकार आहार की खोज में निकलने से छोटे होते रास्तों के कारण कहीं-कहीं प्रभावित होती जा रही है किसानों की कुछ फसलें।

पहले जंगलों के आसपास इक्का-दुक्का घर ही हुआ करते थे, पर अब छोटे-छोटे गांव बस गए हैं। वनों की सिकुड़न तथा जगह-जगह मानवीय हस्तक्षेप से पशु-पक्षियों को अपना आश्रय स्थल बनाना व आहार ढूंढना तक कठिन होता जा रहा है।

बंदरों को तो मक्की, कद्दू, खीरा, फल आदि स्वादिष्ट तो लगते ही हैं, पर तोते तथा गिलहरियां भी इस दौड़ में पीछे नहीं रहती हैं। जब-जब फसल का समय आता है, तब-तब इन पशु-पक्षियों से मुक्ति पाने की चर्चा भी सुलगती आग की तरह ऊपर उठती और फसल के खेत-खलिहानों से घर के भीतर आने तक समाप्त हो जाती हैं। इन पशु-पक्षियों का क्या किया जाए और फसलें बचाई कैसे जाएं? इस पर विचार या मंथन करने से पहले हमें दृष्टिपात करना पड़ेगा जीवन चलाने और बनाने वाले उन अवयवों, पर जिनके बिना यह कठिन एवं असंभव है।

मानव ने अनंत आकाश में विकास की ऊंची जो छलांग लगाई है, उसके लिए उसने बहुत कुछ पशु-पक्षियों से भी सीखा है और उनसे प्रेरणा भी पाई है।

यदि जीव अस्तित्व में न होते, तो मानवीय उन्नति का रास्ता इतना लंबा न होता, जितना लंबा यह आज है। प्रकृति ने जीवन की जीवन पर निर्भरता बना रखी है। अर्थात पशु-पक्षी और मानवीय समाज प्रकृति की जीव जाति का अभिन्न अंग हैं। हिंसक न होने वाले जानवरों को मारने की बात पर पुनर्विचार अवश्य किया जाना चाहिए।

आज हमारे आकाश से सफेद तथा काले रंग की चीलें एवं कौउए गायब होने लगे हैं। **यदि पशु-पक्षियों को मारने की ओर लोगों का रुझान बनने और बढ़ने लगा, तो कल को बंदर, तोते तथा दूसरे पशु-पक्षी भी गायब हो सकते हैं। रह जाएगा फिर अकेला मानव, जीव विभिन्नता के समाज से अलग नीरसता एवं शुष्कता की अग्नि में तपने और अपने हाल पर आंसू बहाने के लिए।**

दिव्य हिमाचल धर्मशाला 'हमीरपुर टुडे' 28 से 4 नवंबर, 2003 में प्रकाशित

हिमाचल में जलते वन और वन्य जीव

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मानवीय जीवन की उत्पत्ति तथा प्रारंभिक विकास वनों तथा कंद्राओं में हुआ है। उन्हीं वनों और कंद्राओं में से होता हुआ मनुष्य आधुनिक सभ्यता के वर्तमान पड़ाव पर पहुंचा है। परंतु आश्चर्य की बात है कि अपने जीवन के उद्‌गम स्त्रोत उन्हीं वनों तथा कंद्राओं को उन्हीं के आश्रय में पले और बढ़े मानव से आज भयानक भय उत्पन्न हो गया है। पर्यावरण के बिना न जी पाने वाला मानव स्वयं पर्यवरण को नष्ट करता जा रहा है।

कालचक्र के बीच पुन: अपने अंत की ओर बढ़ती शरद ऋतु ग्रीष्म को अपने द्वार खोलने का निमंत्रण देती जा रही है। इन कपाटों के खुलते ही धधकती आग की भस्मीभूत करने वाली लपटें हरे भरे वनों के कई पेड़ों के साथ-साथ अनेकों प्रजातियों के पशु-पक्षियों की ओर लपक पड़ेंगी। गांव-गांव तथा कस्बे-कस्बे में अहिंसा का दम भरने वाले हजारों लोग चुपचाप हिंसा को फिर देखते रहेंगे। वनों में फिर कहीं-कहीं दिखाई देंगे चीड़ के सूखे काले-काले ऊंचे पेड़, राख और वन्य प्राणियों के कई अस्थि पंजर। चिंता करने और आंसू बहाने के लिए फिर रह जाएंगे वन विभाग और वन निगम के इने-गिने कर्मचारी।

हिमाचल के वनों में मूल्यवान चीड़, देवदार और खैर के पेड़ हैं। परंतु आग से अधिक हानि वहां ही होती है, जहां चीड़ के पेड़ हैं। चीड़ के पेड़ों से एक मूल्यवान तरल पदार्थ निकलता है जो बिरोजे के नाम से जाना जाता है। यह बिरोजा अधिक ज्वलनशील होने के कारण आग को शीघ्र पकड़ लेता है। गर्मी में पेड़ों की नीचे गिरी बारीक तथा असंख्य पत्तियों के कारण यदि किसी कारण आग की कोई चिंगारी उन्हें छू ले तो आग भड़क उठती है और तेजी से चारों ओर फैलने लगती है। इसके कारण सरकार को भी करोड़ों रुपए की हानि हो जाती है।

इस प्रदेश में चीड़ के ये वन लगभग सभी जगह पाए जाते हैं। इनका प्रबंधन हिमाचल प्रदेश सरकार के वन विभाग तथा वन निगम के हाथ में है। इन वनों के पेड़ों को मुख्य रूप से दो भागों में बांटा जा सकता है। एक सरकारी क्षेत्र के चीड़ के पेड़। दूसरे निजी क्षेत्र के पेड़। निजी क्षेत्र के चीड़ के पेड़ों का बिरोजा तो उनके मालिक स्वयं निकलवाते हैं। परंतु इसके विपणन आदि की अनुमति

विभाग से लेनी पड़ती है। सरकारी क्षेत्र के पेड़ों का बिरोजा राज्य वन निगम निकलवाता है।

हिमाचल प्रदेश में 2004-05 में लगभग 84 हजार क्विंटल बिरोजा निकाला गया। प्रदेश के निजी क्षेत्र के पेड़ों से वर्ष 2004-05 में लगभग 3200 क्विंटल बिरोजा निकाला गया। बिरोजा निकालने के लिए पेड़ों में टक लगाए जाते हैं। प्रदेश में निजी क्षेत्र में वर्ष 2002-03 में ऐसे टकों की संख्या लगभग आठ लाख सात हजार थी। परंतु वर्ष 2004-05 में ऐसे टकों की संख्या नौ लाख आठ हजार के आस-पास थी। बिलासपुर, हमीरपुर तथा ज्वालामुखी के क्षेत्र में वर्ष 2004-05 में लगभग 7000 क्विंटल बिरोजा सरकारी क्षेत्र के पेड़ों से निकला। यहां इस वर्ष लगभग पौने दो लाख टक लगाए गए। चीड़ के इन पेड़ों की गिनती वन विभाग प्रत्येक 5 वर्ष में करवाता है। बिरोजा देने वाले पेड़ों को वन विभाग प्रतिवर्ष फरवरी मास में राज्य के वन निगम को सौंप देता है। वन निगम लेबर सप्लीमैंट योजना के अधीन प्रतिवर्ष एक क्विंटल बिरोजे को इकाई मानकार बिरोजा निकालने के लिए निविदाएं आमंत्रित करता है। बिरोजा निकालने का काम पूरी ग्रीष्म और वर्षा ऋतु में होता रहता है। इस प्रकार चीड़ के ये पेड़ नवंबर मास तक वन निगम के ही हवाले रहते हैं।

वन निगम बिरोजे को बिलासुर तथा नाहन की सरकारी फैक्ट्रियों को भेज देता है। इस बिरोजे से तारपीन का तेल तथा पक्के बिरोजे का उत्पादन होता है। इसके पश्चात इनका विपणन होता है। निजी क्षेत्र के बिरोजे की बिक्री आवश्यक अनुमति के पश्चात खुले बाजार में की जा सकती है। बाजार में बिरोजे का भाव 31 रुपए प्रति किलो से कम नहीं है। इस प्रकार सरकार को बिरोजे के रूप में अरबों की आय प्रतिवर्ष चीड़ के इन वनों से हो जाती है।

राज्य की आय का यह सिलसिला प्रति वर्ष मार्च मास से आरंभ हो जात है। इसी महने इन पेड़ों से बिरोजा निकालने की प्रक्रिया भी प्रारंभ हो जाती है और फिर इसी के साथ सताने लगता है इन वनों को आग का भय। इसी आग से फिर झुलस जाती है सरकार और जनता की अरबों रुपए की वन संपदा। इन वनों में चाहे कम ही सही, परंतु आग पहले भी लगा करती थी। उस आग को बुझाने वाली इतनी असावधानी तथा निर्बल व्यवस्था पहले नहीं थी, जितनी निर्बल और असावधानीपूर्ण आज है।

आज से 45 वर्ष पूर्व तक वनों में लगी आग को बुझाने अन्य लोगों के साथ लेखक के पिताजी भी आधी रात को बिस्तर से उठकर चले जाया करते थे। एक बार लेखक के पैतृक गांव पुराने कांगड़ा के बिझड़ी गांव के जंगल में आग लग गई। लेखक के पिता जी स्व. श्री लक्ष्मण दास सोनी भी गांव के अन्य लोगों के साथ रात्रि लगभग 10 बजे आग बुझाने घर से चले गए। उनके साथ सीता राम, सोहनलाल, बृजलाल, भगवाना राम, भगत राम आदि भी गए। दूसरे दिन सुबह के लगभग 8 बजे आग के बुझने के बाद ही पिताजी घर लौटे। **उन दिनों लोग स्वयं और स्वेच्छा से आग बुझाने वनों में चले जाते थे और आग बुझाकर ही घर लौटते थे। परंतु आज वनों में लगी आग की लोगों को तनिक भी परवाह नहीं होती। उनके लालच के लिए सारा प्रदेश, देश, संसार यहां तक कि ब्रह्मांड भी छोटा पड़ जाएगा।**

आग से बचाव हेतु सुझाव– जो लोग चीड़ के पेड़ों से बिरोजा निकालते या निकलवाते हैं उन्हें भी इस दायित्व के घेरे में लाया जाए। जहां तक संभव हो घास के लिए वन की रखवाली करना तथा इस प्रकार उगे घास का गांव वालों को अधिकार दिया जाना चाहिए, ताकि वे समय-समय पर चीड़ के गिरे सूखे पत्तों तथा सूखी झाड़ियों को हटाते रहें।

इसके लिए संबंधित पंचायतों को भी उत्तरदायित्व दिया जाना चाहिए। बिरोजा निकालने के लिए निविदाओं का निपटारा प्रतिवर्ष दिसंबर में कर दिया जाना चाहिए। इससे लोगों या संस्था को अपने आवंटित क्षेत्र में आग से सुरक्षा हेतु देख-रेख और सूखी पत्तियों को हटाने के लिए योजना बनाने हेतु गर्मियां आरंभ होने से पहले पर्याप्त समय मिल जाएगा। इस प्रकार आग से सुरक्षा तथा आग लगने की स्थिति में गुण दोष के आधार पर संबंधित लोगों के विरुद्ध दंडात्मक कार्रवाई का प्रावधान भी किया जाना चाहिए।

कहीं ऐसा न हो कि बढ़ते लालच तथा निर्बल पड़ती त्याग और संतोष की भावना हमारे समूचे पर्यावरण को नष्ट कर डाले। ऐसे में चांद तथा मंगल पर फैक्ट्रियां लगाने का सपना तो पूरा नहीं हो पाएगा, परंतु मानव का बाईसवीं सदी में प्रवेश कर पाना असंभव अवश्य हो जाएगा।

दैनिक जागरण धर्मशाला 12 जनवरी 2006 (सम्पदकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

मनुष्य के लिए घातक पारिस्थितिकीय असंतुलन

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

हमारी धरती प्रकृति द्वारा प्रकृति के बीच प्राकृतिक क्रियाओं द्वारा बनी है। पृथ्वी की गतिशीलताओं के रूपों द्वारा फिर बनी इसकी ऊपरी मिट्टी और बना जीवन के अनुकूल वातावरण। फिर जलवायु के अनुकूल विकसित होने लगी अनेकों वनस्पतियां, परिस्थितियां और जीवों की प्रजातियां। इन सबकी उपस्थिति में ही हमारे पूर्वज इस धरा पर आए। इस प्रकार मानवीय जीवन का अन्य जीवों के साथ अपने पोषण, निखार और विकास के लिए परस्पर निर्भरता का संबंध स्थापित हुआ। जीवन की रचना तथा उसका विकास क्रमिक रूप से होने के कारण इन सभी के भोजन का क्षेत्र आरंभिक काल में विस्तृत बना रहा। परंतु जैसे-जैसे सृजन और विकास की कड़ियां आगे से आगे जुड़ती गईं वैसे-वैसे जीवों का आकार प्रकार, दांत, जबड़ों और पाचन प्रणाली के अनुसार उनके भोजन का क्षेत्र भी चिन्हित होता गया। इसी ही के साथ फिर परखी गई भोजन की गुणवत्ता और निर्धारित हुई उसकी मात्रा भी। सभी जीवों को स्वस्थ पुष्ट बड़ा आकार मिला और साथ में सुख, चैन, एवं शांति का स्वच्छ पर्यावरण मिला। जीवन के पोषण और विकास ने जीवों की आपसी निर्भरता के संबंध को पारिस्थितिक तन्त्र के रूप में समझने में हमारी सहायता की। यह संबंध प्राकृतिक न्याय के तराजू पर जब तक संतुलनात्मक ढंग से टिका रहा तब तक जीवधारियों का बड़ा आकार और लंबी एकल आयु के साथ व्यक्तिगत सुख-शांति एवं संतोष बना रहा। परंतु निरंकुश मानवीय अधिकार की बढ़ती प्रवृत्ति के चलते एकांगी धारणाओं, त्रुटिपूर्ण एवं अपूर्ण कुछ परिभाषाओं के कारण मनुष्य ने शिक्षा के इतने चकाचौंध उजाले में भी आवश्यक इस तंत्र अर्थात् इकोसिस्टम को डगमगा दिया है।

मानव अन्य जीवधारियों के साथ एवं सहयोग के बिना अपना वंश नहीं चला सकता है। इसके बिना चिरस्थायी विकास असंभव है। जीवधारियों के खोते संबंध के संतुलन की आकृति बढ़ती हुई जनसंख्या तथा हमारे सहयोगी अन्य कुछ पशुओं के वर्तमान और पुराने आंकड़ों पर दृष्टि डालने से स्पष्ट हो जाती है। हिमाचल प्रदेश को ही लें तो 1971 में यहां की जनसंख्या 34 लाख 60 हजार थी। यह जनसंख्या 1981 तथा 1991 से उतरोत्तर बढ़ती हुई 2001 की जनगणना

में 60 लाख 77 हजार 9 सौ तक पहुंच गई है। वन्य जीवन को छोड़ कर हमारे इर्द-गिर्द बस्तियों एवं गांवों में पाए जाने वाले दुधारू तथा दूसरे पशुओं की संख्या पर यदि हम दृष्टिपात करें तो पता चलेगा कि इनकी संख्या का रुझान बढ़ने की अपेक्षा घटने की ओर है। वह भी समय था जब किसी निर्धन व्यक्ति के मकान या झोंपड़ी में भी कोई न कोई दुधारू पशु अवश्य होता था।

आजकल ऐसा नहीं है। पशुओं का घटता अनुपात मनुष्य के अपने अस्तित्व को बनाए रखने के विपरीत है। प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार इन पशुओं की संख्या के आंकड़े इस प्रकार हैं:- 1982 में भैंसों की संख्या 6 लाख 16 हजार थी तथा 1997 में यह संख्या केवल 6 लाख 52 हजार थी। बकरियों की संख्या 1982 में 10 लाख 60 हजार थी जो 1997 में 9 लाख 47 हजार रह गई। भेड़ों की संख्या 1982 में 10 लाख 90 हजार थी और 1997 में यह संख्या घटकर 9 लाख 9 हजार रह गई। 1982 में सुअर 8 लाख थे जो 1997 में घटकर 5 लाख रह गए हैं। अन्य पशु 1982 में 6 लाख थे परंतु 1997 में इनकी संख्या भी घटकर 3 लाख रह गई। 1982 में कुल पशु धन 53 लाख 45 हजार था जो 1997 में घटकर 45 लाख 71 हजार रह गया था।

पशुधन के घटते रुझान से यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्यों ने अपनी संख्या में तो कई गुणा वृद्धि कर ली है परंतु अपने ही सहयोगी अन्य पशुओं को कम कर दिया है। कुछ गांवों में तो इनकी संख्या में अत्यधिक कमी हो गई है। कई स्थानों पर तो पिछले 50 वर्षों के मुकाबले में इनकी संख्या आज आधी से भी कम रह गई है।

हमीरपुर के बिझड़ी गांव में उन दिनों भैंसों और बैलों की संख्या लगभग 150 के आस-पास थी, परंतु आज इनकी संख्या लगभग 60 तक रह गई है जबकि जनसंख्या में उन दिनों के मुकाबले कई गुणा वृद्धि हो चुकी है और गांव का आकार भी उस समय की तुलना में तीन गुणा से अधिक ही बढ़ा है। भोरंज विकास खंड में आने वाले गांव भुरठवान की 70 वर्षीया श्रीमति लीला देवी बताती है कि उनके गांव में 60 के आस-पास घर हैं परन्तु भैंसों और बैलों की संख्या लगभग 50 से अधिक नहीं है। पहले आकाश में मंडराने तथा धरती पर उतर कर अपना भोजन खाने वाली चीलों, गिद्धों तथा चिड़ियों को प्रतिदिन सैंकड़ों की संख्या में देखा जा सकता था। परंतु आज प्रतिदिन तो क्या पूरे महीने में केवल दो चार दिन ही चीलें और गिद्ध भी रास्ता भटक कर कहीं मंडराते दिखाई दे जाएं तो यह आश्चर्यजनक

होगा। प्रतिदिन सुबह के समय चहचहाने वाली तथा सारा दिन घर आंगन के समीप रहने वाली चिड़ियों के बिना घर-आंगन अब सूने दिखाई देने लगे हैं।

घटते पशुधन के कारण यह प्रश्न कौंध सकता है कि दूध के बिना भी तेलों तथा अन्य पौष्टिक पदार्थों पर निर्भर रहा जा सकता है। उनकी संतुष्टि के लिए यह उत्तर पर्याप्त ही होगा कि दूसरे पौष्टिक पदार्थों के उत्पादन के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली वस्तुओं में पड़ती कमी के कारण एक दिन वह भी उपलब्ध नहीं होंगे कई और भी कारण हैं यह समझाने के लिए कि पशु-पक्षी तथा अन्य कई पदार्थों एवं परिस्थियों के मानव के साथ एक संतुलनात्मक संबंध में बंधे रहने से ही वास्तव में हम खुशहाल रह सकते हैं।

हम आपसी सहयोग द्वारा अपना उत्थान करने की बात तो मानते हैं परंतु हमारे भीतर का घोर एकांत स्वार्थ दूसरों का अधिकार छीनने और चालाकी के साथ अनाधिकार अतिक्रमण में लगा है। इसके ही कारण आज बढ़ते असंतुलन के लिए हम स्वयं उत्तरदायी हैं, जो पर्यावरण की परवाह के बिना जीने में लगे हैं। **हमारी इस प्रकार की प्रवृत्ति से वर्तमान शताब्दी में मानवीय जीवन संपूर्ण विनाश के मुंह में चला जाएगा। धरती संभवतः जीवन विहीन हो जाएगी। लेखक 1990 से निरंतर अपने प्रकाशित लेखों तथा पत्रों द्वारा इस स्थिति को सरकार के संबंधित संस्थानों तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के ध्यान में लाते हुए विज्ञान जगत से भी अपील करते आ रहे हैं।**

अभावों की तपन नहीं जो तपते हैं।
पर्यावरण नष्ट वही तो करते हैं।

दैनिक जागरण धर्मशाला 18.02.2006 (सम्पदकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

फसल भी बचेगी और बंदर भी

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति ने धरती पर मानव से पहले कई प्रकार के अन्य जीव जंतु उत्पन्न कर दिए थे। इसलिए तो कुछ को हमारे पुरखा कहलाने का श्रेय मिला है। जीव जंतुओं की इस श्रेणी में बनचर बंदर का स्थान प्रथम पंक्ति में आता है। मानव की तरह ही कुछ समानता रखने वाले ये बंदर समूहों में बस्तियों से दूर घने जंगलों में रहा करते थे। प्रसिद्ध तीर्थ स्थलों की बस्तियों के समीप भोजन की खोज में ये बंदर मनुष्य के आगे पीछे चलते हुए पहले भी दिखाई देते थे और अब भी दिखाई देते हैं।

हम रामायण के यथार्थ या काल्पनिक प्रसंगों पर भी यदि दृष्टि डालें तो पता चलता है कि इस महाकाव्य के प्रसिद्ध नायक श्रीराम के विश्वासपात्र हनुमान तथा सुग्रीव के नेतृत्व में इन्हीं वानरों की सेना का एक सुदृढ़ संगठन तैयार किया गया था। यह सब वन्य परिवेश में ही हुआ था। तब से लेकर अभी कुछ ही वर्ष पूर्व तक तीर्थ स्थलों के कुछ विकल्प को छोड़ कर बंदरों का आवास और विचरण स्थल जगह-जगह फैले चीड़, देवदार तथा बांस सहित दूसरे पेड़ों के घने वन ही रहे हैं। परंतु अब परिस्थितियां बदल गई हैं। पर्यावरण के अवयव बंदर खतरे में हैं।

मनुष्य ने अपने स्वार्थ के वशीभूत दो प्रकार से बंदरों के घर इन वनों पर प्रहार कर डाला है। एक तो अपनी जनसंख्या को बढ़ाकर वनों के बीच या समीप आवासीय निर्माण कर डाला है। दूसरे अपने बढ़ते लालच के कारण बनों में विद्यमान संसाधनों का दोहन भी बढ़ा दिया है। वनों में फल नहीं रहे। छुपने के लिए घने वनों ने अपना घनापन खो डाला है।

छिन्न भिन्न होती भोजन प्रणाली के कारण ये बंदर अब अपना पेट भरने के लिए सड़कों, रास्तों तथा बस्तियों के किनारे आ गए हैं। अब यह भी कहा जा रहा है कि इनकी संख्या बढ़ गई है। संख्या कुछ तो बढ़ी ही होगी। परंतु यह इसलिए भी अधिक लगती है, क्योंकि समीपता के कारण इनका बार-बार और समूहों में दिखते जाना पहले से कहीं बहुत अधिक हो गया है। इन सभी ने अब वनों के

शेष बचे घनेपन को भी छोड़ दिया है और बस्तियों के समीप सड़कों के किनारे अपना स्थायी डेरा डाल दिया है।

अब ये बंदर किसानों की फसल को नष्ट कर रहे हैं। खाने की जो भी वस्तु हाथ लगती है उसे चट कर रहे हैं। आंगन से उठा ले जाते हैं। बिलासपुर, मंडी, कुल्लू, हमीरपुर, शिमला, कांगड़ा, ऊना, चंबा, सोलन, सिरमौर, किनौर आदि सभी जिलों में सड़क तथा बस्तियों के किनारे इन्हें देखा जा सकता है। भोजन की खोज में भागते ये बंदर फसल के दिनों में प्रतिदिन किसानों की फसलों पर धावा बोल देते हैं और उसे नष्ट कर डालते हैं। न फल बचते हैं, न मक्की, न चने बचते हैं और न बचती हैं, सब्जियां। कभी-कभी तो किसी छोटे किसान की सारी की सारी फसल ही नष्ट हो जाती है। बार-बार नष्ट होती जा रही फसलों के कारण कई स्थानों पर किसानों ने अपने कुछ खेतों में इसे बोना छोड़ दिया है। इस प्रकार लोगों में सरकार के अपर्याप्त तथा अकुशल प्रबंधन के प्रति रोष बढ़ता जा रहा है।

मार्च 2006 के अंतिम दिनों में हिमाचल प्रदेश विधानसभा में वन्य प्राणियों द्वारा खेती की बर्बादी का मुद्दा उठा। सदन द्वारा गहरी चिंता व्यक्त की गई। सरकार द्वारा बंदरों को मारने के उद्देश्य से परमिट जारि करने की व्यवस्था बनी। सरकार ने 15 हजार हेक्टेयर भूमि पर फलदार पौधे लगाने का निर्णय भी लिया। इसे 25 हजार हेक्टेयर तक बढ़ाने की योजना भी बनने लगी।

भरण-पोषण के लिए धरती पर मनुष्य तथा बंदर दोनों का बराबरी का प्राकृतिक अधिकार है। परंतु मनुष्य ने वन भूमि पर भी अतिक्रमण कर रखा है। प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार ऐसे लोगों की संख्या लगभग छः हजार है। शिमला जिला में यह संख्या लगभग 3000 बताई गई है। कांगड़ा में संख्या का यह आंकड़ा 2000 से कम है। मंडी, कुल्लू, हमीरपुर, बिलासपुर, सोलन, सिरमौर में संख्या सैकड़ों में ही है। मनुष्य ने प्राकृतिक न्याय की परिधि से बाहर जाकर बंदरों का भोजन उनसे छीना है। इसलिए बंदरों द्वारा भोजन के लिए संघर्ष की परिणति अब फसलों की बर्बादी के रूप में है।

यह प्राणी सुअर तथा नीलगाय जैसे पशुओं की अपेक्षा छोटा है। व्यवस्थित ढंग से दी जाने वाली भोजन की कम मात्रा पर निर्भर करता है। ऐसी परिस्थिति में

फसलों को बचाने के अन्य विकल्पों को खोजे बिना इन निरीह और मानवीय लालच से त्रस्त प्राणियों को जान से मार डालने का मार्ग खोलना अन्यायपूर्ण व्यवस्था के रूप को उजागर करेगा।

पिछले दिनों प्रकाशित एक समाचार के अनुसार प्रदेश के वन्य प्राणी बोर्ड ने चार अभयारण्यों को बंद करने की अनुशंसा का प्रस्ताव तैयार कर केंद्र सरकार को भेजा है। परंतु बंदरों के मामले में समस्या का समाधान इनकी नसबंदी तथा इन्हें मारने से आगे बढ़ न सका। **दोनों पक्षों के साथ न्याय के स्वर मुखरित नहीं हो सके। किसानों की फसलों की बर्बादी तथा बंदरों के प्रति न्याय के दृष्टिकोण से इनके लिए पंचायत समूहों में ऐसे छोटे-छोटे अभयारण्य बनाए जाएं जो दीवार से घिरे हों या ऊपर-नीचे जाली इस प्रकार लगाई जाए जिससे इनकी उछल-कूद तथा विचरने के लिए नियमानुसार इन्हें जगह मिल सके। इनका स्थान कृषि योग्य भूमि न होकर पेड़ों ही के बीच में या समीप अन्य सरकारी जगह पर हो। दीवार के साथ भीतर की कुछ जगह पेड़ मुक्त रखी जानी चाहिए ताकि बंदर उछल कर बाहर न ज सकें। उस स्थान पर छोटे मोटे पेड़ होने की स्थिति में ऊपर की ओर जालीदार तार लगाई जा सकती है।** इसके बीच कुछ फलदार पेड़ भी लगाए जा सकते हैं। यह क्षेत्र विभाजित किया जा सकता है। इसे बंदरों से अलग भी रखा जाए तथा फलों के समय कुछ देर के लिए बंदरों को वहां छोड़ा भी जाए। प्रतिदिन की सफाई के लिए भी स्थान हो।

ये अभयारण्य आम लोगों के आने-जाने के मार्ग या सड़क किनारे बनाए जाने चाहिएं। इनके भोजन की व्यवस्था पंचायतों के माध्यम से किसानों द्वारा दिए जाने वाले अन्न दान से हो जाएगी। फसल की सुरक्षा के कारण किसान ऐसा सहर्ष स्वीकार करेंगे। बंदरों के प्रति लाखों लोगों की जुड़ी भावना के कारण अभ्यारण्यों में रखे दानपात्र तथा रसीद देने की व्यवस्था द्वारा लोगों से धन भी प्राप्त हो जाएगा। इससे वहां लगे कर्मचारियों पर होने वाला कुछ व्यय भी पूरा हो सकेगा।

इनके प्रबंधन में सहयता के लिए स्थानीय लोगों की समिति बनाई जाए।

इनमें पंचायत के लोग पूर्व सैनिक तथा सेवानिवृत स्वयं सेवी अधिकारी रखे जाएं। लेखक ने इस संबंध में जिला ऊना, हमीरपुर तथा बिलासपुर के कुछ पंचायत प्रधानों तथा पूर्व प्रधानों से संपर्क कर उनके विचार जाने। इनमें बिझड़ी के प्रधान जगदीश चंद, पूर्व प्रधान जगतराम, लठियाणी के उप प्रधान पुरुषोत्तम चंद पूर्व प्रधान हरिचंद शर्मा, रैली जजरी के प्रधान राज कुमार, चौकी जम्बाला के प्रधान गुरुदेव, चकमोह पंचायत के प्रधान पवन जगोता आदि हैं। इन सब ने ऐसे ही विचार तथा संकल्प व्यक्त किए।

इससे तुरंत फसल भी बच जाएगी, नसबंदी भी सुगम हो जाएगी और जान भी नहीं जाएगी। रोजगार के अवसरों की संख्या भी बढ़ जाएगी।

दैनिक जागरण धर्मशाला 3 जून 2006 (सम्पदकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

डगमगाता पारिस्थितिकी तंत्र

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

कला एवं आर्थिक उन्नति की जिन ऊंचाईयों के जिस युग से मनुष्य आज गुजर रहा है वह अपने आप में आकाश छूने से कम नहीं है। अब भी मनुष्य को विश्राम नहीं है। सीढ़ियों पर चढ़ने की ललक उन्हें तो है ही जो नीचे हैं और अभावों से ग्रस्त हैं। परन्तु यह ललक उनमें अधिक है जो ऊपर हैं और हर प्रकार से समर्थ हैं। मनुष्य जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति को सुनिश्चित करने पर भी निरंतर नए-नए अनुसंधानों तथा आविष्कारों की ओर बढ़ता चला जा रहा है। **बहुत कुछ पा लेने पर भी वह आज से लगभग 50 वर्ष पूर्व के मानव से भी कहीं अधिक असंतुष्ट, अशांत और तनावग्रस्त प्रतीत हो रहा है। मनुष्य के सामने आज कमी की समस्या तो कम है परंतु उपभोग के लिए भंडारण में प्राथमिकता तथा उपलब्ध वस्तुओं के दुरुपयोग की अधिक है।**

गहराई से विचर करें तो पाएंगे कि हम कभी-कभी वास्तव में कोई समस्या न होने पर भी समस्या अनुभव करते हैं। ऐसा किसी अभाव के कारण नहीं होता है बल्कि हमारे भीतर व्याप्त असंतोष तथा लालच के कारण होता है। यह इसलिए भी है क्योंकि हम वास्तविक आचरण तथा व्यवहार से दूर रह कर मात्र केवल पढ़ाई की ऊंची तथा प्रमाणिकता की अधिकृत डिग्रियों को ही अधिमान देने के कारण व्यवहारिकता के प्रांगण में बहुत से क्रिया-कलापों तथा मानवीय उद्देश्यों को ठीक प्रकार परिभाषित नहीं कर पाए हैं।

सभी प्रकार के थल चर, वन चर, जल चर और नभचरों के जीवन की तुलनात्मक परिभाषाओं में हम जाएं तो तुरंत एक निर्णय पर पहुंच जाते हैं कि हमारी इस धरती पर जो कुछ भी उपलब्ध है वह सर्वप्रथम मनुष्य ही के लिए है। अपनी इसी धारणा ही के कारण हम अन्य जीवधारियों के साथ अपने संबंधों को ठीक प्रकार स्थापित करने, उन्हें समझने और उन पर चलने में विफल होते जा रहे हैं। नई-नई जानकारियों तथा संभावनाओं के विपरीत घटित हो रही प्राकृतिक घटनाओं एवं आपदाओं के कारण हम आप यह सोचने के लिए विवश तो हैं कि शिक्षा के इतने चकाचौंध उजाले में भी हमारे व्यवहार में कहीं कोई गंभीर चूक आवश्यक होती जा रही है। परंतु इतने पर भी हम अपने आचरण

और व्यवहार को सही दिशा की ओर मोड़ने में सफल नहीं हो पाए हैं। अपने इर्द-गिर्द ही के पालतु पशुओं पर दृष्टिपात यदि करें तो प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार उनकी स्थिति इस प्रकार है: वर्ष 1987 में हिमाचल प्रदेश में भैंसों की संख्या 795000 थी। भेड़ें 1114000, बकरियों 1120000 और खच्चर, गधे 31000 थे। वर्ष 1992 में भैंसों की संख्या 704000, भेड़ों की 1079000, बकरियों की 1118000 और खच्चर-गधों की संख्या 24000 रह गई। वर्ष 1997 में पशुओं की संख्या और घट गई। परंतु वर्ष 2003 में भैंसें बढ़कर 7,73000 हो गईं, भेड़ 906000, बकरियां 1116000 रह गईं और खच्चर-गधे बढ़कर 33000 हो गए। पशुओं में यह बढ़ोत्तरी धरातलीय वास्तविकता के साथ कितना मेल खाएगी यह तो संबंधित विभाग ही जानता होगा। व्यवहारिकता की आकृति के दर्पण में इन आंकड़ों में कोई चूक यदि दिखाई दे तो कोई बड़ी बात भी नहीं है।

दुधारू पशुओं के दूध के उत्पादन के आंकड़ों की स्थिति इस प्रकार दिखाई गई है। वर्ष 2001-02 में प्रति व्यक्ति 344 ग्राम, 2002-03 में 350 ग्राम, 2003-04 में 359 ग्राम, 2004-05 में 392 ग्राम तथा 2005-06 में प्रति व्यक्ति 395 ग्राम के हिसाब से प्रदेश में दूध का उत्पादन हुआ बताया गया है। हिमाचल प्रदेश में प्रतिदिन भारी मात्रा में दूध दूसरे पड़ोसी राज्यों से यहां आता और बिकता है। दूध की बाहर से आती भारी मात्रा में आवक के प्रकाश में प्रदेश में दूध उत्पादन के आंकड़ों की सही स्थिति को भी देखा जा सकता है। पालतु पशुओं से आगे बढ़कर प्रदेश के वन्य परिवेश में विचरने वाले पशुओं की स्थिति पर विचारात्मक दृष्टि डालें तो कहने को तो बंदरों और सुअरों की संख्या में बढ़ोत्तरी ही चाहे दिखाई देती है। परंतु यह इसलिए भी दिखाई देती है क्योंकि खेती सहित इन पशुओं की सारे की सारी खाद्य सामग्री अब केवल मानवीय आबादी के समीप ही सिमट कर रह गई है। आर्थिक सामर्थ्य के प्रदर्शन तथा भंडारण की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण मनुष्य की जगह-जगह इन वन्य प्राणियों से समीपता बढ़ गई है। दूसरी ओर वनों में पाए जाने वाले अन्य पशु जैसे गीदड़, लकड़बघे, कक्कड़, सकराले, सलगर, सैहल, वनबिल्ले आदि तो कहीं अब ढूंढे भी नहीं मिलते हैं। पशुओं के आबादी के समीप आने तथा डेरा जमाने के कारण भी उनकी संख्या वास्तविकता से अधिक का आभास दे डालती है। कुछ पशुओं के आबादी के समीप आने से घबराने तथा उनसे छुटकारे के विकल्पों को ढूंढने में असफल रहते हम उन्हें मारकर समस्या से छुटकारा पाने के उद्देश्य से पूरे पारिस्थितिकीय तंत्र को बिगाड़ने में लगे हैं।

हम अपनी ही पर्यावरणीय अनिवर्याताओं को समझने में विफल होते जा रहे हैं। हमारी समस्या की समाधान की सीढ़ी की पौड़ी पशुओं से होती हानि को छूती हुई उससे छुटकारे के अनेकों विकल्पों की ओर बढ़नी चाहिए न कि उन्हें मारने के मात्र एक प्रभावशाली और अविवेकपूर्ण पग की ओर बढ़नी चाहिए। इनकी नसबंदी की स्थिति में मनुष्य ही की तरह इनके वंश को जारी रखने की आवश्यकता, आयु स्वास्थ्य, इनके लैंगिक अनुपात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। हम अपने बढ़ते लालच पर लगाम क्यों नहीं दे सकते हैं और पशुओं को अपने इस लालच पर बलिदान क्यों कर देना चाहते हैं? **अपने अधिकारों की रक्षा के लिए दूसरे जीव-जंतुओं की अनदेखी के साथ हमारे द्वारा निर्मित तथा लागू विधान तथा परंपराएं क्या कई प्रकार के प्राणधारियों से भरे इस संसार में हमें निरंकुश, निर्दयी, अन्यायी और अत्याचारी नहीं बना रहे हैं?**

वर्ल्ड कंजरवेशन की यूनियन ने भी खुलासा किया है कि लगभग 15000 से अधिक पशुओं, पेड़, पौधों की प्रजातियों के ऊपर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। जहां तक बंदरों द्वारा उत्पात तथा फसलों को हानि पहुंचाने की समस्या है। **इस संबंध में लेखक ने समस्या के तुरंत तथा पूर्ण समाधान का सुझाव भी दिया है जो दैनिक जागरण के 3 जून 2006 के अंक में भी प्रकाशित है।** इस पर अमल से फसल तुरंत बच जाएगी, जान भी नहीं जाएगी, रोजगार भी मिलेगा और सरकारी व्यय भी बहुत कम होगा। व्यय के लिए आय के साधन स्वयं निर्मित हो जाएंगे। सुझावों का बिना किसी **राग, द्वेष, ईर्ष्या के आकलन तथा उन पर अमल जनहित और पशु हित में सरकार को करना है। समस्या को समस्या ही रखना है या उससे ठीक प्रकार छुटकारा पाना है। क्या राजनीति या सरकार के बाहर से आता सुझाव, सुझाव नहीं माना जाना चाहिए। अपनी अकुशलता को छुपाने का प्रयास न करते हुए जनहित के सुझाव का स्वागत किया जाए तो कई समस्याओं का समाधान संभव हो जाता है।**

दैनिक जागरण धर्मशाला 16 सितम्बर 2006 (सम्पदकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

लालच ने पशु-पक्षियों को मारा पर्यावरण बिगाड़ा

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति अति विशाल, विराट, मर्यादित और रहस्यपूर्ण है। वैज्ञानिक अनुसंधानों की यात्राएं ज्यों-ज्यों आगे बढ़ती जाती हैं वैसे-वैसे प्रकृति के नए-नए रहस्यों का रंग भी गहरा होता जाता है। सारा जीवन नया नया कर दिखाने और प्रकृति पर विजय पाने का दम भरने वाला मनुष्य अंत में उसी प्रकृति के अगणित रंग-रूपों एवं भेदों के आगे अपने आपको ही बहुत बौना पाने लगता है। हम ज्यों-ज्यों सुविधाओं के उपभोग तथा भंडारण को बढ़ाते जाते हैं वैसे-वैसे भावी जीवन की असुविधाएं नए-नए रूपों में बढ़ती जाती हैं। इन सुविधाओं का प्रभाव एक ओर तो कारक और दूसरी ओर मारक बनता जाता है।

इसी परिपेक्ष्य में हम कुछ पशु-पक्षियों पर दृष्टिपात करें तो घर आंगन या उसके समीप प्रतिदिन दर्जनों की संख्या और झुंडों में चहचहाने वाली चिड़ियां पिछले 4-5 वर्षों से विलुप्ति के कगार पर पहुंचती जा रही हैं। इनकी भोजन सामग्री खेत-खलिहानों और घरों के समीप उपलब्ध भी है। भले ही उसमें रासायनिक खादों एवं विषैले घोलों के तत्व ही क्यों न हों। परंतु इनके शरण स्थल कच्चे मकान अब कम रह गए हैं। सुंदरता तथा आधुनिकता के गाढ़े होते रंग के कारण पक्के मकानों से भी इनके छिपने के स्थान गायब हो चुके हैं। उधर आधुनिक संचार के यंत्रों-संयंत्रों से निकलती तरंगें तथा कल कारखानों से उत्सर्जित विषैली गैसें हमारे वायुमंडल के प्राकृतिक प्रभाव पर विकृति का पुट चढ़ाती जा रही हैं। इस प्रकार की विपरीत परिस्थियों को झेल पाने में असमर्थ इनका नन्हा-सा शरीर इन्हें शीघ्रगामी गति से विलुप्ति की ओर लेता जा रहा है।

इसी प्रकार की स्थिति सैंकड़ों की संख्या में आकाश में मंडराने वाली चीलों की है। इनके विषय में यह कहा जा रहा है कि पिछले 13 वर्षों से 95 प्रतिशत गिद्ध समाप्त हो गए हैं। वैज्ञानिक अनुसंधानों के अनुसार पशु-चिकित्सा जगत में 1993 से प्रयोग की जाने वाली डाइक्लफ्लेनिक दवाई को इसके लिए उत्तरदायी ठहराया गया है। प्रकाशित समाचार के अनुसार भारत के ड्रग कंट्रोलर द्वारा इस दवाई पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। ये गिद्ध मृत पशुओं के मांस को खाते हैं तथा गंदगी को फैलने से रोकते हैं। जिस पक्षी के लिए जिस गिद्ध शब्द का प्रयोग किया जा रहा है उसे व्यवहारिक रूप में चील कहा जाता है। इनकी मोटे

तौर पर तीन प्रजातियां बताई जाती हैं। सफेद पीठ वाली को गिद्द कहा जाता है। लम्बी चोंच वाली चील तथा छोटी चोंच वाली को काली चील। काली चीलें ही अपेक्षाकृत अधिक मांस खाती हैं। यह भी कहा जाता है कि हिमाचल प्रदेश में इनकी चार प्रजातियां रही हैं।

हमीरपुर जिले के भोरंज ब्लॉक के कल्याल गांव के 70 वर्षीय श्री संत राम ने बताया कि उन्होंने 5 वर्ष पूर्व एक खड्ड के किनारे दर्जनों चीलें अचेत अवस्था में देखी थीं। लेखक ने कुछ लोगों से संपर्क करके यह भी पाया कि इन चीलों की भोजन व्यवस्था भी अब चरमरा चुकी है। इनके आश्रय स्थल भी इनके अनुकूल कम ही रह गए हैं। मृत पशुओं की उपलब्धता भी कम हो चुकी है।

आधुनिकता के इस दौर में बैलों का स्थान ट्रैक्टरों ने ले लिया है। सड़कों पर दौड़ते असंख्य छोटे बड़े वाहनों के कारण माल-ढुलाई के लिए ऊंटों, खच्चरों और गधों पर निर्भरता कम हो चुकी है। घोड़े की सवारी भी अब अधिक नहीं होती है। कुछ यंत्रों, संयंत्रों के प्रयोग ने भी बैल, भैंसे तथा ऊंटों पर निर्भरता कम कर डाली है। पशुओं के मांस से मानवीय उपभोग के बढ़ते प्रचलन ने चीलों के भोजन के लिए पशुओं को कम कर डाला है। अधिकतर लोगों ने मृत पशुओं के चमड़े को निकालने की प्रक्रिया को भी त्याग डाला है। बिलासपुर के छत संडियार गांव के एक पूर्व जिला योजना अधिकारी रिपु दमन सिंह राणा ने बताया कि उनके गांव में मृत पशुओं को मिट्टी में दबा देते हैं। हमीरपुर के बिझड़ी गांव के मलकीयत सिंह ने भी मृत पशुओं के दफनाएं जाने की बात कही। बिलासपुर के बड़गांव के पूर्व सेना अधिकारी ओंकार चंदेल तथा पत्रकार जितेंद्र गौतम ने मृत पशुओं के संबंध में बताया कि इन्हें दफनाया भी जाता है। चम्बा जिले के भलाई के वरगांल ग्राम की 75 वर्षीय श्रीमति जीवनी देवी ने बताया कि वहां लोग ऐसे पशु शरीर को झीलों में फैंक देते हैं। इसी प्रकार कई पशुओं को तो सांप काट जाता है। वे पागल होकर भी मर जाते हैं।

हमीरपुर के बिझड़ी गांव के किनारे खुरपड़ी नामक स्थान पर चीड़ के बहुत बड़े-बड़े पेड़ थे। इन पर चीलें रहा करतीं थीं। इसी प्रकार भोरंज के भुरठाणा गांव के रविन्द्र कुमार ने बताया कि उनके गांव के एक ऊंचे टिल्ले पर सीमल का बहुत बड़ा पेड़ था। इस पर दर्जनों चीलें रहा करतीं थीं। परंतु अब न तो यह सीमल रहा और न ही चीड़ के वे पेड़ ही रहे। इस प्रकार इन चीलों के अस्तित्व

पर प्रतिकूल दवाई के साथ भोजन सामग्री में कमी एवं ध्वस्त होते पर्यावरण की मार भी पड़ी है।

इस तथ्य को और अच्छी प्रकार समझाने के लिए हिमाचल प्रदेश के वनों से लुप्त बाघों एवं मिरगों पर भी दृष्टि डाली जा सकती है। वनों के समीप बस्तियां बन गईं। बाघों के छिपने की जगहें असुरक्षित हो गईं। वनों में अन्य जीव जंतुओं की होती कमी से इन बाघों को भोजन का अभाव भी झेलना पड़ा। यही कारण इनकी विलुप्ति के लिए उत्तरदायी हैं। इस समय जो बाघ य तेंदुए इन वनों में हैं वे पालतु अवस्था से वन्य जीव बने हैं।

विलुप्ति की यह स्थिति पर्यावरण के निरंतर ध्वस्त होते जाने के कारण उत्पन्न हो रही है। ध्वस्त हो रहे पर्यावरण के लिए लालच भरी मानवीय सोच उत्तरदायी है। **हम यदि लालच को बढ़ाते हुए दूसरे जीव जंतुओं की विलुप्ति का कारण बनते गए तो एक दिन हम तथा हमारी संपूर्ण मानवीय जाति भी इस पृथ्वी से विलुप्त हो जाएगी। इस प्रकार अगली 22वीं शताब्दी में रह जाएगी मानव विहीन अकेली पृथ्वी सूर्य की किरणों से जगमगाने के लिए। ढूंढने पर भी न मिलेगी मानवता आंसू बहाने के लिए।**

दैनिक जागरण धर्मशाला 16.11.2006 (सम्पदकीय पृष्ठ) पर प्रकाशित

वनों को आग से बचाने में हम कितने गंभीर

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मनुष्य सहित अन्य जीव जंतुओं एवं पक्षियों के धरती पर प्रादुर्भाव से पूर्व ही प्रकृति रूपी आलौकिक शक्ति ने यहां वे सभी संसाधन जुटा दिए थे जो जीवन के प्रजनन तथा उसके विकास के लिए आवश्यक थे। इन्हीं संसाधनों में पेड़-पौधों एवं वनों की भी गिनती होती है जो प्राकृतिक आपदाओं की प्रणालियों से मिलती अनमोल शिक्षा के कारण आज विश्व भर में पर्यावरण के महत्वपूर्ण अव्यव के रूप में जाने जा रहे हैं। गांव-गांव तथा कस्बे कस्बे में इस संदेश का शिरोधारण हो रहा है। यह अलग बात है कि भारत में पूर्व से ही हम पेड़ पौधों और वनों को अधिमान देते आए हैं।

आज विकास की अंधी दौड़ के कारण बढ़ रहे कार्बन डाइऑक्साईड के उत्सर्जन के परिणामस्वरूप ग्लोबल वार्मिंग में हो रही बढ़ोत्तरी ने पूरे विश्व को संकट के ऐसे बादलों की घनघोर घटाओं से आच्छादित कर डाला है जो कल्पित और अकल्पित आपदाओं की वर्षा से धरती पर भीषण प्राण घातक उथल पुथल मचा सकती है। कार्बन उत्सर्जन के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने के लिए ही अब सभी स्थानों पर पेड़ लगाने तथा वनों को बढ़ाने की बात जोर शोर के साथ की जाने लगी है।

हमरे देश के उत्तर-पूर्व के भू-भाग का पर्यावरण के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण स्थान है। यहां के ऊंचे भाग पर बर्फ के भंडार तथा देवदार के पेड़ों से ढके पर्वत हैं, तो तराई के क्षेत्रों में चीड़ के पेड़ों सहित अन्य कई प्रकार के पेड़-पौधों के घने वन हैं। ये वन देश के अन्य प्रदेशों के जलवायु को प्रभावित करते हैं। उनमें समृद्दि लाने एवं वहां के जन-जीवन को सुखदाई बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन करते हैं। कई प्रकार की इमारती लकड़ी देते हैं। गर्मियों में पड़ोसी राज्यों को पानी की आपूर्ति के साथ शुद्ध वायु उपलब्ध कराने और वर्षा लाने में सहायक बनते हैं। हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड आदि राज्यों के तराई के क्षेत्रों के वनों में चीड़ के पेड़ पाए जाते हैं। चीड़ के इन पेड़ों में ग्रीष्म ऋतु में मूल्यवान तरल पदार्थ निकलता है। बिरोजे के नाम से जाना जाता यह पदार्थ बहुत ज्वलनशील होता है। चीड़ के पेड़ों से गिरती पत्तियां भी आग शीघ्र पकड़ लेती हैं।

इन्हीं कुछ तथ्यों के दृष्टिगत हिमाचल प्रदेश के वनों की स्थिति पर प्रकाश डालते हैं। प्रदेश सरकार की प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार हिमाचल प्रदेश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 66.5 प्रतिशत भाग वनों के अधीन है। इस प्रकार वर्ष 2006-07 में वनों के अधीन आने वले भू-भाग का क्षेत्रफल 3628496 हैक्टेयर था। 2007-08 में वनों में 1880 हैक्टेयर की बढ़ोतरी दिखाई गई है। इस प्रकार वन क्षेत्र बढ़कर 3630376 हैक्टेयर हो गया। जबकि वर्ष 1995-96 में वन विभाग के अधीन 3452483 हैक्टेयर वन क्षेत्र था जो 1996-97 में बढ़कर 3623562 हैक्टेयर हो गया था।

प्रदेश में आर्थिक विकास एवं नकदी फसलों को लेने के उद्देश्य से भी बहुत से बाग बगीचे लगाए गए हैं। ऐसे पेड़-पौधे पर्यावरण की रक्षा के लिए तो कम परंतु धन कमाने के उद्देश्य से ही अधिक लगाए गए हैं।

सरकारी क्षेत्र में वनों में बढ़ोत्तरी के लिए समय समय पर किए गए प्रयासों की वास्तविकता को प्रकाशित आंकड़ों की कसौटी पर कस कर देखते हैं। प्रदेश की तराई के क्षेत्रों में अधिकतर चीड़ के पेड़ों के वन पाए जाते हैं। इन पेड़ों से बिरोजा तथा तारपीन का तेल निकलता है। पक्का बिरोजा और तारपीन का तेल कई प्रकार के उत्पादों को तैयार करने में प्रयोग किया जाता है। इन वनों से पिछले कुछ वर्षों से निकले बिरोजे की मात्रा के आलोक में धरातलीय वास्तविकता को समझने का प्रयास करते हैं।

सरकार की हाल ही में प्रकाशित वर्ष 2008-09 की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2002-03 में 7342 टन बिरोजे का उत्पादन हुआ। वर्ष 2003-04 में 7837 टन, 2004-05 में 7027 टन, 2005-06 में 6722 टन, 2006-07 में 5376 टन, 2007-08 में 5226 टन तथा वर्ष 2008-09 में 5699 टन बिरोजे का उत्पादन हुआ।

इसी प्रकार पिछले कुछ वर्षों पर भी प्रकाश डाल कर देख लेते हैं। वर्ष 1994-95 में बिरोजे का उत्पादन 8697 दिखाया गया है। 1996-97 में 8215 टन, 1997-98 में 8778 टन, 1998-99 में 8775 टन तथा वर्ष 1999-2000 में 8484 टन बिरोजे का उत्पादन दिखाया गया है। 1998 की प्रकाशित रिपोर्ट में वर्ष 1994 से वर्ष 1997-98 तक उत्पादन के आंकड़ों को मी.ट. में दिखाया गया है जबकि 2008-09 तथा 2010-11 की रिपोर्ट में उन्हीं आंकड़ों को टनों में दिखाया गया है। उत्पादन में बढ़ोत्तरी और कमी के उपरोक्त आंकड़े हमारे प्रयासों की दिशा, प्रभाव और वास्तविकता की आकृति को स्पष्ट रूप में उझागर कर देते हैं।

गर्मियों में चीड़ के ये वन कई स्थानों पर प्रतिवर्ष आग से जलते हैं। करोड़ों की संपदा प्रतिवर्ष नष्ट होती है। उत्पादन में कमी के लिए चोरी और वनों की आग को कारण माना जाए तो यक्ष प्रश्न यह भी तो उठ खड़ा होता है कि इनसे बचाव का उत्तरदायित्व किसका है? **प्रश्न ये भी खड़े होते हैं कि कई दशकों के लम्बे समय से लगातार प्रतिवर्ष करोड़ों रुपए मूल्य की नष्ट होती वन संपदा को बचाने की कारगर योजना अभी तक क्यों नहीं बन पाई? क्या इसके लिए नौकरशाही के साथ ढेरों सुविधाएं लेने वाले नेता भी उत्तरदायी नहीं हैं? इसके लिए सरकार उन लोगों का सहयोग लेने में असमर्थ क्यों रही जो इस बहुमूल्य वन संपदा को बचाने का तरीका सुझा सकते थे या सुझाते रहे होंगे?**

वन संपदा को आग से बचाने वाले अमूल्य सुझावों वाला लेखक का एक लेख 12 जनवरी 2006 को दिव्य हिमाचल तथा दैनिक जागरण के अंक में छपा था। यही नहीं ऐसे सुझावों के पत्र भी जिलाधीशों, सभी वन मंडल अधिकारियों तथा उनके वरिष्ठों को फरवरी 2006 में भेजे थे। परंतु न जाने हमारी मानसिकता इतनी कुण्ठित क्यों हो जाती है कि **हम सरकारी संपत्ति बचाने एवं जन भलाई के हित में सरकारी कार्य परिधि के बाहर से आती किसी परियोजना एवं प्रस्ताव पर अमल करने या उसका उत्तर देने तक से उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर बैठे परहेज क्यों करने लगते हैं?** विभाग के अपने हित में भेजे पत्रों का विभाग द्वारा ही उत्तर न दिया जाना विभाग द्वारा आग बुझाने के लिए पूर्व में किए गए प्रयासों की वास्तविकता और गंभीरता पर स्वत: प्रश्न चिन्ह के साथ ही उसकी पोल खोल देता है। उत्तराखंड सरकार को भेजे लेखक के ऐसे सुझावों पर उनकी प्रतिक्रिया भी उस समय राष्ट्र एवं मानवता के हित में उत्साहजनक नहीं रही।

यह एक अद्‌भुत संयोग और कुछ संतोष की बात है कि चार वर्ष, पूर्व वनों की आग को बुझाने के लिए विभाग को भेजे सुझावों को हिमाचल प्रदेश का वन विभाग अब अपनाने लगा है। वन प्रबंधन पर करोड़ों रुपए प्रति मास व्यय करने वाले अब अपने कर्त्तव्य को सार्थक बनाने के लिए उन्हीं उपायों पर कार्य करने लगे हैं।

क्या सच्चाई को सच्चाई कहलवाने के अधिकार से वंचित किए रखना अच्छी

शासकीय व्यवस्था के विपरीत नहीं है? इस का संज्ञान कौन लेगा? यह भी तो सरकार का ही दायित्व बनता है। सरकार को जनहित में अपने दायित्व का निर्वहन गंभीरता से करना चाहिए।

सरकार, जनता एवं मानवता को लाभ पहुंचाने वाले, व्यवहारिक सुझावों एवं उपायों को मान्यता न देने वालों की पहचान तथा उत्तरदायित्व निर्धारित करने की व्यवस्था कौन करेगा? इसका संज्ञान कौन लेगा? सरकार को इस पर गंभीरता से सोचना चाहिए तथा जानबूझकर की जाती चूक के लिए उत्तरदायित्व निर्धारित करना चाहिए।

पंजाब केसरी जालन्धर 31 मार्च 2010 (सम्पदकीय पृष्ठ) हमीरपुर पत्रिका 12.04.2010 तथो –19.04.2010 में प्रकाशित

PROJECT TO PROTECT IMMEDIATELY THE CROPS WITHOUT KILLING MONKEYS

By Acharya Rattanlal Verma

MONKEYS SURVEY REPORT

Panchayat Cluster Or Town — **(Keeping in view the number and density of monkeys)**

1. Monkeys Protection Centre or Sanctuary

The size and shape of monkey sanctuary or monkeys protection centre can be big or small according to number of monkeys the place, circumstances and according to the provisions of law. A soft wall in the surroundings can be constructed or a net of iron wire above and around in the form of enclosure can be used to control monkeys.

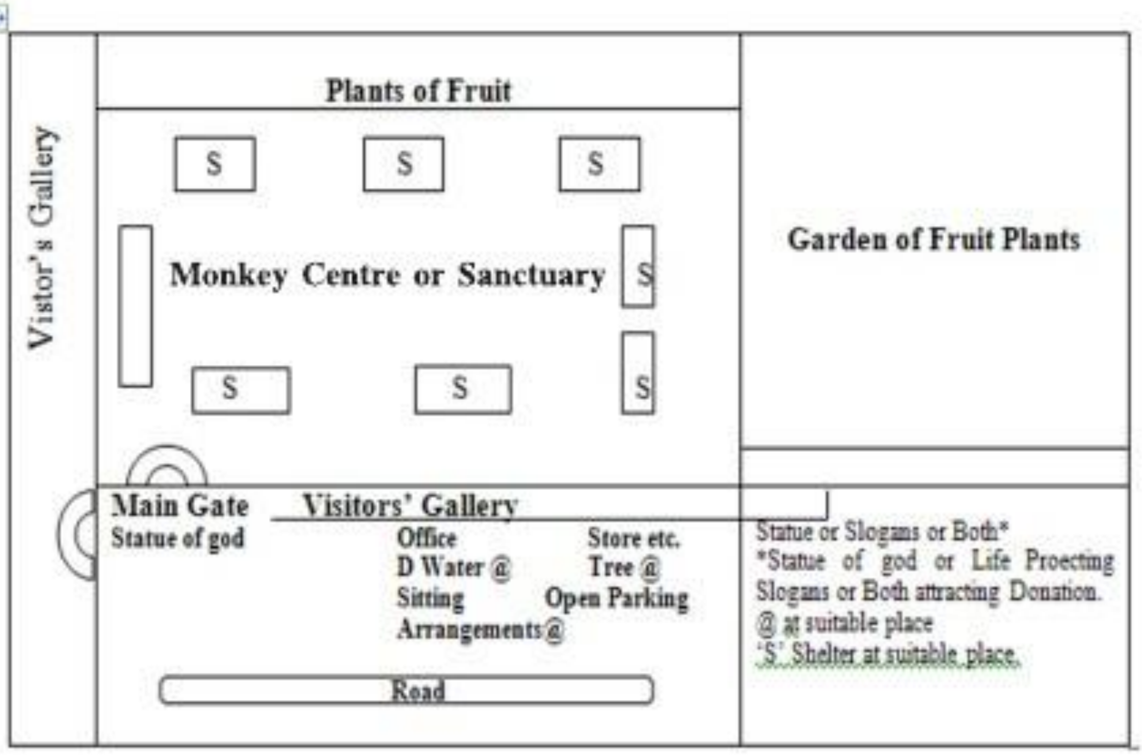

2. Sterlization

It is very much possible to sterlize monkeys at a lower cost, to the desired extent and that too in a very short period at the monkeys sanctuary or centers.

3. Fruit Plants

In Garden of Fruit plants, the plants can be grown at lesser cost and the development of plants and fruit will remain assured. This garden can be in any shape and size according to the probability of place and circumstances. Such plants can also be grown at different places in the forests. But the fruit on plants will grow and ripe only when the monkeys are controlled.

4. Employment

There will be some employees in every sanctuary or centre and the expenditure on employment can be met with the sources as shown against 6 below:

5. This will Promote Tourism

The people will come there or stop there to see these monkeys and garden of fruit. This will promote the tourism.

6. Food for the Monkeys

By farmers through Panchayat or Town or Institutions	**By NGO in the shape of money or grains/fruits**	**By local people, visitors and tourists in the shape of money**	**By Mandirs or posts installed near temples for the purpose of donation**	**Other alternatives or by Government Institutions**

6(a) Accounting

Accounting Committees

Panchayat or Town or other Institutional Committee

- Ward Member
- One or Two Retd. Officers
- Other Volunteers

Panchayat Cluster or Other Institutional Committee or Town

- One Panchayat or other Institution President
- One Volunteer Retd Officer or other from Panchayat or Other Institution

7. Management in State

One appointed or nominated capable person	**Principal Chief or Addl. Principle Chief Conservator or other alike officer**	**Two other officers and two or three nominated capable persons**

8. District Management

Forest Range Officer	Divnl. Forest Officer or Equivalent	One or two Appointed or nominated Persons

9. Sanctuary or Centre Management

One Panchayat Pradhan or Municipal Councilor	Forest Range Officer	Forester or Guard	One or Two Appointed or nominated persons

10**Accounting (Centre) or Sanctuary**

11.**Audit:-**According to Government or other Regulations (BY Appointed or deputed Officer before 31st May every year)

Note:-

1. Some change can be made according to facility and norms.
2. In the town or cities the same method can be adopted with changes in names.
3. In the beginning Government grant is needed.
4. Audit Report to be sent to Panchayat Cluster or town Committee by 15th June to the Distt. Management, by 15th July and to the State Management by 31st July every year.
5. The Panchayat or town or city Committee should have a right to check the feed/currency and to obtain its details once in a month from monkey centre.
6. After 15-20 years, when the number of monkeys after sterilization decreases and fruit grow in different places in forests, the monkeys can be released to the forests again. A regular check can be exercised on the population and availability of natural food in the forest for these monkeys.

THE DETAILED FORM OF THE PROJECT FOR PROTECTION OF CROPS & MONKEYS

The monkey is more wise, clever, swift and small bodied creature in comparison to other animals. This state of monkeys should always be kept in view when making and implementing the project for immediate protection of crops and monkeys comparatively with lesser expenditure.

The fruit cannot grow, develop and ripe on fruit plants without control on monkeys. Any plan for growing fruit will be a futile exercise. The crores of rupees and time of 7-8 years will lay in waste. The monkeys will remain hungry and the crops will continue to be destroyed.

The monkeys live in groups. The group has a leader. They identify each other. The present method of catching hold of monkeys for sterilization cannot achieve desired results. Because we can catch hold of few of them at one time and at the second time when we adopt the same method we will not succeed in catching hold of them, as the remaining monkeys of the group become cautious and aware of our method of catching hold of them. It is, therefore, a expensive and difficult exercise to sterlize the roaming monkeys.

In our society, at present, the monkeys have different place in comparison to other wild animals. The people are more aware and economically more capable than in the past. The militancy and tension has also increased. It will be very much harmful and fatal to go for the use of bullets for the solution of problems. The mass killing of the monkeys will never solve the problem which farmers and others are facing.

Author gave a thought to solve the problem of destroying crops without killing monkeys and surveyed some of the Panchayats of Hamirpur, Una, Bilaspur and Kangra districts of the state of Himachal Pradesh in March, 2006. The Panchayats agreed to the view point of writer and also offered to contribute for the food for monkeys, in case these monkeys are controlled in enclosures or otherwise. Many

Panchayats have adopted and passed resolution to this effect and have sent them to the State Govt. (Department) and to author also.

PROJECT

↓

MONKEYS SURVEY REPORT

1. Panchayat Cluster or Town

There is no monkey at some places. There are many and there are only few monkeys at different places. Where there are few monkeys in a Panchayat, more panchayats should be included in cluster and where there are many monkeys, lesser number of Panchayat should be in a cluster.

In the forests or near the forests probably on Government land these monkey sanctuary or center should be started. This should be on such place where water is available. There should be open place for a garden of fruit plants nearby if possible. The road of travelling passengers should also be near. The gate of this sanctuary should be adjoining to such road. The main gate should be attractive and there should be place for visitors to sit and also a gallary to see these animals and garden. There should also be open place for parking of vehicle, a shady tree and tap for drinking water, a statue of god and life protecting slogans.

2. The size of Sanctuaries or Centers:

It should depend on the conditions of land and the number of monkeys to be kept therein and according to law. The soft wall should be constructed around this or a net of iron wire above and around in the form of enclosure can be used. The trees will also be covered in these enclosures and thus the monkeys will enjoy independence. Small and cheap shelters should be erected inside the enclosure for protection during rains, summer and winter.

3. Fruit Bearing Plants

The fruit plants near these enclosures or centers should be devel-

oped in such a way that during the season of riping fruit it is easy to provide these fruit to the monkeys. It will be very much definite that fruit grow and ripe safely only when the monkeys are in control. This garden, if developed should be fenced and plants of two or more varieties should be planted. Such plants can also be planted simultaneously at different places in the forests.

4. Sterlization

It will be easy and a cheap exercise to sterlise these monkeys at one place. In this way the strength of monkeys can be decreased in a time bound manner with the expectation of successful results and to the desired extent and that too in a short period. This can also be done by a mobile hospital, if possible.

5. Development of Tourism

The tourist resorts will be soon developed. Statue of god or life protecting slogans attracting donation should be displayed. The attracting main gate, a shady tree in front of this gate, open parking space and place for sitting, availability of drinking water will attract the tourists and also the passengers to see the jumping monkeys, their human like behaviour and also the fruit plants or garden, if developed. These when developed as tourists resort will become source of income too. Hence there should be a provision for donation box and receipts for donors.

6. Employment

These sanctuaries developing as tourist resorts and succeeding in protecting crops of farmers will create opportuinities for employment and will also attract means for income for expenditure to be incurred on them.

7. Availability of Food and Money for Monkeys

(a) The eatables for the monkeys will be provided by farmers and other institutions. The farmers incur expenditures in engaging watchman for protecting crops. Some have left ploughing fields. They also bear loss of crops being destroyed by the animals. In these circumstances, the safe growing crops will definitely motivate the farmers for contributing the eatables or money for

these monkeys. The Panchayats/people will be happily ready and some have also passed resolutions to this effect.

(b) The other NGOs will also contribute eatables and money.

(c) There are very famous temples where many crores of rupees are donated every year. The major portion of this income comes from the people of other states.

In the event of massive publicity of the fact that the monkeys are being fed by the Government/Institution, such people will additionally donate money for these monkeys for which appropriate posts to receive such donation can be installed or erected.

(d) The eatables and money will also be donated and collected at the main gate.

(e) The publicity of these arrangement among NRIs will also attract a good amount of donations from them.

8. Accounting of Eatables and Currency

(a) Panchayat Ward or Town Ward Accounting Committee.

In this committee there should be a Ward Member and a retired officer or other person. They will keep the account of eatables and money in a register.

(b) Panchayat Accounting Committee.

There should be one member from each ward in this committee. They will maintain a register for eatable and money of panchayat meant for the purpose. This register can be inspected by Panchayat.

(c) Panchayat Cluster or town Accounting Committee.

There should be one Panchayat Pradhan or a Municipal Councilor and two retired officers or other persons in this committee.

This committee will hand over these eatables etc. to the concerned officer of the sanctuary or center. Who will charge this off according to the fixed scale prescribed for monkeys.

9. Town Committee

Keeping into view the circumstances, the same committee can be constituted in the cities/towns.

Note:-In the light of laws and facility, some changes can be made

10. Panchayat clusters or town committee or the person authorized by such committee should have the right to see the stock of eatables and money collected from time to time in working hours twice in a month. They or the person authorized by this committee should have also the right to get the details of such stock and money once in a month.

11. The sanctuary or center management after getting the accounts audited before 31st May every year should send the report to the cluster or town committee. The cluster or town committee after going through this report should send objections or suggestions or comments, if any, to the sanctuary or center before 15th June. The sanctuary or center will send this report to the District Management by 15th July and the District Management will send the same to the State Management by 31st July with or without observations or suggestions and the State Management will send this to the Govt. by 15th August every year.

12.Accidental or Sudden Loss

In the event of any sudden incident or loss the sanctuary or the centre will immediately send its intimation to the cluster or town committee, District Management and the State Management simultaneously and direct. The State Management will inform the State Govt. immeidately.

Note:-

(i) *The committee members will not have to work for more than 2 or 3 days in a month.*

(ii) *The Government aid is needed in the beginning.*

(iii) *After 15-20 years when the number of monkeys is decreased to the desired extent and the fruit have come on trees or plants, planted at different places in the forest, simultaneously, these monkeys can again be released to the forests to roam in open.*

In this case regular watch should be kept on the strength of these monkeys and the availability of natural food in the forests.

By Implementing this project of Monkey Conservation Centres, the problem of inflicting loss to the crops by the monkeys will immediately come to an end. The sterlization of monkeys will be easy and the number or strength of these monkeys can be reduced to the desired extent in lesser expenditure and that too, in minimum time. The number of jobs will be increased as new avenues of employment will be generated. These sanctuaries or monkey centres will soon be developed in the form of tourist resorts. The transparency in management as shown will build faith in public thereby increasing public co-operation from within and outside the state, inviting income from many sources, as mentioned in the project. There will be less burden on Government exchequer, as a major portion of income to meet the expenditure will come from the public through many channels.

The implementation of this project will help in strengthening the base of environmental conservation and its promotion. The clear message of solving the problems in more effective manner without blood shed will spread in the NATION as well as in the entire WORLD too. This will also help in dessiminating in public the message of the importance and urgency of maintaining eco-balance.

खण्ड-6

बढ़ते वाहन - घटता जीवन।

बढ़ता प्रदूषण - ध्वस्त होता पर्यावरण।

बढ़ती गर्मी - बदलते मौसम।

खुदती धरती - प्रभावित होता पर्वतीय भू-सन्तुलन।

बढ़ती अगणित सुविधाएं - घटते प्राकृतिक संसाधन।

लेखक के पूर्व प्रकाशित शोध लेखों का संकलन।

इस खण्ड में वाहनों की आवश्यकता, उनकी बढ़ती संख्या, पर्यावरण एवं जीवन पर पड़ रहे उनके दुष्प्रभाव को उजागर करते लेखक के पूर्व प्रकाशित लेखों का संकलन किया गया है।

पूरे विश्व में वाहन द्रुत गति के साथ बढ़ रहे हैं। एक अनुमान के अनुसार भारत में प्रतिदिन लगभग 20 करोड़ वाहन दौड़ते हैं। छोटे से पर्वतीय प्रदेश हिमाचल प्रदेश में प्रतिदिन लगभग 3 लाख या इससे भी अधिक वाहन सड़कों पर दौड़ते हैं। इनकी संख्या भी आगे से आगे तीव्र गति के साथ बढ़ती जा रही है।

द्रुत गति के साथ होते विकास के लिए इनकी नितांत आवश्यकता है। परन्तु अंधाधुंध बढ़ते वाहनों के कुप्रभावों को भी नाकारा नहीं जा सकता है।

इनसे निकलने वाला धुंआ ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करता है। यह प्रभाव सूर्य की गर्मी को धरती पर रोक लेता है और ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ाता है। इससे ग्लेशियर पिंघल रहे हैं और मौसम बदल रहे हैं। लोग सैर करने के लिए भी वाहन का प्रयोग करने लगे हैं। इससे आराम परस्ती बढ़ रही है, वायु प्रदूषण और ध्वनि प्रदूषण भी बढ़ता जा रहा है। वाहनों के हार्नों की ध्वनियों में भी एकरुपता नहीं है। उससे दुर्घटनाएं बढ़ रही हैं। प्राकृतिक संसाधन घट रहे हैं। कृषि तथा आवास के लिए भूमि की उपलब्धता कम हो रही है।

नित नई बनती और चौड़ी होती सड़कों के कारण होते कट्टान से पहाड़ी क्षेत्र का भू-सन्तुलन विपरीत रूप से प्रभावित हो रहा है। वन्य प्राणी असुरक्षित हो रहे हैं। उनके रहन बसेरे उजड़ रहे हैं।

विकास मानव की समृद्धि के लिए समझा जाता है। परन्तु आज का मानव समृद्धि के मनचाहे अर्थों को लेकर मानवता की रक्षा के प्रति असहाय सा प्रतीत होता हुआ विकास के अधीन होता जा रहा है। धन के प्रति बढ़ते लालच से पराभूत होती मानवता के कारण एक परिवार में भी कई गाड़ियां रख लीं गई हैं। ऐसा आवश्यकतावश न होकर धन की सुगम उपलब्धता तथा दिखावे की इच्छा की विकटता के कारण हो रहा है।

मनुष्य अपनी वास्तविक आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं के चयन के प्रति अनिच्छुक एवं लापरवाह होता हुआ असमर्थ सा बना प्रतीत होता है। उसे जीवन की चिंता न होकर प्रतिस्पर्धापूर्ण आर्थिक सामर्थ्य के प्रदर्शन की अधिक चिंता सताने लगी है। इसका चाहे दीर्घकाल में विपरीत प्रभाव ही क्यों न हो। इन्हीं सब कारणों से हो रहा विकास अब विनाश का रूप भी धारण करता जा रहा है जिसके लिए प्राकृतिक पर्यावरण के संरक्षण तथा जीवन मूल्यों से किनारा करने वाला आज का मनुष्य स्वयं उत्तरदायी है।

काफिलों में बढ़ते वाहन घटते धरती और वन

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मानव ज्यूं-ज्यूं विकास की ऊंचाईयों को छूता गया, जीवन उतना ही समृद्ध और आरामदायक बनता गया। कहा तो यूं भी जाता रहा है कि समृद्धि भाग्य के बिना नहीं आ सकती है। परन्तु इस वाक्य के अर्थ यूं भी तो समझे जा सकते हैं कि मनुष्य जब लक्ष्य की साधना में अनवरत निरत होकर कर्म-पथ पर अग्रसर होता है तो सफलता भी अपने द्वार खोल ही देती है। अर्थात विधि उसे वहां तक पहुंचा देती है। यह अलग बात है कि लक्ष्य का वह बिन्दु निर्माण से होता हुआ अपनी चरम सीमा तक निर्माण में ही फलीभूत होता रहे या सोच में आई विकृति की किसी कड़ी द्वारा विनाश के चरम पर पंहुच जाए। समृद्धि की अभिलाषा एक ऐसी मृगतृष्णा है जिसकी तृप्ति कभी भी संभव नहीं हो पाती है। यदि कोई सन्तुष्टि के इस बिन्दु पर पहुंचना ही चाहता हो तो वह अतीत के सागर में तैरती सरलता और संतोष की लहरों के सहारे पीछे मुड़कर देखने से ही पहुंच पाता है।

ऐश्वर्य एवं समृद्धि की गाड़ी को गति देने के लिए व्यक्ति को अन्य कई गाड़ियों की आवश्यकता पड़ जाती है और आज हो भी यही रहा है। जीवन की गाड़ी को गति प्रदान करने के लिए भागम-भाग के इस युग में न जाने कितनी और गाड़ियां सड़कों पर उतर आई हैं और आगे भी आती रहेंगी। गति देने वाले वाहनों के सागर की भंवरों का वेग थमता ही नहीं। बल्कि आगे-आगे बढ़ता ही जाता है और दूर तक इसके थमने की कोई आशा भी दिखाई नहीं देती है।

धरती की सतह पर सड़कों के ऊपर दौड़ने वाले इन वाहनों की संख्या में दिन-दुगनी रात चौगुनी उन्नति होती ही जा रही है। बस, ट्रक, कार जीप ट्रैक्टर मोटर साईकिल स्कूटर सभी के सभी नदी की किसी प्रलयंकारी बाढ़ की तरह बढ़ते ही जा रहे हैं। सड़कें तंग पड़ती, चौड़ी होती और फिर तंग पड़ती जा रही हैं। नित नये बनते बाईपासों, नई खुदती और खुद-खुद कर चौड़ी होती सड़कों के तले दबकर धरती कम पड़कर पैदल चलने वालों को जवाब देती जा रही है।

आवश्यकता से अधिक धन का बढ़ता सामर्थ्य, अहं की तृप्ति के लिए प्रदर्शन की भावना और जीवन के खोखलेपन की गुणवत्ता के धरातल पर टिका इन दोनों का गठबंधन अपने टूटने तक न जाने कितनी और राष्ट्रीय-बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को एक से बढ़कर एक आकर्षक डिजाइन के वाहनों के निर्माण का निमन्त्रण देता जाएगा।

इस प्रकार प्रदूषण को दूर करने के नाम पर संस्थाओं एवं कम्पनियों को चलाने तथा प्रदर्शनोन्मुख प्रबन्धन के लिए प्रयोग में लाए जाने वाले वाहनों का काफिला न जाने कितना और लम्बा होकर अपने भार के तले पर्यावरण को ध्वस्त कर प्रदूषण को बढ़ाता जाएगा।

विषय की गहराई की पकड़ से दूर अहं, स्वार्थ और प्रदर्शन की भावना से आक्रांत इन वाहनों की बढ़ोतरी के मोहपाश में फंसा विशेषज्ञों का एक समूह भी अपने ज्ञानपुंज के एक भाग पर अंधकार की परत के प्रहार से वाहनों के इसी काफिले से हारता सा दिखता जा रहा है। यह भी एक विडम्बना ही है कि रोग उपचार से कम न होकर बढ़ता ही जा रहा है। यदि यह काफिला ऐसे ही बढ़ता और चलता गया तो ध्वनि प्रदूषण लोगों को बहरा तो बनाएगा ही, उनमें रक्तचाप और तनाव को भी बढ़ाएगा। मस्तिष्क के तन्तुओं पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इतने भर से छुटकारा पाना भी कठिन है। इन वाहनों के धुएं से बढ़ता वायु प्रदूषण कई रोगों को जन्म देगा जिनसे फिर मुक्ति पाना कठिन हो जाएगा।

भारत के घने बसे महानगरों, नगरों तथा औद्योगिक दृष्टि से विकसित शहरों में तो इन गाड़ियों की संख्या में अत्याधिक वृद्धि हो ही रही है। परन्तु छोटे-छोटे नगरों तथा हिमाचल जैसे प्रकृति की छटा में बसे छोटे से पर्वतीय प्रदेश में भी इन वाहनों की संख्या में भारी वृद्धि होती जा रही है। ऋतुवश धरती से निकलते कीट-पतंगों की तरह बढ़ती इनकी संख्या यहां के प्राकृतिक परिवेश की सार्थकता को ही कम करती जा रही है। कुछ वर्ष पूर्व साईकिल तक के न चलने के कारण सुरक्षित पड़ा यहां के पर्यावरण का कवच आज असंख्य वाहनों की ध्वनि और धुंए के प्रहार से ध्वस्त होता जा रहा है। सड़कों के कटने से बच गए वृक्षों के पत्तों पर वाहनों के धुंए तथा धूल की मार की स्याही स्पष्ट देखी जा सकती है। गाड़ियों की दौड़ के लिए पहाड़ों की छाती पर बिछता सड़कों

का जाल भावी घटनाओं की पूर्व सूचनाओं का स्थल बनता जा रहा है।

किसी शहर के बीचों बीच जाती सड़क के किनारे या बीच में किसी कारणवश यदि कोई आकस्मिक अवरोधन पड़ जाये तो पल भर से भी कम समय में चलती गाड़ियों का यह समूह खड़ा होकर चलती चींटियों की लम्बी कतार का रूप ले लेता है। अन्तर केवल इतना ही होता है कि चींटियों की लम्बी होती ऐसी पंक्ति एक ही दिशा की ओर सर किए रहती है जबकि वाहनों की यह कतार अवरोधन के पास इंजन से इंजन जोड़े दो विपरीत दिशाओं में लम्बी होकर इन्हीं चींटियों की तरह बढ़ती जाती हैं। सड़क को पार करना तो कठिन हो ही जाता है। परन्तु यदि किसी रोगी को गम्भीर अवस्था में उपचार हेतु तुरन्त अस्पताल पहुंचाना हो तो प्रगतिशीलता के इस अभिशाप से पराजित होकर वह शायद विकास की ऊंचाईयों की ओर बढ़ती इन सीढ़ियों के आरम्भ में ही वाहनों की इस कतार के भीतर अपनी अन्तिम सांस छोड़ जाए। एक मिनट के अवरोधन की अवधि से वाहनों पर पड़ा प्रतिकूल प्रभाव उन्हें वहां से हटने के लिए घंटों का समय भी ले लेता है। तब तक पैदल चलने वालों से भी चलने का अधिकार उनसे छिना ही रहता है।

इस समस्या की ओर ध्यान तथा इससे निपनटे के लिए तंत्र की इच्छा शक्ति तथा कुशलता की पराकाष्ठा का अनुमान तो उस समय सहज रूप से लग जाता है, जब समारोहों की शोभा बढ़ाने के लिए किसी प्रदेश के मन्त्रियों एवं मुख्यमन्त्री के पीछे चलने वाले वाहनों का काफिला उस नेता के मित्तव्ययितता सम्बन्धी भाषण के झंडे के तले और भी लम्बा होता जाता है। इन अगणित निजी और मितव्ययितता के लहराते झंडे के साथ सरकारी वाहनों के पहियों के नीचे दबकर संकरी होती सड़क इनसे निकलने वाली ध्वनि की स्वर लहरी की चपेट से सड़क के किनारे चलने वाले किसी लूले-लंगड़े या बहरे अपंग को कुछ क्षणों के लिए भयभीत भी कर डाले तो बड़ी बात नहीं है।

हिमाचल प्रदेश हो या उत्तरांचल, जम्मू-कश्मीर हो या फिर दार्जिलिंग की पहाड़ियां, मैदानी क्षेत्रों के नगर, महानगर हों या ऐतिहासिक स्थल या तीर्थ स्थल, बढ़ते वाहनों ने वहां की कमल सी आभा, विमल सी छटा तथा उसके दूसरे प्राकृतिक अवृत्ति पर वज्रपात सा कर दिया है, जिसकी प्रहार क्षमता उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही है। पूरे विश्व में न्यूनाधिक ऐसी ही स्थिति बनती चली जा

रही है। ध्वनि तथा धुंआ प्रदूषण अगणित रोगों तथा दुर्घटनाओं को तो निमन्त्रण देता जा ही रहा है। परन्तु पशु-पक्षियों का प्राकृतिक आवृत्त भी छोटा होकर उनके स्वच्छन्द तथा सुरक्षित जीवन पर कुठाराघात करता जा रहा है।

इन वाहनों के रख-रखाव के लिए सड़कों के साथ-साथ आवासीय आवश्यकता भी बढ़ती जा रही है। प्रयुक्त हो रहे ईंधन, निर्माण में लगती सामग्री तथा बढ़ती उसकी मात्रा से धरती का गर्भ खोखला होकर निर्बल होता जा रहा है। कृषि भूमि घटती और दुर्घटनाएं बढ़ती जा रही हैं। पर्यावरण का स्तर गिरता और सड़क किनारे निर्माण बढ़ता जा रहा है। आशंका तो यह भी व्यक्त की जा रही है कि भागती इन गाड़ियों रूपी सरिता में बढ़ता पानी और उसका वेग ऊपर तैरती नाव में विकास का पुंज लेकर बैठे यात्रियों को कहीं किसी ऐसे भंवर तक न पहुंचा दे जहां से पीछे लौटना फिर उनके लिए सरल न हो और भययुक्त ठहराव के साथ उस भंवर में फंसे रहना ही उनकी नियति बन जाए।

धरती पर अंधाधुंध चींटियों के झुण्डों की तरह उमड़ती और बढ़ती ही जाती गाड़ियों से जीवन पर पड़ते प्रतिकूल प्रभाव के दृष्टिगत इनके आवागमन को जानने के लिए लेखक ने हिमाचल प्रदेश के एक छोटे से जिले हमीरपुर में इसी वर्ष के मार्च मास के द्वितीय सप्ताह के एक दिन सात घंटों के लिए हमरीपुर नगर में प्रवेश करने वाले तथा नगर से बाहर जाने वाले वाहनों की संख्या जानने के लिए निजी रूप से एक नमूना सर्वेक्षण करवाया था।

इस छोटी सी अवधि में छोटे से ही इस पहाड़ी नगर में 917 बसों-ट्रकों, 617 जीपों, 616 कारों, 76 ट्रैक्टरों तथा 663 स्कूटरों-मोटरसाईकलों ने प्रवेश किया। 913 बसें, ट्रक, 622 जीपें, 620 कारें 77 ट्रैक्टर तथा 647 दोपहिया वान बाहर गए। इनमें उन वाहनों की संख्या नहीं है जो मुख्य मार्ग को छोड़ कर नगर के भीतर घूमते रहे।

जिस छोटे से पूरे जिले में 1987-88 में केवल एक टैक्सी और 5-6 कारें ही थीं वहां वाहनों की संख्या अब हजारों में हो जाने से भारत ही नहीं बल्कि धरती के दूसरे भागों में भी इनमें हो रही बढ़ोत्तरी की सीमा का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। जबकि केवल 1,118 वर्ग किलोमीटर में फैला यह एक छोटा सा ही पर्वतीय जिला है।

यह भी सत्य है कि जीवन को अधिक समृद्ध, वैभवशाली तथा विलासितापूर्ण बनाने के लिए गतिशीलता की आवश्यकता पड़ती है जो यातायात के शीघ्रगामी साधनों से आती है। परन्तु यातायात के प्रयोग में लाए जा रहे साधनों के द्वारा दूसरी ओर पड़ते जा रहे कुप्रभाव से आंखें भी कैसे मूंदी जा सकती हैं? यह भी कैसी समझदारी है कि एक सौ मीटर तक सफर या यात्रा करने से हम ऐसे कतरा जाते हैं मानो पसीने से लथपथ कर डालने वाली कोई दुर्गम यात्रा हो और झट से अपना स्कूटर या कार निकाल कर उस दूरी को पार कर डालते हैं। केवल यही नहीं प्रभात या संध्याकाल सैर करने के लिए एक किलोमीटर तक की पदयात्रा न कर, कार द्वारा यह सांकेतिक सैर करने के भी हम आदी बनते जा रहे हैं। इसलिए हमारे स्वास्थ्य पर इस सैर का प्रभाव भी तो सांकेतिक ही पड़ता जा रहा है। हम कई रोगों की जकड़न में फंसकर स्वास्थ्य लाभ के दृष्टिकोण से असहाय से बने रह जाते हैं। थोड़ा सा भार उठाने में भी हम लज्जा और ग्लानि का अनुभव करते हैं। जबकि लज्जा के दूसरे वास्तविक कारणों में हम लज्जा के इस दृष्टिकोण को ही बदल डालते हैं और वहां लज्जा का अनुभव नहीं करते हैं। व्यायाम भी छोटे से कमरे के भीतर सिमटी एक सांकेतिक क्रिया ही बनता जा रहा है। एक ही घर में अपने विलासितपूर्ण जीवन-यापन के प्रदर्शन के लिए अलग-अलग कई गाड़ियों के प्रयोग का रुझान इनके कुप्रभाव के प्रति अज्ञानता या समस्या की गम्भीरता के प्रति तंग मानसिकता का परिचय देता जा रहा है।

नगरों, उपनगरों और महानगरों में वाहनों की भीड़, सड़कों और राजमार्गों को छोटा और संकरा बनाती जा रही है। सोच के वर्तमान रुझान के भीतर भविष्य में इनकी संख्या में बढ़ोत्तरी के रुकने या कम होने की कोई आशा भी नहीं है। हमारी बढ़ती सांकेतिकता सड़कों, रास्तों की तरह पर्यावरण की स्वच्छता में भी बढ़ते संकरेपन को नगरों से गांव-गांव होकर घर-घर तक पहुंचाती जा रही है।

जीवन की क्या शैली हो, पर्यावरण की स्वच्छता को बनाये रखते हुए उसके ही अनुरूप साधनों की उपलब्धि एवं प्रयोग कैसे किया जाए? समृद्धि का वास्तविक अर्थ क्या है? इस दिशा में अब अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

प्रदूषण से मुक्ति, एवं इसमें ठहराव के परिदृश्य में घटते वन, समृद्धि के मन

चाहे अर्थ बढ़ते वाहन, और वाहन विहीन सरल लोगों से छिनता भयमुक्त पैदल चलने का अधिकार अपव्यय, पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबन्धन में कुशलता के खोखले ढोल की पोल को अब सबके सामने खोलता जा रहा है। निर्बाध गति से बढ़ते धरती–यानों के इस बेड़े की मार से बचने के लिए आखिर विश्व को कुछ तो हल ढूंढना ही पड़ेगा।

अमर उजाला नोयडा 26 मार्च 2001 दैनिक जागरण जालन्धर 7, 8 तथा 9 अप्रैल 2001 (पृष्ठ 9) तथा अन्य पत्रों में प्रकाशित

मौत के पैगाम वाहन

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

आवागमन के साधनों में जैसे-जैसे सुधार होता गया वैसे-वैसे दूर-दूर तक फैला हमारा संसार भी समीप आता गया। सम्बन्ध बढ़े, समझ बढ़ी और आपसी व्यापार द्वारा विकास के साथ सभी देशों एवं प्रदेशों का आर्थिक सामर्थ्य भी बढ़ा है। बैलगाड़ी, साइकिल, बस, कार द्वारा अपनी यात्राओं को पूरा करता मनुष्य आज हजारों किलोमीटर प्रति घंटा की गति से चलने वाले वायुयानों तथा राकेटों द्वारा धरती और आकाश की दूरियों को मापने लगा है। परन्तु ये सुविधाएं बड़ी तीव्रता के साथ पर्यावरण को ध्वस्त कर भावी जीवन को दुखद बनाने का स्पष्ट संकेत भी दे रही हैं।

हिमाचल प्रदेश में पर्यावरण संरक्षण की बात बार-बार की जा रही है। इसके लिए पुरस्कार प्राप्त करने का डंका भी सरकारी चौपाल पर ऊंचे स्वर से बजाया जाता है। परन्तु वास्तविकता यह है कि यहां का पर्यावरण दिन-प्रतिदिन बिगड़ता जा रहा है। इसमें सुधार एवं इसके संरक्षण का उत्तरदायित्व वे लोग भी लेते दिखाई देते हैं जो स्वयं इसे नष्ट करते जा रहे हैं। यह एक ऐसा प्रश्न है जो पर्यावरण क्षरण और उसके संरक्षण के बीच एक मजबूत दीवार की तरह खड़ा है। पर्यावरण का जो रूप, स्वरूप और गुणवत्ता प्रदेश में है, वह प्रायः प्रकृति प्रदत्त है। यहां की नदियां, नाले, घाटियां, चोटियां, ताल-तलइयां, कुंए बावड़ियां सभी अपनी पर्यावरणीय आभा तथा नैसर्गिक सौंदर्य को खोते दिखाई देते जा रहे हैं। ऊना से किन्नौर तथा सिरमौर से भरमौर तक का प्राकृतिक धरातलीय आवृत आधुनिकता जनित प्रदूषण से आक्रांत है। नगर-नगर, गांव-गांव तथा घर-घर को जोड़ती सड़कों तथा रास्तों की संख्या बढ़ती जा रही है। साइकिल तक के पहियों के नीचे न दबने वाली धरती के ऊपर अब लाखों दो व चौपहिया वाहन दिन-रात दौड़ रहे हैं। इन वाहनों ने जहां हमारे लिए सुविधाओं का लम्बा खाता खोल दिया है वहीं इन वहनों का दुष्प्रभाव हम सब पर तथा भावी पीढ़ियों के जीवन पर भारी पड़ेगा। इन्हीं दुष्परिणामों के आकलन की दृष्टि से बढ़ते इन वाहनों की स्थिति तथा इनके प्रत्यक्ष दुष्प्रभावों पर प्रकाश डालते हैं।

इस छोटे से प्रदेश का आकार 55673 वर्ग किमी है। 1991 की जनगणना

के अनुसार यहां 16997 आबाद गांव थे। 2001 की जनगणना के अनुसार ऐसे गांवों की संख्या 17495 थी तथा नगरों एवं कस्बों की संख्या 59 थी। 1976 में प्रदेश में हर प्रकार की सड़कों की लम्बाई 14345 किमी थी जो 1985 में बढ़कर 19713 किमी हो गई। 1993-94 में यह लम्बाई बढ़कर लगभग 23000 किलोमीटर थी। 1998 तक 7654 गांव सड़कों से जुड़ चुके थे। 31.03.2000 को सड़कों की लम्बाई 26734 किमी. के आंकड़े को छूने लगी। ये सड़कें 7803 गांवों को छूती थीं। 2006-07 में सड़कों की लम्बाई 29329 किमी हो गई। अब यह 30000 किमी से भी आगे चली गई है। इसने 8430 गांवों को अपनी गोद में ले लिया है। प्रदेश की सड़कों पर प्रतिदिन लगभग 3 लाख गाड़ियां दौड़ती हैं। यहां प्रति एक लाख की जनसंख्या पर गाड़ियों की संख्या 4302 आंकी गई है। इस दृष्टि से प्रदेश का देश में 11वां स्थान है तथा पहाड़ी राज्यों में प्रथम स्थान है। उधर नैनों के आने से प्रदेश में लगभग 50000 गाड़ियां बढ़ जाने का अनुमान है। हमीरपुर जिले में 1987-88 में जहां केवल एक टैक्सी हुआ करती थी वहां अब इनकी संख्या सैकड़ों में है। 2001 में लेखक द्वारा करवाए लगातार 7 घंटों तक के सर्वेक्षण पर आधारित एक अनुमान के अनुसार इस जिले के मुख्यालय में प्रवेश करने तथा बाहर जाने वाले चौपहिया वाहनों की संख्या 2226 तथा दोपहिया वाहनों की संख्या 663 थी। परन्तु आज इन वाहनों की संख्या दोगुनी से कम नहीं लगती है।

वाहनों की संख्या में हो रही बढ़ौतरी का कारण है लोगों की आर्थिक सामर्थ्य में बढ़ोतरी। प्राकृतिक पर्यावरणीय मानदंडों की अवहेलना में उपजी आराम परस्ती तथा चालाकी के कारण भी एक ही परिवर में आवश्यकता से अधिक वाहनों का प्रयोग हो रहा है। इनसे जहां प्रदूषण फैल रहा है और ग्लोबल वार्मिंग बढ़ रही है वहीं दुर्घटनाओं द्वारा होने वाली जान-माल की हानी भी बढ़ रही है। 1999 में दुर्घटनाग्रस्त होने वाले वाहनों की संख्या लगभग 2043 थी। परन्तु 2006 में यह संख्या लगभग 2745 हो गई। इन दुर्घटनाओं में प्रतिवर्ष सैंकड़ों लोग काल का ग्रास बने।

नशे में वाहन चलाना, ओवर लोडिंग, चालक का बातें करना, वाहनों में टीवी तथा गानों की आवाज का ऊंचा स्वर, हार्नों की ध्वनियों में एकरूपता का न होना दुर्घटनाओं का बड़ा कारण है। इससे वाहनों के आने-जाने का ठीक आभास नहीं हो पाता है। उच्च मार्गों के किनारे आवासीय तथा व्यवसायिक

निर्माण व्यवस्थित नहीं हैं। वाहनों की दशा तथा चालक की मानसिक स्थिति भी इन कारणों की संख्या को बढ़ा देती है।

दुर्घटनाओं तथा वाहनों के अनावश्यक प्रयोग को कम करने के लिए आवश्यक है कि उच्च मार्गों के किनारे आवासीय तथा व्यावसायिक निर्माण को व्यवस्थित किया जाए। अनावश्यक वाहन क्रय तथा प्रयोग पर रोक लगाई जाए। वाहनों से निकलने वाली सावधानी सूचक ध्वनियों एवं हार्नों में नियम द्वारा एकरूपता सुनिश्चित की जाए। चलते वाहनों में संगीत प्रतिबन्धित किया जाए। ट्रकों तथा बसों में ओवर लोडिंग न हो। पुलों के समीप तथा ढलान के ऊपर जाती सड़कों के पैरापिट मजबूत बनाया जाए।

प्रदेश में भारी कटान तथा खदान द्वारा भू-असंतुलन बढ़ रहा है। भारी भरकम निर्माण भूकम्प में भारी जान-माल की तबाही करेगा। पर्यावरण सरीखे अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय को चुनावों में प्रमुख मुद्दा नहीं बनाया जाता है। अच्छे जीवन यापन के लिए विकास अच्छी बात है। परन्तु विकास द्वारा जीवन की वास्तविक गुणवत्ता घटाना और उसे खतरे में डालना बुरी बात है।

दैनिक जागरण धर्मशाला 27 मई 2009 तथा अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित

पर्यावरण हित में लठियाणी मंदली पुल आवश्यक

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

पृथ्वी पर मनुष्य जैसे-जैसे अपने ज्ञान का विस्तार करता जाता है वैसे-वैसे उसी गति से विकास भी अपना रंग दिखाता है और उसे मनुष्य पर चढ़ाता जाता है। यह अलग बात है कि इन दोनों के मंतव्य और गंतव्य की वास्तविक दिशा क्या है, उसका लम्बे समय तक पता ही नहीं चलता है। आज भौतिक विकास ने सामाजिक, राजनैतिक, अध्यात्मिक आदि क्षेत्रों की गतिविधियों को अपने आवृत में लेकर रख दिया है। साक्षरता जिस दिशा को प्रकाशित करती जाती है, जन जागरुकता भी उसी दिशा की ओर अपनी गति पकड़ती जाती है। जिस प्रकार ज्ञान की कई विधाएं और शाखाएं है उसी प्रकार विकास की भी कई दिशाएं प्रभाव और सीमाएं हैं। आज सुविधाजनक लगने वाली, विकास की देन कई वस्तुएं कल को हमारे लिए समस्याएं भी उत्पन्न कर सकती हैं। हम आज भी बहुत सी सुविधाओं तथा खाद्य पदार्थों के संबंध में विपरीत प्रभाव को अनुभव करते हुए भी जाने-अनजाने उनके प्रयोग एवं उपभोग में निरंतरता बनाए रखने को विवश रहते हैं।

संतुलनात्मक दृष्टिकोण को अपनाने, उसे आचरण में ढालने तथा त्यागनिष्ठ भावना से अनुप्राणित बुद्धि कौशल के खोते अपने सामर्थ्य के कारण हम सही दिशा का चयन कर सही योजना बनाने में विफल रह जाते हैं। ग्लोबल वार्मिंग की समस्या के उत्पन्न होने, उससे निपटने तथा उपलब्ध संसाधनों के दुरुपयोग एवं मितव्ययता को लेकर भी कुछ ऐसा ही है। जिला ऊना से गुजरने वाले हमीरपुर लठियाणी ऊना राष्ट्रीय मार्ग को भी इसी प्रपेक्ष्य में देखा जा सकता है। लठियाणी ऊना वाया बंगाणा एक ऐसा राष्ट्रीय उच्च मार्ग है जिस पर प्रति दिन हजारों की संख्या में वाहन गुजरते हैं। गोविन्द सागर झील में भाखड़ा बांध का पानी भर जाने के कारण लगभग 45 वर्ष पूर्व लठियाणी ऊना वाया मंदली सड़क बंद कर दी गई थी और लठियाणी ऊना वाया बंगाणा नई सड़क निकाली गई थी। इस नई सड़क ने लठियाणी से ऊना की दूरी 20 कि.मी. बढ़ा डाली है। पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश की ओर से बाबा बालक नाथ तथा बाबा बालक नाथ से श्री नैना देवी जी जाने वालों को यह दूरी अखरती है।

वर्तमान समय में बढ़ते आर्थिक सामर्थ्य एवं धन सम्पत्ति के बढ़ते लालच के कारण गाड़ियों का उपयोग भी दिनों दिन बढ़ता ही जा रहा है। ऐसे में हजारों

गाड़ियों द्वारा 20 कि.मी. अतिरिक्त दूरी तय करने से प्रतिदिन कई हजार लीटर डीजल और पैट्रोल की अतिरिक्त खपत हो रही है जो आगे से आगे बढ़ती जा रही है। यही नहीं अतिरिक्त दूरी तय करने से प्रतिदिन प्रति हजार गाड़ियों पर देश का 500 घंटों का समय भी बर्बाद हो रहा है। परंतु आज विश्व के सामने इससे भी विकट ग्लोबल वार्मिंग की समस्या है। जिसे पैट्रोल और डीजल की बढ़ती खपत आगे से आगे बढ़ाती जा रही है। बाबा बालक नाथ से श्री नैना देवी जी जाते समय तो दूरी और भी बढ़ जाती है जो संसाधनों पर और भी चोट करती है। यह एक ऐसी ज्वलंत और गंभीर समस्या है जो राष्ट्रीय संसाधनों पर भारी पड़ने के साथ-साथ हमारे पर्यावरण को भी ध्वस्त करती जा रही है। सरकार एक ओर पर्यावरण के संरक्षण का ऊंचे स्वर से ढोल पीटने से थकती नहीं तो दूसरी ओर यहां पर्यावरण को नष्ट होते देख भी मूक दर्शक सी बनी लगती है।

पर्यावरण के ध्वस्त होने का यह सिलसिला पिछले 45 वर्षों से निरंतर जारी है। जबकि लठियाणी और मंदली के बीच पुल डाल कर इस समस्या को सुलझाया जा सकता है। इस पुल के निर्माण की दिशा में पहले कुछ विचारगत प्रयास हुए भी थे। परंतु लगता है इन प्रयासों को या तो राजनैतिक दांव पेचों की जंग लग गई है या फिर सही दिशा में सही सोच और सही योजना निर्माण की कमी है।

लठियाणी से ऊना वाया मंदली तलाई पीर निगाह सड़क पहले भी और अब भी मंदली से ऊना वया पीर निगाह अच्छी और पक्की हालत में है। इसमें बढ़ती गाड़ियों के काफिले का बोझ ढोने के लिए केवल कुछ सुधार की ही आवश्यकता है। इस समय सारा संसार बढ़ती ग्लोबल वार्मिंग तथा ध्वस्त होते प्राकृतिक संसाधनों से त्रस्त है। उधर हम अनावश्यक रूप से अतिरिक्त पैट्रोल डीजल की खपत द्वारा कार्बन डाइआक्साइड का उत्सर्जन बढ़ा कर ग्लोबल वार्मिंग को और चांद लगाने में लगे हैं। पृथ्वी को बचाने तथा बदल रहे मौसम की समस्या से निपटने के लिए कुछ समय पूर्व कोपेनहेगन में पृथ्वी शिखर सम्मेलन हुआ। इसमें राष्ट्रध्यक्षों एवं उनके समकक्षों ने चोटी के योजनाकारों एवं वैज्ञानिकों की सहायता के साथ पर्यावरण संकट से उबरने के लिए नीति निर्माण के उद्देश्य के साथ इस शिखर सम्मेलन में भाग लिया। परंतु विडम्बना देखिए कि यह सम्मेलन भी एक दूसरे पर दोषारोपण के साथ उलझ कर रह गया और अपने गंतव्य की ओर समुचित गति के साथ बढ़ने में विफल हो गया। सरकारी योजनाएं पूरी तरह सिरे चढ़ती दिखाई नहीं दीं। जो लोग या संस्थाएं निजी रूप से अपना व्यय कर

जीवन को बचाने के लिए योजना लेकर कोपेनहेगन पहुंचे उनके विचारों को भी सरकारी कर्णधारों ने अनसुना कर दिया। न अपने आप विशेष कुछ कर पाए और न धरती को बचाने के लिए सरकार से बाहर के लोगों के बढ़ते हाथों को ही थाम पाए। स्थितियां यदि ऐसे ही जारी रहीं तो चांद मंगल पर बसने से पहले ही धरती पर जीवन झुलस कर नष्ट हो जाएगा। आवश्यकता है मानवीय कर्मों द्वारा बढ़ती गर्मी को रोकने की। सरकार को चाहिए कि राजनैतिक संकुचन से ऊपर उठकर सटीक नीति एवं योजना निर्माण की दिशा की ओर पग बढ़ाए। राष्ट्रीय संसाधनों, लोगों की सुविधा तथा पर्यावरण संरक्षण के हित में लठियाणी मंदली पुल का शीघ्र और प्राथमिकता के आधार पर निर्माण करें। यह व्यापक मानवीय तथा राष्ट्रीय हित में आवश्यक है।

हिमाचल रिपोर्टर पालमपुर 27.6.2010, हमीरपुर पत्रिका 26.07.2010, हिमाचल केसरी धर्मशाला में प्रकाशित

खण्ड–7

क. पर्यावरण हितैषी विकास तथा आपदा में हानि कम कैसे हो।

भावी पीढ़ियों की चिंता के साथ पर्यावरण हितैषी विकास के उद्देश्य से कुछ योजना क्षेत्रों का हिमाचल प्रदेश सरकार से पुनः परिसीमांकन करवाया, ताकि प्राकृतिक आपदा के समय लोगों की जान–माल की हानि भी कम हो।– उपलब्धी

ख. गोविन्द सागर झील के सैस्मिक जोन को बदलने का मुद्दा उठाया।

सुरक्षात्मक उपायों को सुनिश्चित करवाने के उद्देश्य से हिमाचल प्रदेश के जिला बिलासपुर तथा ऊना में पड़ती गोविन्द सागर झील के सैस्मिक जोन को बदलने का मुद्दा भारतीय मानक ब्यूरो, नई दिल्ली के साथ उठाया है ताकि सुरक्षात्मक उपायों को अपनाने के लिए अधिक सावधानी हो।

ग. ज्वालामुखियों के फूटने का नया शोध एवं निष्कर्ष

ज्वालामुखियों के फूटने में वृद्धि तथा उनके नए स्थानों में फूटने का नया शोध निष्कर्ष प्रकाशित किया।

पर्यावरण हितैषी विकास हेतु सफल प्रयास

(क) हिमाचल प्रदेश सरकार से योजना क्षेत्रों का पुनः परिसीमांकन करवाया

हिमाचल प्रदेश सरकार ने पर्यावरण हितैषी विकस के लिए बनी योजना में अनेकों गांवों को सम्मिलित किया था। परन्तु 15 वर्षों तक इस पर होते आ रहे सरकारी व्यय के उपरान्त भी सरकार ने इन क्षेत्रों को सुनियोजित पर्यावरण हितैषी विकास की योजना से निकाल दिया।

लेखक ने प्रभावशाली ढंग से यह मुद्दा सरकार के साथ उठाया। सरकार को भेजे पत्रों, समाचार पत्रों में प्रकाशित अपने लेखों और प्रैस वार्ताओं द्वारा जनता के होते भारी व्यय के उपरान्त भी पर्यावरण हितैषी सुनियोजित विकास को रोकने पर आपत्ति जताई। इस पग को सुरक्षा तथा पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से घातक बताया तथा रद्द की गई अधिसूचना की बहाली की मांग की ताकि प्राकृतिक आपदा के समय भी जान-माल की हानि कम से कम हो।

सरकार ने सम्बन्धित योजनाकार से तर्कों पर अपने पत्रांक 7641-42 दिनांक 29.11.2012 द्वारा टिप्पणी मांगी। योजनाकार ने भी लेखक के तर्कों तथा मांग का अपनी टिप्पणी में समर्थन किया। इसके पश्चात सरकार ने लेखक की मांग एवं सुझाव को मानते हुए क्षेत्रों का पुनः परिसीमांकन कर दिया तथा हिमाचल प्रदेश सरकार के सम्बन्धित विभाग के निदेशक ने अपने पत्रांक 2013-1-2178 दिनांक 27.6.2014 द्वारा इसकी सूचना लेखक को भेज दी।

इस प्रयास से कुछ लोग अप्रसन्न हो सकते हैं। परंतु यह उनके तथा उनकी भावी पीढ़ियों के अच्छे भविष्य के साथ सरकार के भी हित में है। हिमाचल प्रदेश सरकार से भी आग्रह किया था कि लोगों के मकानों के नक्शे सरलता से पास हों, इसका हल सरकार करे और उसका मार्ग खोले। नंगल बांध से निकाली नहर का पानी आरंभ में पंजाब, हरियाणा के किसान खेतों में देने से मना कर देते थे परंतु उन्हें समझाया गया उनकी अन्य कठिनाईयों का समाधान भी किया गया। यहां भी ऐसा किया जा सकता है।

(ख) सरकार से अधिक सुरक्षात्मक उपाय सुनिश्चित करवाने के उद्देश्य से सैस्मिक जोन को बदलवाने के प्रयास (गोविन्द सागर झील के सैस्मिक जोन को बदलने का मुद्दा उठाया)

भाखड़ा बांध के कारण एक बड़ी झील बन गई है। इसे गोविन्द सागर झील का नाम दिया गया है। लगभग 54 किलोमीटर लम्बी इस झील के पानी के नीचे हिमाचल प्रदेश के जिला बिलासपुर का अधिकतर क्षेत्र है तथा कुछ क्षेत्र जिला ऊना का भी है। इन क्षेत्रों में लगभग 900 करोड़ टन पानी का अधिक बोझ लद गया है।

पानी के नीचे का क्षेत्र भूकम्प की दृष्टि से संवेदनशील जोन न. 4 में है। परन्तु दूसरे क्षेत्र अति संवेदनशील जोन न. 5 में हैं। इन दोनों ही जोनों के क्षेत्रों में कभी भी बड़े से बड़ा भूकम्प आ सकता है।

पानी के भारी बोझ तथा विकासात्मक अन्य गतिविधियों के कारण इन क्षेत्रों की भौगोलिक परिस्थितियां बदल गई हैं। आजकल भूकम्प तथा प्राकृतिक आपदाओं को लेकर सरकार तथा समाज भी सजग हो गए हैं। हिमाचल प्रदेश सरकार ने भी आपदा प्रबन्धन बोर्ड की स्थापना की है।

बदली हुई भौगोलिक परिस्थितियों को लेकर जनता तथा सरकार को जागरूक करते लेखक के कई लेख समाचार पत्रों में प्रकाशित होते रहे हैं। प्रैस वार्ताएं भी प्रकाशित हुईं है जिनमें गोविन्द सागर झील के नीचे आते क्षेत्र को जोन न. 5 में डालने की मांग की गई, ताकि सरकार द्वारा अधिक सुरक्षात्मक उपायों हेतु पग उठाए जा सकें।

लेखक ने महानिदेशक भारतीय भू–सर्वेक्षण विभाग लखनऊ तथा भारतीय मानक ब्यूरो नई दिल्ली को बदली हुई भौगोलिक स्थितियों का विवरण देकर उनसे गोविन्द सागर झील के क्षेत्रों को सैस्मिक जोन न. 5 में डालने का अनुरोध किया जिससे सरकार द्वारा अधिक सुरक्षात्मक पग उठाए जा सकें।

भारतीय मानक ब्यूरो नई दिल्ली ने इन तर्कों एवं सुझावों का संज्ञान लेते हुए उन्हें अपनी राष्ट्रीय तकनीकी समिति की बैठक में रखने का निर्णय लिया तथा अपने पत्रांक CED 39/T-10 दिनांक 30.8.2012 द्वारा इसकी सूचना लेखक को भेज दी।

(ग) ज्वालामुखियों के फूटने का शोध निष्कर्ष

बदली हुई भौगोलिक अवस्थाओं द्वारा भू-पटल पर पड़ने वाले प्रभाव के कारण अपने 9 नवम्बर 2012 को प्रकाशित तथा यहां संकलित शोध लेख में लेखक ने इस शताब्दी में ज्वालामुखियों के फूटने में वृद्धि होने तथा इनके नये स्थानों में फूटने का शोध निष्कर्ष प्रकाशित किया है।

(पाठकों, शोधकर्त्ताओं तथा विचारकों के आकलन के लिए सरकारी तथा अन्य प्रमाण चित्रित कर दिए गए हैं। संकलित लेखों के प्रकाशन की तिथियों सहित संबधित समाचार पत्र आदि का विवरण भी लेख के अंत में नीचे दिया गया है।)

भूकंप न सही, हानि रोकें

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

पिछले 150-160 वर्षों में हमने औद्योगिक क्रांति की लंबी गाथा में वैज्ञानिक क्षेत्र में उन्नति की ऊंचाईयों के कई कीर्तिमान स्थापित कर दिए हैं। 20 जुलाई 1969 को चांद पर प्रथम मानवीय पग पड़ने के साथ अंतरिक्ष की ओर मनुष्य की ऊंची छलांग का मील पत्थर स्थापित हो गया। अब हम लाखों किलोमीटर प्रति घंटे की गति से चलने वाले रॉकेटों के सहारे मंगल ग्रह पर बस्तियां बसाने की योजनाओं के साथ प्रकाश की गति से चलने वाले रॉकेट बनाने के सपने संजोने में लगे हैं।

इतना सब कुछ कर और सोच लेने पर भी विडंबना यह है कि जिस धरती पर हम रहते हैं, उसी के भीतरी भाग की जानकारी हमारे पास बहुत कम है। पृथ्वी के भीतरी भाग की ओर गहराई तक न तो हम कोई यंत्र भेज पाए हैं और न ही इसकी संरचना के सही सम्मिश्रण को जान पाए हैं। जबकि आकाश की ओर दनदानते रॉकेटों ने कई करोड़ किलोमीटर की दूरियां पार कर ली हैं। हमारी धरती का व्यास तो मात्र 12756 किलोमीटर ही है। फिर क्या कारण है कि हम इसकी भीतरी हलचल के बारे में सटीक जानकारी अभी तक नहीं जुटा पाए हैं। हम न तो भूकंप की भविष्यवाणी करने में सफल हुए हैं न ही सुनामी और दूसरी प्राकृतिक आपदाओं का पूर्वाभास करने योग्य ही बन पाए हैं।

इस समय पृथ्वी पर भयंकर खतरे के काले बादल मंडरा रहे हैं। पृथ्वी को बचाने के लिए कितने पृथ्वी सम्मेलन हो चुके हैं। परंतु अभी तक कुछ पर्याप्त और ठोस नहीं हो पाया है। जबकि जीवन पर खतरा आगे से आगे बढ़ता जा रहा है। ऐसे में इस बात में क्या विश्वसनीयता है कि दूसरे ग्रह पर बस्तियां बसाने में नष्ट होते बहुमूल्य संसाधनों के बाद वहां, वह सब कुछ नहीं होगा, जो हम इस धरती पर बेलगाम कर रहे हैं। प्रश्न यह भी तो उठ खड़ा होता है कि वहां बस्तियां बसाने से पहले ही हम यहां के संसाधनों को समाप्त तो नहीं कर देंगे?

संसार और देश की बात को अलग कर हम हिमाचल प्रदेश में इस खतरे के आंशिक स्वरूप और उसके प्रभाव को भांपते हैं। इन दिनों यहां भी प्राकृतिक और कृत्रिम आपदाओं से लोहा लेने के उपाय खोजे जा रहे हैं। सरकार द्वारा

सुझाव मांगे जा रहे हैं। शिविर लगाकर भयंकर आपदाओं से बचाव के बारे में उपाय बताए जा रहे है। इस समय भूकंप, बाढ़ और सड़क दुर्घटनाओं की गणना की जा सकती है। इनमें भी भूकंप सबसे भयंकर प्राकृतिक आपदा है। 4 अप्रैल 1905 को कांगड़ा भूकंप त्रासदी में लगभग 20000 लोग मारे गए थे। उस समय जनसंख्या भी बहुत कम थी। परंतु आज यदि वैसी तीव्रता का भूकंप आएगा तो प्राणहानि का आंकड़ा लाखों को छू जाएगा। लाखों घायल होंगे और लाखों बेघर होंगे। इतनी बड़ी संख्या के लिए चिकित्सा, पुनर्वास तथा दूसरे आवश्यक प्रबंध तुरंत करना प्रदेश सरकार के बलबूते से बाहर हो जाएगा।

इस प्रदेश का 32 प्रतिशत भू–भाग भूकंप प्रवृत जोन पांच में तथा शेष भी सुरक्षित न हो कर जोन चार में है। इस समय धरती के गर्भ से भारी मात्रा में पेट्रोल, गैस, दूसरे खनिज तथा पानी निकाला जा रहा है। इन पदार्थों ने करोड़ों वर्षों से धरती के नीचे की ओर जो दबाव बनाया हुआ है वह अब दिन प्रतिदिन निर्बल होता जा रहा है। उधर **शिवालिक पर्वत माला की पहाड़ियां जिन पर हम निवास करते हैं, गाद की तरह मटमैली निर्बल भुरभुरी मिट्टी से बनी है। ऐसे में धरती के गर्भ की ओर घटते ऊपरी दबाव के कारण धरती के नीचे का गर्म लावा ऊपर की ओर रुख करेगा। इससे ज्वालामुखी फूटने का खतरा मूर्तरूप धारण कर लेगा। संसार में भी अनेक स्थानों पर ज्वालामुखी फूटेंगे तथा जहां पहले से फूटते हैं वहां उनके फूटने की पुनरावृत्ति में वृद्धि होगी। दो अक्तूबर 2012 सायंकाल कांगड़ा तथा अन्य क्षेत्रों में भूकंप के झटके आए।**

ऐसी आपदाओं के संभावित भावी प्रभाव को देखते हुए प्रदेश में सही दिशा में लोगों की जानमाल की रक्षा की हमारी तैयारी बहुत कम है। बहुत से बचाव के प्रभावशाली उपाय स्वार्थ, राजनीतिक लाभ और दांव पेचों के जाल में फंस कर रह जाते हैं या निरस्त तक भी कर दिए जाते हैं। हम जाने अनजाने इसी शताब्दी में मानवीय जीवन के अंत की ओर बढ़ते जा रहे हैं।

इसी आलोक में वर्ष 2009 में नगर एवं ग्राम योजना अधिनियम 1997 में बदलाव हुआ और सरकार ने उसमें लेखक के सुझाव डालकर 2 जुलाई 2009 को अधिसूचना जारी कर निर्माण पर सीमाएं निर्धारित कर बचाव के प्रकाश की कुछ अच्छी किरणें बिखेरीं। एक मई 1986 व 28 जनवरी 1997 की अधिसूचना के अनुसार सरकार ने

बहुत से क्षेत्रों को पर्यावरण हितैषी एवं सुनियोजित विकास के लिए योजना क्षेत्रों में लिया था। परंतु अगस्त 2012 को जारी अधिसूचना द्वारा सरकार ने इन क्षेत्रों को योजना क्षेत्रों से बाहर कर दिया। ऐसे में पर्यावरण हितैषी एवं व्यवस्थित निर्माण कैसे होगा। योजना निर्माण पर जो व्यय हो चुका है उसकी भरपाई कौन करेगा? लोग कभी-कभी अपना हित स्वयं नहीं सोच पाते हैं। परंतु सरकार तो समाज की सर्वोच्च नीति निर्धारक संस्था है। इक्का-दुक्का लोगों के स्वार्थ की रक्षा के लिए हजारों लोगों की भावी पीढ़ियों के प्राणों को संकट में डालना क्या सुशासन कहा जाएगा। सरकार को वाहवाही लूटने की नहीं सही राजधर्म का पालन और रक्षा करनी चाहिए तथा पर्यावरण हित में इन क्षेत्रों को योजना क्षेत्रों में रखना चाहिए।

दैनिक जागरण धर्मशाला 9 नवंबर 2012 में प्रकाशित

स्पीड पोस्ट

प्रतिष्ठा में

निदेशक,
नगर एवं ग्राम योजना विभाग,
हिमाचल प्रदेश सरकार कसुम्पटी, शिमला ।

विषयः- **भावी पीढ़ियों के व्यापक हित, पर्यावरण हितैषी विकास तथा भूकंपों के दृष्टिकोण से सुरक्षित निर्माण के हित में योजना क्षेत्रों का पुनः परिसीमांकन ।**

महोदय,

मैं आपके ध्यान में यह तथ्य लाना चाहता हूं कि अधिसूचना टी. सी. पी. एक्ट (10)-1/2008-II दिनांक 01-08-2012 के द्वारा योजना क्षेत्रों में 1997 में लिए गए क्षेत्रों को निकालने का निर्णय कुछ लोगों के हित के लिए शायद अच्छा हो । परंतु सामान्य जनता तथा भावी पीढ़ियों के व्यापक हित में इसे कदापि अच्छा नहीं समझा जाएगा । पर्यावरण तथा भावी पीढ़ियों के व्यापक हित को ध्यान में न रखते हुए अनियोजित विकास, क्षणिक रूप में कुछ को तो शायद अच्छा लगे, परंतु इसके दूरगामी परिणाम अच्छे न होकर भंयकर ही होंगे जो भविष्य में हजारों लोगों को भुगतने पड़ेंगे । न रास्ते ठीक बन पाएंगे, न सड़कें बनेंगी और चौड़ी ही हो पाएंगी, न खुलापन रह पाएगा और न ही भूकंप की दृष्टि से सुरक्षित और हल्का निर्माण ही होगा ।

पर्यावरण की रक्षा तथा सभी की भावी पीढ़ियों के व्यापक हित एवं भूकंप के दृष्टिकोण से सुरक्षा का ध्यान रखना भी तो सरकार का ही महत्वपूर्ण प्रमुख कर्त्तव्य है । कुछ लोग जाने-अनजाने में कभी-कभी अपने व्यापक हित को स्वयं भी नहीं समझाते । परंतु सरकार तो समाज की सर्वोच्च नीतिकार एवं नीतिवान संस्था है । उसे अपने कर्त्तव्य का निर्वाहन इसी ही के ही अनुरूप करना चाहिए ।

संयुक्त परिवार या इकट्ठे खातों की दृष्टि से या ऐसे अन्य प्रकार से किसी को अलग निर्माण हेतु यदि कोई कठिनाई आती हो तो उसका हल निकालने के लिए नियमों में उचित प्रावधान किया जाए । पर्यावरण प्रदर्शन का नहीं बल्कि भावना और आचरण का विषय है । इसे इसी प्रकार से ही समझा जाना चाहिए ।

टी. सी. पी. एक्ट (10)-1/2008-II दिनांक 01-08-2012 के जारी होने के परिणामस्वरूप पर्यावरण हितैषी सुनियोजित विकास तथा भूकम्प के समय लोगों के जान-माल की रक्षा पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा । वास्तविक विकास अवरूद्ध होगा और भावी पीढ़ियों का भविष्य संकटग्रस्त हो जाएगा । मैं 9-11-2012 को दैनिक जागरण में प्रकाशित अपने लेख की प्रति भी आपके अवलोकन हेतु इसी पत्र के साथ भेज रहा हूँ।

अतः आपसे अनुरोध है कि भावी पीढ़ियों के व्यापक हित, पर्यावरण हितैषी विकास तथा भूकंप के दृष्टिकोण से सुनियोजित निर्माण को ध्यान में रखते हुए हमीरपुर तथा प्रदेश के अन्य योजना क्षेत्रों में पहले रखे गए क्षेत्रों को पुनः योजना क्षेत्रों में डलवाने की कृपा करें ।

पुनः इस निवेदन तथा आशा के साथ कि आपके कार्यालय से इसकी प्राप्ति की सूचना तो मुझे शीघ्र मिलेगी ।

धन्यवाद ।

भवदीय,

रत्नलाल
10-11-2012

(आचार्य रत्न लाल वर्मा)

Daily News Paper 'Panjab Kesari (Hamirpur) Palampur 9-3-2013
पंजाब केसरी (हमीरपुर) पालमपुर (हि॰प्र॰) 9 मार्च 2013

सुनियोजित विकास जीवन की आवश्यकता

हमीरपुर, 8 मार्च (रेवती): जनसंख्या के बोझ को झेलती हुई धरती पर पर्यावरण हित में सुनियोजित विकास करवाया जाना हमारे जीवन की नितांत आवश्यकता है। लोगों को चाहिए कि भूकंप प्रभावित क्षेत्रों में ऐसे मकानों का निर्माण किया जाए जिससे आपदा के समय कम से कम जानमाल की क्षति हो। यह बात शुक्रवार को हिमाचल प्रदेश के प्रसिद्ध पर्यावरणविद् आचार्य रतन लाल वर्मा ने एक पत्रकार वार्ता को संबोधित करते हुए कही। इस अवसर पर सेवानिवृत्त वित्तीय अधिकारी अमर चंद मंढोत्रा तथा सेवानिवृत्त जिला योजना एवं अनुसंधान अधिकारी आर.एस. राणा भी उपस्थित थे।

प्रसिद्ध पर्यावरणविद् रतन लाल ने कही बात

दूसरी अधिसूचना को रद्द करने की सी.एम. से गुहार

उन्होंने याद दिलाया कि वीरभूमि हमीरपुर जिला मुख्यालय व निकटवर्ती क्षेत्रों में सुनियोजित विकास के दृष्टिकोण राज्य सरकार द्वारा 28 जनवरी, 1997 को एक अधिसूचना जारी की गई ताकि बढ़ती जनसंख्या तथा विकास की गतिशीलता एवं सुविधाओं को सुनिश्चित करने के लिए हमीरपुर के आसपास के क्षेत्रों का सुनियोजित विकास करवाया जा सके। उसके लिए नगर योजनाकार का कार्यालय स्थापित किया गया जिसके अंतर्गत कार्यरत अधिकारी व कर्मचारी कार्यरत रहे ताकि अनियोजित विकास विनाशात्मक रूप न धारण कर सके। इस क्षेत्र की जनता को आशा थी कि इस अधिसूचना के तहत क्षेत्र में सुनियोजित विकास होगा लेकिन 9 दिन चले अढ़ाई कोस जैसी स्थिति पैदा हुई और उधर राज्य सरकार ने 1 अगस्त, 2012 को एक नई अधिसूचना जारी कर 81 गांवों को बाहर निकाल दिया गया।

आचार्य रतन लाल का कहना था कि साधारण व्यक्ति अपने व भावी पीढ़ी के हित को नहीं समझ पाता परंतु सरकार तो समाज की सर्वोच्च नीति निर्धारण व विश्वसनीय संस्था हैं तथा लोगों को उनके हित व अहित के बारे में जागरूक करना उनका ही कर्त्तव्य है। उन्होंने याद दिलाया कि उन्होंने 29 सितम्बर को तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रेम कुमार धूमल को लिखे एक पत्र में सचेत किया था तथा इस अधिसूचना पर आपत्ति भी जताई थी ताकि हमीरपुर में निकटवर्ती क्षेत्रों का विकास न रुक सके। आचार्य रतन लाल ने मुख्यमंत्री से गुहार की हैं कि इस मामले में उचित कार्रवाई अमल में लाई जाए ताकि हमीरपुर जिला के निकटवर्ती क्षेत्रों में पर्यावरण हितैषी विकास न रुक सके।

नगर एवं ग्राम योजना विभाग
हिमाचल प्रदेश

संख्या: हिम/टीपी/पीजेटी/डी0पी0-हमीरपुर/खण्ड-11 7641-42 दिनांक 29-11-2012

प्रेषित,

नगर एवं ग्राम योजनाकार,
मण्डलीय नगर योजना कार्यालय,
हमीरपुर, जिला हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश 1

विषय: **भावी पीढ़ियों के व्यापक हित, पर्यावरण हितैषी विकास तथा भूकंपों के दृष्टिकोण से सुरक्षित निर्माण के हित में योजना क्षेत्रों को पुन: परिसीमांकन 1**

उपरोक्त विषय के सन्दर्भ में आचार्य रत्न लाल वर्मा, क्षेत्रीय अस्पताल के सामने वार्ड न0 5, हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश से प्राप्त पत्र संख्या: 2345, दिनांक 10-11-2012 की छायाप्रति अनुसंलग्नक सहित आपको इस आश्य के साथ संलग्न की जाती है कि मामले पर आवश्यक कार्यवाही कर विस्तृत टिप्पणी इस विभाग को भेजें ताकि मामले पर आगामी कार्यवाही की जा सके 1

संलग्न: यथोपरी

राज्य नगर योजनाकार
नगर एवं ग्राम योजना विभाग,
हिमाचल प्रदेश, शिमला-171009

प्रतिलिपी आचार्य रत्न लाल वर्मा, क्षेत्रीय अस्पताल के सामने वार्ड न0 5, हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश को उनके पत्र संख्या: संख्या: 2345, दिनांक 10-11-2012 के सन्दर्भ में सूचनार्थ प्रेषित है।

राज्य नगर योजनाकार 29.11.12
नगर एवं ग्राम योजना विभाग,
हिमाचल प्रदेश, शिमला-171009

नगर एवं ग्राम योजना विभाग
हिमाचल प्रदेश

संख्याः डीटीपी(एच) टी–1 /2013– 1119 दिनांक :- 11-2-2013

प्रेषितः

निदेशक,
नगर एवं ग्राम योजना विभाग,
हिमाचल प्रदेश, शिमला–9

विषयः– भावी पीढ़ीयों के व्यापक हित, र्प्यावरण हितैषी विकास तथा भूकंपों के दृष्टिकोण से सुरक्षित निर्माध्स के हित में योजना क्षेत्रों को पुनः परिसीमांकन ।

संदर्भ :– आपके कार्यालय पत्र संख्या हिम/टीपी/पीजेटी/डीपी–हमीरपुर खण्ड–11–7641.42 दिनांक 29.11.2012

महोदय

जय हिन्द ।

उपरोक्त विषय के सन्दर्भ में आचार्य रत्न लाल वर्मा के कथन सही हैं कि हमीरपुर योजना क्षेत्र से वाहर निकाले गये क्षेत्रों को निकालने का निर्णय सामान्य जनता तथा भावी पीढ़ियों के व्यापक हित में कदापि अच्छा नहीं समझा जायेगा । अतः क्षेत्रों को वाहर निकालने के वजाये पूरे हिमाचल प्रदेश में नगर एवं ग्राम योजना अधिनियम, 1977 के प्रावधानों को लागू करना चाहिये ताकि पर्यावरण को वचाने के साथ–साथ अनियोजित निर्माण कार्य को भी रोका जा सके ।

हमीरपुर क्षेत्र में होने वाली विकासात्मक गतिविधियों को ध्यान में रखते हुये वर्ष 1997 में हमीरपुर योजना क्षेत्र में वढ़ोतरी की थी तथा नगर परिषद के वाहर कुल 81 गांव अधिनियम के दायरे में थे । लेकिन सरकार हिमाचल प्रदेश की अधिसूचना संख्या TCP-F(10)-1/2008-II दिनांक 1-8-2012 द्वारा हमीरपुर योजना क्षेत्र के जिन 81 राजस्व गांवों को वाहर निकाला गया है उनमें से अधिकांश धर्मशाला–शिमला राष्ट्रीय राज्यमार्ग –88 पर हैं व नगर पालिका हमीरपुर के साथ लगते हैं और इनमें वेतरतीव निर्माण गतिविधियां जोरों पर है। अतः इन क्षेत्रों को पुनः हमीरपुर योजना क्षेत्र में सम्मिलित किया जाना आवश्यक है ।

नगर एवं ग्राम योजना विभाग
हिमाचल प्रदेश

संख्याः हिम/टीपी/पीजेटी/हमीरपुर पी0ए0/2013-1-2178 दिनांक-27-6-15

सेवा में,

आचार्य रत्न लाल वर्मा,
क्षेत्रीय अस्पताल के सामने,
वार्ड न05, हमीरपुर हि0प्र0

विषय: - भावी पीढ़ियों के व्यापक हित, पर्यावरण हितेषी विकास तथा भूकम्पों के दृष्टिकोण के सुरक्षित निर्माण के हित में योजना क्षेत्रों का पुनः परिसीमांकन 1

सन्दर्भ: आपके कार्यालय पत्र संख्याः 2449 दिनांक 4-4-2014

महोदय,

उपरोक्त सन्दर्भित पत्र के सन्दर्भ में यह प्रस्तुत किया जाता है कि हमीरपुर योजना क्षेत्र का पुनः परिसीमन सरकार द्वारा अधिसूचना संख्याः टीसीपी-एफ(10)-1/2008-11 दिनांक 13-01-2014 को कर दिया गया है। (छायाप्रति संलग्न) ताकि भविष्य में हमीरपुर योजना क्षेत्र का सम्पोषणीय एवं सुनियोजित विकास सुनियोजित ढंग से किया जा सके। सूचनार्थ आपके अनुमोदनार्थ प्रस्तुत है।

भवदीय,

संलग्नकः यथोपरी

SShah
27/6/15

निदेशक
नगर एवं ग्राम योजना विभाग,
हिमाचल प्रदेश, शिमला-171009

क्रमांक: 2261-72 SPEED POST दिनांक: 10-3-2012

To

The Bharitya Manak Bureau,
Manak Bhawan,
9 Bahadurshah Zaffar Marg,
New Delhi- 110002

Sub:- Keeping of Govind Sagar Lake Area of District Bilaspur (HP) in Seismic Zone No.V instead of Zone No. IV for adoption of more safety measures

Sir,

Kindly refer to Director Geological Section Indian Geological Survey Northern Region Lucknow letter No. 651/Vivid/Bhu.Bhu. Pra/2012-5481 R dated 02-03-2012 addressed to the undersigned (copy enclosed).

The changing geographical condition is affecting our life and will also affect the supposition based on the results of analysis of previous incidents/events for future occurrence of such natural calamities.

I had been attracting the attention of Scientists since long to this effect, particularly with regard to the changing geographical conditions of the Govind Sagar Lake Area of H.P. and its adverse/unexpected fatal effect on adjoining areas of H.P. and district of Punjab during the occurrence of earthquake. The accumulated load of about 900 crores of tones of water of this lake will definitely increase the intensity thereby resulting in occurrence /strengthening the fatal affect of the earthquake, as the area also seems to be on the alluvial strata of the earth. This will affect the life and livelihood of lacs of people living nearby this area.

In the interest of the safety of life and property or minimizing such loss during earthquake, the lake and its nearby area should be placed in seismic zone No. V, as according to the information published in media long back this area at present is in zone No. IV, so that steps to pay more heed and adopt more safety measure could be taken both by the Govt. and the public.

It is, therefore, requested that needful may very kindly be done in the interest of lives and property of public in general please.

Thanking you,

Yours faithfully,

10-3-2012

(Acharya Rattan Lal Verma)
Ward No. 5, Near Zonal
Opp. Regional Hospital, Hamirpur
(HP)
Mob: 9418023864

Copy for favour of kind information with request for necessary action please:

1. The Dy Director General –cum- Head of Department, Kenyan Geological Survey, Northern Zone, Lucknow w.r. to letter No. 651/vivid Bhu Pra/ 2012- 5481-R dated 2nd March, 2012
2. The Director Earthquake Geological Section, Indian Geological Survey Northern Zone Lucknow w .r. to the above quoted letter.
3. The Principle Secretary to the Hon'ble Chief Minister, Himachal Pradesh, Shimla.
4. The Member Secretary, HP State Science and Technology Council, Shimla-9.
5. The Director-cum-Secretary, Department of Science & Technology Himachal Pradesh

22

भारतीय मानक ब्यूरो
BUREAU OF INDIAN STANDARDS

मानक भवन, 9 बहादुरशाह ज़फर मार्ग, नई दिल्ली-110
Manak Bhavan, 9 Bahadur Shah Zafar Marg, New Delhi-11

Our Ref: CED 39/T-10 **30 08 2012**

Subject: Keeping 'Govind Sagar Lake Area' of District Bilaspurt, HP in Seismic Zone No. 5 instead of Zone No. 4 for adoption of more safety measures

Acharya Rattan Lal Verma
Ward No. 5, Opp. Zonal Hospital
Hamirpur,
Himachal Pradesh 177001

Dear Sir,

This has reference to your letter No.2285/2012 dated 11 08 2012 on the subject mentioned above. In this regard, we would like to inform you that we shall put up your suggestions to our technical committee for its consideration in the next meeting.

Thanking you,

Yours faithfully,

(S. Chaturvedi)
Sc 'F' (Civil Engg.)
Email : s.chaturvedi@bis.org.in

खण्ड-8

क. पर्यावरण के कुछ अन्य अवयव।

जलवायु, मिट्टी, पेड़-पौधे, नदियां-नाले, धरती की उत्पादन क्षमता, बढ़ता प्रदूषण, जल संकट, भूमि खनन, ग्लेशियर, ध्रुवों की बर्फ, ब्रह्माण्ड, ग्लोबल वार्मिंग, जनसंख्या, वर्तमान जीवन शैली, चांद, मंगल पर शीघ्र उद्योगों-बस्तियों की अवधारणा, नाराज प्रकृति का नर्तन, बनती, अपनायी जाती त्रुटिपूर्ण परिभाषाओं से निकलते अपेक्षा के विपरीत परिणाम, संभावित मांगलिक, अंतरिक्षीय विपरीत प्रभाव आदि पर लेखक के पूर्व प्रकाशित शोध लेखों का संकलन।

संयुक्त राष्ट्र संघ से जीवन को बचाने के लिए तुरंत सशक्त विश्व पर्यावरण परिषद के गठन की अपील।

ख. ग्लोबल वार्मिंग की अवधारणा, प्रभाव, वर्तमान तथा संभावित भावी स्थिति।

ग. मनुष्य का आत्मघाती युग (Self Denial Era) में प्रवेश, नया शोध एवं निष्कर्ष।

घ. मानवीय जीवन का धरती पर इसी शताब्दी में संभावित अंत एवं विलुप्ति - नया शोध एवं निष्कर्ष। विश्व पटल पर बनती प्रथम स्थिति

प्राकृतिक संसाधनों की सीमित उपलब्धता तथा इन पर दिखावटी लालच भरा भीषण प्रतिकूलता का प्रहार। अपनाई जा रही दिखावटी और प्रकृति विरोधी दूषित जीवनशैली। गढ़ी जाती स्वार्थ रंजित परिभाषाओं से उपजती अनेकों समस्याएं, विवशताएं, विवेकहीनताएं, असहनशीलताएं, निर्बलताएं, दिखावटी समाधान, प्रभाव और प्रतिकूल परिणाम।

नई परिभाषाएं भी प्रस्तुत की गई हैं।

क. पर्यावरण, पर्यावरणीय समस्याएं, नई परिभाषाएं समाधान तथा नए शोध एवं निष्कर्ष

पर्यावरण के वास्तविक अर्थों तथा ऐसी समस्याओं के आधारभूत कारणों पर खंड-1 में भी विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया है। वर्तमान खण्ड में वर्ष **1990** से विभिन्न समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, पुस्तकों, रिपोर्टों में समय-समय पर प्रकाशित लेखक के अनेकों शोध लेखों का संकलन है। उन मूल बिन्दुओं पर भी प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है जो पर्यावरण को अनुकूल या प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं तथा जिन्हें मौसम परिवर्तन पर हो रहे पृथ्वी शिखर सम्मेलनों में तुरन्त चर्चा का विषय बनाया जाना चाहिए।

पर्यावरण एक ऐसी ऊर्जा व्यवस्था है जो धरती पर सजीव कृतियों की सहज उत्पत्ति, विकास और ह्रास का कारण बनती है।

पर्यावरण की परिभाषा इस प्रकार की जानी चाहिए :-

''वे सभी सीमित एवं सीमाबद्ध मात्रा के प्राकृतिक पदार्थ,
सभी प्रभाव, सभी अवस्थाएं एवं गतियां जो
धरती पर जीवन की सहज उत्पत्ति, विकास और
ह्रास का कारण है पर्यावरण कहलाते हैं।''

धरती पर उपलब्ध सीमित संसाधनों की स्थिति की वास्तविकता की स्वीकारोक्ति के मार्ग में असीमित मानवीय लालच, बाधक बनता जाता है। वास्तविक समृद्धि के अर्थों के प्रति अनिभिज्ञता, जनसंख्या की त्रुटिपूर्ण परिभाषाएं हैं, आचरणगत व्यवहार, त्यागयुक्त सरलता, एवं संवेदनशीलता के आवृत से मानवीय पग दूर पड़ते जा रहे हैं। पिछले दशक में समय पूर्व **20-30** वर्षों में चांद मंगल पर बस्तियां बसा लेने के दिए गए संदेश से लालच में बढ़ोत्तरी को मिलती गति से भी पर्यावरण ध्वस्त हो रहा है। पर्यावरणीय समस्याएं अधिक जटिल बनती जा रही हैं। इन सभी कारणों से ग्लोबल वार्मिंग और प्रदूषण बढ़ रहा है। जीवन मूल्यों और आचरण में गिरावट आ रही है। मुद्रा स्फीती बढ़ रही है। धरती, ध्वनि, जल, वायु, पेड़-पौधों, फसलों, धरती के सन्तुलन, गुरुत्वाकर्षण तथा आकाशीय प्रभाव के मूल गुणों पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। धरती की भौगोलिक परिस्थितियां बदल गई हैं। प्राकृतिक आपदाएं बढ़ रही हैं।

बढ़ती गर्मी के कारण ऊंचे पर्वतों पर जहां केवल बर्फ ही पड़ती थी, वहां अब वर्षा भी हो रही है। बर्फ कम पड़ रही है। उधर हमने रहन-सहन के जिन

तौर तरीकों को अपनाया है उनसे वर्षा के पानी के भूमि के भीतर समाने की संभावनाएं भी कम होती जा रही हैं। पानी सागर की ओर लौट रहा है। ग्लेशियर यदि पिघल गए पानी को धरती के भीतर समाने से हमने यदि रोक दिया तो वर्षा विहीन दिनों अर्थात् ग्रीष्म ऋतु में हमें पानी नहीं मिलेगा। एक दिन धरती का सारा पानी समुद्र की ओर लौट जाएगा। तटीय क्षेत्र पानी में समा जाएंगे। मौसम पूर्ण रूपेण बदल जाएंगे। नदियां नाले सूख जाएंगे। हरियाली भी चली जाएगी।

जनसंख्या की त्रुटिपूर्ण परिभाषाओं और व्याख्याओं को लेकर हम अधिक अन्न उत्पादन एवं अधिक वस्तु उत्पादन के लिए जिन नये-नये तौर तरीकों को अपनाते जा रहे हैं उनके कारण विषैले घोलों, प्रदूषण बढ़ाने वाली अन्य सामग्री तथा रसायनों का प्रयोग बढ़ रहा है। लालच बढ़ रहा है, उससे अनावश्यक उत्पादन और उसका भंडारण भी बढ़ रहा है। लालच यदि यूं ही बढ़ता गया तो चांद मंगल तो क्या हमारा सारा सौर मंडल भी इस धरती के लोगों के लिए कम पड़ जाएगा। जनसंख्या की परिभाषा ''जनसंख्या नहीं लालचयुक्त आचरण ने बिगाड़ा पर्यावरण'' शोधलेख में दी गई है जो इस प्रकार है :-

''किसी क्षेत्र या देश विशेष में रहने वाले लोगों का वह समूह जो उच्च नैतिक मूल्यों के परिपालन के साथ एक अच्छी सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व्यवस्था में रहता है। प्रकृत सीमा का सम्मान करते हुए कुशलता और सरलता के आचरण के साथ अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संसाधनों का उपभोग करता है, एक आदर्श जनसंख्या वाला कहलाया जाना चाहिए।''

विषैले घोलों, रासायनिक, प्रदूषण बढ़ाते अन्य पदार्थों के प्रयोग से इनकी कुछ मात्रा जलवायु तथा मिट्टी द्वारा खाद्य पदार्थों में प्रवेश कर जाती है। इनके प्रयोग से स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। शरीर में बीमारियों से लड़ने की प्रतिरोधक क्षमता घट रही है। कुछ साल के बाद मनुष्य की आयु कम होती जाएगी। इसके साथ ही इनसे धरती की उपजाऊ शक्ति भी कम हो रही है। वह घटते-घटते एक दिन और इसी शताब्दी में समाप्त प्राय: हो जाएगी।

लालच के बढ़ने से अनावश्यक धनार्जन की ओर रुझान बढ़ रहा है। **आवश्यकता से अधिक बढ़ता धन भी अच्छी बात नहीं है। यह स्थिति धरती पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों को शीघ्र समाप्त कर देगी। सारी सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि मानवीय व्यवस्थाओं**

को विकृत कर देगी। यही अनावश्यक बढ़ता धन एक दिन विष का रूप धारण कर लेगा। बढ़ती मुद्रा स्फीति से गर्मी और अधिक बढ़ जाएगी। घर, परिवार, देश और समाज टूटते जाएंगे। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार वर्षा ऋतु में निकलती सैंकड़ों हजारों चींटियों में तुरन्त विकसित होते पंखों की तरह बिखराव भी तुरन्त अपना रूप धारण कर लेता है। यही बिखराव अन्त का पूर्वाभास होता है।

धन प्रधान और जीवन गौण बनता जा रहा है। इससे दिखावट और वास्तविकता विहीन प्रदर्शन की भावना बढ़ रही है। चालाकी और निरा व्यक्तिगत स्वार्थ सिर उठा रहे हैं। अपराध बढ़ रहे हैं। इनके वशीभूत मानव आचारणगत व्यवहार से दूर भागता जा रहा है। चांद मंगल पर शीघ्र उद्योग और बस्तियां बना देने का समय पूर्व दिया गया संदेश इस लालच को और बढ़ा रहा है।

विश्व में जीवन की गुणवत्ता (Quality of Life) बढ़ाने की बात की जा रही है। इसमें अच्छे कपड़ों, अच्छे मकान, अच्छे भोज्य पदार्थों, साफ-सुथरे घर-आंगन को तो स्थान मिल गया है। परन्तु अच्छे जीवन मूल्यों, संस्कारों एवं आदर्शों को इसमें स्थान नहीं मिला है। अच्छे-बुरे के भेद वाली रेखा मिटा दी गई है। मनुष्य ने अपने व्यक्तिगत स्वार्थ की पूर्ति के लिए अवांछित तथा चिरकाल में विपरीत प्रभाव उत्पन्न करने वाले तौर तरीकों को क्षणिक लाभ के कारण अपना लिया है। उसने अपने आपको अच्छा कहलवाने और दिखाने के लिए समृद्धि और जीवन शैली के मनचाहे अर्थ गढ़ लिए हैं। परिभाषाएं बदल दी हैं। अच्छे-बुरे के भेद को मिटाती परिभाषाएं अपना ली हैं। जीवन स्तर के स्थान पर दूषित जीवन शैली की प्रतिस्थापना कर दी है। मानवीय मूल्यों के स्थान पर रहन-सहन के दिखावटी भौतिक स्तर को अधिमान दे दिया है। व्यकितवादी दृष्टिकोण के साथ मानवता की अवनति में समृद्धि की बनावटी और दिखावटी अनुभूति करता हुआ वह अपने आपको चिरविकसित एवं समृद्धिशाली समझता जा रहा है। संवेदनशीलता, सरलता और स्थायित्व की वीरानगी के साथ सुपात्रों के कष्टों से मुंह मोड़ता हुआ अशांत समाज का निर्माण कर रहा है। वास्तविक सुखमय शांत समृद्ध जीवन एवं पर्यावरण संरक्षण के मार्ग पर अग्रसर करने की प्रेरक परिभाषाओं को अपनाने की परम्पराओं को छोड़ रहा है। विवेक और सतर्कशीलता के मानदंडों को ध्वस्त कर वह कई कुप्रथाओं को प्रथाओं के नाम से पालता हुआ भविष्य में पर्यावरण को ध्वस्त करने वाले सामाजिक प्रदूषण को

बढ़ता हुआ उपलब्ध साधनों का भी दुरुपयोग करता जा रहा है। जीवन की गुणवत्ता के नाम पर पर्यावरण और जीवन के रक्षक मानवीय मूल्य ध्वस्त किये जा रहे हैं। इसके कारण वह समृद्ध समाज के लिए परहित, परोपकार एवं पुरुषार्थ की भावना की कमी से आक्रांत होकर अपने शौर्यपूर्ण उत्साहजनक बल को भी खोता हुआ पर्यावरण संरक्षण में असफल होता जा रहा है।

सैंकड़ों लोगों की उपस्थिति में किसी एक के साथ होते अत्याचार, उत्पीड़न, हत्या आदि के समय पीड़ित के क्रंदन, रुदन एवं चीत्कार को सुनकर या घटना को देखकर पीड़ित की सहायता के लिए तुरन्त कूद पड़ने के सामर्थ्य का सैंकड़ों में से किसी एक में भी न होना इसका प्रमाण है। यह स्थिति आज के निरंकुश विकास के मानवता विरोधी स्वरूप को भी प्रतिबिम्बित करती है। क्षणिक विकास के चिरकालिक विनाशरूपी स्वरूप को ही उजागर करती है।

शिक्षा का उजाला बढ़ने पर भी ऐसे सामर्थ्य का घट जाना शिक्षा के वास्तविक दिशा से भटक जाने का परिचायक है। जीवन मूल्यों के गिरने और धन के बढ़ने से रहन-सहन का स्तर तो बढ़ सकता है। परन्तु जीवन स्तर गिर जाता है। जीवन स्तर पर्यावरण का संरक्षक है। परन्तु रहन-सहन का सीमा रहित बढ़ता स्तर पर्यावरण का घातक है। जीवन स्तर में आती गिरावट पर्यावरण को ध्वस्त कर अशांत समाज का निर्माण करती है। **मनुष्य जब सरलता तथा न्यायप्रिय व्यवहार के द्वारा अपने जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयासरत होने के साथ साथ दूसरों या समाज की उन्नति के लिए संवेदनशील और प्रयत्नशील रहता है तो वह उच्च गुणवत्ता या उच्च जीवन स्तर का धारक कहलाता है। जीवन शैली इस प्रकार परिभाषित की जानी चाहिए।**

वह शैली, जो स्वच्छ समसामाजिक, आर्थिक, पारिस्थितिकीय तन्त्र तथा भू-सन्तुलनीय व्यवहारगत चिन्ता से युक्त हो। भावी पीढ़ियों के लिए संरक्षण पूर्ण दायित्व के साथ संसाधनों के उपयोग की सीमा रेखा का पालन कर दिनचर्या की रूपरेखा को प्रतिबिम्बित करे, आदर्श जीवन शैली कहलाई जानी चाहिए।

धरती का मानव, जीवन के मार्ग से भटकता, भू-असन्तुलन उत्पन्न करता, पारिस्थितिकीय तन्त्र को हानि पहुंचाता, अपने भीतर बढ़ते लालच के साथ गर्मी

बढ़ाता, प्रदूषण फैलाता हुआ तनाव जनित बिखराव को बढ़ा रहा है। इस प्रकार दिखावे की संस्कृति से पर्यावरण को बचाने के प्रयास के बहाने के साथ प्रकृति के मूल आवृत से किनारा कर आत्मघाती युग में प्रवेश करता सा लगता हुआ जाने अनजाने में वह अपने अन्त की ओर बढ़ रहा है।

लेखक ने अपने कई निष्कर्षों को प्रकाशित अपने अनेकों शोधलेखों द्वारा उजागर किया है। ग्लोबल वार्मिंग, आत्मघाती युग में प्रवेश तथा धरती पर से मनुष्य के अंत एवं विलुप्ति के शोध निष्कर्ष अलग-अलग प्रस्तुत किए गए हैं।

ख. ग्लोबल वार्मिंग (Global Warming)

संसार में गर्मी बढ़ रही है। ग्लोबल वार्मिंग की अवधारणा ऐरिजोना विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक जोनाथन ओवरपैक ने दी है। उन्होंने यह तथ्य उजागर किया कि संसार में गर्मी बढ़ रही है। इनकी इस अवधारणा की वर्ष 2000 में आलोचना भी हुई। परन्तु इन्होंने अपने पक्ष की पुष्टि के लिए संसार के सामने कुछ और तथ्य रखे। ब्रिटिश वैज्ञानिक डेविड ए. किंग ने संसार की समस्याओं में ग्लोबल वार्मिंग की समस्या को भयंकरतम माना है। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक न्यू मार्क ने कहा कि ग्लोबल वार्मिंग इतनी तीव्र गति के साथ बढ़ रही है कि इस पर नियन्त्रण के लिए संसार के पास अब बहुत कम समय बचा है। परंतु अब तो स्थापित हो चुका है कि ग्लोबल वार्मिंग की समस्या गंभीर रूप ले चुकी है।

एक अनुमान के अनुसार पिछली शताब्दी में संसार का तापमान 1 डिग्री से 1.5 डिग्री तक बढ़ा है। वर्तमान 21वीं शताब्दी में इसके 2 डिग्री से 6 डिग्री तक बढ़ जाने की संभावना व्यक्त की गई है। विश्व में तापमान का रिकार्ड वर्ष 1860 से आरम्भ हुआ है। कहा तो यह भी जाता है कि 6 डिग्री तापमान बढ़ने के लिए पीछे 20000 वर्ष लगे।

तापमान में वृद्धि 19वीं शताब्दी में आरम्भ हुई औद्योगिक क्रांति से हुई है। विकासात्मक गतिविधियों के बढ़ने में प्रयुक्त होती मशीनों, वाहनों, रॉकेटों, युद्धक सामग्री के प्रयोग, विस्फोटकों, वनों की आग से निकलने वाली कार्बनडायक्साइड, अधिक उपज के लिए प्रयोग किए जाते रसायनों, विषैले घोलों से निकलती गैस, ठंडक उत्पन्न करने वाले यन्त्रों में प्रयुक्त होती HFC (हाईड्रोफलोरो कार्बन) झाड़-झंकार, पानी की भाप आदि से ग्रीन हाऊस प्रभाव उत्पन्न होता है। यह सूर्य की गर्मी को धरती पर रोक लेता है। हाईड्रोफलोरो

कार्बन, कार्बन डायक्साईड से हजारों गुणा अधिक प्रभावी है। इसका प्रयोग ठंडक उत्पन्न करने के लिए होता है। यह ओजोन परत को नष्ट कर गर्मी को बढ़ाती है। ग्लोबल वार्मिंग के बढ़ने का कारण 50 प्रतिशत मुद्रास्फीति है। मुद्रास्फीति तथा आर्थिक असंतुलन बढ़ने के कारणों में ऊंचे लाभ अर्जन के साथ वेतन भत्तों में अत्याधिक बढ़ोत्तरी भी सम्मिलित है।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण मौसम बदल रहे हैं। कहीं सूखा पड़ रहा है तो कहीं अतिवृष्टि हो रही है। ग्लेशियर पिघल रहे हैं। ध्रुवीय बर्फ पिघल रही है। वर्ष 2050 तक सभी ग्लेशियरों के पिघल जाने का अनुमान लगाया गया है। धरती का पानी सागर की ओर लौट रहा है। सागर तटीय क्षेत्र जलमग्न हो जाएंगे। धरती का संतुलन एवं गुरुत्वाकर्षण प्रभावित होता जाएगा। विश्व का समय तथा मौसम बदलते जाएंगे। प्राकृतिक आपदाओं की संख्या और उनके प्रभाव की तीक्ष्णता बढ़ जाएगी। बीमारियां और महामारियों के विकराल रूप दिखाने की संभावना बढ़ गई है। पानी की कमी अभी से अपना रूप दिखा रही है। भविष्य में यह विकराल रूप धारण कर लेगी। आने वाले समय में शताब्दी के दो-तिहाई भाग तक बढ़ती गर्मी असहनीय हो जाएगी। यह जीवन के अस्तित्व पर भारी पड़ेगी।

ग. मानव का आत्मघाती युग (Self Denial Era) में प्रवेश - शोध निष्कर्ष

आज के मनुष्यों ने आंतरिक स्वच्छता, उच्च जीवन एवं मानवीय मूल्यों को अधिकतर तिलांजली दे दी है। उनके स्थान पर बाहरी स्वच्छता, सुंदरता और आर्थिक उपकरणों के अपने प्रदर्शन को प्रतिस्थापित कर जीवनदायक वास्तविक पर्यावरण को गौण बना दिया है। इसके कारण धरती पर जीवनदायिनी परिस्थितियां विपरीत रूप धारण रूप कर गई हैं।

हमारे इस प्रकार के प्रकृति एवं जीवनदायी पर्यावरण विरोधी आचरण से जीवन को आघात पहुंचता जा रहा है। हम पर्यावरण एवं प्रकृति की उच्चता के प्रभाव जानते हुए भी अपने दिखावटी और बनावटी समाधानों से उसे अपने अनुकूल करने में लगे रहते हैं जो बहुधा संभव नहीं है। हमने अपने निम्न आचरण से पर्यावरण इतना ध्वस्त कर दिया है कि इसे बचाना अब कठिन है।

हम ब्रह्मांडीय प्रभाव को इसलिए नहीं मानते हैं क्योंकि हमारे सर्वमान्य शोधों के आवृत्त में वह अभी तक आया नहीं है। परन्तु हमारी अपनी कमी से

यह अंतरिक्षीय प्रभाव समाप्त नहीं हो जाता है। हम जिस तीव्रता के साथ इन प्रभावों को विकृत एवं प्रतिकूल करने में लगे हैं उससे सुधार का समय हमारे हाथ से लगभग अब निकल चुका है। सरकारें भी जितने संसाधनों का व्यय कार्य के संपादन हेतु करती हैं उतना लाभ मानवीय समाज को नहीं पहुंचता है। निरर्थक नष्ट होते संसाधन पर्यावरण के ध्वस्त होने का कारण बन रहे हैं।

धरती पर पानी की कमी अनुभव हो रही है। 20 प्रतिशत ग्लेशियर पिघल चुके हैं। 60 प्रतिशत पिघल रहे हैं। हिम ध्रुव पिघलने लगे हैं। वर्षा के पानी को धरती में समाने से हमने बहुधा रोक दिया है। धरती का पानी अधिकतर सागर की ओर लौट रहा है। आज के आंकड़ों को यदि आधार बनाएं तो वर्ष 2050 से पूर्व यह कमी विकराल रूप धारण कर लेगी। संवेदनहीनता के कारण मनुष्य ने अपने पुरुषार्थपूर्ण एवं परहित साधक बल को भी अधिकतर खो दिया है। हम अनेकों होने पर भी किसी पीड़ित या मृत्यु से उलझते प्राणी को देखकर या चीत्कार सुनकर भी उसकी ओर सहायता का हाथ बढ़ाने से परहेज करते हैं।

जिन घातक बमों एवं हथियरों को मानवता के लिए खतरा मानकर अमरीका और रूस उन्हें नष्ट कर रहे थे, उनमें अब कई गुणा बढ़ौत्तरी हो चुकी है। कई अन्य देश भी इनके निर्माण की प्रतिस्पर्धा में सम्मिलित हो गए हैं। एक अनुमान के अनुसार इस समय संसार के 9 देशों के पास लगभग 15000 परमाणु हथियार है। क्षणिक संतोष की बात यह है कि इन्हीं देशों ने हजारों बार हैड बेसर कर दिए हैं। पर्यावरणीय समस्याओं में होती वृद्धि तथा उनसे निपटने के लिए अपनाए जाते उपायों में कमी की स्थिति में भी अत्यन्त विनाशक अस्त्रों में वृद्धि होते जाना इस बात का स्पष्ट संकेत है कि मानव को बचाने के लिए विश्व सही दिशा में प्रयास नहीं कर पाएगा। यह ऐसी अवस्था है जिसने विश्व को भयानक युद्ध के समीप लाकर खड़ा कर दिया है, जो कभी भी भड़क सकता है।

धरती के बहुत से स्थानों की भौगोलिक स्थितियां बदल चुकी हैं। भू-असंतुलन का निर्माण हो चुका है। इस समय फूटते ज्वालामुखियों के फूटने में वृद्धि के साथ उनके नये स्थानों में फूटने की संभावना बढ़ती जा रही है। प्रदूषण मानव के सम्पर्क में आने वाले कोने-कोने में फैल चुका है। हमने पशु-पक्षियों और अन्य जीव-जन्तुओं का अधिकार भी बहुत से स्थानों पर छीन लिया है। इनकी कई प्रजातियों के विलुप्त हो जाने को विवश कर दिया है। भारत के हिमाचल प्रदेश को ही लें तो भगियाड़, बनबिल्ले, सकरालू,

भूमि पर वर्षा ऋतु में रेंगने वाले घुमारू अब बहुत ही कम दिखाई देते हैं। सुबह के समय पर घर आंगन की शोभा बढ़ाती चहचहाने वाली चिड़ियां भी अब बहुत कम दिखाई देती हैं।

आकाश में प्रदूषण बढ़ रहा है। इससे हम पर पड़ने वाला सहज प्राकृतिक ब्रह्माण्डीय प्रभाव विकृत हो रहा है। हमारी सामाजिक व्यवस्थाएं भी अधिकतर चरमरा गई हैं। बड़े से बड़े पदों पर बैठे लोग भी कई अवसरों पर झूठ बोलने, आचरण से गिरने तथा सच्चाई के विरुद्ध खड़े रहने से संकोच नहीं करते हैं। रहन–सहन के ऊंचे स्तर को अपनाते हम ऊंचे जीवन स्तर को गिराते जा रहे हैं।

जीवन की गुणवत्ता (Quality of Life) बढ़ाने के बहाने पर्यावण एवं जीवन के संक्षक मानवीय मूल्य ध्वस्त हो रहे हैं। घर परिवार, समज और देश मेल–मिलाप के दिखावटी आचरण के साथ अब बिखराव की ओर बढ़ रहे हैं। जीवन की गुणवत्ता की परख के मूल बिंदुओं को हमने गुणवत्ता की परख के आवृत से बाहर कर दिया है। सभ्यता और सुसंस्कृति के पर्यावरण संरक्षक जो तौर–तरीके थे उन्हें आधुनिकता के नाम पर आज एकांगी ज्ञान के प्रहार ने इस प्रकार आचरण से अलग कर दिया है कि मानव अब मानवता की अवनति के रास्ते पर बहुत आगे तक निकल चुका दिखाई देता है।

पर्यावरण की वास्तविक रक्षा हमारे रहन–सहन और आचरणगत व्यवहार के जिन तौर तरीकों ने चिरस्थायी रूप से करनी थी उन्हें हमने अधिकतर त्याग दिया है और घातक व्यवस्थात्मक प्रचलन को अपना लिया है। कुछ ही समय के तीव्र गति के विकास की तुलना उन चींटियों से भी की जा सकती है जो असामान्य ढंग से विकसित होती हैं, तुरन्त उड़ती हैं और तुरंत अपना अन्त कर लेती हैं।

धरती की मूल उत्पादन क्षमता घट रही है। जनसंख्या की त्रुटिपूर्ण एवं अपूर्ण परिभाषाओं ने जनसंख्या के बोझ को आवश्यकता से अधिक भारी बना दिया है। खाद्य पदार्थों द्वारा शरीर में विष प्रवेश कर रहा है जो नित नये रोगों का जनक बन चुका है। मनुष्य की जिस लम्बी आयु की कामना विकास करता है वह शीघ्र उत्तरोत्तर कम होती जाएगी।

हमने स्वयं की अज्ञानता के कारण सनातनी उन परम्पराओं को भी अधिकतर छोड़ दिया है जो हमें सरल जीवन पद्धति के साथ अच्छे बुरे के भेद को दिखाकर प्राकृतिक पर्यावरण के अनुगामी आचरणगत व्यवहार की ओर प्रवृत्त करती हुई

पर्यावरण संरक्षण का कार्य करती थीं।

मनुष्य ने अपने विकास की यात्रा में जितना परिवर्तन पिछले 60–65 वर्षों में किया है उतना अनुपातिक परिवर्तन आने में पहले कई हजार वर्ष लगे। भारी परिवर्तन की यह स्थिति अपने आप में चौंकाने वाली है जो स्वयं ऐसे ही चौंकाने वाले आगामी परिमाणों का संकेत है।

मनुष्य अब तनाव, अभाव, लालच, द्वेष, ईर्ष्या बिखराव, विवेकहीनता, अशहनशीलता, परोपकारहीनता, गिरते मानवीय एवं जीवन मूल्यों के कारण ध्वस्त होते पर्यावरण के अपने ही द्वारा निर्मित विनाशकारी प्रभाव से घिरता हुआ अब आत्मघाती युग (Sclf Dcnial Era) में प्रवेश कर गया हुआ दिखाई देता है।

इससे बाहर निकलने का अब एक ही रास्ता दिखाई देता है और वह यह है कि निम्नलिखित को पूर्ण रूप से एक दशक तक तुरंत कार्यरूप दे दिया जाए।

1. पर्यावरण की जो व्याख्या एवं परिभाषा पुस्तक में दी गई है उसके ही अनुरूप विषय को समझा जाना चाहिए।
2. मानवीय जीवन तथा समृद्धि की जो परिभाषा एवं व्याख्या पुस्तक में संकलित शोधलेख ''जनसंख्या नहीं लालचयुक्त आचरण........'' में दी गई है, उसे तुरंत पर्यावरणीय शिक्षा एवं विषय के पाठ्यक्रम का अंग माना जाए।
3. वर्तमान प्रचलित प्रदूषित जीवन शैली के प्रचलन को तुरंत रोका जाए।
4. उचित अनुचित एवं अच्छे बुरे के भेद रहित मानवीय मूल्यों को आघात पहुंचाती प्रचलित वर्तमान स्वरूप वाली दूषित जीवन शैली के स्थान पर जीवन मूल्यों से पुष्ट जीवन स्तर को तुरंत प्रतिस्थापित किया जाए जिसकी व्याख्या पुस्तक में की गई है।
5. जीवन की गुणवत्ता (Quality of Life) का मूल्यांकन मानवीय मूल्यों के दर्पण में किया जाए।
6. जनसंख्या के बोझ को इसकी वास्तविक सीमारेखा के भीतर समझने के लिए पुस्तक में दी गई जनसंख्या की परिभाषा को शैक्षणिक कार्यक्रम में तुरंत सम्मिलित किया जाए।
7. रहन–सहन के स्तर तथा जीवन स्तर का जो अंतर प्रचलित और प्रचारित जीवन शैली "Life Style" ने मिटा दिया है उसे पुनः तुरंत उजागर कर

स्थापित किया जाए। (जीवन स्तर सहज–सरल जीवन से उन्नत होता है।)

8. प्रकृति और मानव के बीच का जो संबंध पुस्तक के आरंभिक पृष्ठों में बताया गया है उसके वैज्ञानिक पुट वाले आधार को प्रचारित किया जाए। उसे ऐसे शैक्षणिक कार्यक्रमों एवं पाठ्यक्रमों में तुरंत सम्मिलित भी किया जाए। रहन सहन के स्तर के ऊपर जीवन स्तर को अधिमान दिया जाए।
9. पारिस्थितिक तंत्र के संरक्षण के लिए वैज्ञानिक आधार वाली पुरातन सनातनी परंपराओं को प्रोत्साहित किया जाए। इनका वर्णन संबंधित खंड में किया गया है।
10. मुद्रास्फीति को तुरंत रोका जाए और जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए आर्थिक संतुलन स्थापित किया जाए।
11. पर्याप्त अधिकारों एवं शक्तियों से सम्पन्न विश्व पर्यावरण परिषद् का तुरन्त गठन किया जाए जो जीवन के हित में तुरन्त निर्णय ले तथा उन्हें तुरन्त लागू करवाए। इस परिषद् की रूपरेखा खण्ड–2, खण्ड–8 में संकलित लेख 'Our Environment' तथा अन्य लेखों में दी गई है।

ऐसा करने से अपराधों के साथ–साथ कुपोषण संबंधी तथा ग्लोबल वार्मिंग से उपजी बीमारियों में कमी आएगी। ग्लोबल वार्मिंग बढ़ने से रुक जाएगी और इससे उत्पन्न समस्याओं में बढ़ोत्तरी न केवल रुकेगी अपितु उसमें कमी भी आ जाएगी। पृथ्वी की भौगोलिक परिस्थितियां बदलने से रुक जाएंगी। जनसंख्या का बोझ बहुत अधिक नहीं लगेगा। प्रदूषण कम होगा। अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा रुकेगी। 1 अगस्त 2013 को प्रकाशित तथा आगामी पृष्ठों में संकलित शोधलेख में अन्य विवरण भी दिया गया है।

घ. वर्तमान 21वीं शताब्दी के अन्त तक धरती पर मानवीय जीवन की विलुप्ति की संभावना - (शोध निष्कर्ष) जो लेखक द्वारा वर्ष 1990–91 से वर्ष 2007 तक निरंतर प्रकाशित किया जाता रहा है तथा उसके आगे भी प्रकाशित है।

आज का मनुष्य विकास के जिन यन्त्रों एवं सामग्री के साथ जिन तौर तरीकों को लेकर विकास के पथ पर जिस गति से अग्रसर है उससे एक कालखण्ड के पश्चात किसी विपरीत प्रभाव के उत्पन्न हो जाने को नकारा नहीं जा सकता है।

लेखक के मतानुसार मानव धरती पर प्रकृति की एक सूझबूझ वाली रचना होने के कारण प्रकृति की विराट प्रयोगशाला का एक यन्त्र और सामग्री भी है। आज तक जो विकास हुआ वह प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग, उपभोग तथा अनुकूल अंतरिक्षीय प्रभाव के कारण हुआ है। आगे जो होगा वह भी धरती तथा इससे इतर दूसरे समीपस्थ ग्रहों पर या उनसे प्राप्त होने वाले संसाधनों की कल्पना पर आधारित है।

भौतिक विकास के उपयोगी अवयव की श्रृंखला में खाद्यानों, स्वास्थ्यवर्धक सुविधाओं, जनसंख्या, धरती, जलवायु, प्राकृतिक संसाधनों, लोहा, कोयला, पैट्रोल, गैस आदि खनिजों के उपयोग, इनकी संरक्षणात्मक, सामाजिक और अध्यात्मिक व्यवस्था के साथ अनुकूल अंतरिक्षीय प्रभाव की गणना होती है।

खाद्यान्न कृषि योग्य भूमि से मिलते हैं। स्वास्थ्य सुविधाओं में चिकित्सालयों, पौष्टिक पदार्थों की उपलब्धता, आवास, वस्त्र, अनुकूल अन्तरिक्षीय प्रभाव तथा दिनचर्या के श्रेष्ठ नियमों की गिनती होती है। जनसंख्या में मानव के साथ उसके सहायक पशु-पक्षियों और जीव जन्तुओं की उपयुक्त संख्या की गणना कर सकते हैं। धरती में कृषि योग्य भूमि के अतिरिक्त चारा, वाहन, आवास तथा विकास के लिए वांछित न्यूनतम भूमि की उपलब्धता पर विचार हो सकता है। जलवायु में, उपयोग के लिए इनकी शुद्ध तथा पर्याप्त मात्रा ध्यान देने योग्य है। प्रकृति संसाधनों में सर्वजन हित के साथ वास्तविक समृद्धि को ध्यान में रखते हुए उच्च जीवन स्तर की अनुगामी जीवन पद्धति के लिए बांछित उचित मात्रा के प्राकृतिक संसाधनों (वन, पेड़, पौधे खनिज पदार्थ आदि) की पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता को आंका जा सकता है। संरक्षणात्मक उपायों में सरकारी नियमों, अनुकूल सामाजिक एवं आध्यात्मिक व्यवस्थाओं की उपस्थिति के साथ उनके प्रभाव का आकलन कर सकते हैं। अनुकूल अंतरिक्षीय प्रभाव में पृथ्वी के प्रभाव क्षेत्र के अंतरिक्ष को प्रदूषणमुक्त या ऐसे पदार्थों से मुक्त रखना आवश्यक है, जो धरती के जीवन पर घातक प्रभाव डालते हों या उसका सृजन करते हों।

बढ़ते लालच, अनियंत्रित विकास के फलस्वरूप ये सभी स्थान बदलते पदार्थ, स्थितियां, अवस्थाएं और उनके प्रभाव जीवन के लिए प्रतिकूलता का सृजन कर रहे हैं। जीवन पर खतरा बढ़ रहा है। इस खंड में संकलित पूर्व प्रकाशित शोधों के निष्कर्षों में मानव की विलुप्ति की आशंका की संभावना को उजागर किया गया है। इसके पक्ष में दिए गए कारणों की पुष्टि निम्नलिखित से

भी हो जाती है, जिनमें से कुछ का वर्णन ग्लोबल वार्मिंग तथा आत्मघाती उपखंड के अंतर्गत भी किया गया है।

1. आस्ट्रेलिया के नैशनल सैंटर फॉर ग्राउंड वाटर एंड ट्रेनिंग के निदेशक ने चेतावनी दी है कि कृषि तथा शहरीकरण के कारण भूजल का स्तर गिर रहा है। वर्ष 2030 तक ताजा जल के दुर्लभ होने का अनुमान लगाया गया है।
2. तापमान बढ़ने से 50 वर्षों तक कई पेड़-पौधों तथा जीवों की जातियों की विलुप्ति का अनुमान लगाया गया है।
3. अमरीका की एक एजेंसी के अनुसार यह अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2050 तक विश्व को खाद्य संकट का सामना करना पड़ेगा। कृषि योग्य भूमि घट रही है।
4. संयुक्त राष्ट्र द्वारा जारी अनुमानित आंकड़ों के अनुसार विश्व में हर वर्ष 1.3 अरब टन खाना बर्बाद हो जाता है।
5. संयुक्त राष्ट्र तथा युनिवर्सिटी ऑफ वाशिंगटन के सात वर्ष के संयुक्त अध्ययन के अनुमान के अनुसार शताब्दी के अंत तक विश्व की जनसंख्या 12 अरब से अधिक हो जाएगी। 5 (i) उधर प्राकृतिक संसाधन जैसे लोहा, कोयला, पैट्रोल, गैस, ताजा भू-जल तथा अन्य खनिज अभी से ही कम होते जा रहे हैं। खनिजों के अत्याधिक दोहन से भू-जल स्तर नीचे जा रहा है।
6. मार्गदर्शन मिशन के अनुमान के अनुसार अत्याधिक तनाव तथा दूषित जीवन शैली के कारण विश्व में प्रति वर्ष 20 लाख आत्महत्याएं होती हैं।
7. एजेंसी वाशिंगटन के हवाले से प्रकाशित एक समाचार के अनुसार एस्ट्राईड डूम्सडे 'एपोफिस' के 2036 में पृथ्वी से टकराने का अनुमान लगाया गया है। इसकी खोज 2004 में हुई थी।
8. दूषित वायु से प्रतिवर्ष लगभग 20 लाख मौतों का अनुमान है।
9. इस शताब्दी में प्राकृतिक आपदाओं के रूपों, आकारों-प्रकारों तथा संख्या में उत्तरोतर वृद्धि हो रही है। मानव निर्मित आपदाओं के डेरा जमा लेने के संकेत भी मिल रहे हैं।
10. अधिक मुद्रा स्फीति से बढ़ रहे सामर्थ्य, ईर्ष्या तथा प्रदर्शन के वशीभूत आज का मनुष्य हर उस वस्तु का उत्पादन और उपभोग करने के लिए विवश दिखाई देता है, जिससे कालांतर मे प्रदूषण बढ़ जाता है। पारिस्थितिकीय

तंत्र को हानि पहुंच रही है।

11. प्राकृतिक संसाधन बड़ी तीव्र गति से अपना रंग रूप और स्थान बदल रहे हैं। धरती, वायु तथा पानी में प्रदूषण बढ़ रहा है। ध्वनि प्रदूषण भी बढ़ रहा है।
12. पृथ्वी की भौगोलिक परिस्थितियां बदल रही हैं। भू असंतुलन बढ़ रहा है। पूर्व प्रकाशित यहां संकलित 23.11.2001 तथा 7 मई 2002 के शोध लेख में लेखक ने यह निष्कर्ष व्यक्त किया है।
13. धन की तीन गतियां बताई भी गई हैं। वे हैं: दान, भोग और नाश। इनके दर्पण में वर्तमान स्थिति का आकलन किया जा सकता है।
14. एक लोकोपकारी संगठन ने अनुमान लगाया है कि विश्व यदि मौसम परिवर्तन से निपटने में असफल रहा तो इसके कारण हर वर्ष 50 लाख मौतें हो सकती हैं। प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार दुनिया के 20 देशों की सरकारों द्वारा जलवायु परिवर्तन पर तैयार रिपोर्ट में बताया है कि यदि विश्व मौसम परिवर्तन से निपटने में असफल रहा तो वर्ष 2030 तक इसके कारण 10 करोड़ लोगों के मरने की आशंका है।
15. हमारे सौरमंडल के मंगल ग्रह ने 27 अगस्त, 2003 को पृथ्वी के बहुत समीप से विचरण किया। उस समय धरती से इसकी दूरी केवल 5 करोड़ 60 लाख कि.मी. ही रह गई थी। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार मंगल का विशेष प्रभाव भी है, जो इसके प्रभाव में जन्मे बच्चों में समा जाता है। इसे सेनापति, बल, शत्रु, क्रोध, अग्नि आदि का कारक भी बताया गया है। ऐसे विपरीत प्रभाव वाले गुणों को धारण करने वाले बच्चे जब यौवनावस्था में होंगे तो इनका प्रदर्शन हो सकता है जिसका अनुमान भयंकर युद्ध के रूप में भी लगाया जा सकता है। इसकी संभावना 2023–2035 के बीच अधिक हो सकती है। इस ग्रह का प्रभाव स्थायी बताया गया है।
16. प्रदूषण अब अंतरिक्ष की ओर भी यात्रा कर रहा है।
17. परमाणु हथियारों को बनाने वाले देशों की संख्या बढ़ रही है।
18. बादलों में भी प्रदूषण बढ़ने की संभावना बन चुकी है।
19. जिस अनुपात से गर्मी बढ़ रही है उससे शताब्दी के मध्य भाग तक त्वचा झुलसनी आरंभ हो सकती है।

20. जीवन के अनुकूल जीवनपद्धति को छोड़कर प्रकृति विरोधी जीवन के अस्तित्व के प्रतिकूल पद्धति को अपनाने के कारण मनुष्य अपने अस्तित्व के लिए स्वयं खतरे का निर्माण करता हुआ अब नए आत्मघाती युग में प्रवेश कर गया है।

21. वर्तमान शताब्दी में प्राकृतिक आपदाओं के अधिक आने की संभावना यहां संकलित और इस शताब्दी के प्रथम वर्ष के द्वितीय मास में ही 16.02.2001 को प्रकाशित शोध लेख के निष्कर्ष में व्यक्त की गई है।

22. इस शताब्दी के आरभ में ही भूकंप से लाखों लोग मरे। भारत, चीन, ईरान, पाकिस्तान, नेपाल, हैती तथा अन्य स्थानों में आए भूकंपों के साथ 26.12.2004 की सुनामी ने 21वीं शताब्दी की भावी विनाशलीला की चेतावनी दे दी है।

पृथ्वी की बदलती भौगोलिक परिस्थितियों, बढ़ती गर्मी के घातक प्रभाव, सागर की ओर लौटते पानी, प्रदूषण जन्य समस्याओं तथा आगे से आगे बढ़ते लालच से पराभूत, मानव स्वयं अपनी विलुप्ति की ओर बढ़ रहा है। जीवन शैली के गढ़े जा रहे मनचाहे अर्थ; जनसंख्या की परिभाषा की त्रुटिपूर्ण व्याख्या, संसाधनों के अति प्रयोग, दुरुपयोग, विकृत होते अंतरिक्षीय प्रभाव, डगमगाते पारिस्थितिकीय तंत्र तथा शिक्षा के बढ़ने पर भी गिरते जीवन मूल्यों से यह प्रमाणित हो जाता है कि मनुष्य अपने आधार को स्वयं ध्वस्त कर रहा है। जीवन के अस्तित्व के प्रतिकूल प्रभाव का सृजन करते इन कारणों का विस्तारपूर्वक विवरण आगामी पृष्ठों पर संकलित पूर्व प्रकाशित शोध लेखों में दिया गया है। अधिक धन कमाने के लालच के कारण पर्यवरणीय सीमाओं की अवहेलना, चरमराते मानवीय व्यवस्थात्मक प्रबंधन, **प्राकृतिक आपदाओं में होती बढ़ोत्तरी के अध्ययन, मनन एवं चिंतन से लेखक इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि यदि इनमें सुधार के लिए विश्व ने उपखण्ड 'ग' में दी गई संभावित समय सीमा के भीतर तुरंत प्रभावशाली पग नहीं उठाए और इसमें सफलता नहीं मिली तो 21वीं शताब्दी के अंत तक मानवीय जीवन की विलुपित की संभावना है।**

वर्ष 1990–91 से लेखक के निरंतर अनेकों शोध पत्र अनेकों समाचार पत्रों के संपादकीय पृष्ठों पर, पुस्तकों, सेमिनारों व सरकारी वैज्ञानिक संस्थानों की रिपोर्टों में प्रकाशित हुए हैं जिनमें विभिन्न कारणों से वर्तमान 21वीं शताब्दी के अंत तक धरती पर मानव की संभावित विलुप्ति के शोध निष्कर्ष उजागर किए

गए हैं। कई शोध निष्कर्ष हिमाचल प्रदेश सरकार के वैज्ञानिक संस्थानों तथा सरकारी विभागों के संज्ञान में भी वर्ष, 1991–2007 के बीच के समय से ही हैं। हिमाचल प्रदेश राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, शिमला ने अपने पत्रांक पी.सी.वी./कटिंग/90–1192–93 दिनांक 8 मई, 1991 तथा हिमाचल प्रदेश राज्य विज्ञान, प्रौद्योगिक एवं पर्यावरण परिषद शिमला ने अपने पत्रांक एस.सी.एस.टी.ई.(Misc.Env.)/02–2765 दिनांक 30.03.2002 द्वारा लेखक के इन शोध लेखों का संज्ञान लिया है और प्रशंसा की है।

लेखक के 17 से भी अधिक मानव की विलुप्ति के शोध एवं निष्कर्ष वर्ष 1990–91 से वर्ष 2007 के बीच प्रकाशित हो चुके थे। इसके पश्चात भी पर्यावरण के विभिन्न अवयवों की बदलती अवस्था को लेकर लेखक के कई ऐसे शोध निष्कर्ष उजागर हुए हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ न्यूयार्क को भी दो बार इसकी सूचना अपने पत्रांक 927 दिनांक 21 जून 2002 तथा 2011 दिनांक 8 अप्रैल 2005 के द्वारा दी थी तथा सुझाव भी उन्हें भेजे थे। उनसे एक सशक्त विश्व पर्यावरण परिषद् के गठन का अनुरोध किया था जिसकी रूपरेखा भी उन्हें भेजी थी ताकि मनुष्य को बचाया जा सके।

अब तो विश्व के कई प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने भी इन शोध निष्कर्षों की तरह के ऐसे शोध निष्कर्ष निकाल दिए हैं जो भारत के मीडिया में वर्ष 2010 तथा इसके पश्चात प्रकाशित हुए हैं। बाद में प्रकाशित हुए इन शोध निष्कर्षों से लेखक के पूर्व प्रकाशित शोध निष्कर्षों को ही बल मिलता है। इनका प्रमाणों सहित विवरण आगे दिया गया है।

वर्तमान शताब्दी के अंत तक मानवीय जीवन की विलुप्ति संबंधी लेखक के बहुत पहले प्रकाशित शोध लेखों का उनके प्रकाशन की तिथियों सहित विवरण :-

क्र सं.	शोध निष्कर्ष	शोध पत्र का शीर्षक	प्रकाशन की तिथि	समाचार पत्र,पुस्तक जिसमें प्रकाशित हुआ
1 क.	21वीं शताब्दी मानवीय जीवन की संभवतय अंतिम शताब्दी	पर्यावरण, हम और भूकम्प	16 फरवरी 2001	दिव्य हिमाचल धर्मशाला-(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित, दैनिक जागरण जालन्धर (पंजाब) तथा कई अन्य पत्र एवं पत्रिकाओं में भी प्रकाशित
ख.	भयंकर प्राकृतिक आपदाओं की शताब्दी होगी यह 21वीं शताब्दी			
ग.	भौगोलिक परिस्थितियां बदल गई है। कहीं कटती तो कहीं बोझिल हो चुकी है हमारी धरती।			
2	वर्तमान शताब्दी मानवीय जीवन की अन्तिम शताब्दी-शोध निष्कर्ष	जोहांसवर्ग का विश्व सम्मेलन	28 अगस्त 2002	दिव्य हिमाचल, धर्मशाला हिमाचल प्रदेश में प्रकाशित।
3 क.	21वीं शताब्दी मानवीय जीवन की अंतिम शताब्दी होने की आशंका - शोध निष्कर्ष	हिमालयी पर्यावरण खतरे में	7 मई 2002	दैनिक जागरण नोएडा दिल्ली जालन्धर- पंजाब (पांचाल) में प्रकाशित,
ख.	वैज्ञानिक तर्कों को तोड़ती बदलती धरातलीय एवं भौगोलिक परिस्थितियां। कटती धरती और फैलता प्रदूषण। समय से पहले बूढ़ा हुआ हिमालय पर्वत-नया शोध एवं निष्कर्ष		23 नवम्बर 2001	दिव्य हिमाचल, धर्मशाला सम्पादकीय पृष्ठ पर तथा अन्य पत्रों में प्रकाशित।

4	वर्तमान 21वीं शताब्दी के मानवीय जीवन की अन्तिम शताब्दी होने की संभावना है। धरती का मूल स्वरूप बिगाड़ दिया गया है तथा आगे भी यदि बिगाड़ा जाता रहा तो यह शताब्दी अंतिम हो सकती है।	भूमि खनन होगा तबाही का कारण	16 जुलाई 2003	दिव्य हिमाचल धर्मशाला (हि.प्र.) –सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
5	वर्तमान 21वीं शताब्दी धरती पर जीवन की अंतिम शताब्दी होने की आशंका। मनुष्य धरती की अनिवार्य प्राकृतिक सीमाओं की अवहेलना कर रहा है। भविष्य में खेती इसके वर्तमान ढंगों से बर्बाद हो जाएगी।	हमारी भूमि हमारा भविष्य	जुलाई–दिसम्बर 2003	हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा प्रकाशित वन संदेश के पृष्ठ 25, 26 तथा 27 पर प्रकाशित।
6	अब वन पहले से अधिक जल रहे हैं। हमें पशु–पक्षियों के जल जाने की भी चिंता नहीं हैं। पारिस्थितिकीय तन्त्र यदि ध्वस्त हो गया तो मनुष्य के आगामी शताब्दी में प्रवेश की संभावना नहीं है।	हिमाचल में जलते वन और वन्य जीव	11 जनवरी 2006 12 जनवरी 2006	दिव्य हिमाचल धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर, दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ तथा अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित
7	लालच पर लगाम नहीं लगी तो 21वीं शताब्दी मानव की अंतिम शताब्दी बन जाएगी।	पर्यावरण के लिए घातक है सफेदा	20 मई 2006	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
8	पशु–पक्षी यदि नहीं रहे तो मानव भी इसी शताब्दी में लुप्त हो जाएगा।	मनुष्य के लिए घातक पारिस्थितिकीय असंतुलन	18 फरवरी 2006	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
9	मानवीय जीवन इसी शताब्दी में समाप्त हो सकता है। हम रहन–सहन के तौर–तरीकों और विकास के वास्तविक अर्थों को यदि नहीं समझे तो पानी सागर की ओर लौट जाएगा। नदियां, नाले चश्मे सूख जाएंगे।	तरसता छोड़ लौटेगा पानी सागर की ओर	2 मार्च 2006	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित

10	जनसंख्या की परिभाषाएं त्रुटिपूर्ण हैं। इसके कारण संसार प्राकृतिक संसाधनों को अच्छी प्रकार व्यवस्थित बनाए रखने में असफल है। हर कमी के लिए जनसंख्या को दोष देना व्यर्थ है। जीवन को व्यवस्थित रखने वाले सामाजिक अंग क्षीण होकर चरमरा रहे हैं। विश्व विनाश के द्वार पर खड़ा हो गया है। जनसंख्या की अपनी नई परिभाषा भी शोध लेख में दी गई है।	जनसंख्या नहीं, लालचयुक्त आचरण ने बिगाड़ा पर्यावरण	18 मार्च 2006	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
11	संसार में अर्थ तंत्र और विकास के प्राकृतिक संतुलन का सर्वमान्य स्वरूप न परिभाषित है और न कार्यरूप में है। परिस्थितिकीय तंत्र डगमगा रहा है। धरातलीय और जलीय स्वरूप एवं प्रणालियां बदल रही हैं। बढ़ती गर्मी सहनशीलता के बिंदु को इसी शताब्दी में पार कर सकती है। इस स्थिति के जारी रहते 21वीं शताब्दी में मानवीय जीवन समाप्त हो सकता है।	जनजीवन और ग्लोबल वार्मिंग	13 अप्रैल 2006	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
12	जीवन पर ब्रह्मांडीय प्रभाव को पर्यावरणीय चिंतन में समुचित स्थान नहीं मिल पाया है। अंतरिक्ष में फैलता, बढ़ता प्रदूषण घातक प्रभाव छोड़ेगा। मंगल 27 अगस्त 2003 को धरती के समीप आया था। शोधों का आगे न बढ़ने का अर्थ समीपस्थ आकाशीय पिंडों का जीवन पर प्रभाव न पड़ना नहीं हो सकता है। बढ़ता घातक प्रभाव 21वीं शताब्दी में धरती पर मानवीय जीवन को समाप्त कर सकता है।	ब्रह्मांड के प्रति लालच घातक	22 अप्रैल 2006	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित

13	हम एक अपरिभाषित दूषित जीवन शैली अपना रहे हैं जो अच्छे बुरे के भेद को मिटाती है। संसाधनों का अति प्रयोग और दुर्पयोग हो रहा है। संसाधन फिर मूल रूप में शीघ्र नहीं आ सकते हैं। हमने सब कुछ यदि नष्ट कर दिया। चांद मंगल पर शीघ्र कालोनियां नहीं बनीं तो 21वीं शताब्दी में जीवन समाप्त हो सकता है।	जीवनशैली और पर्यावरण जीवन शैली की परिभाषा 21.07.2007 को प्रकाशित तथा आगे संकलित बढ़ती जनसंख्या वाले शोध लेख में दी गई है।	5 अक्तूबर 2006	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
14	विषैले घोलों के प्रयोग से उत्पन्न खाद्य पदार्थों को खाने वाले पशुओं का मांस खाने से कई पक्षी मर रहे हैं। वनों में या बस्तियों के समीप उनके रैन बसेरे उजड़ रहे हैं। पारिस्थितिकीय तंत्र यदि डगमगाता है तो मानव के आगामी शताब्दी में प्रवेश की संभावना नहीं है।	लालच ने पशु–पक्षियों को मारा पर्यावरण बिगाड़ा	16.11.2006	दैनिक जागरण धर्मशाला-(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित हिमालय पर्वत में संसाधन प्रबंधन पृष्ठ 160
15	लालच के कारण मनुष्य का वास्तविक बौद्धिक विकास अधिकतर रुक गया है। विकास जीवन के लिए न होकर जीवन विकास के अधीन चला गया है। हथियारों की होड़ बढ़ रही है। प्रदर्शन, दिखावा, भंडारण और संसाधनों का दुरुपयोग बढ़ने से वे समाप्त होंगे। इसके कारण 21वीं शताब्दी मानवीय जीवन की अंतिम शताब्दी हो सकती है।	पर्यावरण पर भारी लालच	22 फरवरी 2007	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) संपादकीय पृष्ठ तथा अन्य पत्र/पत्रिकाओं में प्रकाशित।
16	फसलों के उत्पादन के लिए जो तौर तरीके अपनाए जा रहे हैं उनसे उत्पादन घट रहा है। हमने गंभीरता से अपने तौर तरीके नहीं बदले तो यह शताब्दी हमारे जीवन की अंतिम होगी।	लुप्त हो जाएगा गेहुं	12 अप्रैल 2007	दैनिक जागरण धर्मशाला-(हि.प्र.) संपादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित तथा हिमाचल प्रदेश सरकार की पर्यावरण स्थिति की रिपोर्ट के पृष्ठ 535 पर भी प्रकाशित

17	बिगड़ते पर्यावरण को बचाने के लिए पर्याप्त उपाए नहीं किए जा रहे हैं। यदि ऐसा ही रहा तो विनाश के लिए समय की दूरी अब केवल दशकों में ही गिनी जाएगी।	हमारा पर्यावरण	08 अक्तूबर 1990 जनवरी 1991	वीर प्रताप जालंधर पहाड़ी लहर, शिमला
18	मौसम बदल रहे रहे हैं। ग्लेशियर पिघल रहे हैं। वे समाप्त हो जाएंगे। मिट्टी की गुणवत्ता घट रही है। खाद्यान्न संकट गहरा जाएगा। जीवन स्तर बहुत नीचे गिरा है। पर्यावरण प्रबंधन में भारी कमी है। इसके कारण जीवन इसी शताब्दी में अपने अंत पर पहुंच जाएगा।	बढ़ती जनसंख्या घटती उत्पादन क्षमता उत्तरदायी कौन?	21 जुलाई 2007	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
19	जलवायु संकट बढ़ रहा है। पारिस्थितकीय तंत्र पर आघात पहुंच रहा है। नाभकीय होड़ बढ़ जाएगी। भयानक विश्व युद्ध का खतरा मूर्त रूप ले सकता है। मानवीय समाज का ताना बाना बिगड़ रहा है। धरा के संसाधन यदि नष्ट हो गए तथा चांद मंगल पर शीघ्र पर्याप्त उद्योग और पर्याप्त बस्तियां शीघ्र नहीं बनीं तो इसी शताब्दी में धरती पर मानवीय जीवन समाप्त हो जाएगा।	चांद मंगल पर उद्योग	13 दिसम्बर 2007	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
20	मौसम परिवर्तन को लेकर होते पृथ्वी शिखर सम्मेलनों के परिणामों से धरती के जीवन को प्रभावशाली ढंग से बचा लेने की संभावना कम दिखाई देती है। इस शताब्दी में तापमान के 2^0 से 6^0 तक बढ़ने की संभावना बताई गई है। नदियां सूख जाएंगी। प्राकृतिक आपदाएं बढ़ जएंगी। इन कमियों के जारी रहते 21वीं शताब्दी में धरा पर मानवीय जीवन समाप्त हो सकता है।	सूख जाएंगी नदियां	24 जनवरी 2008	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित हिमालय पर्वत में संसाधन प्रबंधन पृष्ठ 152–160 Environment and geo hazards page 308-310

21	ग्लोबल वार्मिंग तथा अन्य पर्यावरणीय समस्याओं के मूल में जो ऊर्जा या कारण काम करते हैं उनकी सही पहचान और उनके निदान की ओर देश और संसार का समुचित ध्यान गया ही नहीं है। लोगों के पास धन बढ़ रहा है। किसी लगाम द्वारा संतुलन बैठाने की व्यवस्था संसार के पास नहीं है। इससे वे सभी प्रभाव सृजित हो रहे हैं जो गर्मी बढ़ाते हैं। पर्यावरण को बचाने के लिए सही दिशा में प्रयास न हो पाने के कारण धरती पर जीवन इसी शताब्दी में समाप्त हो जाएगा।	ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव	18 मार्च 2009	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
22	भूमि में जल की कमी बढ़ रही है। प्रदूषण बढ़ रहा है। मानवीय मूल्य लुप्त होने लग पड़े हैं। प्रदूषित जल असंख्य मौतों का कारण बनेगा। प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जे के लिए भीषण विश्व युद्ध होंगे। इसके कारण 21वीं शताब्दी धरती पर मानवीय जीवन की अंतिम शताब्दी बन सकती है।	जल संकट की आहट	15 अप्रैल 2009	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
23	सम्पन्न लोगों में भी असंतोष और ईर्ष्या के कारण इच्छाएं गुणात्मक रूप में बढ़ रही हैं। संतोष तथा त्याग भाव की कमी के परिणामस्वरूप हर वह कार्य हो रहा है जिससे मौसम बदल रहे हैं। मनुष्य के सामूहिक कर्मों का परिणाम ही इसी शताब्दी में मानव की विलुप्ति के रूप में हो सकता है।	क्यों बदला मौसम	29 जुलाई 2009	दैनिक जागरण धर्मशाला–(हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित

24	धरती से भारी मात्रा में गैस, पैट्रोल, पानी तथा दूसरे खनिज निकाले जा रहे हैं। ऊपरी दबाव के कम होने से धरती के नीचे का लावा ऊपर की ओर रुख कर सकता है। अब नए स्थानों में भी ज्वालामुखी फूट सकते हैं। हम स्वयं इसी शताब्दी में मानवीय जीवन के अंत की ओर बढ़ रहे हैं।	भूकंप न सही हानि रोकें	9 नवंबर 2012	दैनिक जागरण धर्मशाला (जागरण सिटी)
25	मानव का आत्मघाती युग में प्रवेश। मनुष्य प्राकृतिक शक्तियों से टकराव तथा सीमा रेखा से आगे जाने का प्रयास कर रहा है। भौगोलिक परिस्थितियों को बदलता हुआ विपरीत प्रभाव का सृजन करता हुआ स्वयं ही आत्मघाती युग में प्रवेश कर गया है।	बाढ़ें प्रकृति, समाज और सरकार	13 अगस्त 2013	आपका फैसला शिमला (हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित।
26	धरती के गर्भ में क्या–क्या, कितना–कितना, किस रंग रूप और आकार प्रकार में है इसका ठीक–ठीक पता नहीं है। इस दिशा में शोध आगे नहीं बढ़े हैं। भूकंप सरीखी आपदाओं के जनक या उनके घातक प्रभाव को बढ़ाने वाले मानवीय कारणों को दूर करने में हम गंभीर नहीं हैं। विवशता के आलोक में यह अनुमान लग जाता है कि वर्तमान शताब्दी मानव जीवन की अंतिम शताब्दी हो सकती है।	भूकंप का कंपन और आपदा प्रबंधन	3 अगस्त 2013 31 अगस्त 2013	दैनिक जागरण धर्मशाला– (हि.प्र.) आपका फैसला शिमला (हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित
27	अनेकों स्थानों पर निरंतर आ रहे भूकंपों के समय होती प्राण हानि। अनेकों साधनों के होने पर भी भविष्यवाणी में असमर्थता। शोधों का आगे न बढ़ पाना। कमियों से आक्रान्त आपदा प्रबंधन। कमियों के जारी रहते वर्तमान शताब्दी मानवीय जीवन की अंतिम शताब्दी हो जाएगी।	आपदा प्रबंधन हम और भूकंप	4 अप्रैल 2016	हिमाचल दस्तक धर्मशाला– (हि.प्र.) सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित आपका फैसला शिमला

पाठकों एवं शोधकर्त्ताओं की सुविधा के लिए संबंधित प्रमाणों के साथ-साथ 21.06.2010, 05.12.2016 तथा 06.07.2017 को भारतीय मीडिया में प्रकाशित मानव के अस्तिव से संबंधित प्रमाण भी चित्रित कर दिए गए हैं। इनके अनुसार आस्ट्रेलियाई वैज्ञानिक ने 100 वर्षों में मानव जाति के खातमें की बात की है। लंदन से विश्व के प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिंग ने मानव को सबसे खतरनाक परिस्थितियों में बताया है तथा उसकी गिनती के ही दिन बचने की बात की है। वर्ष 2001 से निरंतर लेखक के मानव की विलुप्ति संबंधी अनेकों शोधों एवं निषकर्षों के प्रकाशन की उपरोक्त तिथियों के तुलनात्मक अध्ययन के उजाले में शोधकर्त्ता एवं विचारक लेखक की ऐसे शोधों एवं निष्कर्षों से सम्बन्धित विश्व में प्रथम बनती स्थिति का आकलन भी कर सकते हैं।

सकंलित लेखों के प्रकाशन की तिथियों सहित संबधित समाचार पत्र आदि का विवरण भी लेख के अंत में नीचे दिया गया है।

GRAM : "CLEANENVIRON"

Phone : { Offi. 5913 / Res. 4312

हिमाचल प्रदेश राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड

HIMACHAL PRADESH STATE POLLUTION CONTROL BOARD

Er. S. S. Juneja
Member Secretary

संख्या-पी सी बी-कंटींग/90- 1192-93

Dated 8 मई' 1991

सेवामें,

श्री रत्न लाल वर्मा,
वार्ड नं०-5,
हमीरपुर (हि० प्र०)

विषय :- पर्यावरण सम्बन्धी समस्या की गम्भीरता तथा इस के स्थाई निदान हेतु सुझाव।

महोदय,

मैं आपके पत्र जिसके द्वारा आपने अपने लेख 'विज्ञान तथा हमारा पर्यावरण' का सार इस कार्यालय को भेजा है, आपका धन्यवादी हूँ। समस्या का बहुत गहराई से अध्ययन किया गया है तथा लेख सूचनात्मक है। आपने उपरोक्त समस्या का बहुत सही व्याख्यान किया है। हम इस लेख को राज्य विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद् को अग्रिम कार्यवाही हेतु भेज रहे हैं।

भवदीय
(हस्ताक्षर)
सदस्य सचिव

Attested
Tapan Nain Sharma
प्रबन्धक
जिला उद्योग केन्द्र
हमीरपुर (हि०प्र०)

प्रतिलिपि लेखसार की एक प्रति सहित सदस्य सचिव, राज्य विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद्, इन्दिरा भवन, शिमला-1 को सूचनार्थ/अग्रिम कार्यवाही हेतु प्रेषित है।

सदस्य सचिव

संलग्न - उपरोक्त

"होटल किंग्स" शिखर मंजिल, दी माल शिमला-171 001
"Hotel King's" Top Floor, The Mall Shimla-171001

- Dainik Jagran, Jallandhar (Punjab) - 4th February 2001
(Kangra Edition) 4-2-2001 Page - 2

प्रकृति से खिलवाड़ बंद न हुआ तो यह सदी मानव के लिए अंतिम होगी

रामपुर की बाढ़ त्रासदी के लिए चीन नहीं बल्कि हम स्वयं दोषी: आचार्य रत्न लाल वर्मा

जागरण प्रतिनिधि

हमीरपुर, 3 फरवरी। विख्यात पर्यावरणविद् आचार्य रत्न लाल वर्मा ने चेतावनी दी है कि यदि मनुष्य ने प्रकृति से खिलवाड़ बंद न किया तो संभवत: इक्कीसवीं शताब्दी मानव इतिहास की अंतिम शताब्दी सिद्ध होगी।

रत्न लाल वर्मा

उन्होंने कहा कि व्यक्ति अपने आचरण से पर्यावरण का विरोधी बनता जा रहा है, जिसका प्रतिफल उसके साथ संपूर्ण मानवता को भुगतना पड़ रहा हैं। दैनिक जागरण संवाददाता से विशेष भेंट वार्ता से प्रकृति प्रेमी तथा पर्यावरणविद् रत्न लाल वर्मा ने मानव और प्रकृति विषय पर विस्तार से चर्चा की। बचपन से ही प्रकृति के गूढ़ रहस्यों को समझने में जुटे रत्न लाल वर्मा विगत कई वर्षों से पर्यावरण पर विशेष अध्ययन करने में जुटे हैं। श्री वर्मा देश के विभिन्न स्थानों के पर्यावरण को गहन अध्ययन कर चुके हैं। उन्होंने केंद्रीय सरकार द्वारा 1986 में प्रदूषण नियंत्रण के बनाए गए नियमों के बाद इस विषय पर अनेक लेख लिखे व गहन अध्ययन किया। हालांकि श्री वर्मा ने पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने तथा उसको स्वच्छ बनाए रखने के लिए अपने उपयोगी सुझाव इंटरनेट पर भी उपलब्ध करवाए हैं। इंटरनेट पर एसओएस इंडिया कॉम वैबसाइट पर इन्हें पढ़ा जा सकता है। इस साइट में वर्मा ने जहां एक और पर्यावरण तथा प्रकृति से संबंधित उपयोगी जानकारी दी हैं।

प्रदेश में लग रहे सीमेंट कारखाने प्रकृति से खिलवाड़

श्री वर्मा के अनुसार यह पृथ्वी सजीव है तथा मनुष्य की तरह प्रकृति की सहनशक्ति भी उन्होंने स्पष्ट कहा कि मौसम में अकस्मात परिवर्तन जिसके कारण जनवरी जैसे माह में भी ठंड का उस अनुपात में न पड़ना तथा बीते दिनों हिमाचल के रामुपर क्षेत्र में बाढ़ आना भी उसकी का प्रमाण हैं। वर्मा ने कहा कि प्रदेश में विभिन्न जगह लगाए गए सीमेंट कारखाने भी प्रकृति के साथ खिलवाड़ ही हैं। उन्होंने कहा कि हिमाचल प्रदेश एक छोटा भू-भाग है तथा इसे अब तक प्रदूषण मुक्त प्रदेश में यह व्यवसाय पहाड़ों का सीना चीर कर, उन्हें पूरी तरह समाप्त कर प्रदेश की भौगोलिक स्थिति बदलने पर आमदा हैं। उन्होंने कहा कि छोटा क्षेत्र होने के कारण तथा पहाड़ों के छेदने के कारण प्रदेश की भखी पीढ़ियों का भविष्य निश्चित ही असुरक्षित हैं।

रामपुर क्षेत्र में आई भीषण बाढ़ पर श्री वर्मा को कहना है कि बाढ़ प्रकृति से ही छेड़छाड़ का परिणाम है। उन्होंने कहा कि उन्होंने जब इस बाढ़ के पीछे चीनी हाथ होने की बात कही थी तभी यह बताया दिया था कि यह चीन की नहीं बल्कि अपनी ही गलतियों के परिणाम है। उन्होंने कहा कि सतलुज में आई बाढ़ को किसी अन्य मुद्दे में उलझाना वर्क संगत नहीं हैं। उनका कहना हैं कि पहाड़ों को चीर कर वहां अंधाधुंध कटान, करना नदियों के किनारे खनन कर उनके किनारों को काटने के कारण पहाड़ों, जहां से इन नदियों का उदगम होता है उन्हीं पहाड़ों पर व्याप्त बर्फ के बने विशाल हिमखंडों का तापमान दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा हैं।

उन्होंने बताया कि हिमखंडों में तापमान बढ़ने के कारण उस पानी से नदी का जल स्तर बढ़ा, परंतु फिर भी यह इतना अधिक नहीं था कि बाढ़ आ सकें। इसके उपरांत वर्मा कहते है कि यह पानी नदी किनारे जहां विकासात्मक कार्यों की बाढ़ हो, उसके निकट की मिट्टी से एक कृत्रिम सी झील के रूप में बहना शुरू कर देता है जिससे कि जो असली नदी हैं। उसके बहाव तथा जलस्तर में बढ़ोत्तरी हो जाती है।

तीसरा इस जलस्तर में वृद्धि का कारण नदी किनारे खनन पर जो पत्थर नदी में गिरे होते है वह भी नदी के नीचे कुड बनाकर उसमें भी जल का संग्रह किए हुए होते है तथा यह भी उस लहास के साथ मिलकर नदी के जल स्तर में अप्रत्याशित वृद्धि कर बाढ़ का स्वरूप ले लेती हैं।

उनका कहना है कि रामपुर में आयी बाढ़ का यह प्रमुख कारण है जिसे विशेषज्ञ अभी तक पकड़ नही पाए हैं।

उन्होंने कहा कि मनुष्य को आरामपरस्ती, शाही रहन सहन को त्यागना ही होगा, यदि प्रकृति को बचाना हैं। उन्होंने कहा कि मनुष्य के दो पक्ष होते है एक वाहन, तथा दूसरा आंतरिक। विज्ञान ने केवल बाह्य पक्ष की सुख-सुविधा जुटाने में कार्य किया तथा आंतरिक पक्ष जिसमें कि मानसिक विचार, भीतरी तरंगों का चलन होता हैं साथ ही वैज्ञानिक भी। ओजोन परत में आए छिद्र को भी वह वैज्ञानिक लापरवाही का परिणाम मानते हैं। वर्मा ने विश्व प्रमुखों से विश्व-पर्यावरण कौंसिल के गठन की भी मांग की है जो विश्व को प्रदूषण मुक्त बनाए रखने में सहयोग कर सकें।

Acharya Rattan Lal Verma
(Awarded Sahityashri, Acharya, Kavi Kokil, Hindi Bhushan Mani Rattanam, Shatavdi Rattan, Hindi Rattan, Padamshri Dr. Laxmi Narayan Dubey Smriti Samman, Rashtar Sachetak, Best D. Writer 2002-2003, Ram Briksh Bempuri, Subhadra Kumari Janam Shati Samman, Rotry Award for Environment and paryavaran Rattan for Environment, President of 3 NGOs and Ex. President of four NGOs)

Address :- Acharya Rattan Lal
House No. 245,
Ward No. 5,
Opposite Zonal Hospital,
Hamirpur (H.P.)
Pin - 177 001 (India)
Tele: 01972-23864, 25075
Fax: 01972-25075

Ref. No. ...1211..............

Dated:..8-4-2005

To

The Honourable Secretary General,
United Nations Organisation,
New York (Amreica).

Subject: Effective measures to deal with the fast deteriorating environmental hazards and eco-imbalance to avoid the impending destruction to the existence of life on the earth through ferocious wars, extreme militancy poisonousness, eco-imbalance, earthquakes and atmospheric affects etc.

Sir,

Kindly refer to my registered letter No. 972 dated June 21, 2002 on the above cited subject.

I have sent copies of some of my articles on enviornment published in different newspapers and internet in which the fast deteriorating situation of enviornment has been highlighted and some of the measures have been suggested with the opinion that the deteriorating situation if allowed to continue may result the present century 21st century as to be the last century of life on this earth.

I have not received any confirmation to the affect of the receipt of the above from your esteemed office and as such I am enclosing herewith another copy of this letter of 21st June 2002 with detailed list of my published articles which were attached to my above referred letter for favour of your kind perusal with the request kindly to confirm receipt of the same letter at the undermentioned address please.

Thanking you.

बीमा नहीं/NOT INSURED
51-00 153
The Honourable Secretary General
United Nations Organisation
U.N.O.
New York (America)

Yours faithfully,

(Acharya Rattan Lal Verma)
House No. 245/5,
Opposite Zonal Hospital,
Hamirpur (H.P.)
Pin - 177 001
India

"दिव्य हिमाचल" धर्मशाला (हि० प्र०) संपादकीय 26-8-2002

दिव्य हिमाचल 26-8-2002

जोहांसबर्ग का विश्व सम्मेलन क्या पर्यावरण को बचा पाएगा ?

पर्यावरण को बचाने के लिए दक्षिण अफ्रीका के जोहांसबर्ग शहर में 26 अगस्त से 4 सितंबर तक होने वाले विश्व सम्मेलन के परिणामों का पूर्वानुमान यदि लगाएं तो ऐसा लगता है कि जून 1992 में रियो (ब्राजील) में हुए इसी प्रकार के पृथ्वी सम्मेलन से अधिक अच्छे परिणाम निकलने की आशा इस सम्मेलन से भी नहीं की जा सकती है। वास्तव में पृथ्वी पर बड़ी तीव्र गति से फैलते प्रदूषण तथा बढ़ते असंतुलन के प्रमुख कारण हैं। पर्यावरणीय प्राकृतिक सीमाओं तथा जीवन स्तर की उपयुक्त शैली के प्रति हमारी सोच में आती जाती कमी से जीवन तथा प्रकृति के बीच की चौड़ी होती दरार। यह भी खेद की बात है कि इस ओर विशेषज्ञों तथा राष्ट्राध्यक्षों का समुचित ध्यान शायद अभी तक गया नहीं है। मात्र केवल बीमारी के इलाज की ओर ध्यान देने से इस समस्या का उस समय तक समाधान नहीं हो सकता जब तक कारणों को खोज और उन्हें मिटाया नहीं जाता। मानवीय मुद्दों को व्यक्तिवादी मुद्दों से प्रभावित नहीं होने दिया जाना चाहिए।

धरती पर समूची जीव जाति पर विनाश के मंडराते खतरे को दूर करने में जो दूसरी बाधा है वह है विकसित तथा विकासशील देशों तथा इसके समाधान के लिए अपनाए जाने वाले सभी उपायों में एकरूपता का न होना और प्रदूषण के जनक मानवीय वास्तविक आधारभूत कारणों का ऐसे सम्मेलनों में चर्चा का केंद्र न बन पाना। ऐसे में संभावित 106 देशों के राष्ट्राध्यक्षों एवं शासनाध्यक्षों तथा 174 देशों के लगभग 65000 लोगों के भाग लेने वाला यह विश्व सम्मेलन क्या वास्तव में इस पृथ्वी को महानाश के तांडव से बचा पाएगा?

यदि शासनाध्यक्षों तथा विशेषज्ञों का समुचित ध्यान अभी भी जीवन पर मंडराते खतरे के वास्तविक कारणों की ओर नहीं गया तो प्रदूषण को दूर करने के लिए अपनाए जाने वाले उपायों से अधिक लाभ नहीं होगा। बल्कि जीवन और प्रदूषण जन्य विनाश के बीच जो समय बचा है वह भी हाथ से निकल जाएगा। इस प्रकार यदि स्थिति ऐसे ही जारी रहने दी गई तो इस सदी अर्थात 21वीं शताब्दी के धरती पर जीवन की अंतिम सदी हो जाने के पर्याप्त कारण बन ही जाएंगे। मात्र केवल बढ़ती जनसंख्या को ही दोष देकर बढ़ते प्रदूषण के अन्य कारणों से ध्यान हटाना कदापि उचित नहीं है। मैंने संभावित विनाश के इसी आशय का पत्र संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवीय महासचिव को भी 22 जून 2002 को लिखा है जिसमें प्रदूषण की बदतर होती स्थिति तथा संभावित विनाश के दृष्टिगत कुछ उपायों का सुझाव देकर उन्हें अपनाने का अनुरोध संयुक्त राष्ट्र संघ से किया है।

–रतन लाल वर्मा, हमीरपुर

दैनिक जागरण जालंधर, 17 मई, 2005 **5**

लालसा पर विराम न लगा तो मानव की आखिरी सदी : आचार्य रतन

...शिकार हुई तीसरी महिला मीना भी इनके ... व्यक्त किया है। मंडी (हि०प्र०)

अमर उजाला (मंडी) 6-6-2007

आपदा प्रबंधन एवं निवारण कार्यशाला

...तो इसी सदी में खत्म हो जाएगी दुनिया

6-6-2007

मंडी। आपदा प्रबंधन एवं निवारण पर आयोजित राष्ट्रीय कार्यशाला के दूसरे दिन विभिन्न विशेषज्ञों द्वारा जहां आधार पत्र पढ़े गए।

वहीं पर्यावरण और जल संरक्षण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य करने वाले विशेषज्ञों द्वारा किए गए कार्यों को डाक्यूमेंटरी के माध्यम से दिखाकर उनके कार्यों से जागरूकता लाने का प्रयास किया गया।

दिल्ली विश्वविद्यालय के किरोड़ी मल कालेज और जिला प्रशासन के सहयोग से की जा रही इस राष्ट्रीय कार्यशाला के दूसरे दिन कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर चर्चा की गई। इस अवसर पर उत्तरांचल के रूद्रप्रयाग जिला निवासी जगत सिंह चौधरी जंगली के मिश्रित वन एवं वन खेती माडल तथा मेरठ में दलित बस्ती जयभीम नगर के लोगों की जल प्रदूषण से हुई दयनीय हालत पर बनी डाक्यूमेंटरी के अलावा पारछू के पानी से सतलुज में आई तबाही पर सतलुज जल विद्युत निगम द्वारा बनाई गई डाक्यूमेंटरी ने पर्यावरण के विनाश की तस्वीर प्रस्तुत की।

हिमाचल प्रदेश के पर्यावरणविद आचार्य रतन लाल वर्मा ने वैज्ञानिकों को चुनौती दी कि यदि समय रहते लोगों को जागरूक कर समन्वित प्रयास नहीं किए गए तो आने वाले चालीस सालों में इस धरती पर हवा और पानी का संकट गहरा जाएगा।

नकली सीडी पकड़ी

पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया

सरकाघाट (मंडी)...

दैनिक भास्कर

...ग वहां के रेत्रां ...मझते हैं।

100 साल में खत्म होगी मानव जाति!

ऑस्ट्रेलियन यूनीवर्सिटी के प्रोफेसर का दावा

एजेंसी | लंदन

दुनिया को स्मॉलपॉक्स से मुक्त कराने में मदद करने वाले एक ऑस्ट्रेलियाई वैज्ञानिक ने एक सनसनीखेज अनुमान में अगले 100 वर्षों में धरती से मानव जाति का खात्मा हो जाने की बात कही है।

ऑस्ट्रेलियन नैशनल यूनीवर्सिटी में माइक्रोबॉयोलोजी के प्रोफैसर फ्रैंक फेनर ने दावा किया है कि मानव जाति जनसंख्या विस्फोट और प्राकृतिक संसाधनों की बेलगाम खपत को बरदाश्त नहीं कर पाएगी। फेनर ने कहा कि होमो सेपियंस सम्भवतः 100 वर्षों के अंदर लुप्त हो जाएंगे। अनेक अन्य जीवों का भी खात्मा हो जाएगा। ऐसी स्थिति को बदला नहीं जा सकता। मेरे हिसाब से अब बहुत देर हो चुकी है। मैं यह इसलिए नहीं कह रहा हूं कि लोग कुछ करने की कोशिश में हैं बल्कि वे इसकी तरफ से अब भी मुंह मोड़े हुए हैं।

जलवायु परिवर्तन बनेगा वजह

'डेली मेल' की खबर के मुताबिक फेनर ने कहा कि मानव जाति एंथ्रोपोसीन नाम के एक अनाधिकृत वैज्ञानिक युग में दाखिल हो चुकी है।

उन्होंने जलवायु परिवर्तन को भी मानव जाति के खात्मे की उल्टी गिनती शुरू होने का जिम्मेदार ठहराया। उन्होंने कहा जलवायु परिवर्तन तो शुरुआत है लेकिन हमें मौसम में व्यापक बदलाव पहले ही नजर आने लगे हैं। मानव जाति भी सम्भवतः उसी राह पर चल रही है जिस पर वे तमाम प्रजातियां चलीं जो विलुप्त हो चुकी हैं।

इतिहास के सबसे खतरनाक मोड़ पर मानवता

लंदन, प्रेट्र : ब्रिटिश भौतिक विज्ञानी स्टीफन हॉकिंग ने मानव अस्तित्व के खतरे

को लेकर चेतावनी दी है। उनके मुताबिक मानव समुदाय इतिहास के सबसे खतरनाक समय का सामना कर रहा है। जल्द ही पर्यावरण और तकनीकी चुनौतियों से निपटने का तरीका ईजाद नहीं किया गया तो परिस्थितियां बदतर हो जाएंगी। कैंब्रिज विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हॉकिंग ने कहा कि पृथ्वी का अस्तित्व खतरे में है। दुनिया जबरदस्त पर्यावरण और तकनीकी समस्याओं से दो-चार हो रहा है। ऐसे में मानवता को बचाने के लिए एकजुट होकर काम करने की जरूरत है। हॉकिंग ने कहा, 'मानव समुदाय भयानक पर्यावरण संबंधी चुनौतियों से जूझ रहा है। इनमें जलवायु परिवर्तन, खाद्य उत्पादन, जनसंख्या में बेलगाम वृद्धि, अन्य प्रजातियों की तबाही, महामारी और समुद्र का अम्लीकरण प्रमुख हैं। इन सब खतरों के साथ मानवता अपने विकास क्रम में सबसे खतरनाक परिस्थितियों का सामना कर रहा है।

5-12-2016
दै० जागरण धर्मशाला

...लिए घातक होगा। हॉकिंग ने धरती पर चल रही पर्यावरण की समस्या और अन्य विवादों को देखते हुए कहा कि पृथ्वी पर हमारे दिन बस गिनती के रह गए हैं।

दैनिक जागरण 5-7-2017 Page-12

Dainik Jagran Dharamshala 5-7-2017 Page-12

हम और हमारा पर्यावरण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

इस समय विश्व में पर्यवरण संबंधी समस्या चर्चा का विषय बनी हुई है। यह विश्व के देशों की सरकारों का ध्यान निरंतर अपनी ओर आकर्षित कर रही है। ऐसा भी लगता है कि निकट भविष्य में संसार में पर्यावरण संबधी विषय अत्यंत महत्वपूर्ण तथा सर्वाधिक चिंता का विषय बनने वाला है और सर्वाधिक अधिमान संभवत: इसी समस्या को दिया जाने वाला है जिस पर देशों का अत्याधिक धन, श्रम तथा समय व्यय किया जाएगा। पर्यावरण की परिभाषा कई प्रकार से की गई है परंतु यह न्यूनाधिक इस प्रकार की जानी चाहिए।

''पृथ्वी पर जीव की संपूर्ण''

उन्नति के लिए विशेषकर मनुष्य की सर्वांगीण कायिक, बौद्धिक उन्नति के लिए प्रकृति की सहज उपयोगी देन तथा अगली पीढ़ियों के लिए उसे बनाए रखते हुए मानव के कुशल व्यवहार जन्य प्रभाव को पर्यावरण कहना चाहिए।

व्यवहार की इस कुशलता में जब अंतर आता है, तो पर्यावरण दूषित होने लगता है। मानव अपनी एकहरी समृद्धि के लिए जब विवेक तथा न्याय रहित निरे भौतिक विकास की ओर अग्रसर होता है तो प्रदूषण फैलता है और प्राकृतिक असंतुलन उत्पन्न होता है। यह प्रदूषण जिस गति से फैल रहा है उससे लगता है कि यदि इसकी तुरंत रोकथाम न की गई तो यह धरती पर मानव के अस्तित्व के लिए भारी भय उत्पन्न कर देगा। प्राकृतिक संतुलन की अधिक भंग करने की चेष्टा के परिणामस्वरूप प्रकृति अपने संतुलन को बनाए **रखने के लिए कोई उग्र रूप भी धारण कर सकती है और यह स्थिति भी धरती पर मानव के अस्तित्व के अब अधिक बने रहने पर प्रश्न चिन्ह लगाती है।**

ऐसा लगता है कि धरती के ज्ञान का वर्तमान प्रसारित पुंज धरती के मानव को एकांगी विकस के आकर्षक मार्ग से विनाश के छोर तक ले आया है। मनुष्य ने अपने आपको भौतिक वस्तुओं तथा उनके रासायनिक एवं भौतिक परिवर्तन तक ही संबंध रखा, जबकि मानव की सुख समृद्धि में वृद्धि करने वाले ज्ञान ने

जिस मानव के लिए विकस का यह सराहनीय पुंज दिया उस मानव के दो महत्वपूर्ण पक्ष हैं। एक आन्तरिक अर्थात् मानसिक एवं बौद्धिक पक्ष तथा दूसरा शारीरिक एवं भौतिक पक्ष।

आंतरिक पक्ष शायद जटिल अर्थात अनुभूति, संवेदनशीलता एवं अनुभव का विषय होने के कारण सुगमता से प्रयोगशाला का विषय नहीं बन पाया तथा वर्तमान ज्ञान के पुंज की पकड़ से बाहर रह गया। इस प्रकार मानव की सुख समृद्धि के लिए कार्य करने वाली व्यवस्थाओं से मानव के महत्वपूर्ण पक्ष की अवहेलना हो गई। संपूर्ण ब्रह्मांडीय प्रकृति की उच्चता के प्रति हमारी आरंभिक संदेहपूर्ण दृष्टि तथा इस धरती पर केवल मात्र मानव के ही निरंकुश अधिकार को ही अधिमान देने के कारण संकुचित मानवीय ज्ञान ने अपने में पूर्णता लाने का मार्ग खो दिया तथा अपूर्ण मानव के विकास की ओर तीव्र गति से बढ़ता चला गया जिसके परिणामस्वरूप मानव का भौतिक पक्ष तो शीघ्रता से निखरने और उभरने लगा परंतु उसका आंतरिक पक्ष उसी गति से दबने लगा। इस प्रकार इस स्थिति ने मानव के भीतर एक असंतुलन को उत्पन्न कर दिया है। इस भीतरी असंतुलन ने मानव मस्तिष्क में विकृति को जन्म दे दिया है और वातावरण में प्रदूषण को बढ़ाया है। यदि मानव के दोनों पक्ष साथ-साथ विकसित होते तो प्रदूषण तथा असंतुलन की स्थिति इतनी गंभीर कदापि न होती जितनी गंभीर यह इस समय बन चुकी है। इस समय यह प्रदूषण जलवायु, भूमि के भीतर यहां तक कि मानव के संपर्क में आने वाले कोने-कोने में तीव्र गति से बढ़ रहा है। सामाजिक, प्रशासनिक एवं राजनैतिक पर्यावरण प्रदूषित हो चुका है। **प्रकृति की तुल्य व्यवस्था में भी संकट उत्पन्न हो चुका है। प्रभावशाली ढंग से यदि इस प्रदूषण तथा असंतुलन की तुरंत रोकथान न की गई तो भयंकर रोग, भूचाल, अति उग्र आतंकवाद, गृहयुद्ध एवं घोर विश्व युद्ध द्वारा धरती पर मानव के अस्तित्व के लिए शीघ्र भयानक मय उत्पन्न हो जाएगा।**

प्राचीन भारतीय मान्यताओं के अनुसार विनाश शब्द प्रलय के नाम से जाना जाता है। इसमें अधिकतर पृथ्वी के जलमग्न हो जाने की बात कही जाती है। इसके आने में लाखों वर्षों का लंबा अंतराल रहा। यह प्रक्रिया बड़ी धीमी गति से हुई। धीरे-धीरे धरती के सागर की ओर वह जाने तथा केवल इसी प्रक्रिया द्वारा धरती पर असंतुलन होने से प्रतिक्रिया के रूप में जहां पानी था वहां धरती

बनने तथा जहां धरती थी वहां पानी के आ जाने की बात आती है। परंतु निरंकुश तथा एकांगी विकास ने लाखों वर्षों के समय के लंबे इस अंतराल को बड़ी तीव्र गति से निकटता की ओर ला दिया है तथा संभावित विनाश के स्वरूप को भी बदल दिया है। **तुरंत समुचित तथा प्रभावशाली ढंग से उपाए न किए गए तो समय की यह दूरी अब केवल दशकों में ही गिनी जाएगी।** प्रदूषण को दूर करने के वर्तमान, उपाय पर्याप्त तथा चिरस्थायी नहीं लगते हैं। अति मूल्यवान विश्व साधनों के व्यय करने पर भी उद्देश्य की पूर्ण प्राप्ति में संदेह है। वर्तमान उपायों में अधिकतर उपाय प्रदूषण को एक जनसंख्या वाले भू–भाग से दूसरे जनसंख्या वाले भू–भाग को हस्तांतरित करने के साधन मात्र बनकर रह जाते हैं। यहां यह बात अवश्य ध्यान देने योग्य है कि कम प्रभावशाली तथा अपर्याप्त उपायों से इस भयानक स्थिति पर नियंत्रण पाने की कल्पना में मनुष्य कहीं अधिक समय तो नष्ट नहीं करने वाला है, क्योंकि खाद्य पदार्थों के गुणदोषों के बारे में चिकित्सा जगत ने भी अपनी पूर्वधारणा को उचित न पाकर उसे बदला है। अर्थात् अनुमान में अपूर्णता की संभावना विज्ञान में भी रही है। जनसंख्या में हुई अत्याधिक वृद्धि तथा इस वृद्धि के भार को सहने के लिए विश्व में हुए भौतिक विकास की पृष्ठभूमि द्वारा एकांगी विकास के दोषपूर्ण स्वरूप को नकारा नहीं जा सकता है। जनसंख्या की परिभाषाएं संसार में कई बार बनी बिगड़ी तथा फिर बनी हैं। जहां तक जनसंख्या के परिपेक्ष्य में विकास को देखने का संबंध है यह वृद्धि तथा कमी की स्थिति धरती पर आती रहती है। जनसंख्या के बोझ को विकास उतना नहीं सह सकता है जितना उपलब्ध साधनों का सदुपयोग तथा मानवीय व्यवस्था युक्त विकास का संतुलित स्वरूप सह सकता है। प्रकृति से सहज विनीत भाव से अर्जित शक्ति के पुट से अलंकृत संतुलति सर्वांगीण मानवीय विकास धरती पर वर्तमान जनवृद्धि के भार से भी अधिक भार को सहर्ष सहन करने की क्षमता रखता है और ठीक इसी प्रकार प्रकृति तथा मानव के बीच अधिकार तथा कर्तव्य का ज्ञान एवं निर्वाह अधिक जनवृद्धि को घटाने की सामर्थ्य रखता है। आंतरिक पक्ष की अवहेलना तथा उपलब्ध साधनों के पूर्ण सदुपयोग के अभाव के कारण भी जनसंख्या में वृद्धि का बोझ आवश्यकता से अधिक भारी लगता है।

यह भी एक विडम्बना है कि शिक्षा प्रणालियां प्रशासक इंजीनियर डॉक्टर, राजनेता तो बनाती है परन्तु अच्छे मानव बनाने की क्षमता इनमें नहीं है। इस

प्रकार जब मानव वास्तविक अर्थों में मानव नहीं बनेगा तो वह अपने उपरोक्त वर्ग में अच्छा किस प्रकार उतरेगा। विशेषकर, उस स्थिति में जबकि उसमें मानवीय संस्कार भरने का अन्यत्र भी कोई प्रयत्न न हुआ हो। यह प्रश्न अवश्य ही उत्तर की प्रतीक्षा करेगा।

यदि कुशल व्यवस्था हो तो पर्यावरण को कुछ स्वच्छ रखने के लिए वनों में वृद्धि करना कोई कठिन कार्य नहीं है। परंतु सुनियोजित तथा कुशल व्यवस्था कैसे शीघ्र कार्यरूप धारण करे यह अवश्य ही विचारणीय विषय है। क्योंकि प्रदूषण की गति तथा प्रभाव अब अधिक देरी की प्रतीक्षा शायद ही करें। पेड़ विकास का भी महत्वपूर्ण अंग है। क्या जितने साधनों का व्यय किया जा रहा है उतने वन या पेड़ वास्तव में लगते हैं? क्या आज की हमारी मानसिकता ने पेड़ों के पुण्य रूपी अस्तित्व को स्वीकार लिया है जैसा कि पहले था। वनों की कटाई का कारण स्वयं, निरंकुश तथा उपयुक्त ज्ञान रहित भौतिक विकास है। प्राचीन भारतीय मान्यताओं के रूप में हमें वर्तमान व्यवस्था से कहीं अधिक सशक्त तथा प्रभावशाली व्यवस्था विरासत में मिली थी जो बिना व्यय के पेड़ों को लगाने तथा उन्हें बचाने का प्रबंध करती थी। परंतु ज्ञान के वर्तमान स्वरूप ने जहां वृक्षों के रंग रूप को संवरा उनमें उत्कृष्टता लाने का प्रयत्न किया वहां विकास के इस स्वरूप के बढ़ते चरणों ने उन शुद्ध मानवोपयोगी मान्यताओं पर प्रहार करके प्रदूषण रूपी समस्या को अधिक गंभीर बना दिया है।

इस समय आवश्यकता है मानव के संपूर्ण विकास तथा पर्यावरण की स्वच्छता में समन्वित तारतम्य स्थापित करने की जिसकी स्पष्ट विश्व नीति अब तुरंत निर्मित तथा लागू होनी चाहिए। संपूर्ण विकास के लिए सरलता के भाव का समावेश अति आवश्यक है तथा सरलता का भाव प्रत्यक्ष रूप में प्रदूषण को कम करने का स्वयं एक साधन भी बन जाता है। यह साधनों की मितव्ययता के साथ उनके सदुपयोग का यंत्र भी बन जाता है।

दैनिक वीर प्रताप जालंधर 8 अक्तूबर, 1990 हमीरपुर पत्रिका, जोमनी पत्रिका, पानीपत, मुक्त कथन, बेगुसराय, बिहार (पहाड़ी लैहर, शिमला जनवरी 1991) में प्रकाशित

पर्यावरण का वर्ण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

चार वर्ष पूर्व पर्यावरण की कोई विशेष चर्चा प्रचार–प्रसार या अन्य माध्यमों द्वारा बिल्कुल नगण्य रूप में थी। आज यह महत्वपूर्ण बन गया है तथा निकट भविष्य में अन्य सभी विषयों को छोड़ कर सारे संसार का ध्यान अत्याधिक विश्व साधनों का व्यय करते हुए केवल इसी विषय पर केंद्रित होकर रह जाने वाला है। परंतु इस विषय को समग्र रूप में अभी तक परिभाषित नहीं किया गया है। और यही कारण है कि प्रयत्न करने पर भी यह समस्या गंभीरतम रूप धारण करती जा रही है।

अब भी यदि हमारी सोच में संपूर्ण मानव के विकास की बात सम्मिलित नहीं की गई। प्रकृति की उच्चता तथा उसके साथ जीव के अटूट संबंध को स्वीकारा नहीं गया। धरती पर मानव के निरंकुश अधिकार को नकारा नहीं गया और प्रसारित वर्तमान ज्ञान के पुंज में पूर्णता लाने का प्रयास नहीं किया गया तो हमारे अस्तित्व तथा विनाश के बीच जो थोड़ा समय शेष बचा है वह भी हाथ से निकल जाएगा।

निवंस 7 उपग्रह द्वरा अंटार्कटिका 1987–1989, 1990 तथा 1991 में हमारे ऊपर ओजोन की छतरी में छेद के चित्र लिए गए। अमेरिकी अंतरिक्ष संगठन नासा ने भी रहस्योद्घाटन किया था कि शीघ्र ही एशिया, यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका के एक बड़े भाग के ऊपर आकाश में ओजोन की जीवन रक्षक छतरी में छेद हो जाएगा। प्रदूषण, जल, वायु, भूमि के भीतर यहां तक कि मानव के संपर्क में आने वाले कोने–कोने में फैल चुका है और तीव्र गति से बढ़ रहा है।

सभ्यता के विकास की होड़ में विनाश के साधनों की वृद्धि की गति अधिक तीव्र है। हमारे पर्यावरण के मुख्य अवयव जानवर हमारे लिए बलिदान किए जा रहे हैं।

पर्यावरण की बिगड़ती स्थिति पर विचार के लिए पिछले वर्ष जून में ब्राजील में विश्व के देशों का शिखर सम्मेलन हुआ। परंतु हमारी प्रदूषित सोच के कारण इस सम्मेलन में मनुष्य को बचाने के लिए कोई ठोस परिणाम निकल कर सामने नहीं आया। इन सभी बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि विषय की संपूर्ण तथा सही परिभाषा करने तथा प्रदूषण को रोकने वाले वास्तविक उपायों को अपनाने की तुरंत आवश्यकता है।

होली 1993, हमीर उत्सव,हमीरपुर (हिमाचल प्रदेश) में प्रकाशित

NATIONAL SEMINAR

(Environmental Hazards and Sustainable Development)

REC (Now NIT) Hamirpur (HP) 22-23 Nov. 1999

Our Environment

(Environment Hazards & Sustainable Development)

By Acharya Rattanlal Verma

It appears that in the very near future the subject environment is going to be the subject of greatest magnitude or concern in the World and the paramount importance above all is to be given to Environmental Hazards and ecological imbalance. The time is coming when most of the countries will spend most of their time, manpower and other resources for the mitigation of environmental problems. The subject "Environment is defined in several ways. But it must be defined as:

1. **Definition**

   "For the complete and whole development, of living beings, particularly in addition internal and external development (physical mental, economical and internal/intellectual) of the human beings on the earth, the effect of their efficient behaviour in utilization of simple beneficial gifts of Nature with care for their utilization by other living beings by sustaining them for future maintaining ecological and geological balance, is called the environment."

2. **Reason for Environmental Hazards and Ecological Imbalance**

   When a distance or deficiency takes place in the efficiency of this behaviour, the environment starts facing degradation and pollution starts grabbing. Man, when for his single sided outer prosperity starts proceeding indiscreetly in an unjust manner on the path of sheer materialistic or physical development, the

pollution starts spreading and the ecological balance is threatened.

3. Magnitude of Pollution and Imbalance

The numerous industries, digging of mines and roads, cutting of trees, running of numberless vehicles, use of explosives, multipurpose hydel and other projects construction of multi-storeyed buildings, use of fertilizer, peptisides etc. has polluted air, water and earth. It appears from the speed of the pollution, danger of ecological and geological imbalance that it will threaten the existence of life on earth, if it is not immediately controlled or checked. With the consequences of man's action to disturb the Ecological and geological balance of earth, the Nature can take major formidable turn to maintain its balance. This stage also puts question mark on the existence of life for longer period on the earth and this may result in Total Destruction on Earth very soon.

4. How it so happened

No doubt, many of the achievements of present bunch of knowledge are commendable and it has done much for the betterment of man. But it also appears that it has dragged the man of the earth to the Gate of Mammoth destruction through the attractive path of single sided human development. It confined itself to physical things and their physical and chemical changes. The man for whose development it provided the appreciation worthy prosperity has two important different sides. One is physical and the other is internal which is not visible and for which much of the Research and Experimental work does not appear to have been done in the present world.

The internal side perhaps appeared to be the subject of deep experience invisibility, difficult for easy understanding and thus remained almost untouched. In this way, those working for the development and increased materialistic prosperity of the mankind, ignored one paramount side of the total composition and functioning of alive human body in its early days. The doughtful glance on the supremacy of nature in the entire cosmic or super-cosmic in early days of development and by attaching

entire importance only to the absolute right of man on the earth, the man lost the path of acquiring completion in it and thus augmented its speed for the development to achieve prosperity leaving aside its real meaning. Consequently the materialistic physical side started immediately developing and shining. But the internal side of the same man started deteriorating and depressing with the same speed. In this way a tense imbalance has taken place in human mind too now-a-days in adition to ecological and geological imbalance. Had all the sides of human being with the understanding of real prosperity developed simultaneously, the situation of pollution and threat to ecological and geological balance would have been different and have not been as serious as it has now become?

At this time, as stated above the pollution has spread in air water and earth. It has touched almost every corner of man's contact. Social, administrative and political environment has been polluted. The eco-balance has also been challenged. In case this problem is not effectively controlled or dealt with efficiently the existence of life on earth will be formidably threatened through, incurable diseases, pollution earthquakes, extreme militancy civil wars and ferocious (very fierce) World war.

5. State of Effect of Present Remedial Measures

The destruction for its occurrence on the earth takes crores of years through a slow process. But the single sided human development with absolute right on earth has reduced the long span of crores of years merely to decades. Some of the remedial measures, as suggested are not permanent and adequate. In the present circumstance with the present prevailing concepts of remedial measures, the achieving of goal of sustaining environment and ecological balance seem to be doubtful. Some of the remedial measures are just resulting in the transfer of pollution from one populated land to another populated piece of land, which is not good.

Here this fact draws attention that the present quantum of knowledge may not loose more time in achieving the goal since in field of health maintenance, we have also changed earlier

prescribed some of methods of treatment later on.

6. Development in Relation to Increased Population

In the present circumstances, as were taken to be, the development only seems to have provided necessities of life to the increased number of people in other words it could have been possible only through the indiscrete development to provide food and other things including unnecessary luxuries to human beings. But the balamable picture of man's one sided development can't be overlooked by taking into consideration the background of beyond expectation materialistic development to bear the burden of incessantly increasing population in the World. The definition of population has changed in the World many times. So far as the quantum of development in the light of increased population is to be assessed, the situation of increased and decreased population used to come on the earth. The burden of the population also seems to be more with the misuse of resources and without understanding the real meaning of prosperity.

The proper use of all the available resources incorporated with balanced picture of internal and physical development under humanitarian management can easily bear the burden of increased population. The balanced all side human development crowned with the power acquired submissively from the nature can overcome the burden of population

7. Efficiency to Deal with Terrible Situation

It seems to be a curse that educational systems produce good Doctors, Engineers, Administrators and politicians but do not have the capability of producing good men. In this way, when man does not become good then, how can he be good in the above field especially when no other efforts have been made to inculcate good human qualities in him? This question definitely awaits answer.

It is not much difficult to increase the forests and number of small trees at different places to save this one aspect of environment if the efficient management exists. But it is to be given proper thought as to how early well planned efficient

management takes place, not particularly in this field but in other fields too, as the effect and speed of pollution and imbalance may not wait for longer period. We had a more powerful and effective management in the form of old Indian conventions, which used to increase the forest and trees at other places and also safeguard them without incurring expenditure. Cutting of some of the trees and even branches was considered to be sin and during night all kinds of loss to trees was socially prohibited. But the present concept of development ignored the importance of these conventions thereby resulting in effecting them adversely and thus depriving the present man of the benefits of these old useful Indian conventions. This has also resulted in the environmental degradation.

8. Strict Legislation and its effectiveness or Implementation

Framing of strict rules and their strict enforcement or implementations as preventive measures does not seem to be that much affective in the present circumstances to the desired extent, when the people materially adversely affected have power to hamper the framing and implementation of such rules by building democratic pressure.

9. Now-a-Days

" Genetic Engineering is being considered as revolutionary technique. The experts engaged in this technique believe that they through the process of Genetic Engineering will overcome, some of the diseases pertaining to habits and will produce good or noble men with the genes of good persons. But some of the research and studies have revealed some of the dangerous aspects of this engineering. Rafee a voluteers organization of Canada has through research work concluded that it will not be good if Genetic Engineering is not controlled or stopped. This can also give rise to a new impediment so far as the existence of life is concerned.

- The holes have been found in the safety umbrella of Ozone gas and the area of holes is increasing day by day. Its area has increased to about 20 Lakh sqm in the sky.
- The temperature of Atlanntic Ocean is increasing. Snow bears are facing deficiency in live stock of their food due to this. Snow

is also melting.

- The laboratory when comes in action to controlle or overcome the pollution from one side, the situation is becoming worse with the increase in pollution from other sides.
- The old conventional methods of farming are now being considered better to sustain the fertility of soil and to be free from certain diseases.
- The out of season vegetables are now being considered harmful for health.
- The 'Earth summit" which took place in Brazil in June 1992, due to polluted thinking failed to adopt the remedial measures for the safety of life and earth from formidable destruction. This shows the extent of success through present measures and their effectiveness should be assessed in this context.
- The Western countries have decreased the use of polythene bags, but we have inceased its usage.
- In respect of some of the eatables and in treatment of borns on human body we have recently changed methods and found the old ones or conventional methods to be better and more secure.
- Now Indian Gur and Shaker are said to be better for health in place of sugar.
- The present methods to control industrial pollution are expensive and the industrialists do not prefer them and hence shirk.
- An acid producing industry near Beechhary village 15 kilometers away from Udaipur in Rajasthan polluted water of 60 wells and 2 meters thick layer of soil in certain square kilometers.
- Some of the remedial measures as have been suggested by experts, merely transfer the pollution from one land having population to another land having life.

10. Real Suggestive Effective Measures for sustainable Development and Mitigation of Environment hazards.

The existing knowledge though doing much for mitigation of environmental hazards, yet the number and types of these hazards and imbalance is increasing day by day instead of decreasing. These Environmental Hazards can only be mitigated

and sustainable development ensured by the following affective remedial measures in our country and in the world.

- Simplicity in living and thinking is necessary to be brought and the standard of life to be improved.
- The formation of World Environmental Council with adequate rights and powers is necessary so that the effectiveness and uniformity in remedial measures is ensured. This will ensure the effectiveness of remedial measures lest the results will not be better to deal with the dangerous situation.
- All countries should sustain the environment by way of collective efforts. The Himalayas if relentlessly used by the adjoining countries will have the adverse effect on our environment too.
- The frequent international Seminars are required for this.
- A balance between life and development is to be maintained and taking account of the circumstances a boundary line needs to be drawn.
- The small trees should be grown near houses of residential colonies. This should also be made binding on the institutions engaged with formation of these colonies.
- The aim of education system should first be to produce good men than to produce good Engineers, doctors, administrators, politician or any others. This need to be done at World level.
- The supermeacy of nature should not be much challenged with the increasing speed of development and a boundary line for balanced developmental race needs to be drawn universily.
- **The clothe bags and papers envelops should be used in place of poly bags. This will also help in providing employment. The use and production of poly bag needs to be banned immediately.**
- The social pollution should also be considered a part of environmental pollution.
- The old Indian conventions for growing forests and trees at other place needs again to be followed in the interest of safety and increased numbers of trees or forests.

- The sources for destroying the life can be used for providing means to protect life. This will also help in bearing the burden of increased population.
- The available resources should be properly and gently used. This will also decrease the burden of population.
- Co-existence of life on earth should also be comprehended to the necessary extent and spirit of world fraternity too.
- There is need to give new direction and understanding to research and experiments relating to developmental activities, security and safety, encircled with simplicity and uniformity.
- The construction of multi-storeyed building where alternative exists, should be banned.
- The luxuries production polluting industries needs to be checked and its use also needs to be banned forthwith and the real prosperity needs to be understood and preached.
- Environmental Universities covering above points are required to be opened in the World immediately.

Taking into consideration the increased quantum and speed of pollution, realizing the sensitivity of time and nearness to Destruction the formation of a Supreme World Institution or world-Environmental Council with adequate rights and powers is indispensable to deal with the problem of pollution and imbalance to avoid impending Formidable Destructon without loosing more time. Every country, not merely on the basis of economic prosperity, but also on the basis of population should be given representation of experts in this World Environmental Council. For as much the effect of pollution and imbalance is world wide and only the collective and immediate efforts made in this direction can bring desired results.

11. An appeal to the Science World and Experts

The science world, if recommends the above suggested remedial measures for which I earnestly request to your magnanimity, it is sure that action by Government of different countries and other institutions will definitely be taken in this direction and not only human beings, but the coming generations of all societies of

the Living Beings will highly be obliged and thankful to you. The time is now not left much for long Research and awaiting for the results of experiements in the labouratories. The crores of people of the whole world and thousands of institutions concerned with the welfare of humanity are waiting for your calls and leadership to follow you to work in the above direction and field.

These are and only these are the real remedial paramount measures otherwise the formidable total destruction will Definitely take place in the impending future.

There is need to establish balance between development and environmental cleaniness by developing the man as a whole by framing a worldwide policy and getting that executed. The concept of simplicity is necessary for achieveing this goal and the simplicity itself becomes a source or an instrument for mitigating the hazards, maintaining eco-balance and geological balance.

These measures will comparatively be more powerful, beneficial, safer and economical to add to the series of the present remedial measures with comparatively lesser utilization of resources.

In the event of inadequate, less effective measures and keeping in view the increasing speed of pollution, ecological and geological imbalance, the Indian scientist also with the force of old scientific conventions and by organizing international Seminars too, can guide the World to avoid impending destruction for which an appeal has also earnestly been mode to the Science World.

Dharti par honge Rog shock aur Bhuchaal
Vishwa Yudh aur Vinash ka ghor utpat
Manav ke hee manav ka hoga jav vikas
Prakriti se phir prem hoga ahankar ka tyag
Hoga phir se utpan daya sarlta ka bhav
Us shakti se hoga pradooshan par prahar.

Published in REC (Now NIT) Hamirpur H.P. Natioanl Seminar 22-23 Nov 1999
Page 135-139

आधुनिकीकरण की होड़ में उपेक्षित हुई प्रकृति

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

हम पंजाब, हरियाणा तथा जम्मू की शिवालिक की पहाड़ियों के साथ लगते तथा उत्तर से पूर्व तक फैले हिमालय पर्वत पर एक विहंगम दृष्टि यदि डालें तो जनसंख्या का एक खासा भाग इन पर्वतों एवं पहाड़ों की ढलानों पर बसा हुआ मिलता है। जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उतरांचल तथा अरुणाचल के साथ-साथ अफगानिस्तान, तिब्बत एवं चीन के करोड़ों लोग इन्हीं पर्वतों में वास करते हैं। समतल जगह की कम उपलब्धता के कारण अधिकतर लोग ढलानों पर अपना रैन-बसेरा करते हैं। इन रैन बसेरों को आधुनिकीकरण, प्रदर्शन की अंधी दौड़ एवं धन के बढ़ते सामर्थ्य ने छोटे-मोटे भरकम दुर्गों सा आकार भी प्रदान कर डाला है। व्यक्ति यहां भी अपने प्राणों की सुरक्षा की अपेक्षा दिखावे और धन की वृद्धि की अधिक चिंता करने लगा है। असीमित समृद्धि की भूख से आक्रांत वैश्वीकरण की होड़ के कारण भौगोलिक अनिवार्यताएं अपना महत्व खोने लगी हैं। प्रकृति के बहुत से अवयवों एवं तत्वों के वैज्ञानिक पकड़ से अभी तक बाहर रहने के कारण महत्व खोती भौगोलिक अनिवार्यताएं विपदाओं की जनक भी बनती जा रही हैं। सुख-सुविधाओं की वृद्धि के साथ-साथ इनमें उपभोग जन्य कलिष्ठता भी आती ही जा रही है।

प्राण घातक बहुमंजिला निर्माण : अब यह घोषित किया जा चुका है कि समूचा हिमालय आंचल भूकंप की दृष्टि से जोन संख्या 5 तथा चार में पड़ता है, जहां भूकंप की सबसे अधिक तीव्रता रहने की संभावना है। साथ ही यह माने जाने के पश्चात कि भूकंप चाहे कितना बड़ा आए, अधिक प्राण हानि लोगों पर ऊंचे भवनों के मलबे के गिरने के कारण ही होती है, सरकार ने निर्माण पर उस समय जो प्रतिबंध लगाया वह उन्हीं दिनों सरकार ने हटा भी दिया था। हिमाचल प्रदेश सरकार ने अप्रैल 2001 को मंत्रिमंडल द्वारा लिए निर्णय के अनुसार इस प्रदेश में बहुमंजिले निर्माण पर रोक लगा देने के साथ 45 डिग्री से अधिक ढलान पर निर्माण को पूर्ण रूप से प्रतिबंधित भी कर दिया। परन्तु इस समय हो रहे निर्माण पर दृष्टि डालें तो पता चलता है कि आर्थिक दृष्टि से समर्थ लोगों पर इस प्रतिबंध का अधिक प्रभाव नहीं है। ऐसे लोगों को किसी के प्राणों की अपेक्षा धन कमाने की अधिक चिंता है। पर आश्चर्य की बात समझिए कि मानव कल्याण से जुड़ी संस्थाओं एवं सभाओं पर भी अधिकतर इन्हीं लोगों का प्रभाव

अधिक होता है। इसलिए ही तो सुरक्षात्मक पग उठाने का पूर्व प्रयास करने के बजाए मृत्यु के द्वार में लोगों के प्रवेश करने के पश्चात ही शेष बचे प्रभावित लोगों के अश्रुओं को पोंछ कर संवेदनाओं को बांटना ही आज कुछ लोगों को अधिक प्रचारात्मक एवं श्रेयस्कर लगने लगा है ताकि इससे अधिक धन एवं यश प्राप्ति का मार्ग भी खुलता चला जाए। 45 डिग्री या इससे अधिक की ढलानदार ऊंचाई पर तो प्रत्येक प्रकार का निर्माण घातक है। भूकंप आने की स्थिति में ऐसा निर्माण बहुत ही भयानक सिद्ध हो सकता है जो जानमाल की भारी हानि कर डालेगा।

अपनी विशिष्ट भौगोलिक संरचना के कारण पहाड़ों की ढलानों, शिखरों एवं घाटियों में सड़कों का विस्तार बहुच खर्चीला होता है। भूमि की कम उपलब्धता तथा कठोर चट्टानों के कारण सड़कों की चौड़ाई प्रत्येक स्थान पर इतनी हो ही नहीं पाती जो बढ़ते वाहनों के एक साथ आने-जाने के लिए सुविधाजनक हो। ऐसे में अपनी-अपनी रुचि के अनुसार निजी वाहनों में लगे हार्नों से निकलती भिन्न-भिन्न प्रकार के अर्थों एवं स्वरों वाली ध्वनियां पैदल चलने वाले लोगों तथा वहां से गुजरते अन्य वाहनों को अपनी पहचान तथा उद्देश्य का साफ-साफ संकेत नहीं दे पाती हैं। कहीं किसी कार का हार्न 'ॐ नमों शिवाय:' उच्चारण करता है तो किसी के हार्न से काट डालने वाले कुत्ते सरीखी ध्वनि निकलती है। किसी का हार्न अंग्रेजी भाषा की सिद्धता झाड़ता है तो किसी का 'ओम जय जगदीश हरे' आरती गाता है। किसी का 'डिंग-डांग' घंटी की आवाज करता है तो किसी का समझ न आने वाली भाषा में किसी और अर्थ वाली बात कर डालता है। कई तो कार में बैठे-बैठे हू-हू, हू-हू की ध्वनियों से ही बाहर वालों से बात करने में आनंद लेते हैं। पता नहीं उन्हें यह समझने में कठिनाई क्यों होती जा रही है कि हार्न केवल आनंद का नहीं, बल्कि सावधानी का सूचक है। हिमाचल के हमीरपुर नगर सहित अन्य नगरों में भी विरोधाभास उत्पन्न करने वाली हार्नों की ऐसी ध्वनियों को सुना जा सकता है। भिन्न-भिन्न प्रकार की इन ध्वनियों से लोगों में एक भ्रम सा उत्पन्न हो जाता है, जो सड़क पर चलते हुए तुरंत सुरक्षात्मक पग उठा डालने के मार्ग में सहायक होने के स्थान पर बाधक बनता जा रहा है। हार्नों से निकलने वाली ध्वनि का एक निश्चित उद्देश्य होना चाहिए जो ध्वनि से स्पष्ट भी होना चाहिए, ताकि दूसरा पक्ष उस पर तुरंत सावधानीपूर्वक आवश्यक कार्रवाई कर सके। इसके लिए आवश्यक है कि हार्नों की ध्वनियों में एकरूपता सुनिश्चित की जाए

जिससे सड़क पर यात्रा करते समय वाहनों के आने-जाने के बारे में भ्रम की स्थिति उत्पन्न न हो।

समय ने कुछ इस प्रकार करवट ले ली है कि हम वास्तव में कुछ विशेष बनने के स्थान पर केवल वैसा कहलाने का अधिक बहाना करने लगे हैं। आज जगह-जगह युवाओं में लोकप्रिय होते जाते प्रदूषण उत्पन्न करने वाले बेसुर ताल के संगीत एवं हो-हल्ले वाले गानों को ही लीजिए, उद्देश्य विहीनता के पथ पर यात्रा करती इन गानों की ध्वनियां न जाने इन युवाओं को अधिक प्रिय क्यों लगने लगीं हैं। क्या इनमें वास्तव में व्यक्ति के अंदर नई स्फूर्ति एवं नई चेतना जगाकर उसकी थकान का हरण कर एक नई प्रेरणा के साथ नवीन उत्साह उत्पन्न करने का सामर्थ्य है? या फिर कहीं वे वास्तविकता से भटक कर अपने भीतर ऐसा हो जाने का बहाना पालने में लगे हैं। आधुनिकता या आधुनिक कहलाने के नाम पर प्रत्येक नई आती बुरी वस्तु या रुझान को अपनाते जाना, मानवीय विवेक एवं दृष्टिकोण से अधम एवं निम्नस्तरीय कार्य ही कहलाएगा।

किसी की शादी या विवाह हो या जन्मोत्सव या फिर और उत्सव, वहां तो इस संगीत से मुक्ति मिलती ही नहीं। परंतु अब तो कहीं-कहीं धार्मिक कार्यक्रमों में इन्हीं ध्वनियों की तर्ज पर भजन भी सुनने को मिल जाएं तो भी कोई आश्चर्य की बात नहीं है। हम अपने आराध्य देव को भी अपनी मनपसंद आधुनिकता में लपेट लेना चाहते हैं। चाहे हमारा यह पग प्रकृति विरोधी ही क्यों न हो। लाभ-हानि के मापदंड या कसौट पर भी गानों की बेसुरी ऊंची-ऊंची इन ध्वनियों को कस कर यदि देखें तो ध्वनि प्रदूषण द्वारा श्रवण शक्ति को कम करने, मस्तिष्क पर प्रतिकुल प्रभाव डालने तथा तनाव की उत्पति द्वारा रक्तचाप को प्रभावित करने वाले कीटाणु ही इनमें मिलेंगे, जिन्हें हमारी आंख पहले शायद देख नहीं पाती है।

भूकंप का मुख्य कारण भूगर्भीय हलचल या भीतरी असंतुलन माना गया है। परन्तु इस असंतुलन के तो कई रूप हैं। असंतुलन के कुछ कारण तो सहज प्राकृतिक प्रक्रिया के रूप में हैं, जो मानव की पहुंच के बाहर हैं। परन्तु कुछ कारण तो मानवीय क्रियाओं की प्रतिक्रिया के रूप में उभर कर भीतरी हलचल को भी तो प्रभावित करते ही होंगे। इस प्रकार से मानवीय कृत्य भूकंप को आमंत्रित करने का स्वयं एक साधन भी बन जाते हैं। अत्याधिक खनन, क्षरण या भूतल पर अत्याधिक पड़ता भार आदि भीतरी हलचल एवं संतुलन को प्रभावित करने की कुछ तो क्षमता रखते ही हैं। हिमाचल की राजधानी शिमला

का पर्वत शिखर बहुमंजिले निर्माण से भारी होता जा रहा है तो कांगड़ा में सदियों से मकानों के लिए स्लेट उपलब्ध करवानों के उद्देश्य से भारी खनन होता चला आ रहा है। कहीं सीमेंट के कारखाने लग रहे हैं तो कहीं पर्वतों की तलहटी में लगते बड़े बांधों से रुक कर विशाल झील का रूप लेता पानी है। पन-बिजली परियोजनाओं के लिए बनी सुरंगों से खोखले होते पहाड़े हैं तो विश्वव्यापी बढ़ती होड़ के कारण सीमेंट और कंकरीट के तले दब कर कठोर होता भूतल है। कहीं पक्की सड़कों से दब कर शुष्क होता जाता उसका एक बड़ा भाग भी है। भूतल पर होते जाते इन कृत्रिम परिवर्तनों का कुछ तो प्रभाव होगा ही जो गहरे तक यात्रा कर जाता है। सुख-सुविधाओं तथा विश्वव्यापी अपरिभाषित समृद्धि की होड़ के चलते विकास के नाम से हो रहे ये परिवर्तन यद्यपि नितांत आवश्यक समझे जाते है तथापि क्रुद्ध होकर अमर्यादित होती प्रकृति का थपेड़ा भी तो एक दिन हमें खाना ही पड़ेगा। प्रश्न फिर वहीं आकर ठहर जाता है कि जीवन की तथाकथित अपरिभाषित वर्तमान शैली की चाल को लिए हम प्रकृति के साथ जीवन के इस काल क्रम में आगे कहां तक चल सकेंगे ?

दिव्य हिमाचल, धर्मशाला शुक्रवार 14 दिसंबर, 2001, अजीत समाचार जालंधर 28.01.2002 (संपादकीय पृष्ठ तथा अन्य) में प्रकाशित

जोहांसबर्ग का विश्व सम्मेलन क्या पर्यावरण को बचा पाएगा?

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

पर्यावरण को बचाने के लिए दक्षिण अफ्रीका के जाहांसबर्ग शहर में 26 अगस्त से 4 सितंबर 2002 तक होने वाले विश्व सम्मेलन के परिणामों का पूर्वानुमान यदि लगाएं तो ऐसा लगता है कि जून 1992 में रियो (ब्राजील) में हुए इसी प्रकार के पृथ्वी सम्मेलन से अधिक अच्छे परिणाम निकलने की आशा इस सम्मेलन से भी नहीं की जा सकती है। वास्तव में पृथ्वी पर बड़ी तीव्र गति से फैलते प्रदूषण तथा बढ़ते असंतुलन के प्रमुख कारण हैं, पर्यावरणीय प्राकृतिक सीमाओं तथा जीवन स्तर की उपयुक्त शैली के प्रति हमारी सोच में आती जाती कमी से जीवन तथा प्रकृति के बीच की चौड़ी होती खाई। यह भी खेद की बात है कि इस ओर विशेषज्ञों तथा राष्ट्राध्यक्षों का समुचित ध्यान शायद अभी तक गया नहीं है। मात्र केवल बीमारी के इलाज की ओर ध्यान देने से इस समस्या का उस समय तक समाधान नहीं हो सकता है जब तक कारणों को खोजा और उन्हें मिटाया नहीं जाता। मानवीय मुद्दों को व्यक्तिवादी मुद्दों से प्रभावित नहीं होने दिया जाना चाहिए।

धरती पर समूची जीव जाति पर विनाश के मंडराते खतरे को दूर करने में जो दूसरी बाधा है वह है विकसित तथा विकासशील देशों द्वारा इसके समाधान के लिए अपनाए जाने वाले सभी उपायों में एकरूपता का न होना और प्रदूषण के जनक मानवीय वास्तविक आधारभूत कारणों का ऐसे सम्मेलनों में चर्चा का केंद्र न बन पाना। ऐसे में संभावित 106 देशों के राष्ट्राध्यक्षों एवं शासनाध्यक्षों तथा 174 देशों के लगभग 65000 लोगों के भाग लेने वाला यह विश्व सम्मेलन क्या वास्तव में इस पृथ्वी को महानाश के तांडव से बचा पाएगा?

शासनाध्यक्षों तथा विशेषज्ञों का समुचित ध्यान अभी भी जीवन पर मंडराते खतरे के वास्तविक कारणों की ओर यदि नहीं गया तो प्रदूषण, भू एवं पारिस्थितिकीय असंतुलन को दूर करने के लिए अपनाए जाने वाले उपायों से अधिक लाभ नहीं होगा। बल्कि जीवन, असंतुलन और प्रदूषण जन्य विनाश के बीच जो समय बचा है वह भी हाथ से निकल जाएगा। इस प्रकार यदि स्थिति

ऐसे ही जारी रहने दी गई तो इस शताब्दी **अर्थात् 21 वीं शताब्दी के धरती पर मानवीय जीवन की अंतिम सदी हो जाने के पर्याप्त कारण बन ही जाएंगे। मात्र केवल बढ़ती जनसंख्या को ही दोष देकर बढ़ते प्रदूषण के अन्य कारणों से ध्यान हटाना कदापि उचित नहीं है। लेखक ने संभावित विनाश के इस आशय का पत्र संयुक्त राष्ट्र संघ के माननीय महासचिव को भी 22 जून 2002 को भेजा है जिसमें प्रदूषण तथा असंतुलन की हानिकारक होती स्थिति तथा संभावित विनाश के दृष्टिगत कुछ उपायों का सुझाव देकर उन्हें अपनाने का अनुरोध संयुक्तराष्ट्र संघ से किया है।**

दिव्य हिमाचल शिमला 28.08.2002 (संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

पेड लगाने से परहेज क्यों?

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मानव अपने अस्तित्व को लेकर आदिकाल में भी चिंतित रहा है, स्वास्थ्य को परखने तथा उसे बनाए रखने के लिए। आज के शोध ग्रंथों तथा प्रयोगशालाओं की अनुपस्थिति में भी वह खोजता रहा है, अरोग्यता के मूल मंत्रों को। खोज और परख की इसी यात्रा द्वारा वह फिर पहुंचा था हरे पेड़ों के महत्व को समझने तथा उन्हें लगाने एवं पूजे जाने के पड़ाव पर। परंतु आर्थिक लाभ की वर्तमान बाजारू संस्कृति ने उसे आज मोड़ दिया है निर्माण से फिर विध्वंस की ओर।

पेड़ प्रदूषण दूर करते तथा हमें ऑक्सीजन देते हैं। यह तो हम जानते हैं। परंतु इन्हें लगाने तथा इनकी रखवाली करने के उत्तरदायित्व से तो हम दूर भागते जा रहे हैं। वनों में आग पहले भी लगा करती थी और इन्हें नष्ट करते आग के वह शोले आज भी देखे जाते हैं। परंतु अपनी लपटों से वनों को जलाते इन शोलों का रंग आज अधिक गहरा और अपने आवृत को और चौड़ा करता जा रहा है। पेड़ों की जितनी संख्या में बरबादी आज होती है उतनी पहले नहीं हुआ करती थी। आग लगते ही आस-पास की बस्ती के लोग वन की ओर उमड़ पड़ते थे और देखते ही देखते आग की वह लपटें शांत कर दी जाती थीं। विभाग में भी हड़कंप मच जाता था। परंतु आज लोग आग बुझाने नहीं जाते। केवल वन विभाग को ही चिंता करनी पड़ती है। वह भी पहले वाले उस हड़कंप की चिंता के बिना। निजी क्षेत्र के वन आज धड़ल्ले से कटते जा रहे हैं। हिमाचल प्रदेश की शिवालिक की पहाड़ियों की शामलात तथा निजी भूमि पर जो पेड़ पौधे थे आज गिनती में वह बहुत कम रह गए हैं। बस्तियों के समीप सदियों से गांव की शोभा बढ़ाते पेड़ आज के सभ्य कहलाने वाले समाज की तेज धार वाली कुल्हाड़ी ने काट डाले हैं। विकासत्मक गतिविधियों के कारण सरकारी पेड़ों पर भी आरी का चलना जारी है।

कांगड़ा, हमीरपुर, ऊना, बिलासपुर, मंडी आदि जिलों के खेतों की मेंड़ों, चरागाहों पर खड़े, आम तथा चीड़ के पेड़ कट-कट **कर गिनती में अब कम ही रह चुके हैं। सार्वजनिक क्षेत्रों द्वारा बनाई जा रही कालोनियों में भी पेड़ लगाने वाली व्यवस्था नदारद रहती है। पेड़ कट तो जाते हैं पर लगते नहीं हैं। यहां की हरी-भरी भूमि कंकरीट की सफेदी और**

तारकोल की स्याही के साथ ढक दी जाती है। संबंधित विभाग भले ही उपग्रह द्वारा प्राप्त आंकड़ों के सहारे सेमिनारों में समय-समय पर वनों एवं पेड़ों में बढ़ोतरी की डींगे मारता रहे। परंतु प्रदेश की आर्थिक सर्वेक्षण की रिपोर्ट में वनों में पेड़ों की संख्या में होती बढ़ोतरी या कमी के आंकड़ों को दिखाने से वह बचता सा ही लगता रहा है। 2001-02 की रिपोर्ट में भी स्थिति इससे भिन्न नहीं लगती है यहां भी रहस्य यथावत लगता है।

फलोत्पादन द्वारा आर्थिक लाभ हेतु फलदार पौधों के रूप में हरियाली से ढकती भूमि संतोष की क्षणिक किरणें भले ही बिखेर दे। परंतु भावनात्मक दृष्किोण के वीराने में बाजारू इस संस्कृति के भी कोई विशेष अर्थ नहीं रह जाएंगे। भावनात्मक दृष्टिकोण **जीवन रक्षक है और संवेदनहीन निरे बाजारू दृष्टिकोण में छुपा है विध्वंस, चीत्कार जो धरती पर जीवन के लिए अभिशाप बनता अब विनाश कर ही डालेगा।**

दिव्य हिमाचल धर्मशाला 30 जुलाई 2003 में प्रकशित

भूमि खनन होगा तबाही का कारण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

भूक्षरण पृथ्वी की सहज परिवर्तन रूपी ह्रासात्मक नैसर्गिक क्रिया है। वहीं प्राकृतिक क्रिया एक बहुत लंबे काल खंड के बाद फिर जन्म देती है एक भारी उथल-पुथल को और दौड़ पड़ता है फिर सागरों का जल थल की ओर।

पृथ्वी की इस नैसर्गिक क्षरण क्रिया की गति को तीव्रता प्रदान कर रहे हैं, आज मानव के अपने कर्म। जगह-जगह हो रहे खनन से बिगड़ रहा है हिमाचल प्रदेश का पर्यावरण। कट-कट कर घायल होती जा रही है पहाड़ों की स्वर्गसम आभा और घटती जा रही है प्राकृतिक सुंदरता की छटा और निरंतर छलनी होता जा रहा है पर्वतों का सीना।

घटनाएं साक्षी हैं कि जब-जब धरती पर गहरे पड़े कुदाल और विस्फोर्टां से हुआ प्रहार, तब-तब सुनाई देती रही प्राकृतिक आपदाओं की भी ललकार के साथ फिर मनुष्य की चीत्कार। धंसी भूमि या फिर पानी में डूबे लोगों का सुना क्रंदन। कांपी धरती और भू-जीवजाति के प्राणों का हुआ विसर्जन। 31 जुलाई 2000 की रात्रि को सतलुज नदी में आई बाढ़ में सैकड़ों लोग मरे और हजारों पशुओं ने अपने प्राण त्यागे। बार-बार होने वाले खदान से नदी के दोनों किनारों पर जमा हुई वर्षों से मिट्टी बह गई। दिखाई देती रही फिर माटी विहीन बजरी और नंगे होकर चमकते पत्थर। यदि यह मिट्टी जमा नहीं होती, तो पानी का तल ऊंचा होकर भारी नुकसान न करता।

अप्रैल 1905 में कांगड़ा की धरती यदि कांपी तो सदियों से यहां मकानों के लिए स्लेट निकालने हेतु खदान ने भी तो इस भुकम्पन को तीव्रता दी ही होगी। वरमाणा तथा दाड़लाघाट की सीमेंट फैक्टरियों के लिए दिन-रात भूमि खदान और जहरीला धुआं उगलती चिमनियों से प्रभावित हो रहे हजारों लोगों के फेफड़े। इसी के साथ मंडरा रहा है सांस की बीमारी का डर। परियोजनाओं और उद्योगों ने हमारा आर्थिक विकास तो किया। परन्तु यह सब भावी पीढ़ी के अपने बच्चों के जीवन के मूल्य पर हुआ है।

उद्योगों, परियोजनाओं के कारण कट रही है धरती और विस्फोटों से

उड़ाकर चौड़ी की जा रही हैं सड़कें। एक स्थान पर बार-बार धरती का कटना, मिट्टी का नदी किनारे ढलानों पर लटकना यदि निर्बाध यूं ही जारी रहा तो वर्षा के मौसम में पड़ते पानी, बड़ती गर्मी से पिघलते हिमखडों और हिम झीलों के मुहानों के खुलने से आए पानी से गठबंधन करती नदी किनारे लटकी मिट्टी भविष्य में पुनः बाढ़ आ जाने से भारी जान माल की तबाही कर देगी।

यही नहीं पहले बने और आगे बनते बांध, खदान द्वारा अप्रत्याशित गाद के आ जाने से समय से पहले अपनी आयु पूर्ण कर **विशेषज्ञों द्वारा पूर्व निर्धारित आयु संबंधी समय सीमा के आंकड़ों को भी ठेंगा दिखा देंगे। इस प्रकार निर्धारित समय से पहले समाप्त हो सकते हैं आर्थिक प्रगति के कई साधन और धूमिल हो सकता है, भावी पीढ़ियों का भविष्य।** अब समय आ गया है एक प्रभावी विश्वव्यापी विधान एवं कानून के निर्माण का, जो वर्तमान पीढ़ी को भावी मानवीय पीढ़ियों के अधिकरों के अनावश्यक और बेरोक-टोक हनन से रोक सके। अन्यथा वर्तमान 21 वीं शताब्दी धरती पर जीवन के लिए अति भयानक खतरे के रूप में जानी जाएगी।

दिव्य हिमाचल, धर्मशाला 16.07.2003 (संपादकीय पृष्ठ) तथा अन्य समाचार पत्रों में प्रकाशित

इसी शताब्दी में छिनेगी मैदानों की हरियाली

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति द्वारा प्रदत्त तत्व, पानी जीवन के लिए कितना आवश्यक है यह तो सभी जानते हैं। परन्तु निकट भविष्य में पीने योग्य पानी की मात्रा में होने वाली भारी कमी के बारे में हम आज से थोड़ा समय पहले अधिक नहीं जानते थे। हम विकास के मार्ग पर बढ़ते अपने कदमों की चाल की टाप का स्वर मिला रहे थे पानी उलब्ध करवाने वाली नित नई बनती और उभरती तकनीकों की गति के स्वर के साथ। परन्तु पानी उपलब्ध करवाने वाले सीमित होते प्रयत्नों ने हमें अब विवश कर दिया है, पानी की कम होती मात्रा को समझने और कम होते इस पानी में भी घुलते जाते जहर की मात्रा को जानने तथा इन सबसे निपटने के लिए अपनाए जाने वाले उपायों के बारे में चिंतन करने के लिए।

अभी-अभी मेघों के छम-छम बरसने से पूर्व हिमाचल प्रदेश के भी अधिकतर इलाकों में चिलचिलाती धूप में लाखों लोग पानी का अभाव झेलते रहे। लगभग सभी कस्बों और अधिकतर गांवों में पानी की बढ़ती कमी ने भविष्य में विकराल होकर विनाशक बनते अपने स्वरूप का संकेत भी दे डाला है। यह भी एक बिडम्बना है कि पानी उपलब्ध करवाने वाले कृत्रिम साधनों में भारी वृद्धि के पश्चात् भी कमी थमती नहीं, जबकि प्राकृतिक रूप से होने वाली वर्षा तथा पृथ्वी की गति या प्रकृति में कोई विशेष विपरीत प्रभाव दिखता भी नहीं। एक ओर बरसात में कुल्लू की गड़सा घाटी के पुलिया नाला सरीखे स्थानों पर बाढ़ से एक साथ मरते सैंकड़ों लोग हैं तो दूसरी ओर आग उगलती गर्म ऋतु में पानी पुकारते प्यासे पहाड़ों के लाखों प्राणी। बढ़ती विश्वव्यापी मानव जनित गर्मी के कारण पानी की मानवीय आवश्यकता तो बढ़ी है। परन्तु प्रकृति के अनुरूप सहज जीवन शैली से विमुख होते हम आज जाने-अनजाने बढ़ते जा रहे हैं उस मार्ग पर जो पानी उपलब्ध करवाने वाली प्राकृतिक प्रक्रिया एवं प्रणाली को ही ध्वस्त करता जा रहा है। प्रकृति विरोधी आचरण द्वारा हम स्वयं मानवीय भविष्य को संकटमय बनाते चले जा रहे हैं।

जल का मुख्य स्त्रोत है सागर। जहां से पानी वर्षा के रूप में मिलता है। वर्षा के इस पानी का कुछ भाग भूमि की ऊपरी परत को भिगो डालता है, जिससे

उगते हैं पेड़–पौधे और फसलें। कुछ प्रवेश कर जाता है, भूमि के भीतर जो मिलता रहता है, कुंओं, बावड़ियों ट्यूबवैलों, चश्मों और पम्पों द्वारा गर्मियों में फिर पीने तथा फसलों को देने के लिए। शेष लौट जाता है पुनः सीधे सागर की ओर। कई क्षेत्रों में सदियों से लोगों को निर्भर रहना पड़ा है, वर्षा के पानी के कृत्रिम भंडार खातरियों पर और कई मीलों पैदल चलकर लाना पड़ा है पीने का पानी सर पर उठाकर। चैक डैम लगाने का रुझान भी कम हुआ है। साफ सफाई के नाम पर आधुनिकता के रंग को तीखा करने के लिए भी पानी का दुरुप्योग बढ़ा है। बढ़ती गर्मी से बर्फ भी अब कम पड़ती है और पिघलती अधिक है। हमीरपुर जिला का बिझड़ी गांव लेखक का जन्म स्थान है। वहां जो तालाब थे, तलइयां थीं उन पर कहीं अब किसी स्कूल का मैदान है तो किसी पर अब कोई कार्यालय बन गया है। पानी की बढ़ती इसी कमी के वास्तविक इन कारणों को समझने और इन्हें दूर करने में यदि हमसे अधिक देर हुई तो सूर्य की तपन और हमारे कर्म से अपनी प्यास बढ़ाते पहाड़ मैदानों की हरियाली को इस शताब्दी में ही छीन लेंगे।

दिव्य हिमाचल धर्मशाला इण्डिया पृष्ठ 6 दिनांक 22 जुलाई 2003 (संपादकीय पृष्ठ) तथा अन्य समाचार पत्रों में प्रकाशित

एकाएक फटते बादल भविष्य में भारी तबाही मचाएंगे।

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

हमारी पृथ्वी सजीवता एवं संवेदनशीलता से भरा ब्रह्मांड का वह पिंड है जो जीवनधारियों की तरह स्वयं भी प्रकृति के ही द्वारा नियंत्रित आयु की सीमा रेखा से बंधा है। निरंतर गतिमान एवं मर्यादित विशाल इस धरती पर जब जब और जहां जिस किसी रूप में भीषण प्रहार हुआ तब तब संवेदनशीलता के कारण इस ने भी मनुष्य को अपने विराट और अभेद्य अस्तित्व का अनुभव करवाया है। इतिहास साक्षी है कि इस धरती पर जब जब गहरे पड़े कुदाल तब-तब दिखाया है प्रकृति ने भी अपनी रौद्र रूप और फिर प्रत्युत्तर में सुनाई देती रही है लोगों की बेबस चीत्कार।

हिमाचल प्रदेश जैसे छोटे से पहाड़ी क्षेत्र में बादल फटने की बार-बार होती घटनाओं ने हमें विवश कर दिया है उन कारणों को खोजने, जानने और समझने के लिए जो भारी संख्या में प्राण हानि के लिए उत्तरदायी हैं। कुल्लू के पुलिया नाला में 16 जुलाई को बादल फटने से आई बाढ़ में पचास लोग मरे, सैंकड़ों मजदूर बेघर हुए। मंडी की बल्ह घाटी में बादल फटा। अगस्त को बैजनाथ के सलूणी गांव में बादल फटने से लोग मरे। बादल फटने की एक के बाद एक घटती मौत के तांडव की इस घटना का सफर तनिक सा आगे बढ़ा ही था कि 8 अगस्त को मनाली के समीप कांगनी नाला में फिर बादल फटने के कारण आई बाढ़ से कई लोग मारे गए। मरने वाले अभागे साधनहीन इन लोगों की संख्या कहीं 40 बताई गई तो किसी एजैंसी ने 60 या 41 बताई। लगातार फटते ये बादल आगे कब और कितनी तबाही मचाएंगे कोई नहीं जानता।

बादल कभी कभार मैदानों में भी फटते होंगे। परंतु इन पहाड़ों में हाल ही में निरंतर फटते इन बादलों से प्रभावित स्थानों की भौगोलिक पृष्ठभूमि तथा उस पर पड़ते मानवीय पद चिन्हों की गहराई पर दृष्टिपात यदि हम करें तो उन कारणों की तस्वीर साफ दिखाई दे जाती है जो इनके फटने के लिए उत्तरदायी हैं।

कुल्लू के पुलिया नाले के समीप पार्वती परियोजना है। आउट तथा कुल्लू के बीच कई स्थानों पर लंबी तथा चौड़ी सुरंगों के निरंतर हो रहे खदान से पहाड़

खोखले होते जा रहे हैं। मंडी की बल्ह घाटी के उस ओर पंडोह बांध है। व्यास नदी का पानी इस बांध से निकल कर सुरंगों से होता हुआ सलापड़ के पास सतलुज नदी से जा मिलता है। कांगड़ा के पपरोला बैजनाथ के समीप जल विद्युत परियोजना है।

मनाली के कांगनी नाला के समीप रोहतांग सुरंग का प्रवेश द्वार है। यहां एक बहुत बड़ी सुरंग निर्माणाधीन है जिसकी लंबाई कई मीलों तक होगी। इसके बनने से लद्दाख के साथ सीधा थल मार्गीय संपर्क स्थापित हो जाएगा। हिमाचल प्रदेश की इन पहाड़ियों एवं पर्वतों का पहले शांत–शीतल रहने वाला वातावरण अब कई प्रकार की ऊर्जा उत्पन्न करने वाले यंत्रों, गैसों, मशीनों के प्रयोगों, विस्फोटकों तथा वाहनों के काफिलों की दिन रात जारी चाल की टाप से बहुत गर्म होता जा रहा है। इस प्रकार बढ़ती तथा फैलती यह उष्णता नंगी तथा खोखली होती धरती के गर्भ से उठती गैसों एवं गंध से गठबंधन कर आकाश में मंडराते बादलों को बहुत ऊंचा उठाकर उन्हें परस्पर विरोधी विद्युतीय तरंगों से टकराने के कारण एकाएक पानी में परिवर्तित कर देता है। आकाश से एक साथ पड़ता यह पानी नीचे उपलब्ध कटी या सटी मिट्टी से सहयोग करता हुआ वेग से बहता भारी तबाही कर डालता है।

नदी घाटि परियोजनाओं के साथ–साथ सड़कों तथा सुरंगों का बिछता जाल यहां के पर्यावरण तथा भू–संतुलन को प्रतिकूलता के साथ प्रभावित करता जा रहा है। नदी तथा नालों के किनारों की धरती कट–कट कर छलनी की जा रही है। इनके किनारों पर लगे तथा मिट्टी को अपनी जड़ों से जकड़े पेड़–पौधे भी नष्ट होते जा रहे हैं। एक ओर तो वन क्षेत्र के बढ़ते जाने की डींगें मारी जा रही हैं। दूसरी ओर नंगी होती धरती से रुष्ट प्रकृति बार–बार अपना रौद्र रूप दिखा कर भविष्य में और भी भारी तबाही की चेतावनी देती जा रही है।

बहुमंजिले भवनों को भूकंप के आने की स्थिति में अधिक प्राण हानि के लिए उत्तरदायी तो माना गया है। परंतु शिखरों तथा ढलानों पर ऐसे भवनों का बेरोक–टोक निर्माण जारी है। धन कमाने की बढ़ती भूख के कारण प्राण घातक ऐसे निर्माण को पहाड़ों पर लैंड स्केपिंग के नाम पर प्रतिबंध लगाने और फिर उठाने की आंख मिचौनी के साथ उचित मान लिया गया है। असुरक्षित इस निर्माण का काफिला बड़ी तेजी से आगे बढ़ता जा रहा है।

परंपरागत लगते पेड़ों का प्रचलन कम हुआ है और वनों को लगती आग की घटनाएं पहले की अपेक्षा आज गिनती में बढ़ गई हैं। परंतु फिर भी हम उपग्रह द्वारा प्राप्त चित्रों के सहारे प्रस्तुत आंकड़ों की कारागरी के साथ सच्चाई तथा कुशलता अकुशलता के रंग रूप को बदलने में लगे, पर्यावरण को ध्वस्त करने वाले वास्तविक कारणों से मुंह मोड़ते जा रहे हैं। साफ-सफाई के नाम पर हरी-भरी प्राकृतिक गंध विखेरती धरती को कंकरीट की ठोस परत के नीचे दबाते जा रहे हैं। इस प्रकार भीतरी तह को वर्षा के पानी के समाने से बंचित रखते हैं और इसके कारण पड़ती पीने के पानी की कमी से फिर त्राही-त्राही और हाय तोवा मचाते जा रहे हैं।

पर्यावरण को बचाने की सरकारी कवायद भी सेमिनारों के सजते मंचों की चकाचौंध तथा राजनैतिक ब्यानवाजियों के शब्द जाल में ही उलझी रह जाती है और बचता है प्रकृति के ध्वस्त होते पर्यावरण के लिए प्रशस्त होता मार्ग।

प्रकृति के अस्तित्व को ललकारते, निरंकुश, क्रूर मानवीय पग शायद अब रुकेंगे नहीं और बादल फटने सरीखी तबाही मचाने वाली घटनाएं भविष्य में गिनती में भी बहुत अधिक बढ़ जाएंगी। इस समय तो नीचे रहते लोग पानी में वह कर मर रहे हैं। परंतु यदि ऐसे ही सब कुछ अनियंत्रित और निर्बाध चलने दिया गया तो भविष्य में आते अतिरिक्त पानी के वेग से टूटती पहाड़ियां कुछ ऊंचाई पर बसे लोगों को भी दुर्घटनाओं की भेंट चढ़ा देंगी।

दिव्य हिमाचल, धर्मशाला 12 अगस्त 2003 अजीत समाचार जालंधर, हमीरपुर पत्रिका, हमीरपुर (हि.प्र.) 26.10.2003 में प्रकाशित

हमारी भूमि-हमारा भविष्य

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

धरती की उपजाऊ शक्ति को यथावत् बनाए रखने तथा भावी पीढ़ियों को विनाश के तांडव से बचाने के लिए उस समय तक कोई हल नहीं निकल सकता जब तक हम अपने तथा अपनी इस विशाल धरती के बीच के संबंध को ठीक प्रकार से नहीं समझते हैं। सम्बन्ध की उसी व्यवहारिकता में छिपा है विकास तथा जीवन के बीच संतुलन को बनाए रखने, धरती को विनाश से बचाने एवं भूमि की उपजाऊ शक्ति को यथावत बनाए रखने का रहस्य। इसका मूर्त रूप हमें फिर मिलेगा, सरल, उसी अपरिभाषित जीवन शैली में, पहियों की तीव्र गति से जो हमसे पीछे छूटता जा रहा है, बहुत दूर। हम प्रकृति के बीच स्वयं प्रकृति की ही एक आकृति एवं रचना के रूप में हैं और विवश हैं अपरिवर्तनीय प्राकृतिक सीमाओं के भीतर इसी धरती पर सुविधापूर्ण अपना जीवन चलाने के लिए। प्रकृति मर्यादा के अनुरूप कार्य करती है। मर्यादा के उसी आवृत एवं घेरे में क्रियाशील है, प्रकृति का ही अंग हमारी यह पृथ्वी, जिसमें उत्पन्न करते हैं हम कई प्रकार की फसलें, पेड़-पौधे प्रकृति के बीच, प्रकृति ही के द्वारा प्रदत्त एक विशेषकाल खंड तक अपना जीवन चलाने के लिए।

उगती इन फसलों के लिए प्रकृति की मर्यादा का वही आवृत फिर लाता है सागर से जल, वर्षा के रूप में। जिसका कुछ भाग पुनः लौट जाता है सागर की ओर तथा कुछ भाग समा जाता है भूमि के भीतर, जो हमें फिर मिलता रहता है साल भर पीने तथा फसलों को देने के लिए। प्रकृति ही की देन इस धरती तथा पानी की उपयोगिता को खेतों में उगने वाली फसलों तथा पेड़-पौधों के संवर्धन के संदर्भ में यदि हम देखें तो पता चलता है कि बढ़ती जनसंख्या तथा ऊंचे होते अपने आर्थिक सामर्थ्य के कारण सुख-सुविधाओं की ओर बेलगाम बढ़ते मानवीय कदमों ने अपनी आवश्यकताओं एवं अभिलाषाओं की पूर्ति के लिए, इन दोनों ही तत्वों, धरती और पानी को अपने विवेकहीन आचरण द्वारा प्रतिकूलता से प्रभावित करने का प्रयत्न किया है। संबंधों के बीच असंतुलन का जन्मदाता विवेकहीनता का यही क्रम शिक्षा के इतने चकाचौंध उजाले में आगे भी निरंतर जारी है। उसे हम चाहे अवैज्ञानिक ढंग कहें या फिर वैज्ञानिक ढंग। क्योंकि यह सब कुछ वैज्ञानिक ऊंचाईयों के ही इस युग में हो रहा है।

रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग यदि यूं ही जारी रहा, खेती के आधुनिक उपकरणों की कमियों की ओर हमारा ध्यान नहीं गया और कट-कट कर जर-जर खोखली होती बहती रही धरती की माटी, चलती रही मशीनें अंधाधुंध पर्वतों, घरों, घाटियों, सड़कों पर तो इसी शताब्दी में न होगी, गेहूं, मक्की, धान और दालों की फसलें। न ही होगी सब्जियां और न फल ही। सूख जाएंगे पेड़-पौधे, पानी के स्त्रोत झरने, चश्में और नदियां भी।

आधुनिक उपकरणों, मशीनों, रसायनों पर अधिक निर्भरता के कारण, फिर हाथ से कम काम एवं श्रम करने की बढ़ती प्रवृत्ति के रहते पहाड़ की मिट्टी खेत में रहने से किनारा करती जा रही है। ट्रैक्टर के साथ फसल बोते समय खेत में जो सुहागा फेरा जाता है उससे खेती की मिट्टी की ऊपरी परत आपस में ठीक प्रकार से नहीं मिल पाती है। रासायनिक खाद के बढ़ते प्रयोग से कुछ समय के लिए यही ऊपरी परत बहुत नरम हो जाती है और वर्षा के पानी के साथ आगे बह जाती है। ढलानदार पहाड़ी भूमि पर बने खेतों के किनारे बरसाती पानी की निकासी के लिए बनी कूहलों एवं चश्मों का पानी एक दूसरे खेत में वेग से गिरता है। वह भी मिट्टी को उखाड़ फैंकता है। गोवर की खाद के रेशों से मिट्टी उखड़ने तथा बहने से कुछ सीमा तक बच जाती है। हल-बैल के साथ जो सुहागा दिया जाता था उससे भी मिट्टी की परत आपस में मिल जाती थी तथा मिट्टी के बहने की संभावना में कुछ कमी आ जाती थी।

रसायनों तथा कीटनाशकों का खेती में बढ़ता प्रयोग केवल भूमि की उपजाऊ शक्ति को कम ही नहीं कर रहा है बल्कि इस प्रकार उगती फसलों के प्रयोग से मानवीय स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता जा रहा है। अपनी आज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रकृति की शक्ति का स्वार्थपूर्ण, अनुचित दोहन हमारे बच्चों के जीवन को अन्धकारमय बना देगा। जो जन्म से लेकर मृत्यु तक मात्र केवल दवाओं के बल पर ही जीने को विवश हो जाएंगे। **स्वास्थ्य विज्ञान आज मनुष्य की जिस लंबी आयु की दुहाई देने लगा है वह भी बहुत कम हो जाएगी। कम समय तक ही जी पाएंगे हमारे अगले बच्चे।**

इसलिए रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों का प्रयोग इनके विपरीत प्रभाव वाली मात्रा के प्रारंभिक बिंदु से आगे नहीं किया जाना चाहिए। खेतों में सुहागा

इस प्रकार दिया जाना चाहिए की मिट्टी की ऊपरी परत आपस में ठीक प्रकार से मिल जाए। खेतीबाड़ी में गोबर एवं पंरपरागत खादों के प्रयोग को अधिक प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। नालों आदि पर चैक-डैम लगाए जाने चाहिएं। ढलानदार भूमि पर फलदार पौधों एवं बगीचों को लगाया जाना चाहिए। जहां भूमि किसी कारण उखड़ जाए वहां पेड़े-पौधे और पत्तेदार झाड़ियां लगाई जाएं। व्यापारिक फसलों एवं बेमौसमी सब्जियों के उत्पादन के प्रोत्साहन के साथ-साथ इनके दूरगामी अच्छे-बुरे प्रभावों पर भी अन्वेषणात्मक दृष्टि रखी जानी चाहिए। परमाश्वयक भू-कटान में विस्फोटकों का न्यूनतम प्रयोग किया जाना चाहिए।

यह आवश्यक नहीं कि मापदंडों द्वारा निर्धारित परिणाम सर्वदा एक जैसे ही निकलें। मानव संवेदनशील है और संवेदनशील ही है, हमारी प्रकृति एवं पृथ्वी भी। इस तथ्य को इसके सही अर्थों में देखने समझने तथा इसे मान्यता देने की आवश्यकता है।

संवेदनशीलता रूपी विषय की प्रयोगशाला का आवृत कमरों में सिमटी प्रयोगशाली से कहीं अत्याधिक विस्तृत, प्रकृति की विराटता, अनन्त आकाश की माप रहित गहराईयों एवं दूरियों में फैला है। जिसके परिणाम का सही अनुभव प्रकृति से प्रेम, समीपता एवं समर्पण के संतुलनात्मक प्रभाव जन्य अनुभव द्वारा ही देखा तथा पढ़ा जा सकता है। कुछ वैज्ञानिक निष्कर्ष व्यवहारिकता में लाए जाने के कुछ काल खंड के पश्चात किसी अज्ञात कारण द्वारा अन्य किसी नए प्रभाव एवं समस्या को जन्म देकर विपरीत परिणाम को भी ला सकते हैं। अज्ञात ऐसे प्रभाव की ओर भी हमारी दृष्टि सावधानी-पूर्वक निरंतर रहनी चाहिए।

इसी प्रकार खेत का पानी खेत में रखने की भावना को मूर्त रूप देने से पहले हमें देखना पड़ता है प्रकृति के उस चक्र एवं प्रभाव की ओर जो हमारे लिए पानी उपलब्ध करवाता है। वर्षा के रूप में आता तथा भूमि में समाता पानी ही हमारे खेतों को सींचता है। यदि इस पानी के भूमि के भीतर समा जाने की संभवनाएं कम हो जाएं तो पानी पूरा वर्ष हमें नहीं मिल सकता है। खेत तो सूखे रह ही जाएंगे परंतु हमें पीने के लिए भी पानी नहीं मिल पाएगा।

आज अपने रहन-सहन के जिन तौर-तरीकों को लिए जिस अपरिभाषित

जीवन शैली से हम प्रेम करते जा रहे हैं, उससे वर्षा के पानी के भूमि के भीतर समाने की संभावनाएं कम होती जा रही हैं। हम अपने घरों के आस-पास भूमि छोड़ना कम पसंद करने लगे हैं। अपने आंगन को वृक्ष की ताजी हवा, ठंडी छाया तथा हरियाली से दूर रखना और हर ओर कंकरीट की ठोस परत को देखना तथा उस पर चलना हमें इसलिए भी अच्छा लगने लगा है क्योंकि हम अपने बढ़ते धन एवं सामर्थ्य का प्रदर्शन भी करना अपनी शान समझने लगे हैं। गांव के ताल-तलईयां अब रहे नहीं। सड़कों के बिछते जाल से भी पानी के समा जाने की मात्रा घटती जा रही है। आवासीय कालोनियों में पेड़ों की व्यवस्था की ओर से ध्यान हटाया जा रहा है एवं इन कालोनियों के घरों को पेड़ों की हरियाली से दूर रखा जा रहा है।

वर्षा के पानी को भूमि के अंदर प्रवेश करने से हम रोक देंगे तो कहां होगा हमारे नालों, चश्मों टयूबवैलों में पानी और कैसे होगी इन खेतों की सिंचाई? कैसे रूक और मिल सकेगा खेत का पानी खेत को? भारी कटान, खुदाई तथा कंकरीटनुमा हमारी इस संस्कृति को यदि लगाम न लगी तो आगे चलकर लोग शायद खेतों में भी कंकरीट डालकर फसल उगाने की बात करने लगेंगे। हमारी धरती, आवश्यकतानुसार नंगी रहे, ताल-तलैयां चश्में, झरने-प्रपात साफ सुथरे एवं सुरक्षित रहें, भू-क्षरण को रोकने और पानी समाने के लिए चैक-डैम बनते रहें, हर घर के पास पेड़ हो, आवासीय कालोनियों के निर्माण के लिए उत्तरदायी संस्थाओं को इसके लिए आवश्यक निर्देश दिए जाएं तो इससे मिल पाएगा हमें फिर पानी वर्षा विहीन दिनों में भी।

भिन्न-भिन्न स्थानों पर लगते फलदार पौधों एवं उद्यानों के कारण अधिक लंबा चौड़ा लगता हिमाचल प्रदेश का वन क्षेत्र अपने भावी अस्तित्व को बनाए रखने के लिए हमसे फिर **उसी सरल जीवन शैली की अपेक्षा रखता है, जो उत्पन्न कर सकती है एक सशक्त आधार भावी किसी विनाश से इस धरती को बचाने के लिए।**

आज मनुष्य अपनी सुख-सुविधाओं तथा बढ़ते अपने धन एवं सामर्थ्य के अनावश्यक प्रदर्शन और विश्वव्यापी बढ़ते असंतुलित विकासोन्मुख रुझान के वशीभूत, सरलता से दूर अपरिवर्तनीय प्राकृतिक सीमाओं की अवहेलना के साथ अपने स्वार्थानुकूल गढ़ी गई मनचाहे अर्थों वाली वर्तमान जीवनशैली के मार्ग द्वारा बढ़ता जा रहा है स्वयं अपने ही विनाश की ओर। स्वार्थ रंजित तथा क्रूर अपनी

क्रियाओं द्वारा हम जीवनदायी अपने पर्यावरण को जिस गति के साथ ध्वस्त करते तथा प्रदूषण को बढ़ाते जा रहे हैं, उससे भूकंप, अन्य प्राकृतिक आपदाओं, भीषण विश्व युद्ध अतिउग्र आतंकवाद, विषाक्तता एवं महामारियों द्वारा महाविनाश अपना ताना बाना अब शीघ्र ही बुन डालेगा। ऐसे में कृत्रिम प्रक्रिया के रूप में अपनी भूख मिटाने के लिए अन्न भी यदि विष एवं जहर को लेकर मनुष्य के पेट में जाएगा, धरती विष और असंतुलन से प्रभावित होगी, तो फिर जीवन के अस्तित्व के लिए इस धरती पर अतिशीघ्र भयानक भय उत्पन्न हो जाएगा।

हिमाचल प्रदेश में तो बहुमंजिले निर्माण की बढ़ती प्रवृति बहुत ही घातक है। बढ़ते इस रुझान का मूल्य हमें निकट भविष्य में आने वाले सम्भावित भूकंप में भारी जान–माल की तबाही के रूप में भी चुकाना पड़ सकता है। लेखक ने स्वयं डेढ़–दो वर्ष पूर्व एक प्रयत्न किया था। कुछ हुआ भी परंतु वह फिर मंजिल से पीछे रह गया। मंगल ग्रह पर अपना बसेरा ढूंढने से पहले हमें अभी बहुत कुछ और सोचना पड़ेगा, धरती के साथ अपने व्यवहारिक संबंधों पर।

पृथ्वी पर बढ़ती क्रूर मानवीय क्रियाओं के परिणामस्वरूप **महाविनाश अब मात्र कोरी कल्पना न होकर इसी शताब्दी में उद्घाटित होने वाला अकाट्य सत्य है, जो इस धरती को जीवन विहीन भी कर सकता है।** लेखक अपने इस निष्कर्ष को प्रचार माध्यमों एवं प्रैस द्वारा पहले भी कई बार उजाले में ला चुके हैं तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के साथ भी इसे उठाया है। इस विषय को उठाने के किसी अन्य मंच या संस्थान के पते की लेखक को आवश्यकता होगी। चहुं ओर से जीवन पर मंडराते खतरे के कारण अब विकास की दौड़ के मार्ग पर संतुलन के साथ फूंक–फूंक कर पग रखने की आवश्यकता है। इसलिए सरल जीवन शैली की पटरी पर विकासात्मक कुछ तौर तरीकों के साथ खेती–बाड़ी के भी परंपरागत कुछ अच्छे तरीकों के साथ मशीनरी के प्रयोग को अपने दिल दिमाग से सही दिशा देते हुए पुरानी उन खादों एवं दवाईयों से भी किनारा न करें तो ही हम अपने बच्चों के भविष्य एवं लम्बे जीवन के लिए कुछ अच्छा कर पाएंगे। तब ही रह पाएगी खेत की मिट्टी खेत में और खेत का पानी खेत में।

वन संदेश हिमाचल प्रदेश सरकार के वन विभाग द्वारा प्रकाशित जुलाई दिसंबर 2003 (पृष्ठ 25, 26 व 27) के अंक में प्रकाशित

प्रकृति से छेड़छाड़ विकास में बाधक

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति ने धरती पर जीवन को चलाने तथा उसके परिष्कार के लिए आवश्यक संसाधन जुटाएं हैं। इनमें धरती की माटी, खनिज, हवा, पानी, पेड़-पौधे, नदियां, नाले, ताप-प्रकाश, पर्वत, सागर, जीव-जंतु आदि सम्मिलित हैं। मैदानी जीवन को छोड़कर यदि हम पर्वतीय जीवन यापन तथा उसके परिष्कार पर दृष्टि डालें तो हमारा ध्यान बरबस कुछ अलग से पहलुओं की ओर चला जाता है- जैसे पर्वत, नदियां नाले, वन, बर्फ, घाटियां-चोटियां, जीव-जंतु आदि। जीवन के परिष्कार के अलग बिन्दुओं को हम इस बात से भी समझ सकते हैं कि जैसे-जैसे बर्फीले क्षेत्रों के भीतर आगे से आगे घुसते जाएं तो मानवीय आकृतियों के रूप, रंग, आकार और प्रकार में भी अंतर देखने को मिलता है। किसी संयोगवश नीचे के क्षेत्रों का कोई व्यक्ति यदि लंबे समय से भूटान या सिक्किम में रहता है या उसके बच्चे जन्म लेकर लंबे समय तक वहां रहते हैं तो उनमें भी अंतर आ जाता है। उनकी दाढ़ी की बनावट तथा बाल भी एक भूटानी या सिक्किमी की दाढ़ी की तरह ही उगेंगे और बढ़ेंगे। हमारा जीवन चलाने वाले संसाधनों के प्रभाव की भी सीमाएं हैं। उन सीमाओं का जब ध्यान रखा जाता है तो जीवन समृद्ध और सुख-शान्तिपूर्ण बना रहता है। परंतु इन पर्यावरणीय सीमाओं की अवहेलना, अवनति और ह्रास की ओर ले जाने का कारण भी बन जाती है। संसाधनों और साधनों के इसी परिपेक्ष्य में हम हिमाचली जीवन का मूल्यांकन करते हैं।

लोगों का मुख्य धंधा कृषि तथा बागवानी रहा है। परंतु लंबे समय से लोगों की समृद्धि अधिकतर वैतनिक आय पर ही निर्भर रहती आई है। यहां के लोग बड़ी संख्या में सेना में भर्ती होकर देश की सेवा करते हैं। नव हिमाचल का तो शायद ही ऐसा कोई गांव हो जहां से सेना में कोई गया न हो। सेना में भर्ती के लिए पहले कोई कोटा प्रणाली भी नहीं हुआ करती थी। नागरिक सेवाओं के विभागों की अपेक्षा युवा सशस्त्र सेनाओं में अधिकाधिक भर्ती हो जाया करते थे। कुछ लोग तो अन्य राज्यों में लगे उद्योगों तथा वहां के शहरों के व्यावसायिक संस्थानों में भी नौकरी करते आ रहे हैं। इस प्रकार से अर्जित आय का एक बड़ा भाग ये लोग यहां लाकर व्यय करते या उसे बचत के रूप में संभाल कर रखते आए हैं।

कालान्तर में हिमाचल प्रदेश के आकार तथा प्रशासन हेतु सरकार का ढांचा भी बदला। सरकारी तंत्र द्वारा प्रशासन तथा विकास के लिए योजनाएं तथा परियोजनाएं भी बनती गईं। बड़ी संख्या में युवाओं को खुले दिल के साथ सरकारी प्रशासन में नौकरियां मिलती गईं। इन नौकरियों की संख्या तथा दिए जाने वाले वेतन की राशि भी बढ़ती गई। एक बड़ी संख्या के परिवारों को सरकारी नौकरियों द्वारा वेतन या पेंशन के रूप में अच्छी खासी रकम मिलने लगी। वर्ष 1999 में प्रदेश में लगभग सभी श्रेणियों तथा वर्गों के 2, 60, 973 सरकारी तथा अर्द्धसरकारी कर्मचारी थे और वर्ष 1991 में इनकी संख्या 2,49,667 थी। 1991 की जनगणना के अनुसार प्रदेश की जनसंख्या 51, 70877 और 2001 की जनगणना के अनुसार 60, 77248 थी जबकि 1991 में पेंशन लेने वालों की संख्या को यदि ध्यान में रखें तो लगता है धन का एक अच्छा खासा भाग सरकारी खजाने से भी लोगों को मिलता है। वर्ष 1980-81 में बागवानी या फलों के अधीन 92,467 हैक्टेयर भूमि थी। वर्ष 2003-04 में फलों के अधीन इस भूमि का क्षेत्र बढ़कर 1,82441 हैक्टेयर हो गया। इन फलों में मुख्य सेब तथा आम हैं। इनकी बिक्री से धन का एक बड़ा भाग प्रदेश में दूसरे राज्यों से आने लगा है। मुख्य खाद्य फसलों के अधीन वर्ष 1994-95 में 8,47,600 हैक्टेयर भूमि थी। 1995-96 में 8,31,400 हैक्टेयर, 1996-97 में 8,40,200 हैक्टेयर तथा 1997-98 में 8,55,500 हैक्टेयर के लगभग भूमि थी। मुख्य खाद्य फसलों की भूमि के क्षेत्र में कमी या बढ़ोतरी नगण्य ही है। पशुधन की संख्या 1982 में 51,24,000 थी जो वर्ष 1992 में बढ़कर केवल 52,62,704 तक पहुंच पाई। इसमें भी विशेष बहुत बड़ा अंतर देखने को नहीं मिला।

द्रुत अनुमानों के अनुसार प्रचलित भावों पर प्रति व्यक्ति आय वर्ष 1993-94 में 8,740 वर्ष 1998-99 में 16,144 तथा 2003-04 में 24, 903 रुपए थी। प्रदेश में लोगों के पास बढ़ते इस धन का प्रयोग बचतों में निवेश के साथ-साथ पढ़ाई, भवनों के अंधाधुंध निर्माण, वस्त्रों, विवाह-शादियों तथा अपने आर्थिक सामर्थ्य के प्रदर्शन के लिए नित अपनाई जाती रस्मों रिवाजों तथा विलासिताओं पर खुलकर होता जा रहा है। इससे अगली पीढ़ी के युवाओं सहित बच्चों में दिखावे, प्रदर्शन तथा साधनों के अपव्यय की भावना विरासत में मिलने लगी है। छोटा-मोटा काम करने से युवा परहेज करने लगे हैं। इन कामों के लिए दूसरे राज्यों से मजदूर तथा कारीगर यहां के गांव-गांव में आने और रहने लगे हैं।

बेतुकी रस्मों तथा फैशन को अपनाना आम बात होने लगी है। प्रदेश में दिखावे का प्रचलन शायद अंग्रेजी सल्तनत के समय में शासन तथा सत्ता के लिए घूमने-फिरने एवं आराम करने का केंन्द्र बने शिमला, कसौली, डल्हौजी तथा धर्मशाला के नगरों से यात्रा करता हुआ अब गांव-गांव तथा कस्बे-कस्बे में अपना डेरा डाल चुका है। इस पर विडंबना यह है कि आय के मुख्य स्त्रोत सरकारी नौकरी द्वारा खजाने से अधिक निकासी की संभावनाएं भविष्य में कम हो जाएंगी। प्रदेश सरकार में नौकरी के लिए भर्तियां कम होंगी। जो होंगी उन्हें पेंशन नहीं मिलेगी। सरकार के लिए अधिक नौकरियां देना तथा वेतन के वर्तमान स्तर को बनाए रखना भी कठिन हो जाएगा। प्रदेश खरबों रुपयों के ऋण के बोझ तले दबा है। इतने बड़े बोझ से दबे सरकारी कोष से पात्र व्यक्तियों को आयु भर पेंशन मिल भी पाएगी या नहीं। इस पर भी संदेह के बादल छा जाएंगे। अर्द्ध-सरकारी विभागों तथा बैंकों में स्वैच्छिक सेवानिवृति योजना को लागू किया गया। कोटा प्रणाली के कारण सेना में भी अधिक लोग नहीं जा सकेंगे।

अन्य व्यवसायों के लिए खुला बाजार प्रतिस्पर्धाओं से भरा पड़ा है। लोग अपने आर्थिक सामर्थ्य को बनाए भी रखेंगे या नहीं इसका उत्तर अब संदेह के आवरण से घिर जाएगा। दिखावे तथा प्रदर्शन की भावना को पालना और प्रकृति सुलभ पर्यावरण के आवृत से बाहर भागना हिमाचल वासियों को महंगा पड़ सकता है। प्रकृति से विपरीत होते आचरण तथा दिखावे को लगाम न लगी तो यहां के लोगों को उन्नति की ऊंचाइयों से अवरोहित होना पड़ सकता है। प्रकृति से समीपता तथा पहाड़ सुलभ सरलता से दूर भागता जीवन भटकाव का रास्ता पकड़ सकता है।

दैनिक जागरण धर्मशाला 15 दिसम्बर 2005 में प्रकाशित

कहीं लुप्त न हो जाएं पहाड़ों से फसलें

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति ने धरती पर जीवन के निर्माण से पूर्व ही सभी प्राणधारियों के भोजन के लिए आवश्यक तत्व जुटा दिए थे। उन्हीं की सहायता से प्रकृति की अपरिवर्तनीय जीवनोपयोगी सीमाओं के सम्मान और अपनी भोजन संबंधी आवशयकताओं के संतुलनात्मक संबंध की स्थापना के साथ मानवीय जीवन का विकास भी होता चला आया है। अब प्रकृति के सान्निध्य के प्रति अनास्था और अपने भौतिक सुख की पूर्ति के लिए नित ऊंचा उठता निरे स्वार्थ का झंडा हमें एकांगी विकास के छोर की ओर लेता जा रहा है।

इस प्रकार प्राकृतिक सीमाओं की अनिवार्यताओं की अवहेलना के साथ हमसे सीधा-सुथरा, निष्कंटक वह मार्ग छूटता जा रहा है, जो संपूर्ण देहधारियों को स्वास्थ्यमूलक लंबी आयु, सुख-शांति व धरती पर करोड़ों वर्षों तक जीवन के अस्तित्व को बनाए रखने वाली दिशा की ओर ले जाता है। हमारी धरती की ऊपरी सतह पर अब विकास के बनावटी मुलम्मे की परत चढ़ने लगी है। अन्न उत्पादन करने वाला क्षेत्र सिकुड़ता जा रहा है। अधिक उपज लेने के लिए प्रयोग में लाए जाने वाली रासायनिक खादों और विषैले घोलों से पैदावार तो बढ़ी है। परन्तु उसकी गुणवत्ता व प्राकृतिक स्वाद नष्ट होने लगा है। यही नहीं इससे अब धरती की उपजाऊ शक्ति के नष्ट हो जाने का भय भी उत्पन्न हो गया है।

आज भी 70 वर्ष या इससे भी लंबी आयु के किसान लाखों की संख्या में जीवित होंगे, जो इस बात के साक्षी होंगे कि आज से लगभग 60 वर्ष पूर्व जब रासायनिक खादों और विषैले घोलों का प्रयोग नहीं होता था तो उस समय चना, उड़द, कुल्थ व मसूर आदि दालों की हिमाचल के नए पुराने इलाकों में भरपूर फसल होती थी। उस समय जिस किसी खेत में किसान से गोबर की पर्याप्त खाद नहीं पहुंचती थी, उस खेत में गेहूं व चने का मिश्रित बीज बोया जाता था। खेत में उसकी भरपूर फसल होती थी। कुल्थ को किसान गांव से दूर वाली बंजर भूमि पर खरपतवार के बीच ही बो दिया करते थे। उस समय उड़द को किसान तो मक्की लगे खेत के बीच ही बोते थे। दोनों फसलों को एक खेत से एक ही साथ काटा जाता था। दोहरी चना, उड़द, मसूर और कुल्थ की वे पुरानी परंपरागत फसलें बहुत कम मात्रा में पैदा होती हैं। उनमें उतनी गुणवता और स्वाद भी नहीं रहा है जितना

गोबर की खाद या इसके बिना भी तैयार परंपरागत पुराने बीजों की फसलों में था। किसानों ने अब दालों की इन फसलों को बोना बहुत कम कर दिया है, जबकि पहले दालों की इन फसलों को पर्याप्त मात्रा में बोया जाता था। कम बिजाई और कम पैदावार ही के कारण खुले बाजार में दालों के भाव आसमान छूने लगे हैं।

लगभग 50 वर्ष पूर्व गेहूं चार रुपए प्रति कच्चा मन बिका करता था और उड़द की दाल बिका करती थी केवल तीन रुपए प्रति कच्चा मन (15 कि.ग्रा.)। कुल्थ तो कभी –कभी इससे भी कम भाव पर बिक जाते थे। आज जो चने और उड़द बाजार में मिलते हैं, उनके रूप–रंग और स्वाद में भारी अंतर आ चुका है। ठीक वैसा ही जैसा आज मनुष्य की भावना और प्रवृत्तियों में आ चुका है। दोनों का स्तर गिर रहा है।

तीन वर्ष पूर्व दालों की घटती पैदवार और धरती की घटती उपजाऊ शक्ति के कारणों को प्रकाश में लाने का प्रयत्न एक प्रकाशित लेख के माध्यम से किया था। लेखक का यह लेख दैनिक जागरण के 25.09.2003 के अंक में भी प्रकाशित हुआ था। हिमाचल प्रदेश के वन विभाग ने 27.12.2003 को हमीरपुर में धरती की घटती संभावित उपजाऊ शक्ति पर एक सेमिनार किया। उसमें यह पत्र पढ़ा गया। पत्र में फसलों की पैदावार घटने और वर्तमान कृषि के तौर–तरीकों के कारण धरती की उपजाऊ शक्ति के घटने से फसलों के लुप्त होने की लेखक ने आशांका व्यक्त की थी। कृषि विवि के वैज्ञानिकों ने इन तर्कों पर विस्तारपूर्वक चर्चा की। हिमाचल में 1997–98 से लेकर अब तक कुछ दालों की पैदावार के वास्तविक और अनुमानित आंकड़ों पर दृष्टि डालें तो दालों की पैदावार के घटते–बढ़ते रुझान की वास्तविक आकृति हमारे सामने उभर जाएगी। वर्ष 2001 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार चने की पैदावार के इन आंकड़ों का रूप इस प्रकार है। 1997–98 में 2500 टन, 1998–99 में 1290 टन, 1999–2000 में 1530 टन (संभावित)। वहीं वर्ष 2004–05 की सर्वेक्षण रिपोर्ट में 2000–01 में 1490 टन,2001–02 में 1110 टन, 2002–03 में 1010 टन, 203–04 में 1210 टन (संभावित)। इसी प्रकार वर्ष 2004–05 के आर्थिक सर्वेक्षण में रौंगी की पैदावार 2000–01 में 4160 टन, 2001–02 में 4690 टन, 2002–03 में 4050 टन हुई। इन आंकड़ों की मुंह बोलती आकृति, चने और रौंगी की पैदावार की वास्तविक स्थिति को सामने रख देती है।

जहां तक चावल की पैदावार का संबंध है वर्ष 2004–05 के सर्वेक्षण में इसकी उपज 2000–01 में 124890 टन, 2001–02 में 137420 टन, 2002–03 में 85650 टन 2003–04 में संभावित 120620 टन दिखाई गई है। इससे स्पष्ट होता है कि खेतीबाड़ी के नए तरीके भी सर्वथा सुरक्षित व चिरकाल तक उपज बढ़ाए रखने के लिए पूरी तरह विश्वसनीय नहीं लगते हैं। अपने लालच के लिए जिस प्रकार उपज बढ़ाने के उद्देश्य से रासायनिक खादों और कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग किया जा रहा है, उससे मनुष्य और पशु–पक्षियों के पेट में भोजन द्वारा विष के प्रवेश की मात्रा बढ़ जाएगी। साथ ही धरती के भीतर घुसता यह विष इसकी उपजाऊ शक्ति को भी नष्ट कर देगा। धरती से मिलने वाले पानी में भी विष फैल जाएगा। प्राणधारियों का रक्त विषाक्त हो जाएगा और उनकी आयु कम हो जाएगी। यह एक गंभीर स्थिति का संकेत है। **पर्यावरण पर मंडराता एक भयानक खतरा है। यह क्रम यदि यूं ही जारी रहा तो इसी शताब्दी में गेहूं, धान और दालों की फसलें भी लुप्त हो जाएंगी।**

धरती की उपजाऊ शक्ति को बनाए रखने के लिए खेतीबाड़ी के पुराने उन तरीकों की ओर फिर दृष्टि डालने की तुरंत आवश्यकता है जो धरती की उपजाऊ शक्ति को नष्ट होने से बचाते और पैदावार की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। **उन्नत से उन्नत होते बीजों की लंबी होती कड़ी विषैले पदार्थों के प्रयोग के साथ हमें कहीं जीवन विहीनता के पड़ाव तक तो नहीं ले जाएगी?** इससे तो यही अच्छा है कि गोबर और हरी खाद के महत्व को समझा जाए। पशुधन को बढ़ाया जाए और विषैले पदार्थों का पैदावार बढ़ाने के लिए कम से कम ही प्रयोग किया जाए।

दैनिक जागरण धर्मशाला 11 फरवरी, 2006 सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित

तरसता छोड़ लौटेगा पानी सागर की ओर

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

पृथ्वी पर जब जीवन की उत्पति हुई तो प्रकृति ने उन सभी तत्वों का निर्माण एवं उपलब्धता भी पहले ही सुनिश्चित कर दी जो इसके लिए आवश्यक है। आकाशीय ऊर्जा एवं प्रभाव के साथ दिखाई देने वाले इन तत्वों के साथ सम्बन्ध स्थापित करते हुए विराट् उस प्रकृति की क्रियाओं द्वारा प्रस्फूटित हुआ फिर जीवन। **यह अलग बात है कि इस काल की क्रियाओं की सूक्ष्मताओं की गहराइयों को मापने और समझाने वाली उन प्रयोगशालाओं और विधियों का निर्माण करने में हम अभी तक पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पाए हैं। हमारी इस कमी के कारण आज हमसे पर्यावरण को इसके सही अर्थों एवं रूप में समझने तथा दिन-प्रतिदिन इसके बिगड़ते स्वरूप के कारण उत्पन्न समस्याओं का निदान करने में भूल होती जा रही है। इसी भयंकर भूल के कारण जाने-अनजाने पूरा संसार महाविनाश की ओर बढ़ता चला जा रहा है।**

हमारे शरीर के निर्माण में भी प्रकृति ने जल को ही प्रधानता दी है। इसी प्रधानता के कारण शरीर के जीवित अंगों का लगभग 70 प्रतिशत भाग पानी से बना है। देह के निर्माण और विकास के लिए अधिक प्रयोग में लाए जाने के कारण पृथ्वी पर जल का भी अधिक भंडार उपलब्ध करवा दिया गया है। सारी धरती की ऊपरी सतह के 74 प्रतिशत भाग पर पानी ही पानी है। धरती के चप्पे-चप्पे तक इसे पहुंचाने के लिए बादल बरसते हैं। पानी का कुछ भाग भूमि के भीतर समा जाता है और कुछ बर्फ के रूप में चढ़ा देता है सफेदी की चादर ऊंचे पर्वतों के ऊपर। कुछ तालाबों, झीलों आदि में भर जाता है और शेष लौट जाता है नदियों-नालों द्वारा पुनः सागर की ओर। पूरे उपलब्ध मानवीय इतिहास में आज तक कोई ऐसा प्रसंग नहीं आया जिससे जल संकट का कभी कोई आभास हुआ हो। इसलिए ही तो यह सभी के लिए सरलता से उपलब्ध होने वाला निर्मोल प्राकृतिक एवं दैवी उपहार माना जाता रहा है। परंतु अब परिस्थितयां बदलती जा रही हैं और इस उपहार की स्थिति पहले की तरह रहने वाली नहीं है।

प्राकृतिक उपहार के सही अर्थों को समझने तथा अपने आचरण में उन्हें

ढालने में हम चूक करते जा रहे हैं। ऐसी विपरीत परिस्थितियों के बढ़ने तथा जारी रहने से सेब की पैदावार का बढ़ना संभव नहीं हो पाएगा। फल कम लगेंगे और जो लगेंगे उनके रूप-रंग, आकार, प्रकार और गुणवत्ता में भी अंतर आ जाएगा। एक काल के पश्चात जल विद्युत उत्पादन के वे आंकड़े भी अपनी वास्तविकता खो बैठेंगे जिनके अनुमान पर इन परियोजनाओं का निर्माण टिका हुआ है। पीने योग्य पानी का संकट भी मंडराने लगेगा। फसल उत्पादन घटता जाएगा।

हम भारत को यदि लें तो यहां इस समस्या का हल ढूंढने के लिए नदियों को जोड़ने की योजना पर भी विचार आरंभ हो जाता है। भले ही वह योजना चाहे अप्राकृतिक प्रमाणित हो जाए। परंतु इतने भर से भी जल संकट का स्थायी हल नहीं निकाला जा सकता है। नदियों का अपना अस्तित्व जब खतरे से घिर जाएगा तो जल संकट कैसे टाला जाएगा।

हम हिमाचल प्रदेश को ही यदि लें तो इसके बर्फ से ढके पर्वत शिखरों के समीप सेब के बगीचे हैं। इस प्रदेश में वर्ष 2003-04 में सेब के फलों के अधीन 84112 हैक्टेयर का क्षेत्र था। इसी वर्ष में समशीतोषण फलों के अंतर्गत 24 873 हैक्टेयर का क्षेत्र था। इस प्रकार फलों के कुल उत्पादन का बड़ा भाग सेब ही हैं। परंतु बढ़ती गर्मी से इन क्षेत्रों की जलवायु प्रभावित होने लगी है। शिखरों पर बर्फ की जगह अब पानी की बोछारें पड़ने लगी हैं।

इस वर्ष अपेक्षाकृत बर्फ भी कम पड़ी जबकि फरवरी का महीना समाप्त होने जा रहा है। मई-जून-जुलाई में तो आकाश से अंगारे बरसते हैं। पानी का संकट चाहे इस समय कम ही सही, परंतु चर्चा का विषय अवश्य है। उधर केंद्रीय जल संसाधन मंत्रालय की प्रकाशित रिपोर्ट बताती है कि इस प्रदेश में भूमिगत जल का बहुत कम दोहन हुआ है तथा भूमि में जल का बहुत भंडार है। हम यह मानकर भी चलें कि इस समय भूजल में कोई कमी नहीं है, तो भी जीवन के प्रति जो अर्थ प्रधान दृष्टिकोण हमने अपना लिया है उसके चलते भविष्य में जल में न होने वाली कमी की स्थिति पर विश्वास भी कैसे किया जा सकता है। हमारी वर्तमान रहन-सहन की शैली जीवन प्रधान न होकर अर्थ प्रधान होकर दिखावट प्रधान भी बन चुकी है।

बर्फ के भंडारण पर ही बांधों की उपयोगिता और मैदानों की हरी-भरी

लहलहाती फसलों का भविष्य टिका है। **लेखक ने तीन वर्ष पूर्व अपने शोधपूर्ण लेख में स्पष्ट किया था कि इस शताब्दी में मैदानों की हरियाली चली जाएगी।** जल रूपी प्राकृतिक संसाधन की होने वाली कमी को तो तभी रोका जा सकता है जब मानवीय जीवन को व्यवस्थित बनाया जाए। **रहन-सहन के स्तर और जीवन स्तर के अपासी भेद को समझा जाए।** आर्थिक समृद्धि की गति में अनुशासन, मर्यादा एवं सीमा रेखा को स्थान दिया जाए। यह तब ही संभव होगा जब जीवन स्तर की वास्तविक परिभाषा को समझते हुए रहन-सहन में सरलता अपनाई जाए।

सादगी भरे आचरण से प्राकृतिक संसाधनों का कम प्रयोग होता है। वे नष्ट होने से बच जाते हैं। उनका दुरुपयोग भी नहीं होता है। यहां उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों तथा अपरिवर्तनीय प्राकृतिक सीमाओं के प्रभाव का ध्यान रखते हुए जल का बचाव तभी होगा जब सारा विश्व एक साथ प्रयास करे। अपने व्यक्तिगत आचरण तथा सत्ता प्राप्ति के लिए गिरते स्तर एवं एक-दूसरे के साथ आर्थिक प्रतिस्पर्धा में उलझे देश अकेले-अकेले पानी की समस्या का चिरस्थायी हल नहीं निकाल सकते हैं।

यही कारण है कि अब गर्मी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। क्योंकि हम अपनी आर्थिक समृद्धि को उत्तरोत्तर बढ़ाने तथा उसके प्रदर्शन करने की प्रक्रिया में कार्बनडाईऑक्साइड गैस का भारी मात्रा में उत्सर्जन करते जा रहे हैं। ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन जलवायु को प्रभावित करता जा रहा है।

बढ़ती इस गर्मी से ऊंचे पर्वतों पर बर्फ पिघलने लगी है। लाखों वर्षों से बर्फ के रूप में सुरक्षित पानी के ये भंडार खाली होने लगे हैं। पानी कम मिलने लगा है और मांग बढ़ने लगी है। उधर अपनी बनावटी चमक-दमक में अधिक निखार लाने की प्रक्रिया में हम धरती की ऊपरी सतह पर अधिक से अधिक कंकरीट या अन्य प्रकार की ठोस परत चढ़ाने तथा ऐसे क्षेत्र को बढ़ाने में लगे हैं। हमारे इस प्रकार के आचरण से वर्षा के पानी की भूमि के भीतर समा जाने की संभावनाएं कम होती जा रही हैं। पानी भूमि के भीतर यदि समाएगा नहीं तो लौटकर कुओं, नलों, झरनों आदि के रूप में हमें मिलेगा कैसे? वर्षा यदि कम होती गई, बर्फ का पिघलना तीव्र गति से जारी रहा, पानी का भूमि के भीतर जाना विकासात्मक गतिविधियों से हमने रोक दिया तो वर्षा विहीन दिनों में हमें पानी

मिलेगा नहीं। पानी के बिना जीवन भी नहीं पनप सकेगा। **इसी शताब्दी में सूख जाएंगी नदियां, नाले, झीलें, नहरें भी। बंजर हो जाएंगे खेत और खलियान। चली जाएगी हरियाली वनों की और फिर सिस्क-सिस्क कर बढ़ जाएगा इस धरा का समूचा जीवन अपने अवसान की ओर। समूचे विश्व पर निर्जनता के बादल छा जाएंगे।**

दैनिक जागरण धर्मशाला 02 मार्च 2006 (सम्पादकीय पृष्ठ) हमीरपुर पत्रिका 10.07.2006. में प्रकाशित

जनसंख्या नहीं, लालचयुक्त आचरण से बिगड़ा पर्यावरण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मनुष्य जैसे-जैसे प्रकृति के रहस्यों को जानने की ओर आगे बढ़ता जाता है वैसे-वैसे इसके रहस्य और भी गहरे होते जाते हैं। प्रत्येक रंग, रूप, आकार, प्रकार, अवस्था, आरंभ और अवसान को भी यह स्वयं ही अपने भीतर समेटे हुए हैं। उद्देश्यपूर्णता के निष्पादन की क्रिया के रूप में ही पदार्थों और जीवों का उदगम विकास और ह्रास संभव हुआ है। प्रकृति का यही सिद्धांत जनसंख्या की वृद्धि पर भी लागू होता स्पष्ट दिखाई देता है।

आज संसार के बहुत से देश जनसंख्या विस्फोट से डरे पड़े हैं। जहां कहीं भी किसी समस्या का सामना करना पड़ता है तो बढ़ती जनसंख्या का भयावह चित्र सामने दिखाई देने लगता है। समस्याओं के निराकरण की चर्चाओं एवं प्रक्रियाओं में जनवृद्धि ने एक बड़ा स्थान प्राप्त कर लिया है। इस समय जनसंख्या के रूप पर प्रकाश डालना इसलिए भी आवश्यक हो गया है, क्योंकि आज सारा संसार विकट परिस्थितियों के जाल से घिरा हुआ अनुभव कर रहा है। इन्ही कारणों एवं स्थितियों से हमारा पर्यावरण दिन-प्रतिदिन धवस्त होता जला जा रहा है। मुंह वाय खड़ी समस्याओं की विकटताओं को बहुत से लोग आज जनवृद्धि की देन मान रहे हैं। हर प्रकृति विरोधी कार्य को जनवृद्धि के दर्पण में देखा जा रहा है।

हमारे देश या संसार में आज जो भी खाद्य या अखाद्य समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं वे पूरी तरह जन वृद्धि के कारण नहीं हैं। इनका मुख्य और वास्तविक कारण है हमारे सामाजिक, राजनैतिक एवं प्रशासनिक क्षेत्र में बढ़ती अव्यवस्था। इस अव्यवस्था को बढ़ाने में उन कुछ परिभाषाओं ने भी सहायता की है, जो जनसंख्या या इसकी वृद्धि को लेकर की गई हैं एवं गढ़ी गई हैं। इन परिभाषाओं एवं प्रतिपादित कुछ सिद्धांतों ने हमारे अर्थशास्त्र के जनसंख्या और विकास के अध्यायों में महत्वपूर्ण स्थान पाया है। अव्यवस्था ही के कारण अब खतरा हमारे जीवन पर मंडरा रहा है। **उसको ध्यान में रखते हुए वास्तविकता पर प्रकाश डालना अत्यन्त आवश्यक है।** विकास से जुड़ी ऐसी कुछ परिभाषाओं

ने न्यूनाधिक हमारे जीने की पद्धति को जीवन की प्रधानता के मार्ग से हटा दिया है। यह जीवन प्रधान न होकर अब मात्र अर्थ प्रधान बन चुकी है। इस पर अब गंभीरता के साथ तुरंत पुर्नविचार की आवश्यकता है।

अपने अनुभव, अध्ययन यथार्थ के अवलोकन, चिंतन एवं मनन के आधार पर लेखक इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि मानवीय व्यवस्था के जितने भी क्षेत्र आज हैं, उनसे सरलता, सादगी, त्याग आपसी तारतम्य और व्यवहारिक आचरण कोसों दूर भागते जा रहे हैं। चाहे सामाजिक क्षेत्र हो जा राजनैतिक क्षेत्र, सुधारवादी क्षेत्र हो या धार्मिक सभी जगह ही संपत्ति पद, वर्ग, पंक्ति यश, वृद्धि की भावना की प्रधानता ने अपना सिक्का जमा लिया है। इन्हीं कुछ त्रुटियों के कारण आज अव्यवस्था, भ्रष्टाचार, अनैतिकता, असमानता, बढ़ती जा रही है। नैतिक एवं मानवीय मूल्य समाज में गिरते और अपमानित होते जा रहे हैं। इसलिए इन मूल्यों को जीवित कर पर्यावरण को यदि बचाना है तो जनसंख्या की परिभाषाओं एवं सिद्धातों पर पुर्नविचार के साथ उनके पुर्नप्रतिष्ठापन की तुरंत आवश्यकता है। अन्यथा विश्व को महानाश से बचाना असंभव हो जाएगा।

पृथ्वी पर हमारे प्रयोग के लिए उपलब्ध लोहा, कोयला, तेल, पैट्रोल, पानी, वन तथा अन्य जितने भी प्राकृतिक संसाधन हैं, उनमें आज कमी आती जा रही है। यह स्थिति बहुत कुछ हमारी आवश्यकताओं के कारण नहीं है। इस स्थिति के लिए मनुष्य का गिरता आचरण तथा बढ़ता लालच उत्तरदायी है। बढ़ते इसी लालच के कारण हम बहुत सी वस्तुओं का अत्याधिक प्रयोग तथा भंडारण एवं दुरुपयोग करने में लगे हैं। **हमारा आचरण यदि यूं ही गिरता गया, लालच बढ़ता गया और हम इसे बेलगाम छोड़ने के लिए उसके अनुकूल ही परिभाषाएं भी करते-गढ़ते गए तो मंगल-चांद तो क्या सारे का सारा ब्रह्मांड भी इस धरती के इस समय के लोगों की संख्या के लिए कम पड़ जाएगा। ऐसी स्थिति को और आगे जारी रखना किसी भी दृष्टिकोण से उचित नहीं है। क्योंकि यदि जनसंख्या घट भी जाती है और लालच बढ़ता जाता है तो भी समस्या तो ज्यों की त्यों ही बनी रहेगी।**

औद्योगिक विकास को सुख-सुविधा तथा रोजगार के साथ जोड़ा गया है। इसका प्रगतिशील इतिहास 150 वर्षों से अधिक पुराना नहीं है, परंतु इतने थोड़े

से समय में ही हमने जितनी कार्बनडाईक्साइड की मात्रा वायुमंडल में छोड़ दी है, उतनी पिछले साढ़े छह लाख वर्षों में भी नहीं छोड़ी गई। इसकी वृद्धि की दर जनसंख्या में हुई वृद्धि की दर से कई गुणा अधिक है। वृद्धि दर के अनुपात में इतनी बड़ी असमानता भी यही दर्शाती है कि हमारे जीवन की आधारभूत आवश्यकताएं इतनी नहीं बढ़ी हैं, जितना लालच। यह अलग बात है कि हमने लालच को आवश्यकता का नाम दे डाला है।

मालथस जो कि 18वीं और 19वीं शताब्दी के अर्थशास्त्री थे, उनका जनसंख्या का सिद्धान्त बहुत कुछ प्रकृति की सार्वभौमिक उच्चता पर आधारित था। वे जनवृद्धि पर प्रकृति के नियंत्रण को स्वीकार करते थे। परंतु संसार में लगातार होती जनवृद्धि के कारण बहुत से विद्वान अर्थशास्त्रियों ने उनके सिद्धांत की आलोचना कर दी। इसे डरा देने वाला समझा गया। परंतु अंधाधुंध आलोचना के **स्थान पर उसमें यदि कुछ सुधार कर दिया जाता तो संसार को ध्वस्त होते पर्यावरण के कारण गंभीर खतरों से नहीं जूझना पड़ता।** आधुनिक परिभाषाओं में अच्छे प्रबंधन, अच्छे वितरण, उन्नत धार्मिक और नैतिक शिक्षा की बातें तो की गई हैं। परंतु जीवन यापन के जिन बिंदुओं से ये संभव हो सकती है उन पर कम बल दिया गया है। ये बिंदु हैं प्रकृति, व्यवहार, रहन–सहन, दृष्टिकोण एवं आचरण में सरलता का होना। इस कमी ने मनुष्य में लालच को बढ़ाया है और अच्छे जीवन यापान की सीमा रेखा को गंवाया है। लेखक के विचार से जनसंख्या की परिभाषा इस प्रकार होनी चाहिए–"**किसी क्षेत्र या देश में रहने वाले लोगों का वह समूह जो उच्च नैतिक मूल्यों के परिपालन के साथ एक अच्छी सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक व्यवस्था में रहता है। प्राकृतिक सीमाओं को मानते हुए कुशलता और सादगी भरे आचरण के साथ अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इसके संसाधनों का उपयोग एवं उपभोग करता है। एक आदर्श जनसंख्या वाला कहलाया जाना चाहिए।**" इन अनिवार्यताओं की अवहेलना से ही कोई देश जनाधिक्य या कमी से पीड़ित हो सकता है।

हमारे असंतुलित विकास से उत्सर्जित कार्बनडाईआक्साइड गैस ने ओजोन की परत में लगभग 2 करोड़ 70 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में छेद कर डाला है। यह छेद बढ़ता जा रहा है। ओजोन परत प्रकृति द्वारा प्रदत्त एक सुरक्षा कवच

है, जो सूर्य की किरणों के घातक प्रभाव से हमें बचाता है। इस समय भारत में भी कार्बन डाईआक्साइड एवं सीएफसी गैसों का उत्सर्जन बढ़ता जा रहा है। अब तो हिमाचल प्रदेश भी इनके उत्सर्जन से अछूता नहीं लगता। भारत की जनसंख्या जो 1951 में 36 करोड़ के आस-पास थी वह 2001 में बढ़कर 1026443540 के आंकड़े को छू चुकी है। प्रकृति ने धरती पर जीवन के विकास के लिए सभी पदार्थ पर्याप्त मात्रा में जुटाए हैं। परंतु हमारी व्यवस्था में आती और बढ़ती अव्यवस्था से ये कम पड़ते जा रहे हैं। इसकी पुष्टि के लिए यह इंगित करना ही पर्याप्त होगा कि 20वीं-21 वीं शताब्दी के थोड़े से काल के क्रिया-कलापों ने ही विश्व को विनाश के द्वार पर ला खड़ा किया है। इसलिए अब यह आवश्यक है कि मनुष्य ने अपना जीवन जीने की प्रणाली में जो अव्यवस्था उत्पन्न की है उसे तुरन्त सुधारा जाए। अन्यथा बढ़ता भू-अंसतुलन, निरंतर ध्वस्त होता पर्यावरण खाद्य सामग्री में प्रविष्ट होता विष, जल की सम्भावित कमी तथा इन सभी की नकारात्मक ऊर्जा से उत्पन्न आपदाओं के साथ-साथ घोर विश्व युद्ध का भय भी द्वार खटखटा रहा है।

दैनिक जागरण धर्मशाला 18 मार्च 2006 (संपादकीय पृष्ठ पर) प्रकाशित

धरती की क्षमता पहचानने की आवश्यकता

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

विराट् प्रकृति में जीवधारियों की उत्पत्ति, विकास और ह्रास की प्रक्रिया में पृथ्वी का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। इस समय तक किए जा चुके अनुसांधानों की यात्राओं में पृथ्वी के अतिरिक्त अन्य किसी ग्रह पर जीवन के पनपने का सही पता नहीं चल सका है। शरीर के निर्माण में जिन तत्वों की भूमिका है उस पर वैज्ञानिक तथा विभिन्न धर्मों के शास्त्रीय मत लगभग एक रूप होते प्रतीत होते हैं। इन तत्वों की संख्या पांच बताई गई है। इनमें पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश की गणना की जाती है। ये तत्व पृथ्वी के प्रभाव क्षेत्र से मिलते हैं और पुनः उसी में विलीन हो जाते हैं। इन्हें समझे बिना पर्यावरणीय समस्याओं को समझना संभव नहीं है।

हमारी पृथ्वी की परिधि 40075 किलोमीटर है और भूमध्य रेखा से इसका व्यास 12756 किलोमीटर है। इसका क्षेत्रफल लगभग 31 करोड़ 42 लाख वर्ग किलोमीटर है। इसके लगभग 22 करोड़ 56 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर पानी है। केवल 30 प्रतिशत धरातल है। इस धरातल पर ही मानवीय आबादी, पशु-पक्षी, जीव-जंतु, नभचर, वन, मरुस्थल, नदियां नाले, पहाड़, मैदान, खेत खलियान भवन आदि हैं। जलचर जलमग्न क्षेत्र में हैं। इसकी जलवायु के प्रभाव क्षेत्र में जो प्राणी हैं उनकी प्रजातियों की अंतिम संख्या भावी खोजों के परिणामों पर निर्भर होगी। इस पृथ्वी के गर्भ में सही-सही क्या क्या, कितना-कितना और किस रूप रंग में है, इसका पूरा ज्ञान अभी तक नहीं है। अनुसंधान की इस दिशा में चांद सहित सौरमंडल के अन्य ग्रहों का पूर्ण ज्ञान तो अपनी यात्रा के आरंभिक पड़ाव पर ही है।

पृथ्वी के 50 फीसदी भाग के ऊपर बादल हैं। 40 किलोमीटर नीचे तक के भाग को क्रस्ट कहा जाता है। सागर में पानी रूपी क्रस्ट की गहराई 6 किलोमीटर है। यह क्रस्ट जीवन के निर्माण में सहयोगी है। इसी से विकास होता है।

पृथ्वी की आयु के बारे में भी विज्ञान की विभिन्न शाखाओं द्वारा व्यक्त किए गए अनुमानों में भी एकरूपता नहीं है। कहीं इसकी आयु 450 करोड़ वर्ष मानी गई है तो कहीं 200 करोड़ वर्ष का अनुमान लगाया गया है। परंतु इसके 200 से 300 करोड़ वर्ष होने पर अधिक बल दिया गया है।

इसी प्रकार धरती पर जीवन की उत्पत्ति के बारे में भी वैज्ञानिक एकमत नहीं हैं। कहीं इसकी उत्पत्ति लगभग 300 करोड़ वर्ष पूर्व मानी गई है तो कहीं 100 से 150 करोड़ वर्ष पूर्व जीवन का आरंभ माना गया है। परंतु वास्तव में जीवाश्म के बारे में यह भी कहा जा रहा है कि ये 50 करोड़ वर्ष से अधिक पुराने नहीं लगते हैं।

धरती पर पूर्व में हुए परिवर्तनों से लेखक के विचार से एक बात तो स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो जानी चाहिए कि प्रकृति ने धरती को पहले जीवन के योग्य बनाया और उसके पश्चात ही यहां जीवन आया। धरती की ऊपरी परत पर किस प्रकार के जीव अपने अंग रखेंगे, पानी में किस प्रकार के तैरेंगे। हवा में किस प्रकार के उड़ेंगे। इन सभी को प्रकृति ने एक सीमा रेखा मे बांध कर रखा है। करोड़ों वर्षों से जीवन इन्हीं सीमाओं के भीतर चला आ रहा है। वैज्ञानिक ऊंचाईयों के इस युग में भी प्रकृति द्वारा जीवन के लिए निर्धारित विभिन्नताओं की सीमा रेखाएं आज भी उतनी ही शक्तिशाली हैं जितनी पाषाण युग में थीं।

हम हजारों लाखों किलोमीटर तक हवा में उड़ चुके हैं। सागर में गहरे तक डुबकियां लगा चुके हैं। परंतु जीवन का विकास पृथ्वी की ऊपरी परत के जल थल भाग को छोड़कर अन्यत्र नहीं खोज पाए हैं। यही परत हमें भोजन, भवन, अन्य पदार्थों के साथ ज्ञान और विवेक के अनमोल पुंज की शक्ति देती है। इस परत पर यदि हम कोई लेप लगा देंगे तो हमें इसकी प्राकृतिक गंध सहित नंगी धरती के अन्य लाभ से वंचित होना पड़ेगा। धरती की यही परत हमें बीमारियों से लड़ने की प्रतिरोधात्मक क्षमता प्रदान करती है। इस धरातल का क्षेत्रफल लगभग 8 करोड़ 86 लाख वर्ग किलोमीटर ही है। प्राकृतिक रूप की इस परत पर चलने, फिरने, खेलने और श्रम करने के कारण सामान्य लोगों के शरीर में रोगों से लड़ने की क्षमता उन लोगों से अधिक होती है जो धरती की बनावटी परत पर चलते, फिरते, बढ़ते और ऐशो-आराम के साथ अपना जीवन व्यतीत करते हैं।

निर्धन यदि शीघ्र मर जाते हैं तो ऐसा उनके प्रकृति के समीप रहने के कारण नहीं होता है। उनके शीघ्र कृषकाय या बूढ़े होकर मरने के पीछे जो मुख्य कारण है वह है पौष्टिक-भरपेट आहार की कमी। दवाइयों की कमी अत्याधिक अभावों का सामना और भारी श्रम।

शक्ति पीठ बाबा बालक नाथ धाम के समीप चकमोह गांव के निवासी श्री अमरनाथ 70 वर्ष से अधिक आयु के हैं। उन्होंने कभी भी दवाई नहीं खाई।

केवल परहेज का ही सहारा लिया। उन्होंने कच्चे मकान में रहकर तथा नंगी धरती पर चलकर ही अपना अधिकतर जीवन व्यतीत किया है।

हमीरपुर जिला के बिझड़ी गांव के निवासी स्व. श्री भगत राम लगभग 100 वर्ष की आयु तक जीवित रहे। उन्होंने अपने जीवन में कभी भी कोई दवाई नहीं खाई। उन्हें जब कभी बुखार या किसी दर्द ने सताना चाहा तो उन्होंने भी केवल परहेज का ही सहारा लिया। वे बुखार होने पर भी खेतों में काम करते देखे जाते थे। उन्होंने भी अपनी आयु के सारे वर्ष कच्चे मकान में रहकर और नंगे पैर चल फिर कर व्यतीत किए।

हमरीपुर जिले की भोरंज तहसील के भुरठाण गांव के श्री फौनु राम आज लगभग 100 वर्ष के हैं। वे आज भी सलेटों की छत के नीचे कच्ची ईंटों की दीवारों से बने मकान में रहते हैं। उन्होंने भी जीवन में कभी भी किसी दवाई का सेवन नहीं किया। इसी गांव के श्री रविन्द्र कुमार ने बताया कि वह आज भी 100 वर्ष के बूढ़े फौनु राम को खेतों में काम करते हुए कई बार देखते हैं।

आश्चर्य की बात है कि धरती की इस परत के ऊपर कंकरीट, सीमेंट, कोलतार की ठोस परत सुन्दरता के नाम पर भी इस प्रकार चढ़ाई जा रही है कि उससे धरती के बड़े भाग को इसके नीचे लाने का लगातार प्रयत्न किया जा रहा है। आंगन तथा क्यारियों तक नंगी धरती का बचना कठिन हो रहा है। दूसरी ओर हम बनावटी लेपों द्वारा नंगी धरती के क्षेत्र को घटाने में लगे हैं। ऐसे में बनावटी इस परत पर पलने-बढ़ने वाले बच्चे नंगी धरती के लाभों से दूर रहने के कारण जन्म से लेकर मृत्यु तक केवल दवाओं के सेवन पर ही निर्भर रहेंगे।

इन्हीं कुछ पहलुओं पर विचार के पश्चात यह निष्कर्ष निकलता है कि आजीवन बनावटी धरातल के ही संपर्क में रहने के कारण संपन्न लोगों की आयु में भविष्य में सामान्य लोगों की आयु की अपेक्षा कमी आ जाएगी। इस कमी को घटती औषधीय गुणवता और बढ़ा देगी।

प्रकृति के साथ समीपता बनाए रखने तथा पर्यावरण को बचाए रखने के लिए नंगी और छायादार धरती की परत को बनाए रखना आवश्यक है। अन्यथा प्रकृति के प्रति प्रेम से दूर भागते लोगों को प्रकृति भी दुत्कार देगी।

दैनिक जागरण धर्मशाला 30 मार्च 2006 (संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

ब्रह्मांड के प्रति लालच घातक

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

पृथ्वी की गर्भीय हलचल तथा इसके जैव मंडल के पर्यावरण पर पड़ने वाले अप्रत्याशित प्रभाव को समझने के लिए उन सभी स्थितियों, अवस्थाओं, ऊर्जाओं, क्रियाओं तथा तत्वों का अध्ययन आवश्यक है, जो इसका निर्माण करते हैं। जीवन के विकास एवं निर्माण में जिस आकाशीय तत्व की बात की गई है वह ब्रह्मांडों के नाम से जाना जाता है। पृथ्वी से समीपता तथा अब तक के अर्जित ज्ञान पुंज के दर्पण में हम अपने ब्रह्मांड को सौरमंडल के नाम से भी जानते हैं जिसका मुख्य ग्रह हमारा सूर्य है।

ब्रह्मांड तथा पृथ्वी की आयु के बारे में वैज्ञानिक अभी एकमत नहीं हैं। बह्मांड में 99 प्रतिशत हाईड्रोजन द्रव्यमान है तथा आयु 1300-1400 करोड़ वर्ष अनुमानित की गई है। आकाशीय पिंडों के मानवीय जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव में भी विज्ञान किसी सर्वमान्य सिद्धांत के प्रतिपादन तक नहीं पहुंच पाया है।

चंद्रमा हमारी धरती का सबसे समीप का ग्रह है। पृथ्वी से इसकी दूरी 384302 किलोमीटर है तथा व्यास 3470 किलोमीटर है। पूर्णिमा को चंद्रमा धरती के समीप से गुजरता है इसलिए उस समय यह बड़े आकार में दिखाई देता हुआ सागर में ज्वार भाटे की लहरों को उत्पन्न करने का कारण बनता है। इसी प्रकार पृथ्वी से दूरी तथा कोणीय स्थिति के अनुसार सौरमंडल के अन्य ग्रहों का प्रभाव भी धरती पर पड़ता है। अन्य इन ग्रहों में सूर्य, मंगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र, शनि, वरुण ओर प्लूटो एवं यम हैं। इस पृथ्वी से निकटतम दूरी पर स्थित ये ग्रह हमारे सौरमंडल को एक अलग पहचान देते हैं। इस धरती से सूर्य की औसत दूरी लगभग 14 करोड़ 90 लाख किलोमीटर है। यह पृथ्वी से 13 लाख गुणा बड़ा है। हमारे ब्रह्मांड से अन्यत्र ब्रह्मांड में बहुत दूरी पर ऐसे भी तारे हैं जो इस सूर्य से लाखों करोड़ों गुणा बड़े आकार के हैं। इसी से ब्रह्मांड की विशालता और प्रकृति की विराट्ता का बोध किया जा सकता है।

हमारी पृथ्वी तथा अन्य ग्रहों में जो कुछ पाया जाता है वह इस असीम ब्रह्मांड तथा प्रकृति के शक्तिशाली आवृत में धरती तथा ग्रहों के निर्माण से पहले ही विद्यमान था। धरती पर हमारे लिए उपलब्ध लोहा, सोना, सहित अन्य खनिज पदार्थ, जल और वायु आदि बह्मांड ही से आए। इसलिए यह ब्रह्मांड एक ऐसी स्थिति और ऊर्जा है जिसका आवृत इसकी असीम सीमाओं में फैलकर अपने भीतर असीम शक्तियों तथा उनके स्त्रोतों को समेटे हुए हैं। यह स्वयं सभी प्रकार के स्थिर, गतिमान और सीमायुक्त पिंडों के निर्माण **और उनकी अवस्थाओं के परिवर्तन का कारण है। यही ऊर्जाएं सभी प्रकार के जीवों के निर्माण, विकास और ह्रास को संचालित करती हैं। भले ही विज्ञान इस दिशा में अधिक सामर्थ्य अभी तक नहीं जुटा पाया है और न स्थिति को स्पष्ट कर पाया है। इसके कारण** ब्रह्मांडीय अन्य ग्रहों के साथ अपने संबंधों एवं संपर्कों को साधने की दिशा में **हमें यह मानकर बढ़ना चाहिए कि संवेदनशीलता और चेतनाशीलता का आवृत भी सार्वभौमिक है।** इसी सार्वभौमिकता के आवृत में हैं ग्रहों के वह पथ तथा भ्रमण की कक्षाएं जिन पर अविचलित और मर्यादित ढंग से हमारी पृथ्वी सहित सभी ग्रह करोड़ों वर्षों से गतिमान हैं। यह भी आश्चर्य की बात है कि ये ग्रह पथ कहीं–कहीं टेढ़े–मेढ़े और अंडाकार हैं। ग्रह इन पथों पर टेढ़ी–मेढ़ी अंडाकार दिशा में उसी प्रकार गतिशील हैं जिस प्रकार कोई समझदार परीक्षार्थी परीक्षक के सामने अपनी परीक्षा देता है। ये अपने निर्धारित पथ से थोड़ा भी इधर–उधर नहीं होते हैं जबकि इनकी गति की दर भी हजारों किलोमीटर प्रतिघंटा है। कोई ग्रह अपने निर्धारित पथ के टेढ़े–मेढ़े स्थान पर जब पीछे की ओर गतिशील होता है तो ज्योतिशास्त्र की भाषा में उसे वक्री कहा जाता है। ज्योतिषशास्त्र में वर्णित इन ग्रहों की पृथ्वी से कोणियां स्थितियां, दूरियां तथा इनकी डिग्रियों की गणना आज के वैज्ञानिक अनुसंधानों से भी कुछ मेल खाती है। इसीलिए इस शास्त्र में भी सूर्य ग्रहण, चंद्र ग्रहण आदि खगोलिय घटनाओं के समय का ठीक पता लग जाता है। यहां पड़ने वाले दूर के ब्रह्मांडीय पिंडों के एकल प्रभाव को जानने की दिशा में भी विज्ञान ने कोई विशेष अनुसंधान अभी तक नहीं किया है। परंतु ज्योतिषशास्त्र ने इन पिंडों के सामूहिक प्रभाव को जानने की दिशा में कुछ प्रयास अवश्य किया

है। यह प्रयास चाहे अनुमान का प्रतीक क्यों न हो। परन्तु फिर भी यह कुछ सीमा तक शोधात्मक अनुभवों पर आधारित लगता है। इसके लिए दिखाई देने वाले पूरे ब्रह्मांड को सितारों के समूहों की अलग-अलग आकृतियों के 12 भागों में बांटा है। विभिन्न समूहों को उनकी अलग-अलग आकृतियों के अनुसार अलग नाम दिए गए हैं। इन नामों को राशि कहा जाता है। राशि शब्द स्वयं ही समूह का द्योतक है। ये राशियां हैं – मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ और मीन। पूर्व की ओर से पृथ्वी के सामने आते इन्हीं तारा समूहों को फिर लग्न का नाम दे दिया गया है। इनकी छोटी बड़ी आकृतियों के अनुसार पूर्व दिशा से एक-एक करके धरती के सामने आने में इन्हें जो कम या अधिक समय लगता है वह ही उस लग्न का समय निर्धारित किया गया है। इन लग्नों के भी वही नाम हैं जो राशियों के हैं क्योंकि ये भी वास्तव में वही तारा समूह ही हैं। ये सभी लग्न एवं राशियां अलग-अलग प्रभावों के प्रतीक हैं। इन राशियों में प्रत्येक को फिर 30 भागों में बांटा गया है। इन्हें अंश अर्थात् डिग्री का नाम दिया गया है। इन राशियों में आने वाले विभिन्न तारों के नाम तथा उनके अलग-अलग प्रभाव का वर्णन नहीं मिलता है। केवल सामूहिक प्रभाव को व्यक्त करने का प्रयास किया गया है। परंतु कुछ नक्षत्र अवश्य खोजे गए हैं। उनके नाम तथा प्रभाव का वर्णन भी मिलता है। एक-एक करके सूक्ष्म प्रभाव वाली खोज का आभास नहीं होता है। इसके ही कारण प्रभाव, परिणाम या फल को सही समझाने तथा बताने में ज्योतिष की भविष्यवाणी भी कभी-कभी विश्वास तथा प्रमाणिकता की कसौटी पर शत-प्रतिशत ठीक नहीं उतरती है। यहां भी अनुसंधान में कमी, प्रकृति की विराटता और अनंतता की स्थिति साफ झलकती है। यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि ब्राह्मांड हमें प्रभावित तो करता है पर उसे जानने और उसका वर्णन करने में पूरी तरह हम समर्थ नहीं हो पाए हैं।

ऐसे में आकाशीय पिंडों पर प्रभुत्व जमाने के प्रयत्नों से नई पर्यावरणीय जटिलताएं उत्पन्न हो जाएंगी। लालच आगे से आगे बढ़ता जाएगा। नए विवादों का जन्म होगा। आकाश की ओर असंख्य यानों, राकेटों को छोड़े जाने की होड़ में भाग लेने वाले देशों की गिनती बढ़ जाएगी। आकाश में बेलगाम घूमते

राकेटों के टुकड़ों तथा अन्य सामान की संख्या बढ़ जाएगी। प्रभुत्व जमाने की लालसा भीषण युद्ध का कारण भी बन सकती है।

धरती को मिलने वाली आकाशीय ऊर्जा विकृति के कारण असामान्य और प्रतिकुल परभावोत्पादक हो जाएगी। पर्यावरण खतरनाक अवस्था में प्रवेश कर जाएगा। मानव तथा उसकी शिखर संस्थाएं प्राकृतिक विरोधी गतिविधियों तथा लालच को नियंत्रित करने में यदि तुरंत सफल नहीं हुई तो पलायन के साथ पृथ्वी इसी 21 वीं शताब्दी में मानवीय जीवनविहीन हो जाएगी।

दैनिक जागरण धर्मशाला 22 अप्रैल 2006 (संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

जन-जीवन और ग्लोबल वार्मिंग

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति की ज्ञात सृष्टि के आवृत में मनुष्य ने अब कई नए-नए गतिमान पिंडों एवं जीवों को देख लिया है। ये सारे के सारे एक ऊर्जा के सहारे गतिमान हैं। ऊर्जा का अनुपातिक परिमाण ही इनकी भीतरी हलचल तथा बाहरी गति के वेग को निर्धारित करता है। ऊर्जा का यह रूप तथा अनुपात प्रकृति के कुछ ज्ञात तथा बहुत से अज्ञात सिद्धांतों पर आधारित है। मनुष्य ने प्रकृति की कृतियों एवं क्रियाओं की नकल करके अपनी सुख सुविधा के लिए जो यंत्र, मशीनें या कल पुर्जे आदि बनाए हैं उन्हें संचालित करने के लिए भी ऐसी ऊर्जा का ही सहारा लिया गया है। उसे हम चाहे किसी भी ताप, भाप, वेग या धारा के रूप में जानें।

अज्ञात से ज्ञात की ओर बढ़ती प्रकृति ने ही पृथ्वी पर जीवन का सृजन किया है। देह एवं जीवधारियों को सजीव तथा गतिमान बनाए रखने के लिए जिस ऊर्जा का सृजन किया है उसे हम अग्नि या तेज के नाम से ही जानते हैं। यह अग्नि, ऊष्मा और ऊण्णता के नाम से भी जानी जाती है। जीवों की संरचना में विभिन्नता के कारण उनमें अग्नि के परिमाण के अनुपात में थोड़ा अंतर भी है। मानव शरीर को ही लें तो एक स्वस्थ व्यक्ति में 98.4 डिग्री फार्नहाइट ताप होता है। यह ताप या अग्नि 106 डिग्री से आगे जाने लगे तो व्यक्ति अपनी सुध-बुध खो बैठता है। 110 डिग्री फार्नहाइट तक ताप के पहुंचते-पहुंचते या उसके पहले ही उसकी मृत्यु हो जाती है। पांच तत्वों के हमारे भौतिक शरीर में यही ताप अग्नि तत्व के नाम से जाना जाता है।

धरती पर इस ऊष्णता एवं अग्नि का मुख्य स्त्रोत सूर्य है। यह भी कहा जाता है कि धरती के गर्भ में पिघले हुए गर्म लोहे का लगभग 2260 किमी गहरा सागर है। परंतु यह सागर चट्टानों की सघन एवं ठोस परत से घिरा है। धरती की सतह पर ऊष्णता को बढ़ाने के कारक हैं सूर्य के साथ-साथ फैक्ट्रियों और वाहनों से निकलती कार्बनडाइऑक्साइड, ग्रीन हाऊस गैसों का अत्याधिक उत्सर्जन, ताप को उत्सर्जित करते अन्य यंत्र, संयंत्र, विस्फोटक आदि। वर्तमान समय में इन सभी का अत्याधिक प्रयोग हो रहा है।

हमारी पृथ्वी से सूर्य की दूरी लगभग 14 करोड़ 90 लाख किलोमीटर है।

यह पृथ्वी से लगभग 13 लाख गुणा बड़ा है। इसमें लगभग 70 प्रतिशत हाइड्रोजन, 28 प्रशित हीलियम तथा 2 प्रतिशत धातुएं हैं। इस पर निरंतर ऊर्जा या गर्मी उत्पन्न होती रहती है। इसकी उत्पत्ति लगभग 450 करोड़ वर्ष पूर्व मानी गई है। सूर्य का यही ताप एवं ऊर्जा पृथ्वी पर जल वायु के चक्र को संचालित करती है। वनस्पतियों, फसलों, पेड़–पौधों आदि की उत्पत्ति, विकास और उनके ह्रास का कारण भी यही ऊर्जा बनती है। परंतु जलवायु चक्र के ठीक संचालन और सभी प्राणधारियों सहित पेड़े–पौधों आदि के विकास के लिए यह आवश्यक है कि प्रकृति द्वारा इनके लिए निर्धारित ताप का स्तर बना रहे। उस स्तर की ऊष्णता एवं अग्नि में अधिक वृद्धि न हो। प्रकृति ने सदा ही ऊष्णता के इस स्तर को बनाए रखा है। परंतु असंतुलित तथा लालच को बढ़ाते विकास ने इस गर्मी में अत्याधिक वृद्धि करने का मार्ग खोल दिया है तथा ग्लोबल वार्मिंग के नाम से विश्वव्यापी बढ़ती ऊष्णता ने प्राकृतिक आपदाओं का एक भयानक खतरा हमारे सामने ला खड़ा कर दिया है।

हमारे अर्थतंत्र तथा विकास की आधुनिक त्रुटिपूर्ण परिभाषाओं ने सचमुच में ही संपूर्ण जगत को महाविनाश के द्वार पर ला खड़ा कर दिया है। गर्मी इतनी तीव्र गति के साथ बढ़ती जा रही है कि ध्रुवों तथा ऊंचे शिखरों पर जमी हुई लाखों वर्ष पुरानी बर्फ अब पिघलती जा रही है। सागर का जल स्तर बढ़ता जा रहा है। इसके जल की गुणवत्ता पर प्रभाव पड़ता जा रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के कारण मौसम प्रभावित होते जा रहे हैं। इससे बीमारियों के बढ़ जाने की भी पूरी संभावना बन चुकी है। बढ़ती गर्मी के कारण बीमारियों तथा प्राकृतिक आपदाओं द्वारा होने वाली मौतों में वृद्धि हो जाएगी। बहुत से पशु–पक्षियों की प्रजातियों के शीघ्र विलुप्त हो जाने की आशांका भी उत्पन्न हो चुकी है। **पिछले 40 वर्षों में ही धरती के तापमान में डेढ़ डिग्री सैलसियस की बढ़ोतरी हो चुकी है। इसकी स्थलीय तथा सागरीय पारिस्थितिकीय प्रणालियों में परिवर्तन हो रहा है।** वर्ष 2005 में समुद्र में सबसे अधिक तूफान आए। सागर का तापमान सर्दियों में भी कम नहीं हुआ। अब तो आगे से आगे पीने के पानी की कमी भी गंभीर रूप धारण करती जाएगी।

विश्व में तापमान वृद्धि का सिलसिला पिछले 150 वर्षों से निरंतर जारी है। युनिवर्सिटी आफ एरिजोना के वैज्ञानिक जोनाथन ओवरपैक ने बढ़ते तापमान के कारण वर्ष 2500 तक समुद्र के किनारे बहुत कम ऊंचाई पर बसे कुछ शहरों के

पानी में समाने की बात की थी। परंतु सन् 2000 में अमरीका के पूर्वी इलाकों में बहुत बर्फ पड़ी। इससे तापमान कुछ गिरा और लोगों ने मौसम वैज्ञानिक ओवरपैक की ग्लोबल वार्मिंग की अवधारणा की आलोचना कर दी। यह कहा गया कि ओवरपैक अकारण और अपुष्ट आधार पर ग्लोबल वार्मिंग की बातें करके लोगों को डरा रहे हैं। परंतु ओवरपैक ने बर्फबारी और शीतलहर के उन दिनों में ही एरिजोना में भीषण गर्मी के पड़ने की बात रख कर अपने ग्लोबल वार्मिंग के पक्ष को बल दिया। ब्रिटिश वैज्ञानिक डेविट ए. किंग ने भी इस समय संसार के सामने आने वाली समस्याओं में से ग्लोबल वार्मिंग की समस्या को अधिक घातक माना है। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के मौसम वैज्ञानिक मार्क न्यू ने भी यही माना है कि धरती पर गर्मी इतनी तीव्र गति से बढ़ रही है कि इस पर नियंत्रण पाने के लिए समय बहुत कम बचा है। एरीजोना विश्वविद्यालय के वैज्ञानियों ने भी अपने शोध में तापमान में अप्रत्याशित बढ़ोतरी पाई है। अलग-अलग वैज्ञानिकों ने अपने शोधों में वर्तमान 21 वीं शताब्दीं में 1 डिग्री से लेकर 6 डिग्री तक तापमान के बढ़ जाने का अनुमान लगाया है। इससे जीव-जंतुओं की कई प्रजातियां लुप्त हो जाएंगी। समुद्र के किनारे कम उंची जगहों पर बसे शहरों को खतरे का सामना करना पड़ सकता है। जैव विविधता चक्र पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।

हिमाचल प्रदेश के शिमला में जनवरी 2006 का महीना पिछले 35 वर्षों में सबसे अधिक गर्म रहा। बढ़ती गर्मी के प्रति विश्व स्तर पर चिंता तो बढ़ रही है पर उसे रोकने के गंभीर प्रयास नहीं किए जा रहे हैं। पिछले वर्ष संसार की औद्योगिक महाशक्तियों के 'समूह जी-8' के सम्मेलन में ग्लोबल वार्मिंग का मुद्दा केंद्र बिंदु बना। परंतु इस विश्वव्यापी उष्णता पर नियंत्रण का कोई ठोस परिणाम सामने नहीं आया। वास्तव में गर्मी अनुमान से कहीं अधिक बढ़ जाएगी। यह जैव मंडल की सहनशीलता तथा पारिस्थितिकीय संतुलन पर इसी शताब्दी में बहुत भारी पड़ेगी। क्योंकि मानवीय सीमाओं, क्षमताओं तथा प्रकृति की **विराटता की परिधि के अनुकूल वास्तविक जीवन की समृद्धि के पहलुओं की अनदेखी के साथ हम विकास की मनचाही एकांगी अपूर्ण एवं त्रुटिपूर्ण परिभाषाओं के साथ समग्र जीव जाति के अंत की ओर बढ़ रहे हैं। यदि हमने अभी भी सुधार नहीं किया तो वर्तमान शताब्दी**

इस धरती पर मानवीय जीवन की अंतमि शताब्दी हो जाएगी। क्योंकि हमारा उद्देश्य अब जीवन चलाना न होकर साधनों का संग्रह करना और धन यश कमाना हो गया है।

दैनिक जागरण धर्मशाला 13 अप्रैल 2006 (संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

जल संकट का स्थायी समाधान आवश्यक

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

आज दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही पर्यावरणीय समस्याओं का सामना हमें इसलिए नहीं करना पड़ रहा है कि प्रकृति हमारे प्रति कठोर होती जा रही है। वास्तव में ये समस्याएं इसलिए बढ़ती जा रही हैं क्योंकि हम प्रकृति के साथ अपने जीवन के संबंध को सही अर्थों में समझने तथा उसे अपने व्यवहार में ढालने में विफल होते जा रहे हैं। प्रकृति हमारी रचियता है और रचियता अपनी रचना से मर्यादा के विपरीत कठोर व्यवहार कदापि नहीं करना चाहेगा।

इस समय ग्रीष्म ऋतु अपने चरम की ओर बढ़ रही है। पानी मानवीय आवश्यकताओं में केंद्रीय स्थान ले रहा है। हम सबका ध्यान रह-रह कर केंद्र के इसी बिंदु की ओर चला जा रहा है। गर्मी की ऋतु में पानी की कमी तो पहले से ही पड़ती आई है। इसलिए यह समस्या कोई नई भी नहीं है। परंतु पहले की तुलना में अब पानी की उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए अपनाए जाने वाले अनेकों उपायों की उपस्थिति में इस समस्या की गंभीरता का बढ़ते जाना कम चिंताजनक भी नहीं है। गंभीरता के इस दर्पण में पानी की प्राप्ति के लिए भावी संघर्ष के बीजों के प्रस्फूटन के अनुमान को सरलता से देखा जा सकता है।

पानी की इस उपलब्धता की स्थिति का आंकलन हिमाचल प्रदेश के संदर्भ में यदि हम करें तो कहने को तो शीतल शांत हमारा यह प्रदेश बर्फ से ढके ऊंचे-ऊंचे पर्वत शिखरों तथा वहां से निकल कर बहती सतलुज, व्यास, रावी तथा छोटी कुछ अन्य नदियों की गोद में बसा है। केंद्रीय जल परिषद की टीम द्वारा ऊना, नूरपुर, पांवटा, नालागढ़, बल्ह आदि में करवाए गए सर्वेक्षण के अनुसार हिमाचल प्रदेश में उपलब्ध भूमिगत जल का कम दोहन किया जा रहा है। अंतरिक्ष विज्ञान दूरस्थ अधिकरण हैदराबाद तथा देहरादून के वैज्ञानिकों द्वारा 2004 में व्यक्त किए गए मत के अनुसार भी इस पहाड़ी क्षेत्र में भू-जल की कोई कमी नहीं है।

यहां उपलब्ध पानी की वास्तविक स्थिति पर यदि हम दृष्टिपात करें तो अब इसकी कमी पड़ती जा रही है और मांग बढ़ती जा रही है। यहां की खड्डों-नालों

में कुछ वर्ष पूर्व जितना पानी बहता था, उसके मुकाबले तुलनात्मक उन्हीं दिनों में अब कम वह रहा है। कहीं तो ये खड्डें और नाले अब सूखे हुए ही मिलते हैं। प्राकृतिक झरनों और चश्मों से भी पानी अब कम मात्रा में आता है। कुओं तथा बावड़ियों से पानी तो कम भरा जाता है। परंतु इसकी उपलब्धता वहां भी कम अनुभव की जा रही है। उधर प्रदेश के सिंचाई एवं जन-स्वास्थ्य विभाग की 2005 की रिपोर्ट के अनुसार प्रदेश में भी भूमि के नीचे से काफी पानी निकाला जा रहा है। पानी के जल स्त्रोतों के सूखने के कारण हैंडपंप और ट्यूबवेल लगाए जा रहे हैं। पानी का स्तर नीचे की ओर जा रहा है। उसके कारण हैंडपंप भी सूखते जा रहे हैं। पहाड़ी क्षेत्र होने के नाते भू-जल स्तर में एकरूपता न होकर जगह-जगह भिन्नता पाई जाती है। प्रदेश के सिंचाई एवं जन-स्वास्थ्य विभाग पर भी दिनो दिन पानी की आपूर्ति के उत्तरदायित्व का बोझ बढ़ता जा रहा है।

यह बात तो अब निर्विवाद ही समझी जानी चाहिए कि भूमिगत जल का स्तर दिन-प्रतिदिन नीचे से नीचे ही खिसकता जा रहा है। परंतु इसके कारणों पर विभिन्नता का आवरण आवश्य देखने और समझने को मिलता है। इसके कारणों में कभी मौसम में आ रहे परिवर्तनों को बताया जाता है तो कहीं जनसंख्या के बोझ से बढ़ती इसकी खपत के आंकड़ों को गिनाया जाता है। **इतने पर भी ऊंची जगहों की बर्फ तथा बहती नदियों की जलधारा का भरोसा कर प्रदेश में आने वाले जल के भावी संकट से ध्यान हटा दिया जाता है। यह भी आश्चर्य की बात है कि हमारे रहन-सहन और सोच समझ की आधुनिक पद्धति द्वारा पानी के इस संकट को गहरा करने में जो भूमिका निभाई जा रही है उस पर भी सरकारी या गैर सरकारी रूप से कोई खुली चर्चा न तो की जा रही है और न ही इन पर संबंधित पक्षों द्वारा पर्याप्त उजाला ही डाला जा रहा है। ऐसे में पानी की गहराती हुई कमी का मुकाबला करने के लिए हम समय के भीतर तैयार भी हो पाएंगे या नहीं, इसका उत्तर अब संदेह के घेरे में है।**

प्रदेश को हाल ही में 30 करोड़ रूपए केंद्रीय जल संसाधन मंत्रालय से मिले हैं। यह धन राशि सिंचाई एवं स्वास्थ्य विभाग को ग्रामीण पेयजल योजना के अंतर्गत मिली बताई गई है। इससे पूर्व 35 करोड़ रुपए की राशि केन्द्र सरकार

द्वारा दी गई थी। उधर राज्य के संबंधित विभाग द्वारा केंद्रीय सरकार को 519 करोड़ रुपए की पेयजल योजना भेजे जाने का समाचार है। कुछ सर्दी, कुछ गर्मी की मिली-जुली ठंडक भरी गर्मी से कुछ किनारा करते हुए सूर्य ने इस प्रदेश में कुछ दिन पूर्व ही अपनी ग्रीष्मकालीन तपन का एहसास मात्र क्या करवाया कि कई स्थानों से अभी ही से पानी की होती कमी के स्वर मुखरित होने लगे हैं। जबकि गर्मी का सफर अभी लंबा है।

हम चाहे पानी की कमी को दूर करने पर अरबों खर्च करें या खरबों की योजनाएं बनाएं। पानी की बढ़ती जा रही कमी का उस समय तक कोई स्थाई हल नहीं निकल सकता है, जब तक कमी के आधारभूत कारणों की ओर हमारा पर्याप्त ध्यान नहीं जाता है, और उन्हें दूर करने की दिशा में कारगर प्रयास नहीं किए जाते हैं। केवल बढ़ती जनसंख्या के कारण का शंखनाद हमें समस्या के सही समाधान की ओर ले जाने का सशक्त माध्यम नहीं बन पाएगा। भूमिगत जल के दोहन की पूर्ति वर्षा तथा नदी-नालों में बहता हुआ पानी करता है, परंतु नाले अब सूख रहे हैं और वर्षा के पानी को भूमि के अंदर जाने से हम स्वयं रोक रहे हैं। पानी को रोके रखने वाली जो ताल-तलईयां और जौहड़ थे उन्हें लगभग समाप्त कर दिया गया है असंतुलित विकास की आंधी ने उनके निर्माण को रोक दिया है। धरती की ऊपरी परत पर हम बड़ी तीव्रता से ठोस लेप लगा कर नंगी धरती के आवृत को छोटा बनाते जा रहे हैं। उधर अपने बढ़ते आर्थिक सामर्थ्य के बलबूते पर हम इसका प्रयोग और दुरुपयोग दोनों ही को उचित अनुचित का ध्यान रखे बिना बढ़ाने में लगे हैं। ऐसे में धरती में पानी समाएगा नहीं तो मिलेगा कैसे? जब नदियां भी खाली हो जाएंगी तो भारी धनराशि वाली योजनाएं, परियोजनाएं पानी को लाने में कहां तक शीघ्र और अपेक्षा के अनुरूप सफल हो पाएंगीं? इस पर गहराई के साथ विचार करने की आवश्यकता है। इन बिंदुओं पर गंभीरता से विचार नहीं किया गया तो हम आने वाले समय में गंभीर समस्या में फंस जाएंगे।

दैनिक जागरण धर्मशाला 6 मई 2006 में प्रकाशित

पर्यावरण के लिए घातक है सफेदा

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

विकास के कई अवयवों के साथ प्रगतिशील मानव कई सभ्यताओं-संस्कृतियों के परिमार्जन की यात्राओं में से होता हुआ आर्थिक उन्नति के चकाचौंध वाले आज के पड़ाव पर पहुंचा है। यहां पहुंचकर उसने बहुत सी उन वस्तुओं, पदार्थों और सुविधाओं को प्राप्त कर लिया है जो 150 वर्ष पूर्व मात्र कोरी कल्पना लोक की कथाओं एवं जनश्रुतियों के ही विषय थे।

इन सब पदार्थों की परख तथा मात्रा को विशेष माप-तोल के साथ प्रयोगशाला की कसौटी में गुजार कर निर्धारित परिणामों के अनुसार ही प्रयोग में लाया जा रहा है। परन्तु इतने पर भी बिडम्बना देखिए कि विकास के जिस पुंज का निर्माण मनुष्य के विकास तथा निखार के लिए हुआ, उसने अपनी असंतुलित निरन्तर बढ़ती मांग के कारण लालच को गले लगा लिया है और सही दिशा से अब भटक गया है। बदलते इस रुख के सामने मनुष्य का अपना अस्तित्व अब गौण हो गया है और प्रधानता असंतुलित विकास को मिल रही है। विकास अब मानव के लिए तो कम, पर मानव विकास के लिए हो गया है। इसके ही कारण जांच परख वाली ढेरों प्राणालियों और सुविधाओं के होने पर भी विकास द्वारा होती प्रगति से वांछित वे परिणाम भी कभी-कभी नहीं निकलते हैं जो निकलने चाहिएं।

हम आर्थिक विकास की प्रतिस्पर्धापूर्ण अंधी दौड़ में बहुत कुछ ऐसा भी करते जा रहे हैं, जो हमारे आर्थिक सामर्थ्य को बढ़ाने में तो सहायक होता है, पर उससे हमारा पर्यावरण प्रदूषित होकर हमारी कोई दूसरी हानि कर डालता है। जिसकी क्षति पूर्ति के लिए फिर आर्थिक साधन व्यय करने पड़ते हैं। अब तो स्थिति यह हो चुकी है कि विकास से होने वाले लाभ का जो मूल्य होता है उसके मुकाबले में ऐसे विकास द्वारा ध्वस्त होने वाले पर्यावरण को पुनः अपने स्थान पर लाने के लिए प्रयोग में लाए जाने वाले साधनों का मूल्य कहीं अधिक होता है। इससे यह भी स्थापित हो जाता है कि कुछ लोगों के लालच के कारण प्रदूषित हो रहे पर्यावरण का बुरा प्रभाव उन लोगों पर भी पड़ता है जो ऐसे लालच या आर्थिक विकास से कोई वास्ता नहीं रखते हैं। ऐसे में यह परिस्थिति हमारी समूची विश्वव्यापी व्यवस्था में होते जा रहे एक गंभीर अन्याय की द्योतक

है। **इसकी ओर तुरन्त ध्यान नहीं जाना शिक्षित सभ्य तथा ऊंचे कहे जाने वाले समाज के लिए कलंक के टीके से कम नहीं है। इसकी स्याही पूरे संसार को इसी 21वीं शताब्दी में ऐसे घोर अंधकार के सागर में डुबो देगी, जहां से फिर पुनः जीवित ऊपरी सतह पर लौटना असंभव हो जाएगा।**

इसलिए एक विश्वव्यापी विधि निर्माण की तुरन्त आवश्यकता है। हिमाचल प्रदेश के संदर्भ में आर्थिक विकास की कड़ियों की लम्बी होती जंजीर में सफेदे के वृक्षों की स्थिति तथा उनके गुण-दोषों को देखने पर हम पाते हैं कि इनके लगाने और बढ़ाने का प्रचार यहां कुछ दशक पूर्व ही हुआ है। इस प्रचार पर अधिक बल इसलिए भी दिया गया था, क्योंकि सफेदे के ये पेड़ दूसरे पेड़ों की अपेक्षा शीघ्र तैयार हो जाते हैं। ये छायादार पेड़ों की तुलना में जगह भी कम घेरते हैं। आर्थिक लाभ के कारण ही इनके प्रचार प्रसार पर अधिक ध्यान गया है।

सड़क का किनारा हो या गांवों को जोड़ने वाले रास्ते हों। सरकारी बंजर भूमि हो या लोगों की अपनी नीजि भूमि हो। अब तो ये पेड़ सभी जगह खड़े मिलते हैं। यहां तक कि परम्परागत आम के पुराने पेड़ों को काटकर वहां भी लोगों ने इन्हें लगा डाला है। खेत की मेड़ों और गांव के पुराने बागों से फलदार पेड़ों की जगह को भी सफेदे के पेड़ छीन ले गए हैं। घर-आंगन के समीप भी धरती को शुष्क तथा गर्म रखने वाले यही पेड़ अपना मस्तक खड़ा किए मिलते हैं।

बिलासपुर, हमीरपुर, कांगड़ा, ऊना, चम्बा, सोलन, कुल्लू, सिरमौर आदि जिलों के अनेंकों गांवों, कस्बों, शहरों में अनेकों स्थानों पर ऊंचे ये पेड़ ही खड़े मिलेंगे। एक ही जगह ये कई बार लगते और कटते रहते हैं। जगह-जगह फैले इन पेड़ों के गुण-दोषों की ओर यदि हम जाएं तो शीघ्र बढ़ जाने के कारण लकड़ी के रूप में लाभ तो इनसे होता है। परन्तु सफेदे का एक पेड़ धरती से कई क्विंटल पानी सोख लेता है। पेड़ों के समाज में सफेदे का पेड़ सबसे अधिक पानी पीता है।

यह पेड़ वर्षा के पानी को भी स्वयं अधिक सोख लेता है और भूमि के भीतर ऐसे पानी के सामने और जमा रखने की संभावना को भी कम कर डालता है। इस प्रकार मानवीय उपयोग के लिए पानी की प्राप्ति की संभावना में कमी आ जाती है। इन पेड़ों की ऊंचाई अधिक तथा पत्ते छोटे और कम होने के कारण

ये धरती को वृक्ष सुलभ छाया से वंचित कर देते हैं। इस प्रकार दूसरे छायादार पेड़ों की तरह ये पेड़ धरती को ठंड़ा कम ही रख पाते हैं। इसलिए जहां ऐसे पेड़ अधिक होते हैं वहां उनके समीप अधिक पानी का उपयोग करने वाली फसल कम ही होती है।

पानी की कमी में बढ़ोतरी करने के कारण इन पेड़ों के लगाने को तुरन्त हतोत्साहित किया जाना चाहिए। इनके स्थान पर इस पहाड़ी प्रदेश के परम्परागत फलों वाले छायादार पेड़ों को लगाया जाना चाहिए। छायादार होने के कारण धरती तो ठंडी रहेगी ही साथ ही इनकी जड़ें भी वर्षा के पानी को भूमि में गहरे तक ले जाने में सहायक होंगी। घनी छाया के लिए पशुओं को चारा देने वाले वृक्ष भी सफेदे की अपेक्षा कम पानी का उपयोग करते हैं। ऐसे सभी वृक्ष फल, लकड़ी और चारा देने के साथ-साथ पानी के संरक्षण में भी सहायक होते हैं।

पेड़ों के ऐसे गुण-दोषों की तरह ही हम सरकारी संस्थानों द्वारा हिमाचल प्रदेश के शहरों एवं जिला मुख्यालयों में बनती आवासीय कालोनियों पर एक दृष्टि डालें तो सहज ही इस परिणाम पर पहुंच जाएंगे कि इन कालोनियों के निर्माण तथा आवासीय प्रक्रिया में पेड़ों के महत्व को कोई स्थान दिया ही नहीं जा रहा है। लगभग सारी धरती कंकरीट की ठोस परत के नीचे ढक दी जाती है। प्राकृतिक रूप से उगती घास तथा पौधों के उगने एवं बढ़ने के सारे मार्ग बन्द कर दिए जाते हैं।

वर्षा के पानी की भूमि के भीतर घुसने की संभावना की समाप्ति के साथ ही सूर्य की तपन को धरती के ऊपर पकड़े रखकर गर्मी बढ़ाने वाला घातक लम्बा मार्ग भी प्रशस्त कर दिया जाता है। मकानों का डिजाइन इस प्रकार तैयार होता है कि वहां पेड़ को स्थान मिलता ही नहीं है।

वन महोत्सव मनाने वाले प्रदेश में अपनी कालोनियां पेड़ों से सूनी रह जाती हैं। गमलों की दिखावटी शोभा को बढ़ाने वाले कांटेदार कैक्टस तथा इंचों की ऊंचाई से ऊपर न बढ़ पाने वाले बौने पौधे, बड़े पेड़ों के लाभों को कैसे गिना पाएंगे। कई लोग अपने बढ़ते आर्थिक सामर्थ्य का उपयोग पर्यावरण क्षरण के लिए करते हुए भी पुण्य अर्जित करने का ढोंग करते हैं।

दैनिक जागरण धर्मशाला पृष्ठ 6 दिनांक 20.05.2006 में प्रकाशित

जीवनशैली और पर्यावरण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

चादर देखकर पांव पसारने वाली कहावत आज भी उतनी ही सार्थक है जितनी सैंकड़ों, हजारों वर्ष पहले थी। घर हो, गांव हो, प्रदेश हो देश हो या समाज, सामर्थ्य रूपी इस चादर का रूप और रंग सर्वदा अपनी गुणवता की सीमाओं को उजागर कर वास्तविकता का बोध करवाता आया है। गुणवता की मूल परिधि से बाहर जाने पर परिवार टूटे, प्रदेश टूटे, संस्कृतियां बिखरीं, सभ्यताएं बदलीं और समूची मानवता पर संकट के बादल छाए।

इस संसार के इतिहास पर दृष्टि डालें तो हमें बहुत कुछ बनता और बिगड़ता दिखाई देगा। रूस वह रूस नहीं रहा। पाकिस्तान बदला, अफगानिस्तान बदला, अफ्रीका बदला, इराक बदला और अब नेपाल भी बदला। कभी न अस्त होने वाला वृतानियां का सूर्य भी डूबा और विश्व विजयी कहलाने निकले सिकंदर ने अंत में स्वयं अपने हाथों को खाली ही दिखाया। इतिहास ऐसे हजारों साक्ष्यों से भरा पड़ा है जो पृथ्वी पर व्यक्तिगत और समष्टिगत सामर्थ्यों के अर्थों को स्पष्ट रूप से रेखांकित करते हैं।

आज हमने ज्ञान की अनेकों विधाओं के साथ विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की सहायता से विकास के नए-नए कीर्तिमान स्थापित कर लिए हैं। मानवीय जीवन को अपेक्षा से कहीं अधिक सुविधापूर्ण और समृद्ध बना दिया गया है। परंतु इतना सब कुछ होने पर भी मनुष्य केवल एक मशीन सा बनता हुआ जीवन के वास्तविक अर्थों तथा व्याख्या को समझने से दूर भागता भटकाव के उस मार्ग पर बढ़ता चला जा रहा है जो उसे जाने अनजाने एक निर्जन शून्य की ओर ले जा रहा है।

पर्यावरण को विपरीत रूप से प्रभावित करने वाले कारणों तथा उनसे बचाव हेतु प्रयोग में लाए जाने वाले मानवीय उपायों पर एक समीक्षात्मक दृष्टि यदि डाली जाए तो साफ पता चल जाता है कि पूरे का पूरा विश्व पर्यावरण को बचाने की दिशा में प्रभावशाली पग उठाने के अभ्यास में विफल होता जा रहा है। सारे का सारा विश्व चिंतित है। राष्ट्राध्यक्षों तथा शासनाध्यक्षों के शिखर सम्मेलन हो

रहे हैं। पर्यावरण सुरक्षा एवं संरक्षण के विधान का भी निर्माण किया जा रहा है। परंतु फिर भी स्थिति गंभीर से गंभीरतम ही होती चली जा रही है।

इसका साफ अर्थ निकलता है कि पर्यावरण को ठीक प्रकार से समझने तथा उसे सही रूप से परिभाषित करने में ही हम पूर्णरूप से सफल नहीं हो पाए हैं। हमारे लाख प्रयास करने पर भी प्राकृतिक आपदाएं अपेक्षा के विपरीत तथा नित नए-नए रूपों में मानवीय जीवन तथा उसके उपलब्ध ज्ञान के भंडार को चुनौती देती जा रही हैं। इसका मुख्य और बड़ा कारण यह भी है कि इस विषय का ही पता मनुष्य को बहुत देर के पश्चात् और कुछ समय पहले ही हुआ है। वह भी तब जब पिछली शताब्दी में अपनी खोजों तथा अविष्कारों को उसने प्रकृति के विराट् आवृत में जकड़े हुए देखा और भयंकर प्राकृतिक आपदाओं के आगे अपने आप को बोना होते देखा।

पर्यावरण के एक मुख्य अवयव गर्मी की बिगड़ रही स्थिति से झुलस रहे विश्व के प्रभावित होते स्वरूप पर हम दृष्टि डालते हैं। पिछले 400 वर्षों में हमारी पृथ्वी इतनी गर्म कभी भी नहीं रही जितनी गर्म यह इस समय है। अंटार्कटिक सागर की बर्फ पिछले 25 वर्षों से 1.5 प्रतिशत की दर से पिघल रही है। 2004 तथा 2005 में बर्फ में 2.3 प्रतिशत की गिरावट का अनुमान लगाया गया है। पृथ्वी का तापमान 6 डिग्री तक बढ़ने में 20 हजार वर्ष लगे। परंतु पिछली शताब्दी में ही वायुमंडल के तापमान में 1 डिग्री की वृद्धि हो गई। इस शताब्दी में इसमें 3 डिग्री या इससे अधिक 6^{0} तक की बढ़ोतरी की आशंका है। पिछले 100 वर्षों में वर्ष 1998, 2002, 2003, 2004 तथा 2005 सर्वाधिक गर्म वर्ष रहे। बढ़ती गर्मी के लिए हमारी वर्तमान अपरिभाषित दोषपूर्ण जीवन शैली उत्तरदायी है।

अंटार्कटिक में सैकड़ों क्यूविक किलोमीटर बर्फ पिघल रही है तो हिमाचल प्रदेश में ग्लेशियरों के पिघलने से नदियों का पानी वर्षा के पानी से गठबंधन करता हुआ उसके स्तर को अपेक्षा से ऊपर उठा डालता है। बाढ़ का रूप धारण करता यह पानी कई प्रकार की भ्रांतियों तथा अटकलबाजियों का कारण भी बन जाता है। एक अनुमान के अनुसार हिमाचली क्षेत्र के 376 हिमखंडों में से लगभग 76 हिमखंड डेढ़ किलोमीटर तक सिकुड़ गए हैं। चन्द्रा ग्लेशियर तीव्रता

के साथ सिकुड़ रहा है। भारतीय अनुसंधान संस्थान ने ग्लेशियरों के अध्ययन के लिए धर्मशाला महाविद्यालय को 21 लाख रुपये की परियोजना दी है। ग्लेश्यिरों की समीक्षा तथा उनके पिघलने की गति का पता लगाया जाएगा।

हम शीघ्र न तो कोई सूर्य बना सकते हैं न सागर न पहाड़ बन पाएंगे और न नदियां ही। न लोहा बन पाएगा, और न सोना ही। न पलक झपकते चांद पर कालोनियां बन पाएंगी और न मंगल पर फैक्ट्रियां ही।

इसलिए अच्छा यही है कि हम अपनी रहन सहन की शैली के जीवन स्तर के साथ भेद एवं अंतर को समझते हुए अपरिवर्तनीय प्राकृतिक सीमाओं का सम्मान करें। इस प्रकार ऊंचे होते जीवन स्तर तथा आचरणगत व्यवहार द्वारा ही सुखी तथा लंबे जीवन की अपेक्षा की जा सकती है। दिखावटी तथा बनावटी उपायों की सहायता से इन प्राकृतिक अपरिवर्तनीय सीमाओं का होता उल्लंघन अर्थात् चादर से बाहर जाते पांव हमारे जीवन को अत्यंत घोर संकट में डाल देंगे। जो लोग स्वयं पर्यावरण को ध्वस्त करते हैं और ऐसे पर्यावरण को ध्वस्त करने वालों द्वारा पढ़ाया जाता पर्यावरण की रक्षा का पाठ प्रभाव नहीं दिखा सकता है। मनुष्य ने गहन चिंतन और अध्ययन के बिना मात्र कोरे ज्ञान के सहारे जीवन मूल्यों के निर्जन में अनियंत्रित विकास के धुंधले पथ पर यदि तीव्रता से बढ़ना यूं ही जारी रखा तो अपरिवर्तनीय प्राकृतिक सीमाओं की अवहेलना के **परिणामस्वरूप प्रकृति के भीषण प्रहार द्वारा वर्तमान 21 वीं शताब्दी मानवीय जीवन की अंतिम शताब्दी बन कर रह जाएगी।**

पूर्व की यथार्थवादी या काल्पनिक घटनाएं आज के अनुसंधानों एवं आविष्कारों से मेल खाती हुई यह प्रमाणित करती हैं कि वैज्ञानिक उन्नति का जो रूप आज है उससे मिलता जुलता कुछ पहले भी रहा ही होगा। यह अलग बात है कि पृथ्वी पर हुई किसी भारी उथल-पुथल या अधिक विनाश ने उस पुराने के साथ आज इस नए के संपर्क की कड़ियों को मिटा डाला है। इन कड़ियों के मिटते साक्ष्य तथा पुराने से शिक्षा न लेने की आज के मानव में बढ़ती प्रवृति भावी किसी महासंकट का पूर्व संकेत है।

ऐतिहासिक पुरातन घटनाओं की भी भविष्य में पुर्नावृति हुई है। पूर्व को

दोहराती भावी घटनाओं से शिक्षा लेते हुए बहुत से प्रशासकों और विद्वानों ने अपनी व्यवस्थाओं को बदला विचारों को परखा तथा तर्कों की कसौटी पर उनके रंग की गहराई पर पुनः दृष्टिपात भी किया। प्रबंधन और व्यवस्था में सुधार हुआ। जीवन के मूल्यों के अनुरूप सिद्धांतों का प्रतिपादन हुआ। **परंतु इसे बिडंबना ही कहा जाएगा कि आज का मनुष्य वहर्मुखी अपने ज्ञान के अहं में डूबा, पुरानी घटनाओं से शिक्षा न लेता हुआ अकल्पित एवं अनुमानरहित दुष्परिणामों से अनजान, आर्थिक सामर्थ्य की लिप्सा से आक्रांत असुरक्षित कंटकीले मार्ग पर भी आगे बढ़ते रहने में अपनी शान समझता जा रहा है।**

दैनिक जागरण धर्मशाला 5 अक्तूबर 2006 (संपादकीय पृष्ठ) तथा अन्य में प्रकाशित

पर्यावरण पर भारी लालच

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मानव में जैसे-जैसे लालच और प्रदर्शन की भावना बढ़ती जा रही है, वैसे-वैसे भ्रष्टाचार, नैतिक मूल्य विहीनता, ईर्ष्या और साधनों का असमान वितरण भी बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार से बढ़ती आर्थिक संपन्नता एवं विकास मानवीय बौद्धिक विकास को रोक देते हैं। प्राकृतिक रूप से होता मानसिक विकास रुक जाता है और उच्च नैतिक मूल्यों तथा त्याग भावना की शक्ति का हरण हो जाता है। वास्तविक सुखमय, स्वस्थ और शांत जीवन मूल्यों से हीन समाज का निर्माण होता चला जाता है। समृद्धि, शांति और उन्नति की परिभाषाएं बदलने लग पड़ती हैं। विकास के अवयव एवं साधन केवल जीवन के उपभोग के ही विषय नहीं रहते हैं, अपितु जीवन उनके अधीन होता हुआ अपनी सार्थकता को खोता पर्यावरण को नष्ट कर अपने अवसान की ओर बढ़ता चला जाता है।

आज संसार में तीव्र गति के साथ नष्ट होते जा रहे पर्यावरण के कारण जीवन वास्तव में ही अपने अवसान की ओर शीघ्रगामी गति के साथ बढ़ रहा है। **हमें वास्तव में ही यदि अपनी और अपने बच्चों के सुरक्षित जीवन की चिंता है, तो तुरंत अपने लालच पर लगाम लगाते हुए त्याग और सरलता की भावना के साथ प्रभावशाली पग उठा लेने चाहिएं। अन्यथा समय अब दशकों या शताब्दियों तक हमारे होश संभालने की प्रतीक्षा संभवतः नहीं करेगा।**

लेखक 6 वर्षों से इस तथ्य को उजागर करते आ रहे हैं कि पर्यावरण की स्थिति यदि ऐसी ही बिगड़ने दी गई, तो वर्तमान 21 वीं शताब्दी धरती पर मानवीय जीवन की अंतिम शताब्दी होगी। प्रत्येक देश में हथयारों की होड़ बढ़ रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ के वर्तमान महासचिव श्री बान की मून ने अभी-अभी इस होड़ को गंभीरता से लिया है और कहा है कि अगले निरस्त्रीकरण सम्मेलन का उद्देश्य हथियारों में कटौती तथा ऐटमी हथियारों को रोकना होगा। उधर प्रकृति विरोधी मानवीय व्यवहार द्वारा ध्वस्त हो रहे पर्यावरण के कारण मछलियों सहित बहुत सी अन्य जीव जातियां अगले कुछ दशकों में समाप्त हो जाएंगी। जलवायु परिवर्तन के कारण 20 करोड़ लोगों

के विस्थापन का अनुमान भी लगाया जा चुका है। उधर ईरान ने परमाणु परीक्षण कर विनाश की दिशा में एक अध्याय और जोड़ दिया है। नित नई–नई बीमारियों के रूप के सामने आने से बढ़ते भूमंडलीकरण के कारण महामारियों के फैलने का भय भी बढ़ता जा रहा है। तीव्र होते इस वैश्वीकरण से जहां पर्यावरण को समझने तथा उसे बचाने में जागृति आई, वहीं संग्रह और उन्नति की प्रतिस्पर्धा ने अनावश्यक विकास और चारित्रिक विघटन द्वारा पर्यावरण को तीव्रता के साथ नष्ट कर डालने के नए–नए द्वार भी खोल दिए। पर्यावरण को बचाने के लिए पृथ्वी शिखर सम्मेलन हो रहे हैं। संधियां होती हैं। समझोते होते हैं। नियम निर्माण की प्रक्रियाएं भी चल पड़ती है। परंतु ढेर सारे विश्वव्यापी प्रयासों के होते हुए भी पर्यावरणीय समस्याएं अपने स्वरूप को अधिक उग्र और गंभीर करती हुई अपने रूपों एवं संख्या में भी बढ़ोतरी करती जा रही हैं। हाल में चीन ने एक मिसाइल बनाकर इसी जनवरी, 2007 में अपने उपग्रह को अंतरिक्ष में नष्ट क्या किया कि संसार के बड़े–बड़े देश इस तकनीक के सामने अपने आपको बौना पाते हुए प्रतिस्पर्धा की आग में जलते इस तकनीक को मात देने की योजनाओं पर तुरंत विचार करने लग पड़े। स्टार वार का पूर्वानुमान लगाया जाने लगा है। हमारे रक्षा मंत्री के वैज्ञानिक सलाहकार एम नटराजन ने शनिवार को बंगलूर में कहा कि भारत भी उपग्रह मारक क्षमता प्राप्त करेगा। हमारे देश में एक ओर पीने के स्वच्छ पानी की उलब्धता में कमी का पुर्वानुमान है, तो दूसरी ओर पंजाब, हरियाणा, तमिलनाडू, कर्नाटक आदि राज्यों में पानी को लेकर आपसी संघर्ष के स्वर भी सुनने को मिल रहे हैं। जनसंख्या, असमानता, निरक्षरता आदि समस्याओं का रंग पहले ही गहरा है।

बढ़ता भ्रष्टाचार इस रंग को और भी तीखा कर जाता है। शासन प्रशासन और पर्यावरण की स्वच्छता की आकृति की वास्तविकता तो उस समय सामने आती है जब तहलका और स्टिंग आपरेश्न तथा अन्य माध्यमों द्वारा मंत्रियों, बड़े–बड़े नेताओं, उच्च अधिकारियों तथा प्रभावशाली लोगों द्वारा भ्रष्टाचार, हत्याओं एवं गंभीर अपराधों के मामले सामने आते हैं।

हम देवभूमि कहलाने वाले शीतल–शांत हिमाचल प्रदेश को ही लें, तो इस देवभूमि में भी नशाबंदी का प्रचार तो होता है, परंतु नित नए खुलते शराब के ठेकों की संख्या भी बढ़ती जाती है। हिमाचली संस्कृति पर प्रहार करने वाले

विदेशी लकड़ी से स्वदेश में प्रस्तावित स्की विलेज का चित्र भी सामने आता है। लगभग 30000 किलोमीटर लंबी सड़कों, अनगिनत सुरंगों, भाखड़ा, पौंग चमेरा, नाथपा–झाकड़ी, कोल डैम, वसपा, पार्वती, पंडोह, लारजी, कड़छम, बांगटू, बैरास्यूल आदि जल विद्युत परियोजनाओं से कट–कट कर जर–जर होती और अतिरिक्त पानी से बोझल होती धरती भूमि के असंतुलन को बढ़ा रही है। प्रदर्शन या दिखावे के लिए होता निर्माण, गाड़ियों, विलासिताओं का अनावश्यक उपयोग, भंडारण तथा दुरुपयोग प्राकृतिक संसाधनों पर अधिक दबाव द्वारा पर्यावरण को नष्ट करता जा रहा है।

मूल प्रश्न विकास को रोकने का नहीं है। **विकास और जीवन के बीच संतुलन बनाने का है। विकास जीवन के लिए है। परंतु यहां तो जीवन विकास के लिए समझा जा रहा है**। यहां के शीतल–शांत और समृद्ध सांस्कृतिक परिवेश एवं पर्यावरण को भी प्रदर्शन, बनावट और नैतिक मूल्य विहीनता के दैत्य की नजर लग चुकी है। जीवन के लिए यह बहुत आवश्यक है कि पर्यावरण की रक्षा हो। **साथ ही यह भी आवश्यक है कि पर्यावरण को इसके सही अर्थों में समझा और आचरण में ढाला जाए।**

दैनिक जागरण धर्मशाला 22 फरवरी 2007 (संपादकीय पृष्ठ) तथा अन्य पत्रों में प्रकाशित

नाराज प्रकृति का नर्तन है जलवायु परिवर्तन

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

आज के मानवीय जीवन के प्रवाह की पिछले केवल पचास वर्षों के जीवन के साथ तुलना करें तो उसमें कई रंगों के दर्शन होते हैं। पहले जीवन की सुविधाएं दुर्लभ और उन्नति की मंजिलें भी दुर्गम थीं। परंतु अब कई प्रकार की सुविधाएं अत्यंत सुलभ और विकास की मंजिलें भी सुगम हैं। इतने पर भी आज के मनुष्य के जीवन में आए निखार का रंग उसके मानसिक संतोष के स्तर तथा उसमें उपजते तनाव के तीखे रंग के आगे फीका पड़ रहा है। ऐसा इसलिए हो रहा है क्योंकि हम विकास को जीवन के अर्थों में न देखकर जीवन को विकास के अर्थों में देखने और समझने में लगे हैं। यही कारण है कि वैज्ञानिक ऊंच्चाईयों के इस युग में अविष्कारों द्वारा प्राप्त बहुत सी सुविधाओं और वस्तुओं का प्रयोग एवं उपभोग हम इसलिए भी करते हैं क्योंकि उनके दुष्परिणामों के पूर्व सूचना तंत्र का निर्माण आविष्कार के समय कर पाने में हम असमर्थ से रह जाते हैं। इस अत्यंत विराट और असीम प्रकृति के गूढ़ रहस्यों से अपरिचित हम फिर अचनाक लाखों की प्राण हानि का शिकार होकर प्रकृति के शक्तिशाली पंजों के सामने भीगी बिल्ली की तरह थोड़े समय के लिए ही सही पर ठिगने पड़ जाते हैं। परंतु बिल्ली के आंख मूंद लेने से विपत्ति दिखाई तो नहीं देती है परंतु टलती भी नहीं है। वह बीत जाती है।

जलवायु में हो रहे आवश्चर्यजनक परिवर्तन ने तो भावी वैज्ञानिक परियाजनाओं तथा उनके परिणामों को हिला डालने का संकेत दे डाला है। यह अलग बात है कि हम उस संकेत की भाषा के अर्थों को न समझते हों या उन्हें समझने में व्यक्तिगत स्वार्थ रंजित हित आड़े आता हो।

चीनी मौसम वैज्ञानिकों के अनुसार ग्लेशियरों के पिघलने से यांगत्जे और ब्रह्मपुत्र नदियों का जलस्तर गिर जाएगा। ऐसा होने से अकाल पड़ने तथा रेगिस्तान के फैलने का भी भय बढ़ जाएगा। तिब्बत के पठार के ग्लेशियर लगभग 130 वर्ग किलोमीटर की दर से पिघल रहे हैं। एवरेस्ट के पूर्व में स्थिति रोगवुक ग्लेशियर तीव्रता के साथ पिघल रहा है। कविंगई तथा तिब्बती पठार के ग्लेशियर 4400 वर्ग किलोमीटर मात्र तीन वर्षों में कम पाए गए। तिब्बती पठार के ग्लेशियरों के दुष्परिणामों का प्रभाव भारत के हिमालयी क्षेत्रों में देखने का भी

भय बना हुआ है। हिमालय की सतलुज और ब्यास नदियों में पिघलते हिम खंडों ने कई कृत्रिम झीलों का निर्माण कर डाला है। 1962 से लेकर सन् 2001 तक लगभग 19 प्रतिशत ग्लेशियर पिघल चुके थे। इसरो के भू–वैज्ञानिक दल ने 2004 में लाहुल–स्पीती के चंद्रा ग्लेशियर का अध्ययन किया था। चंद्रा नदी का पानी भागा में जाता है। यहां ग्लेश्यिर प्रति वर्ष 3 से 5 मीटर तक सिकुड़ता जा रहा है। बसपा घाटी के ग्लेशियर भी तीव्र गति के साथ पिघल रहे हैं। इस समय हिमालय के 60 प्रतिशत से भी अधिक ग्लेशियर पिघल रहे हैं। लाहुल–स्पीती में पूर्व में जहां 12–13 फुट तक बर्फ प्रतिवर्ष गिरती थी वहां अब बर्फ का गिरना कभी–कभी 3 से 4 फुट तक ही सिमट कर रह जाता है।

ग्लेशियरों के पिघलने की प्रक्रिया के तुलनात्मक शोधपूर्ण अध्ययन से लेखक ने जो महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाला है वह यह है कि इनके पिघलने की गति में एकरूपता न रहकर इसमें उत्तरोतर तथा असमान्य वृद्धि हो रही है। वृद्धि के इस प्रकार के रूझान से यह तथ्य उजागर हो जाता है कि स्थिति के ऐसे ही जारी रहने के कारण हिमालय के अधिकतर ग्लेशियर 2030 तक पूर्ण रूप से समाप्त हो जाएंगे।

मर्यादित प्रकृति पर मर्यादाहीनता का रंग बिखेरते मानवीय पगों के कारण वर्षा ऋतु में पानी की वृष्टि के साथ हिमखंडों के पिघलने की गति में आती तीव्रता से बढ़ता पानी हिम झीलों के खुलते मुहानों से मिलते पानी तथा नदि किनारे उपलब्ध कच्ची मिट्टी से गठबंधन कर बाढ़ द्वारा हिमाचल की नदियों के किनारे अचानक भारी जान–माल की तबाही कर डालेगा। यही नहीं अंटार्कटिक के अध्ययन में लगे अमरीका के शोध वैज्ञानिकों तथा उस कार्य से जुड़ी हुई अन्य संस्थाओं ने करोड़ों वर्षों से जमी हुई अंटार्कटिक की बर्फ सन् 2040 तथा 2050 तक पूरी तरह से समाप्त हो जाने का अनुमान लगाया है।

लेखक ने अपने अध्ययन तथा अनुभव के आधार पर यह अनुमान लगाया है कि प्रकृति में आश्चर्यजनक परिवर्तन के कारण पृथ्वी के ध्रुव तथा ऊंचे स्थल हल्के पड़ेंगे। जलीय क्षेत्र इसमें मिलते भारी मात्रा में अतिरिक्त पानी के कारण पृथ्वी के नीचे के भाग पर बोझल होकर भारी दबाव का निर्माण करेगा। इससे एक ओर सागर का फैलाव बढ़ेगा तो दूसरी ओर द्वीपों तथा तटीय क्षेत्रों का संतुलन भी बिगड़ेगा। इस प्रकार बिगड़ता सतुलन निकट भविष्य में धरती के

भीतर किसी निर्बल पड़ते अवयव के ऊपर विपरीत प्रभाव द्वारा झटके की तरंगों का सृजन कर समूची पृथ्वी के ध्रुवों का झुकाव प्रभावित करेगा। समय तथा ऋतुओं पर अचानक प्रभाव तो पड़ेगा ही साथ ही जलीय कारण से जान-माल की भारी तबाही की संभावना की आशंका भी है। **लेखक ने 1990 से जब-जब पर्यावरण के बिगड़ते स्वरूप तथा कुप्रभावों को उजागर कर प्राकृतिक आपदाओं द्वारा मानव जीवन पर भंडराते खतरे का संकेत दिया, तब तब तो अप्रत्याशित उस संकेत पर संदेह होना कोई बड़ी बात नहीं थी। परंतु अब हो रहे शोधों के परिणाम तो लेखक के पूर्व प्रकाशित निष्कर्षों, अनुमानों तथा तर्कों की पुष्टि ही करते हैं। पर्यावरण तब ही बचेगा जब हम रहन-सहन और जीवन शैली के भेद को जानकर जीवन शैली को ठीक प्रकार से परिभाषित कर उसे अर्थपूर्ण, सशक्त और उद्देश्यपूर्ण बनाएंगे।** ऐसा न किया गया तो वे दिन दूर नहीं जब हमें अपनी भूलों का प्रायश्चित करने का भी समय नहीं मिलेगा। सभी को और हिमाचल के नागरिकों को विशेषकर अपने आसपास हो रहे ऐसे घटनाक्रम पर आंख रखते हुए हर उस पग का तर्क के आधार पर विरोध करना चाहिए, जो प्रकृति को कुपित करता हो।

दैनिक जागरण धर्मशाला 15 मार्च 2007 (संपादकीय पृष्ठ) तथा अन्य पत्रों में प्रकाशित

आचरण से उपजा जलसंकट

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति ने धरती पर किसी भी आंकड़े को छूती जनसंख्या के लिए अपनी निर्धारित और मर्यादित प्रणाली द्वारा भोजन-पानी की पर्याप्त व्यवस्था कर रखी है। इसी प्रकार सभी प्रकार के जीवों की एक उचित स्तर की संख्या को बनाए रखने के लिए जीवन की जीवन पर निर्भरता के साथ परिस्थितिकी का निर्माण तथा उसका संचालन भी कर रखा है। इसमें वास्तव में कहीं भी कोई भी कमी दिखाई नहीं देती है। परंतु इतने पर भी आज सारे का सारा संसार जनसंख्या की अधिकता तथा प्राकृतिक संसाधनों की कम होती जाती उपलब्धता से पीड़ित दिखाई दे रहा है।

इस रहस्य की गुत्थी को सुलझाने की दिशा में यदि हम इसके आधारभूत कारणों पर गहनता के साथ एक विश्लेषणात्मक दृष्टिपात करें तो एक तथ्य उजागर होता है। वह यह कि मनुष्य जब-जब अपने आहार और व्यवहार में किन्हीं कारणों से गलती कर बैठता है तो उसे अवश्य ही कोई न कोई आर्थिक, मानसिक या शरीरिक हानि उठानी पड़ ही जाती है। यह हानि अत्यंत घातक रूप भी धारण कर सकती है।

इसी मानवीय आहार और व्यवहार के संदर्भ में हम पानी की उपलब्धता पर विचार करते हैं। धरती पर जन्म लेने वाले सभी जीव जंतुओं के लिए प्रकृति ने पानी की पर्याप्त व्यवस्था कर रखी है। हमारे शरीर में लगभग 70 प्रतिशत पानी है। इसी प्रकार धरती की ऊपरी परत भी 74 प्रतिशत के आसपास के पानी से ढकी पड़ी है। यहां पानी जितना करोड़ो वर्ष पूर्व था उतना ही आज भी है। इसमें न तो कुछ नया जुड़ा है और न ही कुछ यहां से कहीं गया ही है। इसका रंग रूप और गुण आज भी वैसा ही है जितना करोड़ों वर्ष पूर्व था। इसमें नया कुछ हमने यदि किया है तो वह यह कि हम इस पानी की सबके लिए सरलता के साथ निःशुल्क उपलब्धता तथा कहीं-कहीं इसके मूल गुण को प्रतिकूलता के **साथ प्रभावित करने में तीव्रता के साथ जुटे हैं। लेखक के विचार से जनसंख्या या प्रकृति को दोष देना व्यर्थ है।**

ऐसा अनुमान लगाया गया है कि संसार के लगभग एक अरब 30 करोड़ लोगों को पीने के पानी की समस्या ने इस समय जकड़ रखा है। संयुक्त राष्ट्र

संघ की एक रिपोर्ट के अनुसार बढ़ती जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए अधिक उत्पादन हेतु वर्ष 2025 तक 50 प्रतिशत अधिक पानी की आवश्यकता होगी। वर्षा के रूप में गिरते पानी का 80 प्रतिशत भाग पुनः सागर की ओर लौट जाता है। उधर पहाड़ों पर बर्फ के रूप में सुरक्षित पानी के अथाह भंडार विश्वव्यपी गर्मी के कारण पिघल कर कम होते जा रहे हैं। पानी पुनः सागर की ओर लौट रहा है।

विश्व की 10 बड़ी नदियों को संकट ने घेर लिया है। इसमें हमारी गंगा नदी का पांचवां स्थान बताया गया है। जल के संकट के कारण अब यह आशंका व्यक्त की जाने लगी है कि अगला विश्व युद्ध पानी को लेकर होगा। पानी के इस गंभीर संकट के द्योतक मानवीय आहार और व्यवहार के ही कारण मनुष्य आज विकास के नाम पर बहुत सी अनावश्यक वस्तुओं के उपयोग एवं भंडारण के लिए उनका भारी उत्पादन करता जा रहा है। इस प्रक्रिया में पानी की भारी खपत होती जा रही है। यही नहीं साफ–सफाई करने की प्रक्रियाओं में भी पानी का अत्याधिक दुरुपयोग किया जा रहा है। दूसरी ओर जो पानी उपयोग के लिए भूजल के रूप में धरती के गर्भ से हमें मिलता है उसकी भरपाई के लए वर्षा के पानी को भूमि के भीतर समाने की संभावनाओं को हम अपनी प्रदर्शनकारी तथा विलसिताओं के जाल में फंसती दिखावटी अपसंस्कृति के कारण कम करते जा रहे हैं। अत्याधिक अनावश्यक निर्माण, कंकरीट प्रिय बनती और बढ़ती संस्कृति नदी–नालों का संकुचन तथा ताल तलैयों के प्रति उपेक्षा का भाव इसके कारण हैं। भारत में भी पानी की कमी को लेकर कई विवाद खड़े हो गए हैं। भारत के मुख्य न्यायाधीश ने राज्यों के बीच के ऐसे विवादों को संघीय ढांचे के लिए एक चुनौती बताया है।

हिमाचल प्रदेश में भी पीने के पानी की उपलब्धता में कठिनाई बढ़ती जा रही है। केंद्रीय भूमिगत जल आयोग के आंकड़ों के अनुसार हिमाचल प्रदेश के छह जिलों में भूजल स्तर गिरता जा रहा है। ट्यूबवैल लगाने की अनुमति देने से पहले भूजल स्तर मापने के लिए मंडी, कुल्लू, सोलन, सिरमौर, कांगड़ा और ऊना जिलों में 70 कुएं बनाए जाएंगे।

इस समस्या का सामना करने के लिए पानी के दुरुपयोग को रोकने के साथ–साथ पुराने ताल–तलैयों के अस्तित्व को बनाए रखा जाना चाहिए। नए ताल–

तलैयों का निर्माण पुराने तौर–तरीकों के साथ किया जाना चाहिए। कुएं और बावड़ियों को बचाए रखने के साथ–साथ उनकी साफ–सफाई की जानी चाहिए। अनावश्यक निर्माण को रोका जाना चाहिए तथा जगह–जगह कंकरीट बिछाने से परहेज किया जाना चाहिए। नदी–नालों के अनावश्यक संकुचन को रोका जाना चाहिए। नालों, खड्डों से उठती रेत–बजरी में कमी, इनके अधिक प्रयोग को रोकने से ही आएगी। पगडंडियों या रास्तों पर कंकरीट के स्थान पर पत्थर या कच्चे जोड़ वाले ब्लाक लगाए जाएं।

हम अच्छे विद्वान, विशेषज्ञ तथा आर्थिक रूप से संपन्न होने का परिचय तो देते जा रहे हैं। परंतु प्राकृतिक व्यवस्थाओं तथा अनिवार्यताओं के प्रांगण में अच्छे मानव का परिचय देने में विफल होते जा रहे हैं। यही बड़ा वह कारण है जो पर्यावरण को ध्वस्त करता और पानी की सहज उपलब्धता को घटाता जा रहा है।

दैनिक जागरण धर्मशाला 17.05.2007 (संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

बढ़ती जनसंख्या, घटती उत्पादन क्षमता

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

भौतिक विकास की चकाचौंध के प्रति बढ़ते अत्याधिक मोह के कारण मनुष्य वास्तविक जीवन के ऊंचे स्तर को खोने लगा है। उसमें लालच, भंडारण और अनावश्यक उपभोग की प्रवृत्ति बढ़ती चली जा रही है। बढ़ते आर्थिक सामर्थ्य की अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा के कारण उसमें नैतिक मूल्यों का ह्रास भी होता जा रहा है। इस कारण प्रकृति के साथ मानवीय व्यवहार की गुणवत्ता भी कुछ दशकों से हल्की पड़ती जा रही है। त्याग भाव तथा सरलता के वीराने में सामूहिक मानवीय हितों पर निहित व्यक्तिगत स्वार्थ भारी पड़ते जा रहे हैं।

व्यक्तिगत स्वार्थ

व्यक्तिगत स्वार्थ तथा मूल्यविहीन समाज के होते जा रहे निर्माण के कारण मनुष्य प्रकृति के साथ अपने संबंधों के संतुलन को खोता जा रहा है। धरती पर जीवन की नित्यता के अर्थों को भूलता हुआ वह अल्पकालिक प्रणाली की ओर बढ़ता जा रहा है। वह केवल अपने लिए ही पृथ्वी तथा ब्रह्मांड के समस्त संसाधनों का दोहन कर लेने की प्रवृत्ति को पालता हुआ अपनी ही भावी पीढ़ियों को अभावों में तड़पने का गंभीर अपराध करता जा रहा है। सब कुछ पाने की ललक के कारण ही उन सभी यंत्रों, संयंत्रों, मशीनों, वाहनों, कल कारखानों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है जो कार्बन डाईऑक्साइड का अधिक मात्रा में उत्सर्जन करते हैं। कुछ अन्य प्रभावों के साथ यही कार्बन-डाईऑक्साइड ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ाने का कारण बन चुकी है। इसके निरंतर उत्सर्जन के कारण गर्मी भी लगातार बढ़ती जा रही है।

मौसम में बदलाव

इस गर्मी के बढ़ने से प्राकृतिक मौसम चक्र की मर्यादा पर कुठाराघात होने लगा है। प्रतिकूलता के साथ प्रभावित हो रहा मौसम चक्र हमारी फसलों की पैदावार पर भारी पड़ने लगा है। यही नहीं धरती की उपजाऊ शक्ति इसके अत्यधिक दोहन के कारण भी अब घटने लगी है। इस प्रकार फसलों की उपज पर मानवीय कारणों से दो धारी तलवार की पड़ती मार भविष्य के लिए भुखमरी के पैदा होने का पूर्व संकेत है, जिसे हल्के ढंग से नहीं लिया जाना चाहिए। हमने

भारत में बढ़ती जनसंख्या के भरण-पोषण के लिए हरित क्रांति का बिगुल बजाया। समस्या की गंभीरता से तत्कालिक छुटकारा भी पा लिया। परंतु बढ़े हुए उत्पादन के स्तर को भविष्य के लिए बनाए रखने में हम कहां तक सफल हो रहे हैं इसकी वास्तविक आकृति को उभर रही विपरीत परिस्थितियों के दर्पण में देखा जा सकता है।

कीटनाशकों का प्रयोग

अधिक उत्पादन लेने के उद्देश्य से हरित क्रांति के जयघोष के तले रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों का जमकर प्रयोग होता चला गया है। खेतीबाड़ी के नए तौर तरीकों के प्रचार की गाड़ी के नीचे खेती के पुराने तौर तरीके पिसते और भूलते चले गए हैं। रासायनिक खादों तथा विषैले घोलों के प्रयोग से धरती की उपजाऊ शक्ति कम होने लगी है। भारत ने जिन कीटनाशकों पर एक दशक पूर्व प्रतिबंध लगया था, उनके प्रतिरोधक कण धरती में आज भी पाए जाते हैं।

पिघलते ग्लेशियर

उधर गर्मी के बढ़ते जाने से हिमालय में गंगोत्री तथा सुंदरवन के ग्लेशियर तीव्रता के साथ सिकुड़ते जा रहे हैं। इस समय हिमालय के लगभग 20 प्रतिशत ग्लेशियर पिघल चुके हैं। 60 प्रतिशत इस समय पिघल रहे हैं। पिछले दस वर्षों में ग्लेशियर के आसपास के क्षेत्रों के मौसम में बदलाव हुए हैं। गर्मी का समय बढ़ गया है। बर्फ भी कम जमा हो रही है।

एक अनुमान के अनुसार अगले 30-35 वर्षों तक हिमालय के सभी ग्लेशियरों के पिघल जाने की संभावना है। उधर हिमालय में जमा होती बर्फ ही तो पिघलकर गर्मी के दिनों में भाखड़ा बांध के सहायक बांध नंगल डैम से निकली नहर द्वारा पंजाब, हरियाणा व राजस्थान की शुष्क भूमि को लहलहाती फसलों तथा पेड़-पौधों की हरियाली से ढक देती है। परंतु कम होती बर्फ से मैदानों की इस हरियाली पर भी संकट के बादल छा जाने का खतरा बढ़ रहा है।

इनवायरनमैंट पैनल ऑफ क्लाईमेट चेंज ने बैल्जियम की राजधानी ब्रेसेल्स में 6 अप्रैल, 2007 को जारी अपनी दूसरी रिपोर्ट में कहा है कि अगले कुछ दशकों में वर्षा के जल में कमी की संभावना है। इसके कारण कृषि उत्पादन घटकर आधा रह जाएगा। भारत सहित एशिया के 15 देशों में खाद्यान्नों की गंभीर

समस्या उत्पन्न हो जाएगी। अंतर्राष्ट्रीय खाद्यान्न परिषद ने भी वर्ष 2006–07 के लिए पिछले वर्ष की अपेक्षा कम खाद्यान्न उत्पादन का अनुमान लगाया है।

चावल की उपज में कमी

फसल की पैदावार को प्रभावित करते इन्हीं कुछ बिन्दुओं के उजाले में हम हिमाचल प्रदेश में चावल की पैदावार का आंकलन करते हैं। प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2001–02 में चावल का उत्पादन 137.42 हजार टन था। वर्ष 2002–03 में 85.65 हजार टन, वर्ष 2003–04 में 120.62 हजार टन वर्ष 2004–05 में 109.13 हजार टन तथा वर्ष 2005–06 में यह उत्पादन 112.14 हजार टन संभावित था।

यह आंकड़े चावल की पैदावार में लगभग कमी के ही रुझान को प्रदर्शित करते हैं। चावल को गर्मी की ऋतु में भरपूर पानी की आवश्यकता होती है। पानी से भरे खेत के बीच ही चावल की हरी भरी फसल लहलहाती है। उधर प्रदेश के ऊंचे क्षेत्र में चावल की यह फसल बर्फ से पिघलते पानी पर निर्भर करती है। यदि ग्लेशियर पिघल गए और वर्षा के जल में भी कमी हो गई तो मैदानों की हरियाली तो चली ही जाएगी। **परंतु इन पहाड़ों से चावल की फसल भी इसी शताब्दी में लुप्त हो जाएगी। हमारी वर्तमान अपरिभाषित जीवनशैली के कारण यह धरती भी इसी शताब्दी में जीवन विहीन हो जाएगी।**

हम जब तक जीवन की गुणवत्ता के वास्तविक अर्थों को समझ कर जीवन शैली एवं इसके स्तर में सुधार नहीं लाते तब तक न तो गर्मी का बढ़ना रुकेगा, न धरती की उपजाऊ शक्ति सुधरेगी, न मौसम चक्र की गाड़ी ही पटरी पर लौटेगी और न ही संसाधनों का दुरुपयोग रुकेगा। जीवन की गुणवत्ता इसके सही अर्थों में परिभाषित की जानी चाहिए। इस गुणवत्ता का अर्थ छिपा है रहन–सहन के स्तर के मुकाबले में ऊंचे जीवन स्तर से जीव जगत को मिलते स्तरीय लाभ के महत्व में।

वर्तमान समय में प्रयुक्त किए जा रहे ''जीवन शैली'' के आवृत तथा भाव को ठीक प्रकार न तो स्पष्ट किया गया है और न परिभाषित ही किया गया है जो कि संसार को विनाश से बचाने के लिए परम आवश्यक है। जीवन शैली मानवीय जीवन की अच्छी गुणवत्ता की परख की परिचायक होनी चाहिए। इसे

रहन–सहन के स्तर और जीवन स्तर के आपसी अंतर भेद को दिखाते हुए स्पष्ट संदेश के साथ परिभाषित और स्थापित किया जाए।

इसकी परिभाषा इस प्रकार होनी चाहिए:- ''वह शैली जो स्वच्छ सम सामाजिक, आर्थिक, पारिस्थितिकीय तंत्र तथा **भू संतुलनीय व्यवहारगत चिंता से युक्त हो। भावी पीढ़ियों के लिए संरक्षणपूर्ण दायित्व के साथ संसाधनों के उपभोग की सीमा रेखा का पालन कर दिनचर्या की रूप रेखा को प्रतिबिंबित करे, आदर्श जीवन शैली कहलाई जानी चाहिए।''**

अजीत समाचार जालंधर 21 जुलाई 2007 (संपादकीय पृष्ठ) दिव्य हिमाचल धर्मशाला 2 जुलाई 2007 में प्रकाशित

चांद-मंगल पर उद्योग

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

समस्त जीव जाति की विभिन्न श्रेणियों में जीवन निर्वाह को लेकर व्याप्त संघर्ष एवं प्रयासों के मूल स्त्रोत आवश्यकता की पंक्ति में मनुष्य ही सबसे आगे और शक्तिशाली बनकर खड़ा है। हिंसक प्राणी भी भूख लगने पर ही अपने शिकार की खोज करने और उस पर झपटने के लिए अधिकतर क्रियाशील होते हैं। शेर केवल दिन रात और लगातार वन्य प्राणियों को मारने में ही नहीं लगा रहता है। पेट भर जाने के बाद वह भी कुछ समय के लिए अहिंसक बन जाता है। यदि ऐसा नहीं होता तो शेर के अतिरिक्त वनों में कोई अन्य प्राणी कहीं भी और कभी बचता ही नहीं। परंतु वास्तविकता में मनुष्य को छोड़ कर अन्य सभी जानवर अपना पेट भरने या थोड़ा बहुत अपने बच्चों के लिए रख लेने के बाद चैन की सांसें लेते हैं। आज मानव अपने जीवन की सत्यता **और उसकी तार्किकता को समझने में वन्य प्राणियों से भी पीछे होकर भटकता हुआ दिखाई देता है।**

मानवीय समाज का ताना-बाना उसकी कई प्रकार की संस्थाओं द्वारा इस प्रकार से बुना जा रहा है कि वह बड़ी तीव्रता के साथ बढ़ते लालच के जाल में फंसता ही जा रहा है। जीवन के मार्ग से भटकते उसके पग जाले से बाहर निकलने की योग्यता को खोते जा रहे हैं और उसकी गांठों में कसते जा रहे हैं। सामाजिक कल्याण से जुड़े संस्थान हों या राजनैतिक क्षेत्र हो, हमें प्रत्येक और सभी स्थानों पर हो रहे भरसक प्रयासों की गाड़ी का पहिया लालच की धुरी पर ही अधिकतर घूमता हुआ दिखाई देता है।

मानवीय लालच जैसे-जैसे बढ़ता जा रहा है, वैसे-वैसे समस्याओं की गिनती का आंकड़ा तथा उनकी जटिलताओं की गहराई एवं ऊंचाई भी बढ़ती ही चली जा रही है। जलवायु संकट बढ़ रहा है तो पारिस्थितिकीय तंत्र पर भी आघात गंभीर रूप लेता जा रहा है। आज पूरे का पूरा विश्व धरती पर प्राकृतिक संसाधनों की कमी में तीव्रता से होती वृद्धि से आक्रांत है। जनसंख्या बढ़ोत्तरी से बढ़ते बोझ को लेकर हाहाकार मची है। इतना होने पर भी विशेषज्ञ प्राकृतिक संसाधनों के ठीक उपयोग और जनसंख्या के स्तर की व्याख्या करने में सफल होते प्रतीत नहीं हो रहे हैं।

अमेरिका के चंद्रयान अपोलो 14 से पहले का अपोलो चंद्रमा से मात्र 70 किलोमीटर की दूरी पर चक्कर काट कर धरती पर लौट आया था। अपोलो 14 से जुड़ा ईगल अंतरिक्ष यात्री नील आर्मस्ट्रांग तथा उनके सहयोगी को लेकर 1969 में चांद पर उतरा था। वहां से चट्टान के कुछ टुकड़े लेकर धरती पर लौट आया था। यह अलग बात है कि चांद पर उतरने और न उतरने को लेकर भी कुछ समय विवादपूर्ण बहस गर्म रही थी। उसके पश्चात भी इस दिशा में कई प्रयास हुए। परंतु अभी तक स्पष्ट और विश्वसनीय कार्य बहुत ही कम हो पाया है।

चंद्रमा धरती से केवल 3 लाख 84 हजार 302 किलोमीटर की दूरी पर है, जबकि मंगल सूर्य से 22 करोड़ 60 लाख किलोमटीर दूर है। इसका व्यास 7014 किलोमीटर है और यह 684 दिनों में सूर्य की परिक्रमा पूरी करता है। 27 अगस्त 2003 को मंगल पृथ्वी से मात्र 5 करोड़ 60 लाख किलोमीटर की सबसे कम दूरी पर आ गया था। पृथ्वी के निकट आने का यह दृश्य 60000 वर्षों बाद दिखाई दिया था। सूर्य का चक्कर काटते-काटते यह दूरी 40 करोड़ किलोमीटर तक भी बढ़ जाती है। इतने पर भी हमारा संसार दूरी में इस कमी का लाभ उठाने के उद्देश्य से विशेष कुछ करने के योग्य नहीं बन पाया था। दूरी में यह कमी अब 60000 वर्षों के पश्चात आएगी।

1969 से लेकर अब तक 39 वर्षों का समय बीत चुका है हम चांद और मंगल पर मानवीय आवास के लिए क्या और कितना कुछ कर पाए हैं यह किसी से छिपा नहीं है। नासा अभी तक एलियन और उड़नतश्तरियों की रहस्यमयी समस्या को सुलझा नहीं पाया है। ऐसे में 20 या 30 वर्षों के बाद चांद और मंगल पर कारखाने बना डालने की काल्पनिक योजना का प्रचार करने से मानवीय लालच में और भी भारी बढ़ोत्तरी होगी। इससे धरती पर उपलब्ध संसाधनों के दुरुपयोग और उपभोग के प्रति लालच बढ़ जाएगा। वे शीघ्र समाप्त हो जाएंगे। ऐसा संदेश यदि किसी उच्च कोटि के वैज्ञानिक और बहुत ऊंचे पद पर रह चुके व्यक्ति द्वारा दिया जाए तो यह अवश्य ही आश्चर्यजनक लगता है। मनुष्य ग्लोबल वार्मिंग से होने वाले प्राकृतिक खतरों एवं आपदाओं के प्रति असावधान रहेगा। यदि गलती नहीं सुधरी तो इसका परिणाम उन काल्पनिक कारखानों के द्वारा मिलने वाले लाभ की तुलना में कहीं अधिक घातक और भयंकर होगा।

नाभकीय होड़ का खतरा भयानक विनाश का कारण बन जाएगा। प्रदेश के लिए पूरा देश कम पड़ेगा। देश के लिए पूरा विश्व और फिर ब्रह्मांड भी कम पड़ जाएगा तो शेष दुनिया कहां जाएगी? हिमाचल प्रदेश में भी विश्वव्यापी उष्णता में अधिक बढ़ोत्तरी हो रही है। यह इसके समकक्ष राज्यों में सबसे अधिक है। कार्बन डाईऑक्साइड का उत्सर्जन अधिक है। प्रति एक लाख की जनसंख्या पर यहां गाड़ियों की संख्या 4302 आंकी गई है। इस मामले में देश में प्रदेश का 11वां और पहाड़ी राज्यों में प्रथम स्थान है। गर्मी बढ़ने से बर्फ के रूप में सुरक्षित पानी के भंडार समाप्त हो जाएंगे। पहाड़ सुलभ जीवन पद्धति से हटता लोगों का रुझान यहां के प्राकृतिक परिवेश की सुंदरता तथा पर्यावरण दोनों को ध्वस्त करता जा रहा है। उधर आर्थिक सामर्थ्य व प्रदर्शन की भावना में बढ़ोत्तरी और अंधाधुंध, ऊंचा तथा आवश्यकता से अधिक भवन निर्माण जारी है।

भूकंप के समय तथा स्थान की सही पूर्व भविष्यवाणी के शीघ्र किए जाने वाले अत्याधिक प्रचार, जीवन स्तर की त्रुटिपूर्ण व्याख्या, चांद व मंगल पर शीघ्र उद्योगों के लगने तथा मानवीय बस्तियां बनाए जाने वाला काल्पनिक प्रचार आदि ऐसे अवरोधों का काम करते हैं जो मनुष्य को प्राकृतिक आपदाओं से होती हानि से सावधानी के प्रति असावधान कर रहा है। **अब विश्व पर्यावरण परिषद के गठन की तुरंत आवश्यकता है, जो सुरक्षा परिषद के समकक्ष हो। लेखक पिछले दस वर्षों से निरंतर इस परिषद के गठन की आवश्यकता पर जोर देते हुए अपने सुझाव को प्रकाशित होते अपने लेखों द्वारा संसार के सामने रखते आए हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव से भी इस संबंध में दो बार अर्थात वर्ष 2002 तथा 2005 में अनुरोध किया है। पर्यावरण समस्याओं को गंभीरता से लिया जाए। अन्यथा चांद व मंगल पर उद्योग लगने से पहले और इसी 21वीं शताब्दी में हमारी पृथ्वी महाविनाश द्वारा मानवीय जीवनविहीन हो जाएगी। आवश्यकता है रहन-सहन के ऊंचे स्तर से पहले जीवन के ऊंचे स्तर को पहचानने, सही रूप से परिभाषित करने, प्रचारित करने, अधिमान देने और उसे ही अपनाने की।**

दैनिक जागरण धर्मशाला 13 दिसंबर 2007 (संपादकीय पृष्ठ)

सूख जाएंगी नदियां

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मानवीय अस्तित्व तथा उसका शारीरिक सम्मिश्रण पुरातन काल से ही गहन चिंतन का विषय रहे हैं। यह क्रम वैज्ञानिक आविष्कारों एवं अनुसंधानों की ऊंचाईयों वाले आज के युग में भी जारी है। वर्तमान शिक्षा की असंख्य किरणों के उजाले में हम पौराणिक काल की घटनाओं को कपोल कल्पित और अवैज्ञानिक मानते रहे हैं। परन्तु आज की प्राकृतिक और अप्रत्याशित स्थितियों तथा मानवीय परिस्थितियों के दर्पण में घटित हो रही या होने वाली बहुत सी घटनाएं पुरानी वर्णित उन घटनाओं के मेल के समीप पहुंच चुकी हैं, जिन्हें पहले हम सिरे से नकारते रहे हैं। **लेखक अपने इस लेख में ऐसी घटनाओं के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा उन पर पड़े पर्दे की परतों को खोलने का प्रयास करते हैं।**

गर्मी, सर्दी, अग्नि, वायु और जल की अतिवृष्टि का प्राकृतिक या अप्राकृतिक घटनाक्रम पहले भी घटित हुआ प्रतीत होता है। यह अलग बात है कि अग्नि, जल और वायु के प्रयोग की उन घटनाओं को हमने कल्पना की संज्ञा से आगे नहीं समझा है। उस समय ऐसे घटनाक्रम पर भावनागत त्याग का नियंत्रण था, जो आज नहीं है। आज पूरे का पूरा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से झुलस जाने के कगार पर पहुंच गया है। जलवायु चक्र प्रभावित हो रहा है। समस्या की गंभीरता को समझते हुए भी हम इसके सही निदान की ओर ध्यान नहीं दे पा रहे हैं। यह समस्या प्राकृतिक आपदाओं में भयंकरतम है। परंतु इस बढ़ती गर्मी से बचने के लिए पर्याप्त तथा शीघ्र प्रयास का इस पर्यावरणीय समस्या के मूल में छिपे कारणों के प्रति अरुचि के भाव के साथ नहीं हो पाना पूरे विश्व को महाविनाश की ओर धकेल रहा है।

इंडोनेशिया के पर्यटन स्थल बाली में दिसंबर 2007 में 13वां विश्व जलवायु सम्मेलन हुआ। इसमें यह तो माना गया कि जलवायु परिवर्तन, ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन के कारण है। परंतु इतना होने पर भी इन गैसों के उर्त्जन पर कौन कमी करेगा और कितना करेगा इस पर सहमति बन ही नहीं पाई। कमी करने की आवश्यकता तो अनुभव की गई परंतु समस्या के तुरंत समाधान की ओर पर्याप्त ध्यान देने में यह सम्मेलन सफल होता दिखाई नहीं दिया है। इस सम्मेलन

में 190 देशों ने भाग लिया था। नई संधि के मसौदे में वर्ष 2020 तक वर्ष 1990 के स्तर से 25 से 40 प्रतिशत तक इन गैसों में कमी करने की बात कही गई है। जलवायु परिवर्तन पर 2012 में समाप्त होने वाली क्योटो संधि के पश्चात यह नई संधि लागू होगी। आज के मानव की यह विशेषता और विवशता न जाने क्यों बनती जा रही है कि वह जीवन से कहीं अधिक आर्थिक सामर्थ्य से मोह करने लगा है। **शिक्षा की अनेक विधाओं के चमचाते उजाले में भी उसे जीवन का रास्ता क्यों धुंधला और विनाश का साफ दिखाई देने लगा है। कुछ तो ऐसा ही है जिसे हम समझे नहीं है। विश्व में तापमान की गणना 1860 से आरंभ हुई है। इन 150 वर्षों में वर्ष 2007 सबसे अधिक गर्म वर्ष रहा है।**

हिमाचल प्रदेश में भी ग्लोबल वार्मिंग का घातक प्रभाव स्पष्ट दिखाई दे रहा है। यहां प्राकृतिक और अप्राकृतिक दोनों ही प्रकार की आपदाएं बढ़ रही हैं। बाढ़ तथा पानी की कमी का प्रकोप साथ-साथ चलता दिखाई दे रहा है। प्रदेश में सतलुज, व्यास और रावी नदियां बहती हैं। चन्द्रभागा नदी नीचे के क्षेत्रों से दूर ऊंचे क्षेत्रों से होती हुई चिनाब के रूप में जम्मू-कश्मीर से होकर बहती है। इन नदियों के उद्गम स्त्रोत हिमालय के ग्लेशियर एवं हिम झीलें ही हैं। ग्लेशियर अब ग्लोबल वार्मिंग के बढ़ते रहने के कारण तीव्रता से पिघल रहे हैं। गर्मी का बढ़ना यदि यूं ही जारी रहा तो सारे ग्लेशियर पिघलने लगेंगे और पिघल रहे समाप्त होने लगेंगे।

प्रदेश में 2006 का जनवरी महीना पिछले 35 वर्षों में सबसे अधिक गर्म रहा है। शिमला, कसौली, डलहौजी और धर्मशाला के जिन क्षेत्रों में गर्मियों में कभी पंखे नहीं चला करते थे, बढ़ती गर्मी के कारण उनमें से कईयों में अब पंखों का प्रयोग होने लगा है।

हिमचाल प्रदेश में कार्बन-डाइआक्साइड का उत्सर्जन भी अन्य पहाड़ी राज्यों की तुलना में सबसे अधिक है। सड़कों की लंबाई तीस हजार किलोमीटर के आंकड़े को पार कर चुकी है, जिस पर रात-दिन वाहन दौड़ रहे हैं। उधर आवश्यकता से अधिक तथा बहुमंजिला भवन निर्माण जारी है। कंकरीट का यह निर्माण जहां गर्मी को पकड़ता है और बढ़ाता है वहीं निचले क्षेत्रों में ऐसे निर्माण के कारण ए.सी. का प्रयोग भी बढ़ने लगा है। इससे प्रयोग होती क्लोरो-फ्लोरो

कार्बन कुछ ऊंचाई पर जाकर कार्बन मोनोक्साईड का निर्माण करती है जो ओजोन परत पर प्रहार कर गर्मी को बढ़ा रही है। नित नई बनती आवासीय कालोनियों के द्वारा हरी-भरी भूमि पर कंकरीट आदि की ठोस परत चढ़ा दी जाती है। हरियाली और ठंडी छाया का राज्य समाप्त होकर गर्मी के साम्राज्य में बदल जाता है।

गर्मी का बढ़ना यदि ऐसे ही जारी रहा तो जल संकट और गहरा हो जाएगा। गेहूं के साथ सेब आदि फल तथा अन्य फसलें कम होते-होते **इसी शताब्दी में लुप्त हो जाएंगी। बर्फ के भंडारों की समाप्ति के साथ नदियां भी सूख जाएंगी। पर्वत शुष्क हो जाएंगे तो मैदानों की हरियाली भी चली जाएगी।** लेखक ने 22 सितम्बर 2003 के दिव्य हिमाचल धर्मशाला के अंक में प्रकाशित अपने लेख 'इसी शताब्दी में चली जाएगी मैदानों की हरियाली' में नदियों के सूख जाने की आशंका व्यक्त कर दी थी। इसके बाद अब तो यह स्वर और कई स्थानों से भी मुखर होने लग पड़ा है। **हमने यदि अब भी वास्तविकता से मुंह मोड़े रखा और बढ़ती गर्मी के कारणों को दूर नहीं किया तो पृथ्वी इसी शताब्दी में मानवीय जीवन विहीन हो जाएगी। लेखक इस कटु सत्य को प्रमाणित करने के दृष्टिकोण से आवश्यक नोटिस, उपयुक्त समय सीमा तथा शर्तों के साथ पर्याप्त कारण तथा प्रभाव उजागर करने के लिए सामर्थ्य एवं तैयार है।**

दैनिक जागरण धर्मशाला 24.01.2008(संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

इस समय संसार में जितनी भी प्राकृतिक आपदाएं हैं उनमें सबसे भयंकर ग्लोबल वार्मिंग है। मौसम पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है तथा प्रकृति की ओर से मर्यादित व्यवस्था रूपी गाड़ी के पहिए अपनी पटरी से उतरने लगे हैं। ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ाने के लिए मानवजनित कारणों से हिमाचल प्रदेश भी अछूता नहीं है। कार्बन डाईऑक्साइड, सीएफसी गैसें आदि ऐसे कारण हैं जो गर्मी को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इनसे ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न होता है। ये गैसें सूर्य की गर्मी को बड़ी देर तक धरती पर रोके रखती हैं।

सीएफसी गैस से उत्पन्न नया प्रभाव पृथ्वी के प्राकृतिक सुरक्षा कवच ओजोन पर धावा बोल देता है और उसे नष्ट व दुर्बल करने का कारण बनता है। 2006 में ओजोन परत को भारी हानि पहुंची। राज्य में रात दिन दौड़ने वाले वाहनों की संख्या लगभग तीन लाख है। सड़कों की लंबाई 30000 किलोमीटर के आंकड़े को कब की पार कर चुकी है। वाहनों से दिन-रात निकलने वाली कार्बन-डाइऑक्साइड की मात्रा भी उसी अनुपात से बढ़ती जा रही है। लोगों के आर्थिक सामर्थ्य के बढ़ने तथा ऊंचे जीवन के लिए अनिवार्य आदर्शों से लगाव घटने के कारण हम यहां भी बहुत सी ऐसी वस्तुओं का प्रयोग बढ़ाते जा रहे हैं, जिनमें सीएफसी गैस का प्रयोग होता है। शहर हो या गांव, घर आंगन और बगियों में उपलब्ध भूमि को पेड़-पौधों की ठंडी छाया से दूर रखते हुए हम साफ-सफाई एवं चमक-दमक के नाम पर केवल कंकरीट की कठोर संस्कृति से ही प्रेम करने में लगे हैं। इससे एक ओर धरती गर्म होती है तो दूसरी ओर वर्षा के पानी की भूमि में समाने की संभावना कम हो जाती है। यह आगे चलकर पानी के संकट को बढ़ाने का कारण भी बनती है। हम प्राकृतिक रूप से अपनी दिशा की ओर बहते पानी के फैलाव को नदी नालों और खड्डों के किनारों पर कंकरीट की ठोस दीवारें लगाकर उसे संकरा करने में लगे हैं।

विकास के नाम पर जगह-जगह खनन का काम जोरों पर है। कहीं चूने का पत्थर निकाला जा रहा है तो कहीं सड़कों के लिए पहाड़ काटे जा रहे हैं। कहीं निर्माण के लिए खनन हो रहा है तो कहीं मैदानों, पैट्रोल पंपों और पन बिजली

परियोजनाओं के लिए चट्टानें काटी जा रही हैं। भारी खनन तथा कंकरीट का गठबंधन गर्मी तथा पानी की कमी को बढ़ाता है। लोगों के आर्थिक सामर्थ्य के बढ़ने तथा उनके आधुनिकता के रंगों में गहरे तक रंगे जाने के कारण हमारे गांव बड़ी तीव्रता के साथ कस्बे बनते जा रहे हैं और कस्बे नगरों का रूप लेते जा रहे हैं। लोग इस बात से बेखबर दिखाई देते जा रहे हैं कि विकास के जिस रूप के साथ आधुनिकता की दुहाई दी जा रही है, उससे ग्लोबल वार्मिंग तथा प्रदूषण के बढ़ने की गंभीर समस्या अपना कुप्रभाव दिखाती जा रही है। पेड़ धरती को ठंडा रखते हैं और कार्बन डाइऑक्साइड को कम करते हैं। परंतु पेड़ भी घट रहे हैं। हम पेड़ों के पूजे जाने वाली प्रथाओं को भूल गए हैं। पेड़ों को लगाने और बचाए रखने वाली इन पावन प्रथाओं पर उद्देश्य से भटकी और विवेक को खोती साक्षरता ने आधुनिकता के बेमेल गठबंधन के साथ हमारे पर्यावरण के ऊपर प्रतिकूल प्रभाव डाल दिया है। **जल की कमी को दूर करने के लिए तथा सिंचाई सुविधाओं को अच्छा बनाने के नाम पर वर्षा के जल भंडारण के लिए प्लास्टिक के टैंक बनाने की अनुशंसा की जा रही है। गहराई से यदि विचार करें तो पता चलेगा कि इससे क्षणिक लाभ तो हो सकेगा परंतु यह प्रयोग कालांतर में बहुत घातक सिद्ध होगा।** इससे गर्मी बढ़ेगी और भविष्य में पानी की कमी और भी बढ़ जाएगी। प्लास्टिक संस्कृति अपना घातक प्रभाव दिखाएगी। प्रदेश में ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव साफ देखा जा सकता है। प्रदेश में पानी के ग्लेशियर के रूप में सर्वाधिक सुरक्षित भंडार लाहुल-स्पीति में है। माना जा रहा है कि हिमाचली क्षेत्र के ग्लेशियरों की पिघलने की गति विश्व में सबसे अधिक है। यहां के लगभग 65 प्रतिशत ग्लेशियर पिघल रहे हैं।

इस प्रदेश में ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव सेब, चावल, गेहूं तथा मटर की फसल पर भी देखा जा सकता है। आम तथा लीची के पौधे कोहरे से सूख रहे हैं या कमजोर पड़ते जा रहे हैं। यह भी अनुमान लगाया जा रहा है कि अगले 20 वर्षों में सेब के पौधों की आयु कम हो जाएगी। 2001-02 में चावल की उपज 137.42 हजर टन थी जो 2005-06 में 112.14 हजार टन संभावित रह गई थी। इसी प्रकार 2001-02 में गेहूं की उपज 637 हजार टन थी, जो 2005-06 में 550 हजार टन संभावित रह गई थी। प्रदेश के पर्यटन स्थल कसौली में हरे पत्तों पर गर्मी की मार का प्रभाव अभी से देखा जा सकता है। जबकि मार्च महीना

प्रदेश में शरद ऋतु का है। सरकार की ओर से प्रदेश में कार्बन को कम करने के लिए कार्बन क्रैडिट की बात की गई है। इसे कम करने के लिए सब विभागों को निर्देश दिए गए हैं। समितियों का गठन भी किया गया। पर्यावरण को बचाने की घोषणाएं भी होती रहती हैं।

समस्या के सभी पहलुओं पर विचार किया जाए तो पता चलेगा कि लाख प्रयत्न करने पर भी पर्यावरण की समस्याएं अपने घातक प्रभाव को लेकर गहराती ही जा रही हैं। वास्तव में इन समस्याओं के मूल में जो ऊर्जा या कारण काम करते हैं, उनकी वास्तविक पहचान तथा प्रभावशाली निदान की ओर प्रदेश, देश और विश्व का बहुत कम ध्यान है। आवश्यकता है गांधी परंपरा के विशेषज्ञों की जो वास्तविक जीवन शैली को समझाएं। पर्यावरण को स्वार्थ साधन या धन कमाने का विषय बनने से बचाएं। ध्वस्त होते पर्यावरण को बचाने की दिशा में सही प्रयासों के साथ समाज में आमूल चूल परिवर्तन लाएं। प्रकृति, प्राकृतिक रचना तथा उसके व्यवहारिक संबंधों को समझाएं। इसी से शीघ्र बढ़ती गर्मी द्वारा झुलस कर समाप्त होने वाली जीव जातियां बच सकेंगी अन्यथा इसी शताब्दी में संपूर्ण विनाश हो जाएगा।

दैनिक जागरण धर्मशाला 18 मार्च 2009 (संपादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

जल संकट की आहट

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

हिमाचल की भौगोलिक स्थिति की हरियाली, नदी-नालों, घाटियों, झरनों तथा बर्फ से ढकी चोटियों को देखकर तो यही लगता है कि यहां जल की कमी की कभी भी कल्पना नहीं की जा सकती है। मैदानी राज्यों को पानी उपलब्ध करवा कर लहलहाती फसलों से समर्थ बनाने वाला यह प्रदेश पानी की कमी से कभी आक्रांत हो भी कैसे सकता है। परंतु तथ्य कुछ और भी बताते हैं। यहां पानी के मुख्य स्त्रोत वर्षा, बर्फ से ढके पर्वत, ग्लेशियर तथा भूगर्भीय चट्टानों के भीतर सुरक्षित पानी के भंडार हैं। इनमें नदी, नालों, झरनों, प्रपातों, कुओं बावडियों तथा हैंडपंपों द्वारा निकलकर पानी हमारे उपयोग के लिए मिलता रहता है। परंतु पर्यावरण की रक्षा के लिए बनावटी प्रयासों का ढोल पीटते हम यहां भी प्राकृतिक मर्यादाओं के सम्मान से विमुख होते जा रहे हैं। पानी की कमी के कारणों को बढ़ाते जा रहे हैं। दूसरों की प्यास बुझाने वाला प्रदेश स्वयं अब पानी की कमी की ओर भी तीव्र गति से बढ़ता जा रहा है।

पानी की यह कमी मानवजनित दो मुख्य कारणों से है। एक ओर मानवीय आचरण में आती बनावट, चालाकी और लालच से प्रभावित होकर मौसम चक्र एवं जल चक्र प्रभावित हो रहे हैं। इसके लिए अधिकतर बढ़ता हमारा आर्थिक सामर्थ्य, नीतिगत असंतुलन तथा अंधाधुंध विकास उत्तरदायी है। इससे मौसम आगे-पीछे की ओर सरक रहे हैं। सामान्य रूप से होती वर्षा में कमी होती जा रही है। दूसरी ओर हम वर्षा द्वारा प्राकृतिक रूप से मिलते पानी को भूमि के भीतर समाने तथा सहज प्राकृतिक रूप से मिलते तथा बहते पानी की प्रक्रिया को भी प्रतिकूलता के साथ प्रभावित करते जा रहे हैं। इस वर्ष प्रदेश में शीतकाल में कम वर्षा हुई। पर्वतों पर जहां पहले केवल बर्फ ही गिरा करती थी अब वहां पानी भी बरसने लगा है। ऐसा होने से बर्फ के रूप में पानी के भंडार ग्लेशियर अब बनते कम, पिघलते अधिक हैं।

हिमाचल की धरती पर बहती सतलुज, व्यास, रावी आदि नदियों को पानी बर्फ से ढके पर्वत शिखरों तथा ग्लेशियरों से ही मिलता है। एक अनुमान के अनुसार पर्वतों में लगभग 2554 ग्लेशियर तथा लगभग 156 ग्लेशियर झीलें हैं। इस समय अधिकतर ग्लेशियर पिघल रहे हैं। यदि स्थिति में सुधार न हुआ तो सभी ग्लेशियर इसी शताब्दी में पिघल जाएंगे। पहाड़ों की सफेदी चली जाएगी।

जल के विशाल भंडार को लेकर बहती नदियां सूख जाएंगी। साफ–सफाई तथा सुंदरता के नाम पर रहन–सहन तथा निर्माण की जिस संस्कृति को लेकर हम अपने जीवन की गाड़ी को गति देने में लगे हैं, वह प्रकृति विरोधी है। धरती पर जीवन की निरंतरता को बनाए रखने के विपरीत एवं उसके लिए घातक है।

हम वास्तविकता को छोड़ बनावट और दिखावट में अधिक विश्वास करने लगे हैं। इसी कारण बरसात के पानी को धरती के भीतर समाने तथा मानवीय उपयोग के लिए संरक्षित रखने की संभावनाएं बड़ी तीव्रता के साथ घटती जा रही हैं। यहां का नगर, कस्बा व गांव ठोस कंकरीट का जंगल बनता जा रहा है। घर–आंगन, सड़कों, रास्तों, खलिहानों, मैदानों तथा जगह–जगह गाड़ी विहीन प्लेटफार्मों की तरह प्रदेश की धरती का एक खासा भाग कृत्रिम ठोस परत के नीचे आता जा रहा है। यही नहीं नगरों, मोहल्लों एवं उद्योगों से निकलता गंदा ठोस या तरल कचरा भी नदी नालों एवं खड्डों में डाला जा रहा है। इससे जहां हम पानी को भूमि के भीतर समाने से रोकते जा रहे हैं वहीं कम उपलब्ध पानी की गुणवत्ता को भी घटाते जा रहे हैं। इससे पीने योग्य पानी की उपलब्धता में भारी कमी आ जाएगी। सिंचाई के लिए भी पानी की उपलब्धता में भारी गिरावट आएगी। यहां बहती नदियों के पानी की पीएच वैल्यू बढ़ रही है। पानी तेजाबी बनता जा रहा है। एक अनुमान के अनुसार भारत में होने वाली 7.5 प्रतिशत अकाल मृत्यु का कारण भी प्रदूषित जल और अस्वच्छता है। प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार देश के 70 प्रतिशत भू–जल भंडार कमी की समस्या से जूझ रहे हैं। यह भी अनुमान है कि 20 वर्षों के पश्चात देश की राजनीति को पानी की समस्या प्रभावित करेगी। देश के योजना आयोग के एक विशेष दल ने भू–जल का अत्याधिक दोहन रोकने के लिए निश्चित क्षेत्रों में बिजली पर दी जाने वाली सहायता को कम करने का सुझाव भी दिया है। इस प्रदेश में लगभग 3500 प्राकृतिक जल स्त्रोत हैं। यहां 10 से 25 प्रतिशत भू–जल का दोहन हो रहा है।

एक समाचार के अनुसार प्रदेश भूमिगत जल दोहन के लिए अपने तौर पर परियोजना आरंभ करेगा तथा कुछ स्थानों से इसका आरंभ कर दिया गया है। देखने में यह भी आता है कि एक दल की सरकार जन कल्याणकारी जिन परियोजनाओं को आरंभ करती है दूसरे दल की सरकार उन पर दलगत ठप्पा लगाकर उनसे किनारा करने लगती है। **हमने यदि सद्नीतिगत व्यवहार को नहीं अपनाया तो इसी शताब्दी में यहां के सभी जल स्त्रोत समाप्त हो जाएंगे।**

धरती मरूस्थल का रूप धारण कर लेगी। वह स्थिति और भी भयावह हो जाएगी। जल संकट से उत्पन्न अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष विकट रूप धारण कर लेगा। महामारियां व प्राकृतिक आपदाएं रौद्र रूप धारण कर लेंगी। धरती की प्राकृतिक ऊपरी परत से परहेज करने वालों एवं कंकरीट और प्लास्टिक से ही केवल प्यार करने वालों को अब तो गंभीरता से सोचना ही होगा। यही समय की मांग है जो जीवन के हित में परम आवश्यक है।

दैनिक जागरण–धर्मशाला 15.04.2009 संपादकीय पृष्ठ में प्रकाशित

क्यों बदला मौसम

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

अपनी जीवनयात्रा में मनुष्य अलग-अलग पड़ावों पर अलग घटनाओं तथा स्थितियों से दोचार होता आया है। उसे कभी सुख का अनुभव होता है तो कभी दुख का। इस कारण वह सर्वथा अधिक सुख समृद्धि के लिए लालायित रहता है। यह अलग बात है कि उसका उपभोग वह अपने जीवन में न कर सके। यह मानसिक स्थिति ही त्यागभाव के वीराने में एक के बाद दूसरी अनावश्यक इच्छाओं को जन्म देती हुई उसे असंतोष, ईर्ष्या एवं तनाव की ओर धकेलती आई है। इसी असंतोष और लालसा ने मनुष्य को निरंतर कर्म की ओर प्रवृत्त रखा है।

वर्तमान युग में विश्व में अधिकतर धर्मावलंबी और विचारक कर्म तथा उसके फल के सिद्धान्त पर विश्वास करते हैं। यह अलग बात है कि अपने इस विश्वास की धुरी को अच्छे बुरे कर्मों के वर्गीकरण की सही कसौटी पर टिकाने में वह किसी न्यूनतावश पूरी तरह सफल होते कम दिखाई देते आए हैं। सामूहिक कर्मों का फल राज्य, देश, संसार यहां तक कि ब्रह्मांड तक को प्रभावित करता है। इसकी विस्तार के साथ व्याख्या की आवश्यकता है।

आज मनुष्य का उद्देश्य जीवन चलाना कम परंतु धन कमाना ही अधिक है। जिसके लिए वह सीमाओं को भी लांघ जाता है। इसी कारण वह अपने जीवनोपयोगी पर्यावरण को नष्ट करता स्वयं ही ऋतुओं एवं मौसमों को अपने ही कर्मों द्वारा प्रतिकूलता के साथ प्रभावित करने का स्वयं ही कारण बनता जा रहा है।

मानसून शुरू हुए लगभग आधा अंतराल बीत चुका है परंतु इस प्रदेश में अभी तक कई क्षेत्र ऐसे हैं जहां धरती को इस मौसम ने ठीक प्रकार से छुआ तक नहीं है। वर्षा की ऋतु के दिन बिन बरसात बीत रहे हैं। हमीरपुर, ऊना, कांगड़ा तथा बिलासपुर के बहुत से क्षेत्र ऐसे हैं जहां बहुत ही कम हुई वर्षा के कारण किसानों को दो बार भी मक्की की बिजाई करनी पड़ी। इतने पर भी मक्की के पौधे खेतों में आधे ही उग पाए हैं। यही नहीं, एक ही खेत में कई पौधे बड़े तो कई बहुत छोटे रहकर कटाई के समय खेतों को दो भागों में बांट देंगे। कई जगह तो बड़ी वर्षा वत्तर के अभाव के कारण कई खेत बिन फसल सूने पड़े हैं। लोग बादलों को पानी की बौछार के लिए आंखें फाड़ कर देख रहे हैं। चावल के लिए धान के पौधे की रोपाई तो टेढ़ी खीर ही है। बरसात में बरसते पानी की ठंडक तथा नमी के अभाव के कारण ऊना का तापमान 45^0 सेल्सियस को छू जाता है।

इस प्रकार हिमाचल का भाग भी तपन के लिए राजस्थान की होड़ करने लगा है। सूखे की इस स्थिति के आकलन में प्रदेश ही नहीं, अपितु पूरा उत्तरी भारत सूखे की चपेट में आ चुका है। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश आदि मौसम की बेरुखी से आक्रांत हैं। पिछले कुछ दशकों में मौसम के अंतराल तथा व्यवहार में हो रहे बदलाव को देखें तो पता चलता है कि मौसम प्रतिकूलता के साथ प्रभावित हो रहे हैं। यह बदलाव इतना अप्रत्याशित है कि इसने वैज्ञानिकों द्वारा की जाने वाली भविष्यवाणियों की विश्वसनीयता को भी हिला कर रख दिया है। पूरा संसार मौसम में बदलाव के आवृत के भीतर आ चुका है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहां मौसम का प्रभाव प्रदेश तथा देश की अर्थव्यवस्था पर अधिक पड़ता है। सूखे के प्रभाव की इन्हीं संभावनाओं ने प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के माथे पर चिंता की लकीरें खींच दी हैं। उन्होंने देश की खाद्य सचिव को स्थिति से अवगत करवाने तथा एक समिति गठित करने को कहा है। प्रदेश में पहले अब तक होने वाली वर्षा से लगभग कम वर्षा हुई है। सूचना के अनुसार हिमाचल प्रदेश में सूखे से अब तक लगभग 51 करोड़ मूल्य की फसल बर्बाद हो चुकी है। मौसम में हो रहे बदलाव एवं इसके दुष्प्रभाव के आलोक में हिमाचल प्रदेश में वर्षा की ऋतु में होने वाली मक्की तथा चावल की फसल के उत्पादन पर दृष्टि डालते हैं। प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार प्रदेश में 2003–04 में 729–57 मीट्रिक टन मक्की का उत्पादन हुआ। 2004–05 में 636–29 तथा 2005–06 में 543.06 मीट्रिक टन उत्पादन हुआ। 2006 के लिए यह उत्पादन 645.38 मीट्रिक टन संभावित दिखाया गया था।

चावल का उत्पादन 2003–04 में 120.62 मीट्रिक टन, 2004–05 के लिए 109.13 तथा वर्ष 2006–07 के लिए यह उत्पादन 123.48 मीट्रिक टन संभावित दिखाया गया था। इन्हीं कुछ आंकड़ों के उजाले में बदल रहे मौसम का प्रभाव फसलों के उत्पादन पर साफ देखा जा सकता है। यह अनुमान भी सहज ही लग जाता है कि बरसात की कमी के कारण इस वर्ष मक्की तथा चावल की फसल गत वर्षों में आई कमी के रुझान की अपेक्षा और भी कम होगी। फसल के उत्पादन में कमी का प्रतिकूल प्रभाव सरकारी कर्मचारियों तथा बड़े व्यापारियों का तो कुछ नहीं बिगाड़ेगा परंतु वर्तमान आर्थिक नीतियों के चलते छोटे व्यापार धंधों में लगे लोग, छोटे किसान व मजदूर वर्ग तथा संपत्तिविहीन एवं बेरोजगार बुरी तरह से प्रभावित होंगे। यही स्थिति असंगठित क्षेत्र के कर्मचारियों को झेलनी पड़ेगी।

राजनीति तथा समाज के नेताओं के आपसी गठबंधन ने जीवन के मूल्य बदल डाले हैं। परिभाषाएं बदल डाली हैं। आध्यात्मिक क्षेत्र भी कहीं-कहीं धन यश और संरक्षण की चाह से आक्रांत दिखाई देता है। पर्यावरण के संरक्षण के प्रति आम लोगों तथा सरकार की बेरुखी तथा दिशाविहीन प्रयत्नों के चलते इसी शताब्दी में मक्की तथा चावल की फसलें लुप्त हो जाएंगी तथा धरती जीवन विहीन हो जाएगी। स्वस्थ, शांत तथा लंबे जीवनकाल के हित में वैज्ञानिकों को अब स्वयं जीवन मूल्यों के सिद्धांत का अनुमोदन कर देना चाहिए।

जीव से भटके पग, इतराते विकास पर।
ढूंढ रहे हैं जीवन, चिताओं की आग पर।।

दैनिक जागरण, धर्मशाला 29 जुलाई 2009 (सम्पादकीय पृष्ठ) में प्रकाशित

क्या हिमालय के ग्लेशियर बचे रहेंगे?

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

सृष्टि के रचयिता ने अपनी जीवंत रचनाओं के लिए सुखी, शांत और संतोषप्रद जीवन के लिए पृथ्वी के आवृत के भीतर ही पर्याप्त साधन तथा सामग्री जुटा रखी है। ये संसाधन देहधारियों के धरती पर आगमन से पूर्व यहां विद्यमान थे। परंतु प्रकृति द्वारा प्रशस्त जीवन मार्ग से जब प्रकृति की उत्कृष्ट रचना मानव के पग भटकने लगते हैं तो प्रकृति द्वारा प्रदत्त एवं जीवन के लिए आवश्यक सामग्री का कोष भी डगमगाने लगता है। इस सामग्री की उपलब्धता का निर्माण चक्र भी अपने रंग–रूप, आकार–प्रकार और गुण–दोष को लेकर प्रतिकूलता के साथ प्रभावित होने लगता है। इसी भटकाव से प्रभावित होती प्राकृतिक आपदाओं एवं जीवन के लिए विषाक्त बनती अवस्थाओं को ठीक प्रकार समझने के लिए हमारे पूर्वानुमान यथार्थ की कसौटी पर अपना रंग बदलने लगते हैं। हिमालयी ग्लेशियरों को प्रभावित करती ग्लोबल वार्मिंग के परिणामों को लेकर भी कुछ ऐसा ही लगता है।

वैज्ञानिक शोध के आवृत से बाहर रहती कुछ ऐसी ही घटनाओं के शोधपूर्ण आलोक में हिमालयी ग्लेशियरों के अध्ययन के संशय युक्त परिणामों तथा उनको लेकर सरकारी संवेदनशीलता पर एक विहंगम दृष्टि डालते हैं।

संयुक्त राष्ट्र के जलवायु परिवर्तन चैनल की वर्ष 2007 की रिपोर्ट में यह उद्घाटित किया गया था कि हिमालय के ग्लेशियर संसार में तीव्रता के साथ पिघल रहे हैं। अगले 25 वर्षों के बाद नदियों के सूखने की आशंका व्यक्त की गई है परंतु प्रकाशित समाचार के अनुसार देश के प्रतिष्ठित शोध संस्थानों ने ग्लेशियरों की स्थिति पर जो रिपोर्ट केंद्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय को दी है, उसके अनुसार 10 वर्ष की समीक्षा में 72 कि.मी. लम्बे सियाचिन ग्लेशियर, 27 कि.मी. मयाड़ ग्लेशियर (हिमाचल), 26 कि.मी. जेमू ग्लेशियर (सिक्किम) की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। ये ग्लेशियर वैसे के वैसे ही हैं। गंगोत्री ग्लेशियर के पिघलने की वर्षिक दर पिछले 10 वर्षों में केवल 10 मीटर बताई गई है जबकि उससे पहले यह दर 25 मीटर वार्षिक थी। इसी प्रकार हिमा३२७

चल का 4 कि.मी. लम्बा वातल ग्लेशियर भी वर्ष 2003 से लेकर अब तक केवल एक मीटर ही पिघला बताया गया है। हिमाचल के ही सोनापाली ग्लेशियर,

शिशु ग्लेशियर, समुद्री ग्लेशियर तथा मूलाकिला ग्लेशियर को भी पिघलने से अछूता बताया गया है। स्पेस एप्लीकेशन सैंटर अहमदाबाद की प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार हिमाचल प्रदेश में पिछले 50 वर्षों में लगभग 21 प्रतिशत ग्लेशियर क्षेत्र का अस्तित्व समाप्त हो चुका है। इस प्रकार ग्लेशियरों के पिघलने की स्थिति को लेकर वैज्ञानिक एकमत होते दिखाई नहीं देते हैं।

उधर ग्लेशियरों की संख्या के बारे में भी वैज्ञानिक एकमत नहीं है। भारतीय भू-विज्ञान सर्वेक्षण विभाग के अनुसार हिमालयी क्षेत्र में ग्लेशियरों की संख्या 9000 के आसपास है परंतु स्पेस एप्लीकशन सैंटर के अनुसार इनकी संख्या लगभग 23000 है। हिमालयी क्षेत्र में हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, अरुणाचल प्रदेश, उत्तराखंड तथा सिक्किम आते हैं। हिमाचल प्रदेश में छोटे-बड़े ग्लेशियरों की संख्या 3500 के आसपास है।

ये सभी आंकड़े एक ही स्पष्ट संदेश देते दिखाई दे रहे हैं और वह यह कि एक ही कार्य पर हो रहे अलग-अलग शोधों के परिणाम भी एक समान न होकर अलग-अलग ही हैं जबकि स्थिति को ठीक प्रकार समझने के लिए आंकड़ों में एकरूपता होनी चाहिए।

हाल ही में ग्लोबल वार्मिंग तथा जलवायु परिवर्तन को लेकर पहाड़ी राज्यों के मुख्यमंत्रियों का सम्मेलन हुआ था परंतु इसमें भी वैज्ञानिक ग्लेशियरों की संख्या तथा उनके पिघलने की गति को लेकर संशय से ही घिरे हुए प्रतीत हुए। यह तथ्य भी सामने आया कि कम ऊंचाई वाले ग्लेशियरों के पिघलने की गति धीमी है। इस बात का संकेत भी मिला कि हिम रेखा (स्नो लाइन) की लंबाई 1980 से लेकर वर्ष 2006 तक 4800 मीटर से 5200 मीटर हो गई है।

केंद्रीय सरकार ने भी संयुक्त राष्ट्र की वह रिपोर्ट खारिज कर दी है जिसमें हिमलायी ग्लेशियरों की पिघलने की दर को अधिक बताया गया है। साथ ही इस संभावना को भी नकार दिया है कि 2035 तक सभी ग्लेशियर पिघल जाएंगे और नदियां सूखने के कगार पर पहुंच जाएंगी। नदियों के अस्तित्व के बने रहने के पक्ष में जो तर्क दिया गया है वह यह कि इन नदियों में ग्लेशियरों का केवल 2 से 5 प्रतिशत तक का ही पानी होता है और शेष पानी मानसून से आता है। ग्लेशियरों के न मिटने के पीछे यह तर्क भी दिया गया है कि गंगोत्री ग्लेशियर के घटने की दर 6 वर्ष पूर्व 25 मीटर वार्षिक थी, जो 2004-05 में 12 मीटर रह

गई और वर्ष 9/2007 तथा 6/2009 के बीच घटने की दर शून्य रही। ग्लेशियरों के समाप्त न होने या न पिघलने के पक्ष में यह तर्क भी दिया गया कि हिमालयी ग्लेशियर बहुत ऊंचाई पर हैं इसलिए उन पर ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव नहीं पड़ता है। यह भी कहा गया है कि ग्लेशियरों की तुलना दक्षिण ध्रुव या उत्तरी ध्रुव से करना ठीक नहीं है।

लेखक ग्लोबल वार्मिंग के ज्ञात और अज्ञात कारणों के प्रभाव की यात्रा तथा तीक्ष्णता पर शोधपूर्ण गहन विचार करने पर इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि ग्लेशियरों के न पिघलने या फिर बहुत कम पिघलने के पीछे जो कारण गिनाए जा रहे हैं वे दूरगामी प्रभाव वाले यथार्थ की कसौटी पर ठीक नहीं उतरते हैं। अंटार्टिक का भू-भाग उन गतिविधियों की तुलनात्मक दृष्टि से दूर है जो तापमान को बढ़ाती हैं परन्तु वहां फिर भी बर्फ पिघल रही है। जबकि हिमालयी ग्लेशियरों का क्षेत्र ऐसी गतिविधियों के समीप आता जा रहा है। बर्फ धूप से उतनी अधिक नहीं पिघलती है जितनी गर्मी में होती वर्षा के पानी से पिघलती है ग्रीष्म काल में होती वर्षा ग्लेशियरों की ओर आगे से आगे बढ़ती जा रही है। गर्मी तथा इसे बढ़ाने वाले अवयव ऊपर की ओर भी यात्रा करते हैं। नदियों को ग्लेशियरों से 2 से 5 प्रतिशत पानी यदि मिलता है तो वह ऐसे समय में मिलता है जब धूप अंगारे बरसाती है और सूखे का भय होता है।

जयपुर के तेल भंडार में लगी आग ने उन लोगों को भी प्रभावित किया जो बहुमंजिले भवनों की ऊपरी मंजिलों में रहते थे। किसी पहाड़ी के समीप लगी आग उस पहाड़ी की ऊंचाई पर रहते लोगों पर भी प्रभाव डालती है। **कार्बन मोनोआक्साईड ऊंचाई पर ओजोनो की परत को नष्ट करने का कारण बनती है। इसलिए यह मानना ठीक नहीं है कि बर्फ का भंडार बढ़ते तापमान से दूर है इसलिए इस पर गर्मी का प्रभाव नहीं हैं। सच्चाई पर अपना रंग चढ़ाकर उसे प्रस्तुत करना ही वह कारण है जो पर्यावरण को ठीक प्रकार समझने के मार्ग पर रोड़ा बनकर खड़ा है।**

विश्व में ग्लोबल वार्मिंग के अस्तित्व को लेकर भी इसी प्रकार का विवाद उठा था। परंतु अंत में यह स्थापित हो गया था कि यह समस्या है। 2007 में मंडी

में हुए एक राष्ट्रीय सेमीनार में भी एक विद्वान महोदय ने समझाने का प्रयत्न किया था कि ग्लोबल वार्मिंग की समस्या वास्तव में नहीं है। परंतु यह विशेषज्ञ लेखक द्वारा उठाए प्रश्नों तथा समस्या के पक्ष में स्पष्टीकरण पर निरुत्तर दिखाई दिए। ग्लेशियर यदि ऐसे ही पिघलते रहे तो इसी शताब्दी के मध्य भाग के पश्चात नदियां सूख जएंगी और मैदानों की हरियाली भी चली जाएगी।

ऐसा लगता है कि समस्या के कारणों की सही पहचान तथा उसके प्रभाव की तीक्ष्णता को सही प्रकार से जानने की दिशा में कोई चूक हो रही है। **स्थितियां यदि ऐसे ही रहीं तो चांद पर बस्तियां बसाने से पूर्व वहां पर भी तापमान बढ़ चुका होगा जो लूनर वार्मिंग या सौर मंडल वार्मिंग के नाम से जाना जाएगा। यह एक ऐसा शोध निष्कर्ष है जो इस लेख के माध्यम से प्रथम बार उजागर किया जा रहा है।**

अच्छा तो यही है कि वास्तविकता को ठीक प्रकार से समझा जाए तथा सरकार और लोगों को समस्या की गंभीरता के प्रति लापरवाह होने से रोका जाए नहीं तो वर्तमान शताब्दी जीवन की अंतिम शताब्दी होगी। न रहेंगे पशु-पक्षी और न रहेगा मानव।

पंजाब केसरी जालंधर 7 जनवरी 2010 तथा अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित

आती बाढ़ें, फटते बादल, असहाय मानव

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

प्रकृति की क्रियाएं मर्यादा की परिधि के भीतर कार्य करती हैं। परंतु आज मानवीय क्रियाएं, मर्यादाहीनता के मार्ग पर तीव्रता के साथ बढ़ती जा रही हैं। मर्यादाहीनता की लंबी होती इन कड़ियों के कारण ही मनुष्य का सामना अकल्पित प्राकृतिक अपादाओं के साथ हो जाता है। अनगिनत सुविधाओं, साधनों एवं यंत्रों के होने पर भी सैंकड़ों, हजारों और लाखों लोगों का मातम होता है। शेष बचे हुए हजारों और लाखों घायलों, बेसहारों, बच्चों तथा संबंधियों का रुदन और चीत्कार सुनाई देने लगती है। आपदाएं ऐसी कि अपने रहस्यों की बोधहीनता से विज्ञान जगत को भी झकझोर डालती हैं।

करोड़ों अरबों डालरों के व्यय से फिर नए-नए अनुसंधान होने लगते हैं। ये प्रयास भी अगली विनाशकारी आपदा तक पहुंचते-पहुंचते बौने पड़ जाते हैं। इन्हीं कुछ तथ्यों के उजाले में इन दिनों आती विनाशकारी बाढ़ों तथा बादल फटने के उन कारणों पर प्रकाश डालते हैं जो रहस्यों की परतों के नीचे ढके पड़े हैं।

31 जुलाई 2000 को हिमाचल प्रदेश में बहती सतलुज नदी में आधी रात को भयंकर बाढ़ आई। बाढ़ से लगभग 200 लोग मारे गए, 2000 पशु अपनी जान गवां बैठे। करोड़ों रुपए मूल्य की संपदा नष्ट हो गई। बाढ़ के कारणों की अज्ञानता से पड़ोसी देश पर संदेह के समाचार छपने लगे। कई प्रकार की अटकलबाजियां लगती रहीं। 2003 में इसी प्रदेश के कुल्लू के गढ़सा में बादल फटने से बाढ़ आई। इस बाढ़ में 60 श्रमिक मारे गए। 14 अगस्त 2007 को प्रदेश के रामपुर उपमंडल में गानवीं के समीप बादल फटने से बाढ़ आई। इसमें 100 लोग बह गए या मलबे के नीचे दबकर मर गए। 5 अगस्त 2010 को लद्दाख लेह में बादल फटा। वहां इतनी भयंकर बाढ़ आई कि देखते ही देखते कस्बा शमशान में बदल गया। इसमें लगभग 200 लोग मारे गए। 500 से भी अधिक अस्पतालों में भर्ती हुए। कई पशु बह गए। सड़कें टूटीं, पुल टूटे और धरती कट-कट कर बह गई। बादल जिला मुख्यालय से13 कि.मी. दूर चोगल मसर स्थान पर फटा था। प्रधानमंत्री ने 125 करोड़ रुपए के पैकेज के साथ लेह को सर्दियों से पहले आबाद करने की घोषणा कर दी। 12 अगस्त 2010 को उत्तराखंड

के बागेश्वर जिले के सूमेगढ़ गांव में बादल फटा। इससे प्राथमिक विद्यालय का भवन गिर गया। इसमें 98 बच्चे मर गए। इस दुर्घटना पर प्रधानमंत्री ने भी चिंता जताई। 23 अगस्त 2010 को हिमाचल प्रदेश के रामपुर बुशैहर के दरकाला में बादल फटा। परंतु कोई प्राण हानि नहीं हुई। माली हानि अवश्य हुई। इसी अगस्त में पाकिस्तान में भी बाढ़ से भारी तबही हुई। संयुक्त राष्ट्र महासचिव वान की मून ने कहा कि यह बाढ़ पाक का अब तक का सबसे बड़ा संकट है। इस बाढ़ में हजारों लोग और दो लाख के आस-बास पशु भी प्राण खो बैठे। 1447 राहत शिविर लगाए गए।

हमारे अपने देश के पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश यहां तक कि राजधानी दिल्ली भी बाढ़ की चपेट में है। यमुना का जलस्तर निरंतर बढ़ता और खतरे के निशान को पार करता जा रहा है। इसके कारण हरियाणा के यमुनानगर, करनाल, सोनीपत, पानीपत, फरीदाबाद में बाढ़ को लेकर अलर्ट जारी है।

भाखड़ा बांध का जल स्तर 225 मीटर बनाए रखने के लिए बांध प्रबंधन भारी वर्षा के अतिरिक्त पानी को छोड़ता जा रहा है। इसके कारण पंजाब के आनंदपुर, कीरतपुर, नवांशहर, फिरोजपुर, के नीचे के इलाके बाढ़ की चपेट में हैं। बाढ़ें पहले भी आतीं थीं तथा इक्का-दुक्का बादल पहले भी फटा करते थे। परंतु न तो इनके कारण रहस्यों की परतों के तले दबे थे और न ये बाढ़ें इतनी घातक ही थीं जितनी आज हैं। **कई बार तबाही का कारण बढ़ती जनसंख्या को ही केवल मान लिया जाता है जो लेखक के विचार से ठीक नहीं है। वास्तव में मर्यादा से भटके हमारे कदमों के कारण ही अब गर्मी ऊंचाई के बर्फ से ढके पर्वतों तक यात्रा करती और बढ़ती जा रही है। गंगा, यमुना, सतलुज आदि नदियां इन्हीं ऊंचे हिम शिखरों की ओर से पानी को लेकर आती हैं। इन नदियों के किनारे तथा घाटियों की ढलानों पर विकास की दौड़ के कारण खुदी कच्ची बारीक मिट्टी भरी रहती है।**

उधर पर्वत शिखरों पर जहां पहले केवल बर्फ ही पड़ा करती थी, वहां गर्मी की वर्षा ऋतु में अब पानी बरसने लगा है। गर्मी में बरसते पानी में इन पर्वत शिखरों पर पूर्व में जमी बर्फ को पिघलाने का सामर्थ्य धूप से कहीं अधिक होता है। नदियों किनारे होती वर्षा का पानी तीव्रता से पिघलती बर्फ के पानी तथा घाटी

किनारे उपलब्ध कटी मिट्टी से गठबंधन कर नदियों के जलस्तर को अप्रत्याशित रूप से बहुत ऊंचा उठा देता है जिसके कारण अकल्पित बाढ़ का खतरा मंडराने लगता है। उधर अकुशलता, भ्रष्टाचार तथा योजना निर्माण में कमी के कारण टूटते तटबंध इस खतरे के स्वरूप को और भी घातक बना डालते हैं। इसी प्रकार स्तूपाकार पर्वतों के समीप बादलों की परतों पर एकाएक चढ़ती परतें उन्हें घना कर डालती हैं। उधर खोखली एवं कटी धरती के गर्भ से नकलती अज्ञात गैसें इन्हें ऊंचा उठाती हैं। ऊपर बनते भारी दबाव एवं टकराव के कारण ये बादल एकाएक नीचे आते हैं तथा परस्पर विरोधी विद्युतीय तरंगों एवं ठंडक में टकराने के कारण भारी मात्रा में पानी के रूप में परिवर्तित होकर घरों में लगे परनालों की तरह वर्षा करते हैं। पूरी धरती को नदी नालों का रूप देकर अचानक आई बाढ़ से भारी तबाही कर डालते हैं।

आज हर कहीं घटित होती हर किसी घातक घटना के संदर्भ में विकास, जनसंख्या बढ़ोत्तरी तथा जीवन शैली के कारण की बात, बार-बार दोहराई जाती है। प्रत्येक आपदा में छिपे कारणों का उत्तर देते समय सरकार, देश और यहां तक कि संसार भर के कई विशेषज्ञों के तर्क भी इन्हीं तीन बिंदुओं के इर्द-गिर्द ही घूमते हुए दिखाई देते हैं। उत्तर और समाधान भी नाममात्र के सुरक्षात्मक उपायों तथा रेत के ढेर पर आरूढ़ आशावाद के समिश्रण के साथ जनता को परोस दिए जाते हैं। अब प्रश्न उठ खड़ा होता है कि क्या नई आती इन आपदाओं की तीक्ष्णता के सामने बौने पड़ते ऐसे उपायों में दीर्घकालीन प्रभाव वाली सार्थकता झलक पाएगी? या फिर क्या यह प्रकृति तथा धरती पर जीवन के अस्तित्व के प्रति हमारे बढ़ते हुए अपराधीकरण की कोई विवशता है? 19 अगस्त 2010 को हिमाचल प्रदेश की मंडी के हटनाला में हुई एक ट्रक दुर्घटना में 36 लोग मारे गए तथा 39 लोग घायल हुए। ऐसे आपातकाल में घायलों को तुरंत अस्पताल पहुंचाने, शवों को निकालने तथा शेष बचे लोगों को बचाने के लिए सरकार द्वारा पहले से ही गठित आपदा प्रबंधन के सदस्य भी प्रकाशित समाचार के अनुसार नदारद दिखे। कर्तव्यपरायण पुलिसकर्मी ही केवल बचाव कार्य के इस बोझ को उठाते रहे। आपदा प्रबंधन पर कौन सी ऐसी आपदा उसी समय आ पड़ी थी जिसके कारण वे अपने कर्तव्य के प्रति आपदा के समय तुरंत और तनिक भी संवेदनशील नहीं दिखाई दिये।

26 दिसंबर 2004 को आई सुनामी लहरों के कारण पृथ्वी पर पड़े प्रभाव को भी सुनामी आने से पहले दुनिया भर का कोई सरकारी अमला या अन्य व्यक्ति नहीं बता सका था जबकि पानी के भारी दबाव के कारण पृथ्वी पर पड़ने वाले प्रभाव को भी लेखक ने सुनामी से पूर्व जुलाई तथा अगस्त 2004 में ही उजागर कर दिया था। इसमें पृथ्वी के डगमगाने, इसके ध्रुवों तथा संसार के समय के प्रभावित होने की बात भी प्रकाशित थी जिसके अनेकों प्रकाशित प्रमाण हैं। पृथ्वी पर पानी के स्थानांतरण को लेकर संसार के ख्याति प्राप्त वैज्ञानिकों एवं शोधकर्त्ताओं ने भी बाद में वर्ष 2009 में पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण एवं संतुलन के प्रभावित होने की बात उजागर की है। ऐसा ही कुछ भूकंप से प्राण रक्षा, साक्षरता तथा अन्य कुछ मुद्दों को लेकर भी है। आखिर इन खोजपूर्ण एवं अत्यंत महत्वपूर्ण प्रमाणित बातों का संज्ञान लोगों एवं अन्य देहधारियों के प्राणों की रक्षा के हित में कौन लेगा? क्या हमारी प्रशासकीय या अन्य कुछ प्रणालियां, अकुशलता, पक्षपात तथा अन्याय की भारी चपेट में तो नहीं आती जा रही हैं?

पंजाब केसरी जालंधर 10.09.2010 'संपादकीय पृष्ठ' हिमचाल केसरी धर्मशाला सितंबर 2010 में प्रकाशित

''बाढ़ें, प्रकृति, समाज और सरकार''

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

हम प्रकृति के बीच प्रकृति की एक रचना हैं। पृथ्वी के जिस भू-भाग में हम रहते हैं, वहां की अपरिवर्तनीय प्राकृतिक मर्यादाओं के सम्मान के साथ अपना व्यवहार करना ही हमें सुख-शांति और समृद्ध जीवन की ओर ले जा सकता है। मनुष्य जब-जब प्रकृति की इन मर्यादाओं की अवहेलना करता है या उन्हें चुनौती देता है, तब-तब प्रकृति अपना रौद्र रूप दिखाती है। परिणाम फिर होता है महानाश का विभीत्स तांडव, जो फिर पीछे छोड़ जाता है शवों के कई अंबार। अनेकों घायलों, विधवाओं, अनाथों और बेसहारों की हृदय विदारक चीत्कार। गत 17 जून, 2013 को उत्तराखंड में जगह-जगह बादल फटने के कारण प्रलंयकारी बाढ़ से जान माल की भारी क्षति हुई। वासुक ताल हेमकुंड बद्रीनाथ, केदारनाथ, ऋषिकेश में बाढ़ ने भारी तबाही मचाई। एक लाख से अधिक यात्री, सड़कें बहने के कारण जगह-जगह फंस गए। मरने वालों का सही आंकड़ा तो अभी तक उपलब्ध नहीं है परंतु इनकी संख्या हजारों में है। सड़कें टूटी, घर टूटे, पुल टूटे, गाड़ियां बह गईं, कई टूट गईं। राहत कार्य सेना को संभालना पड़ा। हिमाचल प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों तथा सिरमौर में भी उसी दिन से जारी बारिश से कई जानें चली गईं, सैंकड़ों भेड़-बकरियां तथा मवेशी मारे गए। उत्तराखंड की त्रासदी इतनी व्यापक थी कि इसने पूरे देश को झकझोर कर रख दिया।

प्रधानमंत्री तथा यूपीए अध्यक्षा सोनिया गांधी सहित कई नेताओं ने बाढ़ के कारण बनीं इस विभीत्स आकृति को देखा। इस बार जान-माल की भारी क्षति हुई। परंतु बादल फटने तथा वर्षा के कारण पहाड़ों में आती बाढ़ की घटना कोई नई नहीं है। 31 जुलाई 2000 की आधी रात को सतलुज में बाढ़ से हिमाचल प्रदेश में सैंकड़ों लोग और हजारों पशु मारे गए थे। 16 जुलाई 2000 को कुल्लू के पुलिया नाले में बादल फटने से आई बाढ़ में 50 की प्राण हानि तथा सैंकड़ों मजदूरों के बेघर होने का समाचार आया। 8 अगस्त 2003 को मनाली के समीप कांगनी नाला में आई बाढ़ से कई लोग मरे। 14 अगस्त 2007 को रामपुर के गानवीं गांव के पास बादल फटा। 100 श्रमिकों के मारे जाने या बहने का समाचार छपा। 5 अगस्त 2010 को लद्दाख के लेह में बादल फटने से पूरा लेह कस्बा शमशान में बदल गया। 200 लोग मारे गए और 500 से अधिक अस्पतालों में

भर्ती हुए। 12 अगस्त 2010 को उत्तराखंड के वागेश्वर जिले के सूमगढ़ में बादल फटा इसमें एक विद्यालय का भवन गिरा। 18 बच्चे मारे गए। अगस्त, 2010 को पाकिस्तान में भी बाढ़ से भारी तबाही हुई। संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने उसे पाक के सबसे बड़े संकट की संज्ञा दी। 25 जून 2013 को हिमाचल प्रदेश के मंडी जिला के सराजघाटी के वगस्याड़ में बादल फटने से कई पुलियां तथा बगीचे बह गए। वर्ष 2004 में पारछू नदी में कृत्रिम झील बन जाने से हिमाचल प्रदेश में बाढ़ से जान–माल की क्षति का खतरा मंडराया। परंतु सरकार को आपदा प्रबंधन के लिए लंबा समय मिल गया। बाढ़ आई परंतु क्षति न के बराबर हुई। आपदा को रोक पाना आज के मानव के लिए असंभव है परंतु अपादाएं कम आएं या उनसे हानि कम हो यह असंभव नहीं है।

आपदा प्रबंधन द्वारा इसके प्रभाव को कम किया जा सकता है परंतु यहां पर भी दूर–दृष्टि से काम लेने की आवश्यकता है क्योंक कई प्रकार के आपदा प्रबंधन एक–दूसरी प्रकार की आपदा को भी जन्म दे देते हैं। इससे यह प्रश्न भी तो उठ खड़ा होता है कि आपदाएं यदि बढ़ती गईं, तो सुरक्षा का सफल प्रबंधन हम कहां तक कर पाएंगे? इससे समस्या का सफल हल निकलता दिखाई नहीं देता है। आज इस पर जो मंथन होता है और बहसें होती दिखाई देती हैं, वह कोरे उपदेश और आधे–अधूरे उपायों के प्रचार से आगे नहीं बढ़ पाती हैं। **23 नवंबर 2001 को ''हिमाचली पर्यावरण खतरे की बजती घंटियां'' शीर्षक के अंतर्गत लेखक का एक शोध लेख कई समाचार पत्रों/पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ था। इसमें युवा हिमालय के तर्क को तोड़ते अनेकों कारण गिनाकर इसे समय से पहले बूढ़ा होता करार देकर यहां भविष्य में बाढ़ों द्वारा होती जान–माल की भारी हानि की संभावनाएं व्यक्त की गई थीं। 19 जुलाई 2004 तथा 2 सितंबर 2004 को ''फिर आ सकती है भारी बाढ़'' शीर्षक के अंतर्गत लेखक का एक और शोधलेख कई समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ था।** इन सभी शोध लेखों में हिमालयी क्षेत्र में विनाशकारी बाढ़ों के बार–बार आने की संभावना प्रकाशित की गई थी तथा कई कारण गिनाए गए थे, जिन पर ध्यान देना आवश्यक था और है।

लगता है कि सरकारों और संबंधित विशेषज्ञों ने किन्हीं अज्ञात

कारणों से इन शोध लेखों का संज्ञान शायद नहीं लिया होगा। सुरक्षात्मक उपायों के संज्ञान में पदगत या धनगत अहंकार आड़े नहीं आना चाहिए क्योंकि प्रकृति के रहस्यों को ठीक प्रकार व्यक्त करने में पुस्तकें अधूरी हैं। इन शोध लेखों का यदि कुछ संज्ञान लिया होता,तो संभवतः सावधानी बरती जाती और केदारनाथ-बद्रीनाथ से जुड़े क्षेत्रों में इतनी तबाही नहीं होती, जितनी हो गई। हम समस्या के मूल में छिपे रहस्य को ठीक प्रकार समझे बिना आपदा प्रबंधन को चिरगामी एवं चिरस्थायी नहीं बना सकते हैं। हम पृथ्वी के जिस भू-भाग में हैं, उसके अनुकूल जीवन को ढालें। अंधाधुंध उस क्षेत्र का अनुसरण न करें, जो किसी अलग भू-भाग की प्राकृतिक सीमाओं के अनुकूल है। पर्वतों में पहाड़ सुलभ बनें। भौगोलिक स्थितियों से अधिक छेड़छाड़ न की जाए। पहाड़ों पर आबादी के दबाव को बढ़ने से रोका जाए। इसके लिए मानदंड तैयार किए जाएं। विस्फोटों तथा कंपन उत्पन्न करने वाली ध्वनियों को नियंत्रित किया जाए। सड़क, भवन, परियोजनाएं, वाहनों का दबाव, उद्योग-धंधे सभी कुछ भौगोलिक स्थितियों के ही अनुकूल होने चाहिएं। ऐसे उपायों पर चर्चा के लिए आचरणगत व्यवहार तथा विषय के गहन अध्ययन करने वालों का सहयोग लिया जाना चाहिए। लेखक ने वर्ष 2012 में हिमाचल प्रदेश सरकार को सांख्यिकी विभाग के माध्यम से आपदा प्रबंधन के लिए कारगर सुझाव दिए हैं। परंतु उन पर ध्यान देना या न देना कुशलता, निष्पक्षता की परिधि तथा **सरकार के अधिकार क्षेत्र में हैं। प्रदूषित होती सोच तथा धन संपदा के दबाव से आक्रांत होती समझ के कारण मनुष्य अब एक नए पुनः परिस्थापनहीन आत्मघाती युग में प्रवेश कर रहा है।**

प्रकृति की ममता और अभावों की तपन नहीं जो तपते हैं।
चिंतन कर स्वयं देख लो, पर्यावरण ध्वस्त वही तो करते हैं।

आपका फैसला शिमला 1 अगस्त 2013 संपादकीय पृष्ठ दैनिक जागरण धर्मशाला 03.08.2013 में प्रकाशित

पर्यावरण संरक्षण के लिए घर से शुरू हो वृक्षारोपण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

मानव और पेड़ का संबंध कोई नया नहीं, पुराना है। इतना पुराना कि मानव अपने प्रादुर्भाव के आदिकाल से ही स्वयं को भी पेड़ों ही की छाल और पत्तों से ढका करता था। आज भी पेड़ों को पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में देखा जाने लगा है। वनों में विराजे इन्हीं पेड़ों को वर्षा लाने में सहायक भी माना जाता रहा है। जो भी हो, वृक्षों को लगाने व सजाने का प्रचार-प्रसार एवं महत्व भी कोई नई बात नहीं है। आज वन महोत्सव के महत्व से बहुत लोग परिचित हैं। इसमें किसी की भावना चाहे जुड़े या न जुड़े, परंतु प्रचार और प्रदर्शन तो अवश्य जुड़ ही जाता है। कहीं-कहीं वृक्ष लगाने हेतु वन महोत्सव में भाग लेना भी कुछ लोग अच्छा समझने लग पड़े हैं। फिर चाहे वह इस महोत्सव की सच्ची भावना के साथ हो या अपने अंदर छिपी बंजर होती धरती के प्रति अपने प्रेम की उत्पन्न तरंगों के साथ। हमीरपुर की हाउसिंग बोर्ड कालोनी तो पेड़ों के प्रति हमारे लगाव और उनसे जुड़ती हमारी भावना का जीता जागता उदाहरण है जो भीतर छुपी सच्चाई की कलई खोल जाता है। हाउसिंग बोर्ड कालोनी नगर के पेट्रोल पंप से आगे हमीरपुर-नाल्टी एवं गलोड़ मार्ग के दोनों ओर बसाई गई है। यह बोर्ड अपने आप में सरकारी निर्देशन के अधीन कार्य करने वाली संस्था है। पुरानी कालोनी में कोई इक्का-दुक्का बचा पेड़ ही दिखता है, परंतु नई कालोनी जहां बनाई गई, वहां पहले हरी-भरी दूब के साथ छोटी-छोटी पत्तेदार झाड़ियों और छोटे-मोटे पेड़ों की हरियाली का राज्य हुआ करता था। कालोनी का निर्माण करने वाली संस्था ने बढ़ती जनसंख्या से हमीरपुर की धरती पर पड़ते बोझ को कम करने तथा न्यूनाधिक लाभ के उद्देश्य से जब घर बनाने का काम हाथों में लिया, तो सर्वप्रथम नष्ट हुई थी प्राकृतिक यह हरियाली। घरों की डिजाइनिंग इस प्रकार से हुई कि भविष्य में वहां कोई पेड़ लगाने के लिए पर्याप्त धरती छोड़ी ही नहीं गई। भूमि का कुछ भाग तो घरों की चार दीवारी में समाया, उसका बड़ा भाग कंकरीट और कोलतार की अधजली स्याही के नीचे आया। शेष बचा छोटा सा भाग आधुनिकता की तामझाम के साथ घास की औपचारकि अध सूखी हरियाली के नाम लगा दिया गया। वन महोत्सव की सार्थकता का अर्थ भी छूटा और न ही किसी में पर्यावरण प्रेम की भावना पनपी। मानवीय संवेदना के वीराने के साथ

सुख-सुविधाओं के दर्पण में ढूंढने लगे कुछ लोग वहां जीवन के अशांत होते अर्थों को। पर्यवरण तो छूटा ही पर बच गया शेष कुछ किसी मंच पर प्रदर्शन और वहां बजती तालियों की थपथपाहट और गड़गड़ाहट के लिए। सरकार भी पेड़ों को लगाने के प्रचार-प्रसार में कितने ही साधनों का व्यय कर डालती है। कितने आयोजन किए जाते हैं। परंतु जो काम मात्र दो पंक्तियों के आदेश एवं निर्देश से हो सकता है, उसे न जाने क्यों टाला जाता है और लंबा रास्ता अपनाया जाता है। योजनाकार तथा सक्षम अधिकारी वांछित वैधानिकता पूर्ण करके ऐसी संस्थाओं एवं बोर्डों को निर्देश जारी कर उन्हें घरों एवं प्लाटों की इस प्रकार डिजाइनिंग करने को बाध्य कर सकते हैं, जिससे वहां पेड़ों के लिए भूमि चिन्हित कर दी जाए या किसी कोने पर पेड़ लगा कर घर या प्लाट दिया जाए।

पेड़ पर्यावरण संरक्षण में सहायक सिद्ध होते हैं तथा वनों के समीप वर्षा भी आम तौर पर अच्छी होती है। सरकार ने वन महोत्सव कार्यक्रम कई सालों से शुरू किया है। परंतु उस दृष्टिकोण से इस कार्यक्रम की लोग उपयोगिता नहीं समझ पाए हैं। पर्यावरण की दृष्टि से घर के समीप भी पेड़ों का होना आवश्यक है, जिससे शुद्ध वायु मिल सके।

लेखक पिछले तीन से अधिक वर्षों से लगातार ऐसी कालोनियों की इस कमी को कई मंचों, सेमीनारों अपने प्रकाशित होते लेखों द्वारा उजागर करते रहे हैं तथा पेड़ लगाने पर बल देते रहे हैं। लेखक के ऊंचे इस स्वर को सुनने में हमीरपुर की छोटी इन पहाड़ियों की कर्ण शक्ति तो जवाब सा देती लगती रही। परंतु साथ लगते ऊना तथा बिलासपुर की कर्णशक्ति इस दौड़ में आगे निकल गई, जहां ऐसी कालोनियों में पेड़ लगाने का अभियान हाल ही में मनाए वन महोत्सव में छेड़ दिया गया है।

दिव्य हिमाचल धर्मशाला, हमीरपुर टुडे 22 सितंबर 2003 में प्रकाशित

आंगन से शरू हो स्वच्छता

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

कमर झुकाकर चलने वाले आदि मनुष्य ने वर्तमान युग के इस पड़ाव तक पहुंचते-पहुंचते सीधी होती अपनी कमर का सुख तो भोगा ही। परन्तु भिन्न-भिन्न सभ्यताओं एवं संस्कृतियों सहित पृथ्वी तथा अंतरिक्षीय रहस्यों का जो ज्ञान आज तक उसने अर्जित किया है, वह प्रकृति की स्नेहमयी गोद में उसी के तत्वों के विच्छेदन, आकारात्मक एवं योगात्मक स्वरूप से ही संभव हो पाया है। प्रकृति के रूप स्वरूप की मूल सहायता के बिना मानव कुछ भी कर पाने के लिए समर्थ हो ही नहीं सकता है। हम आज अशांति एवं तनाव सहित अगणित उपजती नित नई बीमारियों के शिकार बहुत कुछ इसलिए भी हो रहे हैं क्योंकि प्रकृति द्वारा मूल रूप में प्रदत्त बहुत सी वस्तुओं के उपयोग-प्रयोग से दूर भागते हम अपने भीतर इन से लोहा लेने की प्रतिरोधात्मक क्षमता को पनपने से रोकते जा रहे हैं। उपयोग-प्रयोग से किनारा फिर चाहे हम बढ़ते अपने भौतिक ज्ञान के कारण करें या फिर घटती पर्यावरण प्रेम की अपनी भावना के कारण, हमारा रुझान आज घरों के समीप साफ-सफाई के नाम पर कच्ची नंगी भूमि छोड़ने से किनारा करने में हैं।

मच्छर-मक्खियों से छुटकारा पाने के बहाने लोग जीवनोपयोगी हरियाली से भी दूर हटते जा रहे हैं। हमीरपुर नगर तो क्या, यहां के कस्बे-कस्बे और गांव-गांव में भी आंगनों सहित फूल-पौधों के लिए बची छोटी-मोटी क्यारियों की भूमि सीमेंट और रेत के घोल से पोती जा रही है। आगे चल कर लोग शायद खेत-खलिहानों को भी पक्का कर कंकरीट के ऊपर फसल उगाने की बात करने लगें। सुजानपुर हो या नादौन, बिझड़ी हो या बड़सर, भोटा हो या जाहू, सब जगह लोगों के मन में जगह पक्की करने और रखने की ललक घर कर गई है। क्यारी-वाटिकाओं से तो लोग गमलों की ओर अब पहुंचते जा रहे हैं और पहुंचते जा रहे हैं गंदगी वाहक मेजों पर सजते प्लास्टिक के बनावटी फूलों की ओर। दूसरे स्थानों की तरह लोग यह भी भूल चुके हैं कि उनके इस प्रकार

के आचरण से वर्षा के पानी के भूमि के भीतर सामाने की संभावनाएं घटती जा रही हैं। प्राकृतिक रूप से खिलते फूलों की भावभीनी गंध और क्यारियों में बढ़ती बलखाती लताओं की हरियाली की आनदंमयी छटा भी हमसे किनारा करती जा रही है। हमारे इस प्रकार के आचार और व्यवहार से आंगनद्वार और क्यारियों के समीप चलने, बढ़ने और खेलने वाले हमारे बच्चों की मांसपेशियां पूरे बल के साथ **विकसित नहीं हो पाएंगी। नंगी धरती के साक्षात्कार से दूर रहने वाले बच्चों में बीमारियों से लड़ने तथा कड़ा संघर्ष करने के लिए प्रतिरोधक क्षमता वांछित स्तर तक पनप नहीं पाएगी। इस समय में, जबकि प्रदूषण बढ़ता जा रहा है, तो फिर वर्तमान अर्थों वाली सभ्यता के कारण इस प्रदूषण का समाना करने के लिए घटती हमारी शक्ति की ओर भी तो ध्यान देने की आवश्यकता है।**

दिव्य हिमाचल धर्मशाला, (हमीरपुर टुडे) 29 सितंबर 2003 में प्रकाशित

कूड़े-कर्कट से ध्वस्त होता पर्यावरण

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

सन् 1960 के दशक में कांगड़ा की एक तहसील के रूप में पहचाना जाने वाला हमीरपुर तब एक गांव के आकार से अधिक कुछ और नहीं था। परंतु एक जिले के रूप में अपना रंग-रूप निखारता तथा अपनी विशेषताओं के कारण विकास के पथ पर सब से आगे दौड़ता, वही हमीरपुर आज एक प्रसिद्ध नगर का रूप धारण करता जा रहा है। बढ़ती जनसंख्या तथा आर्थिक प्रगति से ऊंचे होते सामर्थ्य के कारण गली मोहल्लों तथा सड़कों के किनारे बरसाती कीट-पतंगों की तरह प्रकट होने वाले कूड़े-कर्कट के ढेरों के आकार प्रकार में भी उसी अनुपात से होती वृद्धि नगर परिषद हमीरपुर के लिए भी गंभीर समस्या बनकर खड़ी होती जा रही है। शहर की गंदगी के प्रतिदिन एकत्रित होते ढेरों का मलियामेट करने के लिए दुगनेहड़ी के समीप की जगह जब चिन्हित की गई थी, तो वहां के गांववासियों ने इसका तीव्र विरोध कर गंदगी को किसी दूसरे स्थान पर ले जाने की मांग की थी।

अब लंबलू के समीप स्थान पर नगर की गंदगी को पहुंचा कर वहां उसका मलियामेट करने की योजना को भी वहां के क्षेत्र के लोगों ने विरोध का झंडा दिखाना आरंभ कर दिया है। शहरों में गंदगी पहले भी पड़ती थी और वहां से उठा भी करती थी। छोटे-छोटे पहाड़ी हमारे गांवों तथा कस्बों के लिए समीप का शहर तब पंजाब का होशियारपुर शहर हुआ करता था। बड़ी खरीददारी भी वहीं होती थी और वहां ही के कॉलेजों में पढ़ा करते थे यहां के अधिकतर बच्चे भी। परंतु जनसंख्या तथा इसके घनत्व की तुलना में पड़ती उस समय की उस गंदगी की मात्रा आज कई गुणा बढ़ चुकी है तथा आगे इसमें कई गुणा अधिक वृद्धि हो जाने की प्रबल संभावना है। दिन-प्रतिदिन होती गंदगी में वृद्धि के कारणों पर तनिक सा दृष्टिपात यदि हम करें, तो पता चलता है कि हमारी वर्तमान जीवन शैली तथा सामाजिक दर्पण में अपने चेहरे के रंग-रूप को सबसे अधिक निखरा देखने का जो रुझान हमारे अंदर घर करता जा रहा है, उसके चलते गंदगी के इस प्रकार बढ़ते जाने का प्रवाह अब शायद थमेगा ही नहीं और इसके मलियामेट करने के लिए चुना जाने वाला प्रत्येक स्थान भी बार-बार छोटा पड़ता जाएगा। पहले घरों में निकला करता था कूड़े के रूप में केवल घास-फूस,

कागज फलों के कुछ छिलके आदि। परंतु आज प्रतिदिन सुबह निकलते हैं, प्लास्टिक के हजारों लिफाफे, अंडों के छिलके, गले-सड़े फल-सब्जियां, चाय की पत्ती, कांच, कागज, गत्ता आदि। वह भी कई गुणा अधिक। पहले लोग सामान लाने ले जाने के लिए कपड़े तथा सूती थैलों का प्रयोग किया करते थे, जो लिफाफों से बार-बार पड़ती तथा बढ़ती गंदगी से छुटकारे का स्वयं एक साधन थे। गंदगी जो गलने के योग्य होती थी, उसे लोग स्वयं उस मंजिल तक पहुंचा दिया करते थे।

ऐसे में आज बहुत कुछ हम स्वयं दोषी हैं, गंदगी की इस मात्रा को बढ़ाने तथा इससे फिर छुटकारा पाने हेतु दूसरे निर्दोषों का द्वार खटखटाने के लिए। यह भी तो कैसे उचित और न्यायसंगत कहा जा सकता है कि नगर के लोगों की आरामदारी तथा उनके स्वास्थ्य को यथावत रखने के लिए प्रदूषण की बदबू गांव के सरल सामान्य निर्दोष लोगों के समीप पहुंचा कर, उन्हें सुंघाई जाए। परंतु बढ़ती आर्थिक लालसा की विश्वव्यापी होड़ की जनभीड़ में छोटा सा हमीरपुर नगर उससे अलगाव का रास्ता पकड़ भी कैसे सकता है। इस प्रकार की बनती तथा बढ़ी संस्कृति के लिए विनाश की ओर बढ़ते वर्तमान संसार में शायद अब यह आवश्यक बनता ही जा रहा है कि शहर की इस गंदगी को छिपाने तथा मिटाने के लिए अपने स्वच्छ पर्यावरण एवं स्वास्थ्य के मूल्य पर गांव के ही लोग अब कुछ जगह दें।

दिव्य हिमाचल धर्मशाला 23-29 दिसंबर 2003 में प्रकाशित

खण्ड–9

भारत में किसान, फसलें तथा उनकी स्थिति।
किसान आत्महत्याएं न रुक पाने के उत्तरदायी वास्तविक रहस्यमय कारण एवं व्यवधान।

खेती के प्रति बढ़ती अरुचि।
देश के अर्थतन्त्र के नीति निर्माताओं द्वारा किसानों के प्रति अन्याय एवं बेरुखि के कारणों को उजागर करते लेखक के पूर्व प्रकाशित शोध लेखों का संकलन।

आत्महत्याएं रोकने, न्यायोचित अर्थतंत्र हेतु बनते आयोगों की रूपरेखा तथा संतुलन बैठाने के कारगर एवं प्रभावशाली सुझाव जिनसे
आत्महत्याएं रुक सकती हैं। सुझाव राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री के सचिवालय के समक्ष रख दिए हैं।

कुछ राज्यों द्वारा किसानों की समस्याओं के निदान हेतु किए जा रहे कार्य तथा दिए जा रहे वक्तव्य उन्हीं कुछ सुझावों के अनुरूप दिखाई देते हैं जो लेखक ने 27 मई 2016 को प्रधानमंत्री को भेजे
थे तथा जिन्हें प्रधानमंत्री के कार्यालय ने अपने पत्र दिनांक 23.06.2016 द्वारा कृषि मंत्री भारत सरकार को कार्यवाही हेतु भेज दिया था।

भारत में किसान और उनकी स्थिति

1965 में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्री लाल बहादुर शास्त्री ने देश को **'जय जवान जय किसान'** का नारा दिया था। अब नारे से भी किसान विलुप्त हो गया है। हम और हमारी संस्थाएं उपलिब्धयों के आकलन में निष्ठुर और अन्यायपूर्ण क्यों। जवान को बलवान तो किसान बनाए रखता है। फिर किसान की जय क्यों नहीं? उसकी आर्थिक स्थिति सुधारने हेतु ऊंचा स्वर क्यों नहीं?। सरकार और राजनैतिक दल समाधान पर प्रभावहीन क्यों? मनुष्य चाहे आकाश की गहराईयों को नापता हुआ मंगल या उसके आगे कुछ भेजे या जाए या फिर धरती की गहराईयों की ओर झांके। सीमाओं पर शत्रुओं से लोहा ले या अपने देश के भीतर की आपदाओं से दो–चार हो। कल–कारखानों में उद्योगरत हो या जनसेवा का दम भरने का कार्य करे। उसे इन सभी क्षेत्रों में काम करने हेतु ऊर्जावान एवं हृष्ट–पुष्ट बनाए रखने के कार्य का बोझ किसान ही के कंधों पर टिका है।

यह भी कैसी बिडंवना है कि अरबों लोगों का यह सब बोझ उठाने वाले किसान के कंधे न केवल निर्बल पड़ते जा रहे हैं, अपितु वह सरकार तथा स्वयंसेवी संगठनों की बेरुखी से उपजे शोषण से भी त्रस्त होकर अपने परिवार सहित आत्महत्याएं करने पर विवश है। भारत में इन हृदयविदारक घटनाओं की मुंह बोलती आकृति सबके सामने आ चुकी है। दिल्ली में तो एक किसान ने हाजरों लाखों लोगों की दृष्टि के सामने आत्महत्या कर ली। भारत की सर्वाधिक जनसंख्या कृषि पर निर्भर करती है। परन्तु बाजार से कसान की अपनी उपज का उचित मूल्य न मिल पाने या अन्य कोई आपदा आ जाने के कारण वह आत्महत्या का मार्ग अपनाने लगता है या इस धंधे को छोड़ने पर विवश हो जाता है।

खेती–बाड़ी को भारत में उत्तम धंधा माना जाता था। **जीवन निर्वाह की व्यवस्थाओं में खेती प्रथम स्थान पर थी। दूसरे स्थान पर था व्यापार और तीसरे स्थान पर थी नौकरी। वर्तमान सरकारी नीति के कारण सरकारी तंत्र में नौकरी अब प्रथम स्थान पर है और खेती प्रथम स्थान से तीसरे स्थान पर चली गई है। खेती घाटे का सौदा समझा जा रहा है। यह इसलिए हुआ क्योंकि सरकार तथा राजनैतिक दल नौकरशाहों को राजसत्ता के लिए अपना सहायक मानते हैं और सरकार में जाने पर वे स्वयं भी मोटे वेतन–**

भत्ते आदि लेने लगते हैं। धन की आवश्यकता धनाढय वर्ग पूरी करता है और किसान प्राथमिकता के आवृत से बाहर चला जाता है। कृषि भूमि बंजर पड़ती जा रही है। किसान के भी बीबी बच्चे हैं। उसे भी रोटी कपड़ा, मकान, चिकित्सा, बच्चों का लालन–पालन, शिक्षा–दीक्षा, उनका विवाह आदि करने की आवश्यकता है।

सरकार द्वारा आत्महत्याओं का कारण हर बार ओलावृष्टि, सूखा, बाढ़ या घरेलू समस्या बता दिया जाता है। अनुसंधान रहित सार्वजनिक चर्चाओं का विषय बनाए जाते इन कारणों से किसान के आत्म–सम्मान पर चोट लगती है। वह आत्म–गलानी का शिकार होता है। जनता वास्तविक कारणों से बेखबर रह जाती है। परोपकार से जुड़ी संस्थाएं भी मौन रह जाती हैं क्योंकि किसान असंगठित है। अभावों से ग्रस्त है। हमारा प्रजातंत्र असंगठित लोगों की ओर उतना ध्यान नहीं देता है जितना देना चाहिए।

विभाग भी कभी–कभी आंकड़ों की बाजीगरी द्वारा उत्पादन के आंकड़ों को वास्तविकता के धरातल से दूर और अलग बढ़े–चढ़े दिखा देते हैं। बहुत से धनाढ्य लोग भी आयकर की छूट का लाभ लेने के लिए कृषि उत्पादन के बनावटी आंकड़े दिखाते हैं। ऐसे आचरण से भी किसान की गिरती स्थिति पर परदा पड़ जाता है। कई संस्थाओं के द्रुत अनुमानों के अनुसार पिछले साढ़े तीन वर्षों में लगभग 3200 किसानों ने आत्महत्याएं कीं। वर्ष 2015 में जुलाई 2015 तक लगभग 1450 किसानों द्वारा आत्म हत्याएं किए जाने का अनुमान लगाया गया है। किसी राज्य में तो प्रतिदिन कोई न कोई किसान आत्महत्या करता है।

देश में बाल मजदूरी पर नीति है, बाल–विवाह पर नीति है। दहेज प्रथा पर नीति है। दलित उत्थान के लिए नीति है। गरीबी उन्मूलन के लिए नीति है। परन्तु किसान उत्थान के लिए कोई स्थाई नीति नहीं है। वह मुद्रा स्फीति तथा सरकारी बेरुखी के कारण शोषण का शिकार हैं।

आत्महत्याएं मात्र केवल कर्जा मुआफ करने, अनुदान देने, कर्जा देने या अन्य ऐसी किसी सुविधा देने से नहीं रुक पाएंगी। ये सब अस्थायी उपाय हैं। भारत में किसान तथा छोटा व्यापार धंधा करने वालों की आर्थिक स्थिति अब सरकारी चपड़ासी से भी बदतर हो चुकी है। उनका शोषण होता जा रहा है। सभी ने वास्तविकता पर चुप्पी साध रखी है। उन्हें सर्वजन कल्याण की कम और वोट बटोरने की अधिक चिंता है। दल उन लोगों का ही अधिक ध्यान रखते हैं

जो वोटों को प्रभावित करते हैं।

इसके लिए आवश्यक है कि मुद्रा स्फीति में हो रही बढ़ोतरी, सरकारी अंगों की बढ़ती आय तथा कारपोरेट जगत या अन्य संस्थानों के कर्मचारियों की आर्थिकी की तुला के साथ किसान की आय का अनुपातिक तारतम्य बैठाया जाए। किसान कहां-कहां और क्या-क्या पैदा करे यह परामर्श भी उसे निरंतर दिया जाए। असंतुलित आर्थिक नीतियों का सरकारी वर्ग तथा किसान एवं ऐसे समकक्ष के साथ उचित समानुपातिक संतुलन बैठाया जाये जो इस साक्षी को चरितार्थ करे कि सरकार योग्यता एवं महत्वानुसार सबके साथ न्याय और समान कल्याण के लिए है। **यह निष्पक्ष रूप से तभी संभव होगा जब समय-समय पर आर्थिक लाभ की रूपरेखा बनाने वाले तन्त्र में 70 प्रतिशत से अधिक सदस्य ऐसे सदस्य हों जो सरकार से न कोई स्थाई वेतन लेते हों, न पैंशन और न ऐसा कोई स्थाई लाभ। उन्हें केवल संबन्धित समय का ही अस्थाई लाभ दिया जाए।** किसानों की उपज का तुरंत उचित मूल्य पर क्रय हो। इनकी सहायता के लिए व्यापक आधार वाला किसान विकास बोर्ड बनाया जाए।

इसे खण्ड में संकलित लेखक के पूर्व प्रकाशित लेखों एवं शोध लेखों के साक्ष्यों में वास्तविक स्थिति तथा प्रस्तावित उन स्थाई उपायों का चित्रण है, जो एक ओर या उससे भी आगे नई हरित क्रांति को अच्छी प्रकार मूर्त रूप दे सकते हैं। केन्द्र सरकार, राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री के साथ जारी पत्राचार में लेखक ने ऐसे उन उपायों का उल्लेख किया है तथा उन्हें अपनाने का अनुरोध किया है। यह कुछ संतोष की बात है कि कुछ राज्यों द्वारा किसानों की समस्याओं के निदान हेतु किए जा रहे कार्य तथा दिए जा रहे वक्तव्य उन्हीं कुछ सुझावों के अनुरूप दिखाई देते हैं जो लेखक ने 27 मई 2016 को प्रधानमंत्री जी को भेजे थे तथा जिन्हें प्रधानमंत्री के कार्यालय ने अपने पत्र संख्या PMO PG/2016/0170117 दिनांक 23.06.2016 द्वारा कृषि मंत्री भारत सरकार को भेज दिया था। **संबंधित प्रमाण चित्रित कर दिए गए हैं।**

आचार्य रत्न लाल वर्मा

(साहित्य श्री, आचार्य, काव्य वैभव, हिन्दी भूषण,
मणिरत्नम, शताब्दी रत्न, पदम श्री डॉ लक्ष्मी नारायण
दुब स्मृति सम्मान, हिन्दी रत्न, पर्यावरण रत्न, राष्ट्र सचेतक
राव वृक्ष बेनीपुरी जनशती सम्मान, सर्वश्रेष्ठ लेखक
हिमाचलश्री (पर्यावरण पुरस्कृत), रोटरी अवार्ड, (पर्यावरण), सुभद्रा कुमारी चौहान जनशती सम्मान,
हिमाचल केसरी तथा अन्य सम्मानोपाधियों से अलंकृत)
प्रान्तीय अध्यक्ष जैमिनी अकादमी, हिमाचल प्रदेश शाखा प्रदेश की एक स्वयंसेवी संस्था की एक समिति के अध्यक्ष
पूर्व प्रधान जिला लोक साहित्य एवं कला परिषद हमीरपुर तथा चार अन्य संस्थाएं।

क्षेत्रीय अस्पताल के सामने वार्ड न.5
हमीरपुर (हि०प्र०)
ACHARYA RATTAN LAL VERMA
Ward No. 5, Opp. Zonal

SP HAMIRPUR SORTING
EE73656
Counter No:1,OP-Code:
To:PRIME MINISTER OF INDIA
DELHI, PIN:
From:RATTAN CHAND
Wt:40grams,
PS:40.00, 27/05/2016
Taxes:Rs.5.
भारतीय डाक
India Post

क्रमांक 2517 स्पीड पोस्ट

प्रतिष्ठा में

माननीय प्रधानमंत्री महोदय जी,
भारत सरकार, नई दिल्ली।

विषय:– **किसान आत्म हत्याएं, कारण, उपाय तथा एक और हरित क्रांति।**

महोदय,

वास्तव में मुद्रा स्फीति में होती लगातार वृद्धि तथा दूसरे वर्गों के सामान्य लोगों की आय में होती एवं की जाती निरंतर भारी वृद्धि के मुकाबले में किसान को बाजार से मिलने वाली उसकी उपज के मूल्य का तारतम्य बैठाया जाना चाहिए। क्योंकि बाजार से किसान को भी अन्य वे आधारभूत वस्तुएं क्रय करनी तथा सेवाओं का वह मूल्य देना ही पड़ता है जो भारी वृद्धि वाली आय प्राप्त करने वाले अन्य सामान्य लोगों को देना पड़ता है।

कभी–कभार कर्जा मुआफी तथा छोटा मोटा अनुदान देने से किसानों की समस्या का स्थायी समाधान नहीं हो पाएगा। ऐसा भी लगता है कि बाढ़, सूखा, अतिवृष्टि एवं ओलावृष्टि आदि कारणों में निरंतरता शायद नहीं बनी रहती है जबकि किसानों की समस्याएं निरंतर जारी हैं। जिसके कारण किसान भूमि को बंजर छोड़कर कोई दूसरा धंधा अपनाने लगते हैं या फिर परिवार सहित या अकेले आत्म हत्या करने का मार्ग अपनाने की दिशा में बढ़ने लगते हैं।

किसानों के जिस घर में अन्य स्त्रोतों (वेतन, मजदूरी, पैंशन या अन्य धंधों) से नकद आमदनी नहीं है, उन किसानों की आत्म हत्याएं उपज बढ़ाने वाले अन्य तरीकों से भी तब तक शायद ही रूकेंगी, जब तक उनकी उपज का बाजार से उतना मूल्य नहीं मिल जाता है जितना अन्य सामान्य वर्ग की आय के साथ तारतम्य बैठाने के लिए उचित हो, जिससे उनका भरणपोषण (भोजन, कपड़ा, मकान, बच्चों का लालन–पालन, शिक्षा और उनका विवाह आदि) सामान्य ढंग से हो सके।

मैं किसानों की समस्याओं से संबंधित कुछ कारणों तथा समाधान के उपायों को उजागर करते समाचार पत्रों में प्रकाशित अपने निम्नलिखित लेखों की छाया प्रतियां भी अवलोकन हेतु संलग्न कर रहा हूं।

1.	एक और हरित क्रांति की आवश्यकता है	दैनिक जागरण 17.08.2006	(सम्पादकीय पृष्ठ)
2.	संकट में दाल उत्पादन	दैनिक जागरण 01.07.2009	(सम्पादकीय पृष्ठ)
3.	उपेक्षित किसान, आर्थिक असंतुलन और महंगाई	दैनिक जागरण 28.03.2011	
4.	आर्थिक संतुलन के लिए नीति निर्धारण हो	दैनिक जागरण 29.11.2011	
5.	किसान आत्म हत्याएं व एक और हरितक्रांति	हिमाचल दस्तक 11-7-2015	(सम्पादकीय पृष्ठ)

इसके लिए एक ऐसा तंत्र एवं प्रणाली विकसित करने की आवश्यकता जो अन्य समकक्ष वर्गों के आर्थिकी की तुला पर किसान का संतुलन बैठाए। यह कार्य किसान विकास बोर्ड या अन्य कोई संस्थान बना कर किया जा सकता है। यह कार्य अन्य वर्गों की बढ़ती आय को ध्यान में रखकर मोटे अनाजों तथा ऐसी अन्य फसलों के न्यूनतम मूल्य को निर्धारित करके किया जा सकता है। किसान किन–किन क्षेत्रों या प्रदेशों में कब कब और क्या–क्या पैदा करे यह परामर्श भी उसे दिया जाना चाहिए। मैंने सभी बिंदुओं को अपने उपरोक्त प्रकाशित लेखों में उजागर किया है।

अतः महोदय जी से अनुरोध है कि समूचे पर्यावरणीय परिदृश्य के हित में किसानों की समस्याओं के मूल कारणों को दूर करने हेतु आवश्यक निर्देश देने की अनुकंपा करें, ताकि उनकी आत्महत्याओं को रोका जा सके और 1965 के जय जवान के एकल नारे से विलुप्त जय किसान को पुर्नजीवन मिल सके।

धन्यवाद।

भवदीय
27-5-2016
आचार्य रत्न लाल वर्मा

संलग्न – यथोपरि

प्रधान मंत्री कार्यालय

Prime Minister's Office

नई दिल्ली- 110011
New Delhi- 110011

Sub:Petition of SHRI ACHARYA RATAN LAL VERMA
WARD NO 5 OPP ZONAL
HOSPIATAL
HAMIRPUR
HIMACHAL PRADESH

A letter/gist of oral representation dated 27/05/2016 received in this office from SHRI ACHARYA RATAN LAL VERMA is forwarded herewith for action as appropriate. Reply may be sent to the Petitioner and a copy of the same may be uploaded on the portal.

[Alok Suman]
Section Officer

SECRETARY DEPARTMENT OF AGRICULTURE, COOPERATION AND FARMERS WELFARE

A letter/gist of oral representation dated 05/01/2017 received in this office from SHRI ACHARYA RATTAN LAL VERMA is forwarded herewith for action as appropriate. Reply may be sent to the Petitioner and a copy of the same may be uploaded on the portal.

[Alok Suman]
Section Officer

SECRETARY,DEPARTMENT OF AGRICULTURE, COOPERATION AND FARMERS WELFARE

PMO ID No.:PMOPG/D/2017/0026980 Dated: 17/01/2017

अमर उजाला 30 जुलाई 2016 तथा दि० सवेरा

किसानों के लिए पॉलिसी की जगी उम्मीद

कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग को निर्देश

आचार्य वर्मा ने राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री को लिखा था पत्र

हमीरपुर। अच्छी पैदावार न होने और उपज का न्यूनतम मूल्य न मिलने पर आत्महत्या के मामलों में लगातार हो रही वृद्धि पर आचार्य रत्न लाल वर्मा ने गहरी चिंता जताई है। वर्मा ने किसानों की समस्या को गंभीरता से लेने और उनके लिए ठोस नीति बनाने के लिए राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को पत्र लिखा है। आचार्य वर्मा का पत्र मिलते ही राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री कार्यालय से कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग को उचित कार्यवाही के निर्देश जारी हुए हैं। इससे अब देश के किसानों के लिए नीति बनने की उम्मीद जगने लगी है। पद्म श्री लक्ष्मी नारायण, साहित्य श्री, हिंदी रत्न अवार्ड से सम्मानित आचार्य रत्न लाल वर्मा हमीरपुर के वार्ड नंबर पांच के रहने वाले हैं। वह समय-समय पर किसानों की समस्याओं को हर मंच पर उठाते आए हैं। इससे पहले वह फसलों को बंदरों से बचाने के लिए जंगलों में बंदर नसबंदी केंद्र खोलने, वन वाटिका लगाने और भूकंप की दृष्टि से सुरक्षित मकान बनाने के मुद्दे सरकार के समक्ष उठा चुके हैं। अब उन्होंने किसानों के मुद्दे को राष्ट्रीय स्तर पर उठाया है। उन्होंने किसानों के लिए फसलों का उचित मूल्य निर्धारित करने, अनाज भंडारण की व्यवस्था, मौसम और भूमि के हालात को ध्यान में रखकर सरकार से उचित नीति बनाने की मांग की है। इस मौके पर उनके साथ पूर्व सैनिक मान चंद, हरि राम, बालक राम और सालिग राम समेत अन्य भी मौजूद रहे। ब्यूरो

अब सचिवालय से डायरेक्ट कॉल

Proclamation under Order 5, Rule 20, CPC

गेहूं तथा धान की फसल इसी शताब्दी में लुप्त हो जाएगी

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

वर्तमान मानवीय सभ्यता के उत्कर्ष से पहले भी हरी भरी थी यह धरती। यही नहीं हरियाली की यह गहराई आज की अपेक्षा पहले कहीं अधिक ही रही होगी। फिर बढ़ती गई जनसंख्या और साथ बलवती होती गई असीमित सुख साधन पाने की इच्छा भी। इस प्रकार आरंभ हुआ समय, सीमित धरती से बढ़ती उपज पाने की असीमित अभिलाषाओं की पूर्ति के लिए और भावी दुष्परिणामों से बेखबर लगा घुलने जहर मिट्टी के कण-कण को विषैला बनाने के लिए।

हिमाचल प्रदेश तथा इसके साथ सटे अन्य राज्यों के बहुत से किसानों में अभी भी लाखों ऐसे जीवित होंगे, जिन्होंने अपने खेतों में पहले पैदा होती दालों की मात्रा तथा आज उन्हीं खेतों में उपजाती उन्हीं दालों की मात्रा में भूमि आकाश का अंतर तो देख ही लिया होगा। दालों की उन फसलों की अथाह पैदावार की आकृति आज भी लेखक के मानस पटल पर उभर जाती है जब 50-60 वर्ष पूर्व खेतों में चना, उड़द, मसूर और कुल्थी की भरपूर फसल हुआ करती थी। मक्की के खेतों में गुड़ाई होती थी उस समय दो या तीन बार।

तब उड़द तो मक्की लगे खेत में बीजे जाते थे और उसके साथ भरपूर फसल दे जाया करते थे। जिन खेतों में किसी कारण गेहूं का उत्पादन कम होने का अनुमान होता था वहां गेहूं तथा चना मिलाकर बीजा जाता था। इस मिश्रण को बेरड़े के नाम से पुकारा जाता था और फसल फिर होती थी भरपूर। उड़द तथा चने का मूल्य तो इनकी भारी पैदावार के कारण प्रति मन गेहूं के मूल्य से भी नीचे गिर जाया करता था। सन् साठ के दशक की बात है जब गेंहू का मूल्य था चार रुपये प्रति कच्चा मन (आज का लगभग 15 कि.ग्रा.) और उड़द की दाल का उस समय मूल्य था तीन रुपये प्रति कच्चा मन।

उस समय हिमाचल प्रदेश सहित पंजाब तथा हरियाणा में न तो रासायनिक खाद का प्रयोग होता था और न जहरीला घोल ही फसलों पर छिड़का जाता था। कृषि के लिए लोग निर्भर रहा करते थे उन्हीं परम्परागत पुराने तरीकों पर। फसल बढ़ाने के लिए समझी जाती थी पशु धन की उपयोगिता। बनती और पड़ती थी

गोबर की खाद। फसल को बीमारियों से बचाने के लिए भी किसान पुराने उपायों पर निर्भर रहा करते थे। खेती के पुराने उन तरीकों में ही थे, दालों की इन फसलों के प्राण। उस समय कुल्थी तो खरपतवार के बीच बिना खाद भी हो जाया करती थी। दालों की ये फसलें अब कहीं कहीं तो लुप्त प्राय हो चुकी हैं और कहीं बहुत ही कम रह गई हैं। इसलिए इन्हें बोने में लोगों की रुचि भी कम हो गई है। परन्तु बढ़ते जनभार के कारण मांग तो इनकी बढ़ती ही जाएगी। आज खेतीबाड़ी के तरीकों में सम्मिलित हैं ट्रैक्टर, रासायनिक खादें, जहरीले घोल तथा आगे कुछ और भी। जबकि पहले उत्पादन वृद्धि हेतु वस्तुएं अपने प्राकृतिक एवं मूल रूप में ही प्रयोग में लाई जाती थीं। परन्तु आज इतने पर भी विकास के झंडे को ऊंचा उठाते प्रौद्योगिक उपकरण, कई प्रकार की रसायनिक खादें तथा घोल दालों की इन फसलों को बढ़ाने की अपेक्षा इन्हें कम करते ही दिखाई देते प्रतीत होते जा रहे हैं।

इस प्रकार उन्नति का ऊंचा झंडा दीमकनुमा अदृश्य किसी बीमारी से भी प्रभावित होता जा रहा है। विकास के मार्ग **की अनियन्त्रित होती गति द्वारा चांद तथा मंगल पर अपना बसेरा ढूंढने से पहले हमारे संग संग चलती अवनति की काली छाया से भी हमें सावधानी की आवश्यकता है। जीवन रक्षक पर्यावरण को बचाने के लिए मिलती असफलता से ऐसा भी संभव हो सकता है कि इसी शताब्दी में धरती गेहूं और धान की उपज से जबाब दे जाए।**

दैनिक जागरण जालंधर 25 सितंबर 2003 (पंजाब तथा हि.प्र. में प्रसारित)

एक और हरित क्रांति की जरूरत

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

हमें पृथ्वी पर जीवन के सूत्रपात तथा उसे निरंतर संवेदनशील एवं गतिशील बनाए रखने के लिए सुरख लाल रक्त का प्रवाह ही अधिकतर दिखाई देता है। रक्त के इस प्रवाह के निर्माण के लिए जिस पदार्थ एवं सामग्री की आवश्यकता पड़ती है उसके बीज हरितिमा के आवृत में ही प्रस्फूटित होते हैं। चावल हो या गेंहू, मक्की हो या चना, उड़द हो या अन्य दालें हों, या फिर भिन्न-भिन्न रूप रंग, आकार प्रकार और स्वाद के फल हों, सभी के सभी हरितिमा के पुट की ऊर्जा में विकसित होकर ही हमें मिलते हैं।

पिछली शताब्दी में जैसे-जैसे जनसंख्या में बढ़ोतरी होती गई, वैसे वैसे खाद्य सामग्री में कमी भी अनुभव होती गई। सरकारों तथा लोगों का ध्यान इस ओर अधिक गया। कृषि विभाग तथा इससे संबंधित संस्थानों का विस्तार हुआ। खाद्य सामग्री की आवश्यकता को पूरा करने के उद्देश्य से थोड़ी भूमि से अधिक उपज लेने के लिए खेतीबाड़ी के तौर-तरीकों को सुधारा जाने लगा। हमारे देश में भी हरित क्रांति का बिगुल बजा। खेतों और खलियानों में अधिकाधिक उपज लेने के लिए युद्ध स्तर पर काम होता गया। खेती के अधीन बढ़ती भूमि के साथ-साथ वर्ष भर ली जाने वाली फसलों की संख्या तथा प्रति बीघा या हैक्टेयर की उत्पादन मात्रा भी बढ़ती चली गई। सरकारी तंत्र द्वारा खेतीबाड़ी के आधुनिक तरीकों को अपनाए जाने के लिए होते प्रचार से प्रोत्साहित किसानों ने रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों का जमकर प्रयोग किया। हरित क्रांति ने अपना रंग दिखाया। अन्य कई देशों की तरह हमारा देश भी खाद्यान्नों के मामले में आत्मनिर्भर हो गया। नई खादों तथा आधुनिक तरीकों के आगे परंपरागत खादें तथा खेतीबाड़ी के पुराने ढंग बौने पड़ गए। किसान उन्हें अधिक उपज के लालच के कारण कम पसंद करने लगे।

हिमाचल प्रदेश में भी हरित क्रांति ने अपना मील पत्थर स्थापित किया। कृषि विश्व विद्यालय खुला। बागवानी विश्वविद्यालय भी खुला। कृषि तथा बागवानी का आलोक पालमपुर तथा सोलन से पूरे प्रदेश में फैलने लगा। इसके प्रकाश तथा संबंधित विभागों के विस्तार ने प्रदेश में अनाज, दालों तथा फलों की पैदावार को आश्चर्यजनक ढंग से बढ़ा दिया। अनाज, दालों तथा सब्जियों के लिए प्रदेश के

लोगों की दूसरे पड़ोसी राज्यों पर निर्भरता कम हो गई। सेब तथा अन्य कुछ फलों में भी कई गुना बढ़ोतरी हुई।

इतने पर भी खाद्यान्नों तथा दालों की उपज के प्रकाशित आंकड़ों पर हम दृष्टिपात यदि करें तो वे उत्साहवर्धक नहीं लगते हैं। वर्ष 2005-06 के आर्थिक सर्वेक्षण में गेहूं के आंकड़े इस प्रकार हैं-वर्ष 2001-02 में 637.07 हजार टन, 2002-03 में 495.56 हजार टन, 2003-04 में 496.93 हजार टन, 2004.05 में संभावित 682.00 हजार टन।

चावल वर्ष 2001.02 में 137.42 हजार टन, 2002.03 में 85.65 हजार टन, 2003-04 में 120.62 हजार टन तथा 2004-05 में सभावित 100 हजार टन दिखाए गए। दालों के उत्पादन की स्थिति इस प्रकार है-वर्ष 2001-02 में 9.45 हजार टन तथा 2003-04 में 9.80 हजार टन तथा वर्ष 2004-05 में संभावित 17.50 हजार टन।

आज से लगभग 60 वर्ष पूर्व जब खेतीबाड़ी के आधुनिक तरीकों तथा रासायनिक खादों का प्रचलन नहीं था तो यहां की परंपरागत दालों तथा चनों के बीजों से भारी पैदावार हुआ करती थी। इनकी अत्याधिक पैदावार के कारण ही कागड़ा, हमीरपुर, ऊना आदि ज़िलों के क्षेत्रों में दालों का मूल्य गेहूं और धान से भी कम हुआ करता था। परंपरागत उन बीजों की दालों तथा चने की फसल, गोबर की कम खाद या उसके बिना भी भरपूर हो जाया करती थी। परंतु आज फसल उतनी नहीं होती है। यहीं नही परंपरागत दालों तथा चने के बीज भी किसानों के पास कम ही हैं। आज जिन बीजों का प्रयोग हो रहा है वे उन्नत प्रकार के हैं। यही नहीं सरकारी क्षेत्र के संबंधित कुछ अधिकारी अपनी प्रारंभिक पढ़ाई तथा जीवन के प्रारंभिक वर्ष दूसरे राज्यों में बिताने के कारण इस प्रदेश की स्थानीय परंपरागत पुरानी फसलों तथा फलों का गूढ़ ज्ञान रखने तथा उसका प्रदर्शन करने में कभी-कभी असमर्थ से भी लगने लगते हैं।

यह भी किसी विडंबना से कम नहीं है कि कई बार कुछ विशेषज्ञ या अधिकारी किसानों या पर्यावरण से जुड़े लोगों द्वारा **बताई फसलों से संबंधित नई-नई समस्याओं तथा समाधानों पर इसलिए भी पर्याप्त ध्यान नहीं देते हैं क्योंकि उन्होंने उस प्रकार की समस्याओं व समाधानों को पुस्तकों में पढ़ा नहीं होता है या उनका अनुभव वैसी समस्या के**

आवृत से बाहर रहता है। ईर्ष्यालू मानसिकता के कारण भी क्षेत्र, प्रदेश, देश और संसार पर्यावरर्णीय कुछ समस्याओं के तुरंत समाधान में पिछड़ता जा रहा है।

हिमाचल प्रदेश के वन विभाग द्वारा प्रकाशित वन संदेश के जुलाई–सितंबर 2003 के अंक में लेखक ने खाद्यान्नों की घटती गुणवत्ता तथा उनमें प्रवेश करते जहरीले तत्वों को उजागर किया था। **हमारी भूमि हमारा भविष्य नामक इस लेख में फसलों के भविष्य को जोखिम भरा करार दिया था। हिमाचल प्रदेश की परंपरागत कुछ दालों की फसलों की उपज में भारी गिरावट को उजागर करता 25–09–2003 के दैनिक जागरण में प्रकाशित लेखक का शोध लेख गेहूं तथा धान की फसल के अस्तित्व के आगे तक बने रहने पर भी प्रश्नचिन्ह लगाता है।**

अब तो मार्च 2006 में कानपुर में किए गए शोध में भी खुलासा हुआ है कि खाद्यान्नों में घातक तत्व मिल गए हैं। सीएमए वैज्ञानिकों को गेहूं के आटे की जांच में बायोरेट और कलोरोवैजीन सरीखे तत्व मिले हैं। लंबे समय तक इनका प्रयोग जानलेवा हो सकता है। उत्तरांचल की जैव उत्पादन परिषद की इस वर्ष जारी रिपोर्ट में भी इस तथ्य को उजागर किया गया है कि खाद्यान्नों तथा सब्जियों में विटामिनों की मात्रा 1900 के मुकाबले अब लगभग 40 प्रतिशत से लेकर 90 प्रतिशत तक कम हो चुकी है। कई घातक तत्व भी हमारी इस खाद्य सामग्री में प्रवेश कर चुके हैं।

रासायनिक पदार्थों के अधिक प्रयोग द्वारा बनावटी पुट वाली हरित क्रांति से मिलते उत्पादन से न तो जीवन सुरक्षित होगा और न मृदा ही। बनावटी इस रुझान के कारण हमारे देश में पशु भी प्रतिवर्ष लगभग 7 प्रतिशत की कुछ कम दर से घट रहे हैं।

सुरक्षित भोजन के लिए हमें पशु धन की आवश्यकता समझनी होगी। हिमाचल प्रदेश के साथ–साथ पूरे देश में पुराने कुछ तौर तरीकों के साथ एक नई हरित क्रांति की तुरंत आवश्यकता है। जिसमें गोबर तथा पत्तियों की खाद का प्रयोग हो। **अन्यथा अनाज तथा दालों की फसलें इसी शताब्दी में लुप्त हो जाएंगी।**

दैनिक जागरण धर्मशाला (संपादकीय पृष्ठ 6) 17 अगस्त 2006 में प्रकाशित

लुप्त हो जाएगा गेहूं

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

विराट् प्रकृति की असीम ऊर्जा ने हमारे ब्रह्मांड का निर्माण किया। इसी ब्रह्मांड के एक महत्वपूर्ण अवयव के रूप में पृथ्वी अस्तित्व में आई। हमारे यहां आने से पहले ही पृथ्वी पर प्रकृति ने वे सभी वस्तुएं उपलब्ध करवा दी थीं जो हमारे आहार के लिए अनिवार्य थीं। उस आहार के निर्माण का चक्र प्रकृति द्वारा आज भी जारी है। भले ही हम अपने भरण पोषण की आवश्यकताओं के साथ-साथ बढ़ते लालच की असीम प्यास को बुझाने के उद्देश्य से धरती की उर्वरा शक्ति का अधिक दोहन करने के लिए मृदा को पुष्ट करने वाले उस वास्तविक प्राकृतिक चक्र को विपरीत रूप में प्रभावित करने में लगे हैं।

बढ़ती जनसंख्या के दैत्य को मात देने के लिए हमने खाद्यान्नों को बढ़ाने के तौर तरीके तो खोज निकाले परंतु इस प्रकार बढ़ती पैदावार की पौष्टिकता पर हमने ध्यान नहीं दिया। यही नहीं, इन नए अपनाए जाते उपज बढ़ाते खेती के ढंगों द्वारा मिट्टी तथा मानवीय स्वास्थ्य पर पड़ने वाले विपरीत प्रभाव पर भी हम नहीं गए। हम असीम प्रकृति के विराट आवृत में क्रियाशील अपनी धरती के सामर्थ्य को जानने तथा उसके साथ अपने संबंधों को समझने एवं उन्हें बनाए रखने में भी अधिक सफल नहीं हो पाए। **अपने अहं की पूर्ति तथा प्रकृति के साथ टूटते अपने संबंधों के कारण हमने उन कुछ लोगों के अनुभव और ज्ञान से लाभ उठाना भी मात्र इसलिए उचित नहीं समझा क्योंकि किसी विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में वह सब सम्मिलित नहीं था। पर्यावरण के प्रति अपने अल्पज्ञान के कारण हमसे उपयोगी वह मार्ग छूटने लगा है जो जीवन के लिए आवश्यक है।** उन्हीं कुछ तथ्यों के गुण दोष के आधार पर हम हिमाचल प्रदेश तथा इसके पड़ोसी प्रदेशों की कुछ फसलों की उपज की मात्रा का आंकलन करते हैं। पंजाब में वर्ष 2001 में प्रति हेक्टेयर 4563 किग्रा गेहूं का उत्पादन हुआ। 2002 में यह उत्पादन 4532 किग्रा, 2003 में 4200, 2004 में 4207, 2005 में 4221 तथा 2006 में यह उत्पादन 4200 किग्रा के आसपास बताया गया है। प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार गेहूं की प्रति हेक्टेयर गिरती उपज का ऐसा ही रुझान हरियाणा में भी पाया गया है। वहां सन 2000 में 4165 किग्रा प्रति हेक्टेयर गेहूं की पैदावार आंकी गई जो 2005 तक

घटते–घटते 3900 किग्रा प्रति हेक्टेयर तक पहुंच गई। इसी प्रकार हिमाचल प्रदेश में वर्ष 2001–2002 में गेहूं का कुल उत्पादन 637.07 हजार टन हुआ। वर्ष 2002–03 में 495.56 हजार टन, 2004–05 में लगभग 687.45 हजार टन तथा वर्ष 2005–06 में 550 हजार टन गेहूं होने का अनुमान है। विश्वव्यापी गर्मी के बढ़ने तथा इसके समय के पीछे सरकने के कारण गेहूं की पैदावार में कमी का रुझान बेरोक–टोक जारी है। फरवरी मास में मैदानी क्षेत्रों में गेहूं की बालियों में पड़ता सफेद दूधिया रस बढ़ती गर्मी के कारण शीघ्र सूख कर दाने का रूप ले लेता है। इसके कारण गेहूं का दाना कमजोर पड़ कर भार में कमी कर देता है।

हिमाचल प्रदेश जैसे ठंडे प्रदेश में भी गेहूं के उत्पादन के आंकड़े उत्साहवर्धक न होकर आश्चर्य चकित करने वाले ही लगते हैं।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के महानिदेशक का कहना है कि तापमान बढ़ने के कारण गेहूं पकने लगा है और उसका वजन घटने लगता है। 2004 तथा 2006 में 40 लाख टन गेहूं का कम उत्पादन हुआ। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट में कहा गया है कि अगली शताब्दी तक तापमान में 4.4 से 5.8 प्रतिशत तक की वृद्धि हो जाएगी। **गर्मी के बढ़ जाने से खेती में गिरावट आती जाएगी। संसार के लगभग 40 करोड़ लोग भुखमरी का शिकार हो सकते हैं। अरबों लोगों को शुद्ध पानी मिल पाना भी कठिन हो जाएगा।**

देश की 75 प्रतिशत जनसंख्या खेती पर निर्भर है इस प्रकार मतदाताओं का एक बड़ा वर्ग किसानों का है। परंतु बढ़ते परिश्रम और उपज के गिरते मूल्य से घटते पारिश्रमिक के कारण किसानों की अगली पीढ़ी किसान बनना कम पसंद करने लगी है। अंतर्राष्ट्रीय खाद्यान्न परिषद (आईजीसी) ने पूरे संसार के लिए 2006–07 के लिए 58 करोड़ टन गेहूं का उत्पादन होने का अनुमान लगाया है। इस अनुमान के अनुसार 2005–06 के उत्पादन की तुलना में 3 करोड़ 10 लाख टन गेहूं का कम उत्पादन होगा।

लोग खेती–बाड़ी में अपनी रुचि बनाए रखें इस दिशा में हिमाचल प्रदेश सरकार ने प्राकृतिक आपदाओं द्वारा होती फसलों की हानि की भरपाई के लिए नया राहत मैनुअल जारी किया है। 15.03.2007 को प्रकाशित समाचार के अनुसार फसल नष्ट होने पर किसानों को नकद सहायता राशि दी जाएगी। 300 से लेकर 500 रु. प्रति बीघा तक मुआवजा मिलेगा, जिसकी अधिकतम सीमा

7000 रुपए प्रति परिवार होगी। सूखे में पशुओं के चारे के लिए भी सहायता राशि दी जाएगी। **इन उपायों से क्षणिक लाभ तो हो सकता है। परंतु दीर्घकाल तक ये उपाए फसलों को नहीं बचा सकते हैं। क्योंकि फसलों की घटती उपज के लिए मुख्य कारण श्रम न होकर जलवायु में परिवर्तन, प्रति इकाई अनोपयुक्त मूल्य तथा उससे संबंधित काल में पड़ता अंतर है। यह अंतर गिरते मानवीय आचरण तथा बढ़ते प्रदर्शन के कारण है। हम वास्तव में मनुष्य को ऊँचा जीवन जीने की कला न सिखाकर उसे मात्र आर्थिक सामर्थ्य की बढ़ोतरी करना सिखा रहे हैं। लेखक ने स्वयं हिमाचल प्रदेश सरकार के वन संदेश के दिसंबर-जुलाई 2003, दैनिक जागरण 25.09.2003, फरवरी 2006 और अगस्त 2006 के अंक में प्रकाशित अपने लेखों में गेहूं की फसल के लुप्त हो जाने की आशंका व्यक्त की है।** मात्र सेमिनार करने या प्रचार करने से पर्यावरणीय समस्याओं का **उस समय तक ठोस और चिरस्थायी हल नहीं निकल सकता है जब तक हम अपने रहन सहन और विचारों में सदागी नहीं अपनाते हैं। ऐसा न हुआ तो शीघ्र इसी शताब्दी में ही हमारी पृथ्वी अन्न उगाने से जवाब दे जाएगी और यह शताब्दी पृथ्वी पर मानवीय जीवन की अंतिम शताब्दी बन जाएगी।**

दैनिक जागरण धर्मशाला (संपादकीय पृष्ठ) 12 अप्रैल 2007 में प्रकाशित

संकट में दाल उत्पादन

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

आदिकाल से पृथ्वी पर अपना जीवन यापन करने वाले जीव जगत के अवयव थलचर, नभचर, जलचर आदि जीव हैं। मनुष्य सहित जीव-जाति के इन सभी वर्गों के लिए भोज्य पदार्थों की श्रृंखलाएं भी अलग-अलग ही हैं। ये श्रृंखलाएं सभी वर्गों के जीव जंतुओं के लिए प्रकृति प्रदत मर्यादाओं के अनुरूप हैं। इनमें सम्मिलित भोज्य पदार्थों की पहचान करने के लिए जीवों के रंग रूप और आकार-प्रकार पर एक विश्लेषणात्मक एवं अन्वेशणात्मक दृष्टि डालनी पड़ती है। ऐसा कर हम समस्त जीव-जगत को शाकाहारी और मांसाहारी दो श्रेणियों में विभाजित करते हैं। इस दृष्टि से मनुष्य शाकाहारियों की पंक्ति में खड़ा प्रतीत होता है। इसलिए अधिकतर मोटे अनाज, दालों, दूसरी फसलों एवं पेड़-पौधों के विकास द्वारा उसके जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहती है। इस प्रकार प्रकृति के बीच प्राकृतिक अवयवों की सहायता से उन्हें हानि पहुंचाए बिना मनुष्य शरीरिक और मानसिक परिश्रम के साथ अपने जीवन की गाड़ी को उस शांति के साथ चलाता रहा है जो आज लाख सुविधाएं होने पर भी दुर्लभ बनती जा रही हैं।

प्राकृतिक मर्यादाओं की अवहेलना से प्रभावित रहन-सहन के मानवीय तौर तरीकों से आज स्वास्थ्य पर इतना दुष्प्रभाव पड़ता जा रहा है कि जन्म से लेकर मरण तक दवाइयों के सेवन के बिना जीवन चलाना असंभव दिखाई देता जा रहा है। **रहन-सहन तथा जीवन स्तर के अंतर की मिटती महीन रेखा एवं मानवीय आहार-व्यवहार में पड़े अंतर ने लालच को बढ़ाया है। त्याग भाव के खोते सामर्थ्य तथा बढ़ते स्वार्थ ने इसी लालच के साथ गठबंधन कर पर्यावरण सरीखे विषय को सुर्खियों में लाकर खड़ा कर दिया है।** स्वार्थ से गहरे तक रंगा हुआ यही लालच इस प्रदेश, देश तथा संसार में आर्थिक असमानता के कारण पर्यावरणीय समस्याओं को ठीक प्रकार से समझने तथा उनका निदान करने के मार्ग के बीच एक सशक्त दीवार की तरह खड़ा है। यही वह राक्षस भी है जिसने मानवीय चिंतन को हिंसा और संकुचन की दीवारों से घेर डाला है। आरामपरस्ती से पल्लवित इसी प्रतिस्पर्धापूर्ण सोच ने आज हमारे साधनों के सृजन एवं उत्पादन को प्रतिकूलता के साथ प्रभावित

कर डाला है। खाद्यानों की गुणवता तथा धरती की उपजाऊ शक्ति दोनों का ही स्तर आज दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा है। इनके घटते स्तर के कारण हिमाचल प्रदेश सहित सारे देश एवं विश्व में स्वास्थ्य संबंधी समस्या भी बढ़ती जा रही है।

मनुष्य में बढ़ती आरामपरस्ती, कम परिश्रम द्वारा अधिक धन प्राप्ति की लालसा तथा प्रशासकीय व्यवस्था की त्रुटिपूर्ण प्रणालियों द्वारा बढ़ रहे आर्थिक असंतुलन के कारण प्रदेश में खाद्यानों के अधीन कृषि क्षेत्र निरंतर घटता जा रहा है। हिमाचल प्रदेश में वर्ष 2000-02 में खाद्यान्न फसलों के अधीन 817.2 हजार हेक्टेयर क्षेत्र था, जो घटते-घटते वर्ष 2005-06 में 792.7 हैक्टेयर तक पहुंच गया। प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2008-09 का लक्ष्य भी 800 हजार हैक्टेयर क्षेत्र ही निर्धारित हो सका है। रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2001-02 में खाद्यानों का प्रति हैक्टेयर उत्पादन 1.96 मीट्रिक टन था तथा वर्ष 2005-06 में यह उत्पादन 1.35 मीट्रिक टन दिखाया गया है। प्रदेश में उत्पन्न होने वाली दालों में अधिकतर चना, उड़द, मसूर, रौंग आदि की गणना होती है। प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2003-04 में चने का उत्पादन 1.21 हजार टन था। वर्ष 2005-06 में चने का उत्पादन केवल 0.72 हजार टन दिखाया गया है। जबकि वर्ष 1997-98 में यह उत्पादन 2.5 हजार टन दिखाया गया है। दूसरी दालों का उत्पादन वर्ष 2003-04 में 9.80 हजार टन, वर्ष 2004-05 में 9.59 हजार टन तथा वर्ष 2005-06 में ऐसी दालों का उत्पादन 8.44 हजार टन दिखाया गया है। यह अलग बात है कि वर्ष 2008-09 के लिए **दालों को निर्धारित 15.87 हजार टन** के आंकड़े पर टिकाया गया है।

हिमाचल प्रदेश सहित देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग अपने भोजन के लिए दाल और रोटी पर निर्भर करता है। पंरतु दालों की उपज घट रही है तथा मांग बढ़ रही है। इसी कारण वे महंगी होती जा रही हैं। स्थिति यदि ऐसे ही जारी रही तो साधारण नागरिकों को दालों के रूप में मिलने वाली प्रोटीन उनकी पहुंच से बाहर हो जाएगी। उनके स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ेगा और वे मात्र-नमक-मिर्च पर निर्भर हो जाने के लिए विवश जाएंगे। अंतर्राष्ट्रीय खाद्यान्न संगठन के अनुसार संतुलित आहार के लिए प्रति व्यक्ति दाल की मात्रा 80 ग्राम की औसत में है। बढ़ती मांग तथा घटती उपज के कारण मंदी के जयघोष में भी इस समय बाजार में धुले उड़द का मूल्य लगभग 70 रुपए, धुली मूंग 65

रुपए तथा मसूर लगभग 69 रुपए प्रति किलोग्राम है। इन दालों में सस्ती चने की दाल है। जो लगभग 34 रुपए प्रति किलोग्राम बिक रही है। इन आंकड़ों से पाठक विकास का ढोल पीटते इस युग में दालों की प्रति इकाई उपज तथा कीमतों में बढ़ोतरी के अंतर को ध्यान में रखकर वास्तविकता का अनुमान स्वयं लगा सकते हैं तथा भावी कठिनाई को समझ सकते हैं।

हम अपने परिवेश में प्रचलित सामाजिक मूल्यों तथा सरकारी आर्थिक निर्णयों को प्रभावित करती राजनैतिक प्राथमिकताओं पर एक साथ अन्वेषणात्मक दृष्टिपात यदि करें तो सच्चाई एवं वास्तविकता की परतें स्वयं खुलती चली जाएंगी। एक ओर धरती की उपजाऊ शक्ति का अधिक दोहन हो रहा है उपज की गुणवता घट रही है। दूसरी ओर इस पहाड़ी प्रदेश सहित देश की शासकीय व्यवस्था सभी वर्ग के अपने नागरिकों के **आर्थिक स्तर में संतुलन बैठाए रखने में सफल होती दिखाई ही नहीं देती है। सरकार को उन लोगों को प्रसन्न करने की अधिक चिंता रहती है जो या तो सरकार में हैं या संगठित होकर वोटों को प्रभावित करने का सामर्थ्य रखते हैं। इसी कारण से पढ़े-लिखे युवक खेतीबाड़ी में कम रुचि लेते हैं। खेती करना घाटे का सौदा समझ जाता है। ठीक भी लगता है क्योंकि जब बराबर का पढ़ा-लिखा सरकारी कर्मचारी 20 हजार से 40000 रुपए प्रति माह वेतन पा लेता है तो दिन-रात खेतों में कड़ा परिश्रम कर मात्र 5 या 6 हजार रुपए मासिक कमाना कोई युवक क्यों पसंद करेगा। पढ़ाई-लिखाई तथा बढ़ती प्रतिस्पर्धा के इस युग में सभी नागरिकों के आर्थिक स्तर में सतुलन बिठाया जाना चाहिए। अन्यथा खाद्यान्नों का उत्पादन घटता जाएगा। पर्यावरण तीव्रता से ध्वस्त होगा, मानवीय मूल्य और भी गिरेंगे। अपराध बढ़ेंगे जो सामाजिक एवं राजनीतिक ढांचे पर भी भारी चोट करेंगे।**

दैनिक जागरण धर्मशाला 1 जुलाई, 2009 (संपादकीय पृष्ठ) तथा अन्य समाचार पत्रों में प्रकाशित

उपेक्षित किसान, आर्थिक अंसतुलन और मंहगाई

–आचार्य रत्न लाल वर्मा

पृथ्वी पर प्राकृतिक परिवेश के भीतर ही प्राकृतिक पदार्थों एवं प्रभावों ने भिन्न–भिन्न प्रकार के जीव जगत का सृजन किया। इन जीवों के आकार प्रकार तथा संरचना के ही अनुरूप उनकी भोजन प्रणाली भी निर्धारित हुई। प्राकृतिक प्रभावों की इसी कड़ी ने मनुष्य को खाद्यान्न उत्पादन एवं उसके उपभोग की दिशा की ओर अग्रसर किया। अलग–अलग जलवायु तथा भौगोलिक परिस्थितियों के अनुकूल कई प्रकार के अनाज तथा दालें खाद्यान्नों के रूप में उत्पन्न किए जाने लगे। इनमें मोटे रूप में गेहूं, मक्की, चावल, चना, उड़द, मसूर आदि की गणना होने लगी। इनके उत्पादन में कमी और बढ़ोतरी के बीच मौसम एवं वर्षा की उपयुक्तता के साथ जनसंख्या तथा शासकीय व्यवस्था का प्रभाव भी साफ झलकता दिखाई देता रहा है।

खाद्यान्न उत्पादन में किसी वर्ष कमी यदि आई भी तो मौसम तथा अनुकूल शासकीय व्यवस्था के कारण आगामी वर्ष में हुए उत्पादन ने उस न्यूनता को भुला डाला। कृषि उत्पादन तथा आय के अन्य माध्यमों के बीच सामाजिक तथा शासकीय व्यवस्थाओं ने सर्वथा एक संतुलन भी बनाए रखा। इन व्यवस्थाओं से उपजे संतुलन ने खेत में काम करने वाले किसान तथा अन्य काम धंधों में लगे लोगों की आय में औचित्यपूर्णता के साथ सांमजस्य स्थापित किए रखा। ऐसी व्यवस्थाओं ने विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वालों पर न तो किसी प्रकार की उपेक्षा का प्रभाव पड़ने दिया और न ही पक्षपात की कोई छाया ही पड़ने दी। यही बड़ा वह कारण था जिसने समाज के विभिन्न वर्गों की जनसंख्या के समूहों के जीवन यापन के स्तर के बीच एक सर्व स्वीकार्य आपसी संतुलन स्थापित किए रखा।

उस समय यद्यपि शिक्षा का इतना चकाचौंध उज़ाला नहीं था जितना कि आज है। परंतु इस पर भी संतुलन का यह सामंजस्य मानव सुलभ उन अन्य गुणों के कारण संभव था जिनका इस उजाले में आकाल पड़ता जा रहा है।

इन्हीं कुछ तथ्यों के आलोक में अपने देश में हो रहे खाद्यान्न उत्पादन, किसानों की स्थिति, उन पर पड़ते शासकीय व्यवस्था के प्रभाव के साथ महंगाई

के वास्तविक कारणों को लेखक प्रबुद्ध जनता के सन्मुख रखने की चेष्टा करते हैं। क्योंकि देश पिछले कुछ समय से खाद्य पदार्थों की महंगाई की समस्या से लगातार दो चार होता जा रहा है। खाद्यान्न उत्पादन के दृष्टिकोण से चहुंमुखी विकास के इस युग में हिमाचल प्रदेश को यदि लें तो इस प्रदेश में ऐसे उत्पादन की पिछले कुछ वर्षों की स्थिति इस प्रकार है।

वर्ष 2004–05 में 1487.85 हजार टन, 2005–06 में 1068.69 हजार टन, 2006–07 में 1476. 47 हजार टन. 2007–08 में 1440.66 हजार टन, 2008–09 में 1226.79 हजार टन तथा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2009–10 में 1017.2 हजार टन उत्पादन दिखाया गया है। इसी प्रकार सब्जियों का उत्पादन 2006–07 में 941.44 हजार टन, 2007–08 में 1040.49 हजार टन, 2008–09 में 1090.33 हजार टन तथा वर्ष 2009–10 में 1206.24 हजार टन दिखाया गया है। सब्जियां यद्यपि आनाजों की तुलना में अधिक बजन में उग जाती हैं, परंतु ऐसे में भी यदि प्रतिवर्ष की उपज को इकट्ठा करके भी दृष्टि डाली जाए तो भी उत्पादन का पलड़ा आगे से आगे निर्बल पड़ता ही दिखाई देता जाता है।

उपरोक्त आंकड़ों से साफ संकेत मिलता है कि लोगों में खेती बाड़ी की ओर रुझान उत्तरोतर घटता ही जा रहा है। इस वास्तविकता की ओर न तो सरकार का ध्यान जाता है और न समाज के अन्य वर्गों का ही। किसी कारण यदि ध्यान जाता भी है तो वह आधे–अधूरे मानदण्डों के साथ महंगाई के नाम से होते हो–हल्ले के ऊंचे स्वरों के बीच अपना रास्ता भटक जाता है। इस प्रकार महंगाई के कर्ण–भेदी स्वरों के बीच खेत, किसान और व्यवस्था की कमियों की गूंज न तो किसी को सुनाई देती है और न साधन विहीन तथा असंगठित किसान एवं मजदूरों की ठीक प्रकार सुध लेना नौकरशाहों, नेताओं तथा ऊंचे तबके के लोगों को गवारा ही लगता है। खेती तथा छोटे धंधों से अपना जीवन चलाने वालों की ठीक परवाह किसी को भी नहीं है।

कुछ राज्यों में तो बढ़ती शिक्षा के कारण दूसरे राज्यों के कम पढ़े लोग वहां आकर खेती करते हैं। पंजाब, हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेश में शिक्षा का उजाला बढ़ा है। शिक्षित व्यक्ति अपनी आय की तुलना दूसरे क्षेत्र में कार्यरत उसके समकक्ष व्यक्ति से भी करता है। उस दृष्टिकोण से खेतीबाड़ी तथा छोटे धंधों से होने वाली आय से सरकारी तथा निजी क्षेत्र में कार्यरत लोगों की आय की तुलना में उसे अपनी आय बहुत

ही कम लगती है। **1959 में पंजाब में जब आठ आने प्रति सेर आटा हुआ था तो महंगाई के विरोध में जलूस निकल रहे थे। परन्तु उस आठ आने को यदि आधार माना जाए तो जिस ढंग से नौकरशाही के वेतनों में बढ़ौतरी की है, उस ढंग से आज आटा लगभग 100 रुपये प्रति किलोग्राम से कम नहीं होना चाहिए था। इसी प्रकार चीनी उस समय 13 आने प्रति सेर थी जो आज उस वक्त के अनुसार 150 रुपये के आसपास होनी चाहिए थी।**

इसी प्रकार सब्जियों को यदि लें तो उनका भाव न्यूनाधिक अंतर के साथ उस समय 3 आने प्रति सेर था। उसे आधार यदि मानें तो सब्जियां सामान्यतः 30 रुपये के आस पास प्रति किलो से कम नहीं होनी चाहिए। परंतु इनका औसत मूल्य महंगाई के ऊंचे स्वरों के बीच आज भी उससे कम ही है।

इतने पर भी विडम्बना यह कि कृषि क्षेत्र की उपज का तनिक भी मूल्य बढ़ता है तो लोग जमीन आसमान एक कर शोर मचाने लगते हैं। परंतु जब नौकर-शाहों के वेतन भत्ते आदि बढ़ते हैं तो किसी की जुबान नहीं खुलती है। आज एक चपड़ासी 10, 000 रुपये प्रति मास तथा बाबू 15,000 रुपये प्रतिमाह से कम नहीं लेता है। बड़े अधिकारी तो अब लाख रुपए के आंकड़ों को छू लेते हैं। महंगाई होने के बाद में भी यह वर्ग आगे रहता है। बिन मेहनत पैसे को पैसा कमाने लगता है। वह भी ढेरों अन्य सुविधाओं के साथ। इसका यह अर्थ नहीं कि महंगाई रहनी चाहिए। आवश्यकता संतुलन स्थापना की है। इन तथ्यों से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि हमारे अर्थशास्त्री समाज के विभिन्न वर्गों के जीवन यापन में संतुलन को बैठाने में असफल रहते ही दिखाई देते हैं। जिस अनुपात से नौकरशाहों के वेतन बढ़े हैं उस अनुपात से महंगाई बढ़ती हुई तो लगती ही नहीं है। ऐसे में कोई खेती या छोटा मोटा धंधा करना क्यों चाहेगा? इससे समाज का पर्यावरणीय संतुलन भी बिगड़ रहा है।

हर ओर प्रतिस्पर्धा है। खेती में लगे लोगों का मन मस्तिष्क भी तो उससे अछूता नहीं है। खेती करने का अर्थ आज गरीबी के गर्त में जाना, उधार में डूबना, विवशता में आत्महत्याएं करना या खेतों को बंजर छोड़ना रह गया है। पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी यह स्थिति हानिकारक है।

वह समय कब आएगा जब हमारी व्यवस्थाएं पक्षपात, अवसरवादिता, अन्याय की जकड़न से छूटेंगी? हमारे अर्थशास्त्रियों को खेतीबाड़ी से होने वाली आय को आधार बनाकर ही महंगाई के मानदंड निश्चित कर उसी के अनुसार वेतन बढ़ोतरी को अधिमान देना चाहिए। अन्यथा अपराध बढेंगे, खेती छूटेगी, आकाल की स्थित तक आ सकती है और अनावश्यक मुद्रास्फिति बढ़ेगी। यह भी दुखद पहलू ही कहलाएगा कि देश के बड़े राजनैतिक दलों का समुचित ध्यान कृषि क्षेत्र की ओर नहीं होता है। वे भी अधिक ध्यान उन्हीं क्षेत्रों की ओर देते हैं जिनसे सीधे रूप से वे स्वयं प्रभावित होते हैं। देश के भविष्य को ध्यान में रखते हुए इन दलों को भी अपने आचरण में तुरंत बदलाव करने की आवश्यकता है। किसान की जय बोलने से अब काम चलने वाला नहीं है। परिणाम बोलने से नहीं करने से निकलते हैं। किसान के भविष्य की जय करनी होगी। दूसरों का पेट भरने वाले के पेट को खाली छोड़ना अनुचित है।

दैनिक जागरण सिटि धर्मशाला – 28 मार्च 2011, हिमाचल केसरी धर्मशाला में प्रकाशित

आर्थिक संतुलन के लिए नीति निर्धारित हो तब ही रुकेंगी किसान आत्महत्याएं

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

अर्थशास्त्र का सिद्धांत है, जब आपूर्ति कम होती है और मांग बढ़ती है तो महंगाई सिर उठाती है। जब आपूर्ति बढ़ती है तो मंदी आती है। इसलिए जरूरी है कि उत्पादनकर्त्ता को उपभोक्ताओं की संख्या के साथ उनके आर्थिक सामर्थ्य का भी ज्ञान हो। उत्पादनकर्त्ता एवं किसान को भी उसके परिस्थितिवश महंगे लगने या कहे जाने वाले उत्पाद का तुलनात्मक दृष्टि से सही मूल्य मिलना चाहिए। इसके लिए सरकारें नीति निर्धारित कर समूचे समाज के लिए एक अनिवार्य स्तर वाला आर्थिक संतुलन स्थापित करें।

सभी सरकारें महंगाई के वास्तविक कारणों को समझने तथा उनसे उपजी पीड़ा को दूर करने में असफल रही हैं। इस पीड़ा का आभास 70 के दशक के राजनेताओं को था परंतु बदलती स्थिति ने इससे उनका ध्यान हटा दिया। अब देश के आर्थिक प्रबंधन में लगे विशेषज्ञों की कुशलता पर प्रश्नचिह्न लगता दिखाई देता है। समाज में व्याप्त न्यूनतम आर्थिक असंतुलन का परिणाम ही महंगाई है।

नियोजन में रहती कमी को समझने के लिए जिला बिलासपुर के नए बसे मुख्यालय को लेते हैं। भाखड़ा बांध के अस्तित्व में आने से पहले जिला मुख्यालय को नए स्थान पर बसाने की योजना बनी। फिर उसे बसा भी दिया गया। योजनाकारों एवं विशेषज्ञों ने कई आवश्यक बातों एवं बिंदुओं को ध्यान में रखे बिना इस नगर को नए स्थान पर बसाने की योजना बना दी। पुराने नगर के समीप के पहाड़ को काट कर नया शहर बसा दिया। अब एक ओर पहाड़ है, जहां जनसंख्या बहुत कम है। दूसरी ओर जनसंख्या अधिक है परंतु झील के कारण वह बिलासपुर नगर से कटी है। यही कारण है कि इस नगर में नगरीय आकृति, व्यापार, रोजगार, बाजार व अन्य सुविधाओं में वांछित उन्नति नहीं हो पाई है। जबकि घुमारवीं, तलाई, बरठीं आदि उपनगर अपेक्षाकृत उन्नति करते जा रहे हैं। अकुशलता और पक्षपात आड़े न आता तो इस नगर की उन्नति का रंग रूप और होता। वर्तमान बिलासपुर केवल ऐतिहासिक धरोहर के रूप में

रहना चाहिए था। इसी आलोक में अकुशलता तथा पक्षपातपूर्ण भावना के नीचे दबे महंगाई के कारण पर प्रकाश डालते हैं।

जीवनयापन के दृष्टिकोण से समाज कई श्रेणियों में बंटा है। प्रत्येक वर्ग का अपना विशेष महत्व है। यह महत्व दृष्टिविगत भी नहीं किया जा सकता है। कई सरकारी क्षेत्र में सेवा के बदले में वेतन तथा पैंशन के रूप में मोटी राशी सरकारी कोष से प्रति मास पाते रहते हैं। कई निजि या कारपोरेट क्षेत्र से वेतन या पैकेज के रूप में अच्छी खासी धन राशी प्राप्त कर लेते हैं। कोई बड़ा व्यापारी है तो कोई बड़ा कारखानेदार। कोई छोटा व्यापारी है तो कोई रेहड़ी-थड़ी वाला है। **कोई किसान है तो कोई मजदूर। सरकार के अपने बहुत से बोर्डों निगमों के कर्मचारियों को पैंशन तक नहीं है। वे 70 से 90 वर्ष के बुढ़ापे में भी निर्वाह के लिए परिश्रम करने के लिए विवश हैं। सरकार अपने ही द्वारा बनाए जाने वाले नियमों के न बनाए जाने की दुहाई के साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार से आक्रांत दिखाई दे जाती है। कुछ समय पहले सामान्य व्यापारी एवं कारोबारी व कृषक का आर्थिक सामर्थ्य, वेतनभोगी नौकरशाहों की तुलना में अधिक था। परंतु त्रुटिपूर्ण लगती अर्थशास्त्रीय गणना के कारण नौकरशाही के वेतन-भत्तों तथा पेंशन में बढ़ोतरी ने उपरोक्त वर्ग के करोड़ों परिश्रमियों को आय की तुलना में पीछे धकेल दिया है। सरकारी कोष से वेतन तथा पैंशन पाने वालों में अब तो विधायकों की संख्या भी जुड़ गई है।**

अर्थशास्त्रीय आंकड़ों एवं अनुशंसाओं के कारण किसानों की आय अपेक्षाकृत कम हो रही है। हिमाचल में 2004-05 में 687.45 हजार टन गेहूं का उत्पादन हुआ। 2007-08 में यह उत्पादन 562.01 हजार टन था और 2008-09 में 381.18 हजार टन था। इसी प्रकार खाद्यान्नों के तहत 2006-07 में 806.01 हेक्टेयर क्षेत्र था। 2008-09 में 789.01 तथा 2009-10 में यह क्षेत्र 784.02 हजार हेक्टेयर दिखाया गया है। **आर्थिक संतुलन में भेदभाव से उपजी अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा से बढ़ते असंतुलन के कारण सुख-शांति व कानून व्यवस्था की दृष्टि से संपूर्ण समाज एकाएक विचलित भी हो सकता है। इस पर ध्यान रखा जाना चाहिए।**

अब प्रश्न उठता है कि क्या शासन-प्रशासन, विधायिका तथा ऊंचे सामर्थ्य के लोग ही पूरा भारत, पूरा प्रदेश या पूरा संसार है? एक

वांछित न्यूनतम आर्थिक सामर्थ्य को ऊपर उठाने में सभी प्रमुख राजनीतिक दलों द्वारा पक्षपात एवं भेदभाव वाली नीतियां क्यों? यही बड़ा वह कारण है जो स्वाभाविक मूल्य वृद्धि को महंगाई मान लेने के लिए उत्तरदायी है। इससे प्रभावित वे लोग हैं जो वास्तव में रोटी, कपड़े और रैन-बसेरे के जुगाड़ में कमियां पाते हैं। **परंतु आश्चर्य है कि गिरते मानवीय मूल्यों के कारण महंगाई के स्वर में वे लोग भी स्वर मिलाते हैं जो मोटी धनराशि प्रतिमास बैंक खातों में डालते रहते हैं। आर्थिक असंतुलन से समाज में ईर्ष्या, द्वेष, असंतोष एवं तनाव दिन प्रति दिन बढ़ते जा रहे हैं। रात के अंधेरे में कभी कभार पड़ते डाके अब एक साथ कई जगह, प्रतिदिन और वह भी दिन के उजाले में पड़ रहे हैं।**

सभी राजनीतिक दलों तथा देश-प्रदेश की सरकारों को आर्थिक संतुलन के लिए नीति निर्धारित करनी चाहिए। यह प्रभावशाली रोक, अंकुश व प्रोत्साहन एवं वृद्धि के बिना संभव नहीं है। निष्पक्ष, सर्वजन एवं सर्वजीव हिताय नीतियों का अभाव ही ध्वस्त होते पर्यावरण का मुख्य कारण है। पेड़ ही केवल पर्यावरण नहीं हैं और भी बहुत कुछ है जिसकी चिंता होनी चाहिए।

दैनिक जागरण (सिटि) धर्मशाला 28 मार्च 2011 तथा हिमाचल केसरी धर्मशाला में प्रकाशित

किसान आत्महत्याएं तथा एक और हरित क्रांति

-आचार्य रत्न लाल वर्मा

एक समय था जब नौकरी करने सहित जीवनयापन के लिए अपनाए जाने वाले सभी धन्धों में खेती-बाड़ी को प्रथम स्थान प्राप्त था। यह धन्धा सर्वोत्तम माना जाता था। धीरे-धीरे समाज पर वोट की राजनीति निरंकुश रूप के साथ हावी होने लगी। राजनेताओं में घटते त्याग, बढ़ते लोभ-लालच और पक्षपात ने हमारे समाज की व्यवस्थाओं को अपनी जकड़न में लेना आरम्भ कर दिया। संगठित और प्रभावशाली वर्ग सरकार की अधिक चिंता और नीति निर्माण का महत्वपूर्ण भाग बनता गया। परन्तु असंगठित और कम प्रभावशाली वर्ग अपना महत्व खोता गया। भारत का किसान भी बढ़ती महत्वहीनता की इसी कड़ी में आता है। बढ़ती सरकारी उदासीनता के कारण यह आत्महत्या करने पर विवश होता जा रहा है। आए दिन किसानों द्वारा आत्महत्याएं करने के प्रकाशित होते समाचार इसके जीते-जागते प्रमाण हैं। **नेता, शासक अर्थशास्त्री और नीति-निर्माता अपनी स्वार्थगत विवशताओं के वशीभूत होकर अन्नदाता के हितों को भूलते जा रहे हैं वे आत्महत्याओं के मूल में छिपे वास्तविक स्थायी कारणों को खोजने और उन्हें दूर करने में विफल दिखाई देते हैं। उधर देश के बड़े-बड़े राज्यों को इन आत्महत्याओं ने अपनी चपेट में ले लिया है।**

किसान आत्महत्याओं की यह श्रृंखला आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा अन्य के साथ पंजाब तक लम्बी हो चुकी हैं। यह बात किसी से छिपी भी नहीं है कि किसान मात्र खेती पर निर्भर कम आय के कारण ही आत्मघाती पग उठाने पर विवश होते हैं। उसके भी बीवी-बच्चे हैं। कपड़ा, मकान, बच्चों का लालन-पालन, शिक्षा विवाह, चिकित्सा, बुढ़ापे के लिए कुछ बचत आदि उसकी भी तो आवयश्यकता है। नेताओं सहित देश और राज्यों की सरकारों को चलाने में लगे शासन-प्रशासन के कई लाखों लोग एक मोटी रकम वेतन-भत्तों के रूप में सरकारी कोष से लेते हैं। लाखों ही लोग बिना किसी काम के एक अच्छी खासी राशि प्रति मास पैंशन के रूप में पा लेते हैं। सरकारी कोष

पर यह बोझ नियमित रूप से पड़ता रहता है। निजि कारपोरेट सैक्टर में भी वेतन एवं पैकेज के रूप में अच्छी खासी रकम मिल जाती है। परन्तु सबका पेट भरने वाले किसान की चिंता के प्रति सरकारी संवेदनाएं निष्क्रिय क्यों हैं? इस परिपेक्ष्य में हिमाचल प्रदेश पर प्रकाश यदि डालें तो यह ऐसी घटनाओं से अभी तक अछूता है। क्योंकि यहां किसान के परिवार का कोई न कोई सदस्य सरकारी नौकरी से वेतन या पैंशन या अन्य किसी धन्धे से नकद आय प्राप्त करता रहता है।

प्रदेश की वर्ष 2013–14 की आर्थिक रिपोर्ट में दिए आंकड़ों से दालों की पैदावार के घटते रुझान से किसानों की भावी दशा को समझा जा सकता है। वर्ष 2010–11 का उत्पादन 40.99 हजार टन दिखाया गया, 2011–12 का 30.12, वर्ष 2012–13 का 45.58 (अस्थायी) वर्ष 2013–14 का 16.21 (अनुमानित) और वर्ष 2014–15 का 19 हजार टन (लक्ष्य) दिखाया गया है। इसी प्रकार खाद्यान्नों के अन्तर्गत क्षेत्रों में बढ़ौतरी का रुझान भी नहीं है। वर्ष 2010–11 में यह क्षेत्र 795.18 हजार हैक्टयेर, 2011–12 में 790.70, वर्ष 2012–13 में 798.31 (अस्थायी), वर्ष 2013–14 में 794.47 (अनुमानित) और वर्ष 2014–15 में यह क्षेत्र 795.5 हजार हैक्टेयर लक्ष्य के रूप में दिखाया गया है। **इन आंकड़ों में धरातलीय वास्तविकता कितनी है यह तो विभाग और किसान जानते ही होंगे। परन्तु जो दिखाया गया है वह भी मात्र खेतीबाड़ी पर निर्भर किसानों के भविष्य को समझने के लिए पर्याप्त है। 40 हजार टन का आंकड़ा अपने आप में छोटे प्रदेश में बहुत बड़े कल्पना लोक की सैर करवा देता है। यह कहीं भारी भरकम सरकारी व्यय को न्यायोचित ठहराने की कवायद तो नहीं है?**

हाल ही में प्रसारित आंकड़ों के अनुसार वर्ष 1969–70 में हमारे देश के उत्पादन में कृषि का योगदान लगभग 31 प्रतिशत बताया गया। यह अब घटकर 13 प्रतिशत बताया गया है। **कृषि भूमि बंजर पड़ने लगी है। लोगों का कृषि की ओर रुझान कम होता जा रहा है। वे इसे हानि का व्यवसाय समझने लगे हैं। उनकी इस धारणा में सच्चाई भी है उनका व्यवसाय सरकारी बेरुखी और उसके द्वारा निर्मित असंतुलित आर्थिक तन्त्र का शिकार है। सरकार के अंगों तथा निजि कारपोरेट जगत को चलाने**

वाले लोगों की आय तो कई गुणा बढ़ी है। परन्तु किसान तथा छोटा मोटा व्यापार या धन्धा करने वालों की आय में तुलनात्मक दृष्टि से बहुत कमी आ गई है। इनकी आय का स्तर सरकारी चपड़ासी से भी नीचे चला गया है। 74 वर्ष की आयु में लेखक को आज भी भली प्रकार स्मरण है कि वर्ष 1959 में आटे का भाव 8 आने सेर हुआ था। उस समय होशियारपुर के बाजार में मंहगे आटे को लेकर जलूस निकला था। लेखक उस समय वहां के एक कॉलिज के छात्र थे। दिहाड़ीदार की मजदूरी उस समय ढेड़ रुपये प्रतिदिन के आस-पास थी। चपड़ासी प्रति मास 45 रुपए के आस-पास वेतन पा लेता था। छोटा-मोटा व्यापार तथा धन्धा करने वाले 100 रुपये प्रति मास के आस-पास पा जाते थे। इन आंकड़ों के आलोक में सरकारी क्षेत्र में लगे लोगों की बढ़ती आय की तुलना में किसान का आटा-दाना 110 रुपये प्रति किलोग्राम से अधिक होना चाहिए था। परन्तु उसका भाव तो बहुत नीचे तक ही लटका हुआ है। आटे दाने की कीमतों में होने वाली तुलनात्मक मंहगाई का लाभ सरकार अपने अंगों के लोगों को देती है, जबकि महंगाई का वह लाभ किसान को मिलता ही नहीं है।

1965 में भारत-पाक युद्ध के समय उस समय के प्रधानमंत्री स्व. श्री लाल बहादुर शास्त्री ने देश को एक नया नारा दिया था। ''जय जवान-जय किसान''। परंतु आश्यर्य की बात है कि अब इस नारे में से किसान शब्द लुप्त मिलता है। केवल एकहरा ''जय जवान'' का उद्घोष ही सब जगह सुनाई देता है। जवान का पेट भरने वाले किसान को यहां भी वनवास सा मिलता हुआ लगता है। यह भी तो समझने और उस पर चलने की आवश्यकता है कि किसान का अन्न ही तो जबान को जबान बनाए रखता है। सरकार द्वारा यशोगान किया जाना भी न्यायसंगत होना चाहिए। इस दिशा में किसान तथा ऐसे अन्यों को किनारे क्यों रखा जाना चाहिए?

देश केवल उन्हीं लोगों का ही नहीं है जो सरकार और बड़े निजि कारपोरेट जगत का अंग हैं। देश समान रूप से उनका भी है जो मेहनत कर पसीना बहाकर फसल उगाते हैं, छोटा-मोटा धन्धा या छोटा-मोटा व्यापार कर जनता को अपेक्षाकृत अधिक लाभ पहुंचाते हैं। नेताओं और अर्थशास्त्रियों द्वारा सरकारी अंगों के लोग ही प्रधान और दूसरे गौण बनाकर क्यों रखे गए हैं। **भेदभाव पूर्ण आर्थिक असंतुलन करना क्या कल्याणकारी राज्य की वास्तविक अवधारणा के विपरीत नहीं है? सरकारी धन का असमान वितरण कालान्तर में**

विकट परिस्थितियों को जन्म देकर राष्ट्र के सामने गंभीर संकट भी उत्पन्न कर सकता है। किसानों की आत्म-हत्याएं मात्र केवल मुआवजा देने, कर्ज मुआफी देने या अनुदान देने से नहीं रुकेंगी। ये मात्र तत्कालिक और क्षणिक प्रभाव वाले उपाय हैं। इस का प्रभाव चिरकाल तक नहीं रह सकता है। सारा सरकारी तन्त्र इन्हीं क्षणिक उपायों के इर्द-गिर्द घूम रहा है। ऐसे में प्रधानमंत्री जी ने एक और हरित क्रांति लाने का आह्वान किया है। परंतु यह तब ही फलीभूत होगा जब किसान का आर्थिकी की तुला पर संतुलन बनाया जाए। ''अंधा बांटे रेवड़ियां मुड़-मुड़ अपनों को दे'' वाली लोकोक्ति के चारत्रार्थ होने पर विराम लगे। सरकारी तंत्र को न्यायसंगत बनाया जाए।

आर्थिक लाभ देने के लिए बनने वाले आयोगों, नीतियों पर निष्पक्ष और पैनी दृष्टि रखने के लिए सरकार एक ऐसा तंत्र विकसित करे, जिसका आर्थिक लाभ पाने वालों एवं आर्थिक रूप से प्रभावित होने वालों से कोई लेना-देना न हो। अर्थात् उसके सदस्य, नेताओं सहित वेतन भोगी, पैंशन भोगी, तथा सरकार से लाभ पाने वाले किसी अन्य वर्ग से न हों। इस तंत्र के विकसित होने से किसान की दशा में स्थायी सुधार का मार्ग निर्विध्न प्रशस्त होगा। आत्महत्याएं रुक जाएंगी। अनाज उत्पादन में बढ़ोतरी होगी। बंजर होती जमीन लहलहा उठेगी। ग्रामीण रोजगार की बढ़ोतरी से बेराजगोरों की संख्या घटेगी। हरित क्रांति लाने और आत्महत्याएं रोकने का यही सुथरा मार्ग है। सभी प्रमुख राजनैतिक दलों तथा उनके मुखियों को किसानों की दयनीय स्थिति का गंभीरता से संज्ञान लेना चाहिए। **किसान तथा छोटा धंधा या छोटा व्यापार करने वालों को आर्थिकी की तुला पर सरकारी चपड़ासी से कम नहीं आंका जाना चाहिए। सरकार अपने लोगों एवं अंगों के साथ-साथ किसान तथा छोटे वर्ग को भी अनुपातिक रूप से ऊपर उठाए। तभी लगेगा कि सरकार सबके लिए है। इससे हमारे भारतीय समाज के पर्यावरणीय परिदृष्य में भी कुछ सुथरापन आएगा।**

हिमाचल दस्तक धर्मशाला 11 जुलाई 2015 तथा आपका फैसला 27 जुलाई 2015 (संपादकीय पृष्ठ)

From

The Deputy Commissioner,
District Hamirpur (HP).

To

The Secretary (GAD),
To the Govt. of HP Shimla.

No.DCH/Ma-2013- 9269
Dated, Hamirpur, the 4-10- 2013.

Subject:- Recommendation for Padama Awards.

Sir,

Kindly refer to your office letter No. GAD-B(F)4-5/2011 dated 14.08.2013, on the subject cited above, In this regard it is submitted that as per report of the revenue field agency Acharya Rattan Lal Verma, of this district has been found eligible in social services. The detail of achievements is enclosed with the recommendation that the name of Acharya Rattan Lal Verma, resident of Ward No.5, Opposite Zonal Hospital Hamirpur (HP may kindly be considered for granting Padam Shree Award please.

Yours faithfully,

Encls File.

04/10/13

(H.S Chaudhary HPAS)
Addl. Deputy Commissioner,
District Hamirpur (HP).

Attested.

25/8/15

Assistant Commissioner to
Deputy Commissioner
District Hamirpur (H.P.)

Issued Information u/RTI Act 2005
to Sh... Vijay Raj
Attested

Public Information Officer-cum-
Addl. Distt. Magistrate
Hamirpur (H.P.)

Historical Achievements, Milestones of the Service of High Order Rendered by Sh. Rattan Lal Verma most Beneficial to the Govt. in General and Public of the H.P. State in particular (without any Salary or Pension, or Contribution, Aid or Grant (All at his own cost)

His following high order achievements, successful restless efforts have been proved by the official documents and evidences of Government Departments, Deputy Commissioners, Govt., Non-Govt. Organisations, Govt. Scientific, Environmental, Pollution controlling Institutions and evidences of Indian and Foreign Media. He has been highly appreciated. Has also been honored more than 20 times by various organizations of country.

1 **Succeeded in Legislation Making**

He launched campaign to draw the attention of H.P. Govt. for making legislation to control the construction of buildings to minimize the loss of life and property during earthquake and succeeded in his goal as the legislation was made due to his efforts (INACTED-Published).

The whole of the H.P. State Territory falls in Earthquake prone seismic Zone No. IV and V which are highly Vulnerable. Worried about the safety of lives and property of lakhs of people of the state, he launched a unique campaign of its own type since 1999 to create awareness among the public and government about the dangers of fatal, haphazard, multi-storeyed buildings in the hilly state as the Kangra district of State had lost about 20 thousands lives in earthquake on 20 April, 1905 due to falling of buildings. Many earthquakes had hit the state since then.

He continued for years together sending thousands of letters to the Executive Heads and all the MLAs of the State creating awareness and requesting for making legislation to control the construction of buildings for safety of lives and property. His numerous articles on harmful constructions were continuously published in various famous daily newspapers in addition to repeated statements demanding legislation. He also raised his voice through seminars and personal contacts. Large correspondence was exchanged with the government. He continued making strenuous and restless efforts effectively for complete 10 years even at the cost of his health and time.

The state government ultimately on 8th April, 2005 agreed to his suggestions, draft was prepared and submitted in 2007. In 2009 the relevant **Town and Country Planning Act, 1977 was amended and a new section 30A was inserted for control over constructions.** The owner has to produced structural certificate from qualified engineer, construction beyond three stories in villages without permission was not allowed, etc. Thus succeeded in his mission for minimizing loss of lives and property of lakhs of people in state.

In **famous media in our country and Abroad, his successful efforts with comparison and appreciation were viewed in details with the Earthquake of Hatty that smashed away lives in lakhs and results of Copenhagen Earth Summit.** His hard and successful efforts were appreciated by many institutions. Thus he rendered service of very high order.

2. **Succeeded in Protection of Both Crops and Monkeys-Remedial Measures for Farmers of H.P. State for Immediate Protection of Crops without Violence**

The damage to the crops of farmers had become a matter of great concern. The Govt. was being pressurized by farmers and their representatives for solution. To find out the solution without killing monkeys, he himself surveyed some of the Panchayats of three districts of H.P. and met Pradhans and other people, discussed with them.

Thereafter he prepared a detailed project namely "Project for immediate Protection of Crops without killing Monkeys", where Monkeys were to be kept in enclosures according to the guidelines of CZA, the public has also to assist in providing feeding material etc. and submitted it to State Government in 2007. He continued advocating the need of this project for 4 years. This was also published in press. Many meetings by conservators and DFOs were held with him. The Hon'ble Court of H.P., on a suit filed by some NGOs, directed the state government to find out the non-violent solution of this problem, immediately. **He pleaded the implementation of his project at Shimla on 06-04-2011 in high power workshop headed by Chief Secretary where forest and other department heads of H.P., Haryana, Punjab, Uttrakhand, Secretary Law and other NGOs were present. His above project was accepted and sanctioned by the government for implementation in Pradesh.** Thus he rendered significant service to the government and farmers with his hard efforts.

3. **Successful Efforts for Minimizing Pollution Created by Poly-Bags**

He created awareness affectively among public and government for four years since 1999 continuously about harms of pollution of poly bags, through seminars, repeated publication of his articles

Attested.

Issued Information u/RTI Act 2005
to Sh. Urbat Ray
Attested

Public Information Officer-cum-
Addl. Distt. Magistrate
Hamirpur (H.P.)

25/8/15

Assistant Commissioner to
Deputy Commissioner
District Hamirpur (H.P.)

in newspapers in state and outside, demanding imposing of ban on the sale and use of these bags. The H.P. Govt. Imposed ban on the sale and use of these poly bags in the year 2003.

4. Promotion of Literacy in Hamirpur District -Star Campaigner

He remained Star Campaigner during full literacy campaign in the district in 1993-94, 1994-95, worked with full zeal, enthusiasm and spirit of sacrifice that led Hamirpur District to rank 2nd in the whole country in full literacy.

He worked day and night as Star Campaigner in whole district by putting his strenuous efforts by working 12 to 14 hours everyday. Travelled thousands of kilometers on foot, did not charge any TA/DA nor availed leave including Sunday created and published literature on literacy. This impressed and motivated thousands of people and those engaged in this programme. His restless and affective efforts were appreciated by the Deputy Commissioner, NGOs, Panchayats and other Institutions.

The Hamirpur District had the honour to stand 2nd in the country in full literacy. The district was declared fully literate on 26-12-1994. **Hamirpur has now become the centre of education in H.P. and consequently Avenue of employment for thousands of youths have been generated.** Thus he rendered the service of very high order voluntarily and selflessly.

5. Highlighted Actual Reasons of Fatal, Mysterious Satluj River Flood of 31-07-2000, mid-night

The mysterious Satluj River flood of the midnight of 31-07-2000 smashed away the lives of about 200 people and 2000 animals in addition to huge loss of property in H.P. State. No body then knew the reasons of this flood. Many people in responsibility and others including press were throwing repeatedly doubtful glance on adjoining country China. He then highlighted the actual environmental and other reasons including heavy rains, mud etc. responsible for this flood. His articles on these reasons were published in August-September, 2000 in many daily newspapers having circulation in Northern Indian States, setting-aside the unnecessary doubts on other countries and made the public aware of the actual reasons.

Three months later, the report of Remote Sensing Agency Hyderabad on the reasons of the flood appeared on 27-11-2000 and the reasons shown in this report were almost the same as had already been published by Sh. Rattan Lal Verma 3 month earlier than this report.

Thus, he rendered significant service by saving harmonious relations of two Nations.

6. Practical Hard and Fruitful Work for Protection of Girl Child

He has been highlighting the reasons and costumes responsible for decreasing number of girl child by getting his detailed articles and statements regularly published in many daily newspapers having circulation in Northern States since 1998, he himself set practical examples, faced opposition, bore loss and also undertook **"Kanya Bachao Yatra"** journey on foot on 23-02-2006. Now some of the people are following his path of leaving undesired customs.

7. His Suggestions for Controlling Forest Fire were also Accepted by the H.P. Forest Department.

8 Highlighted the Present Deteriorating Geographical Conditions of Himalayas

He drew attention of Scientists and government towards the changing conditions of Himalaya by remarking the mountains to be growing old before time, through his various articles published regularly in many daily newspapers having circulation in Northern Indian States. Now heed is being paid towards the changing conditions of the mountains. The Government Science and Technology Council has appreciated him.

9. Work for Change in Seismic Zone

He has taken up the matter with Indian Standard Bureau New Delhi to change seismic zone of Govind Sagar Lake (Bhakra Dam) for paying more heed for the safety of life and property of lakhs of people. The bureau on his suggestions is taking further action.

10. Important Research Conclusions on World Platform

His research conclusion on existence of life on Earth, imbalance causing to Earth affecting the location of its poles and also the present 21st century to be the century of fatal natural calamities like earthquake etc., as have been publishing in many newspaper, books, weeklies, souvenirs etc for the last more than two decades. These conclusions have also been informatory well before the occurrence of future events, which is **wonderful and astonishing** and as such he has **significant position on world platform** so far as the earlier publication of these conclusions are concerned.

11. Creation of Environmental Awareness

He has been creating environmental awareness among the crores of people of northern states since 1990 regularly, through schools, colleges, seminars and getting numerous articles published

Attested.

Issued Information u/RTI Act 2005
to Sh. Ajit Pal Ray
Attested

Public Information Officer-cum-
Addl. Distt. Magistrate
Hamirpur (H.P.)

25/8/15

Assistant Commissioner to
Deputy Commissioner
District Hamirpur (H.P.)

376

PERFORMA FOR PADMAA AWARDS

Sr. No.	Particulars	
1	Name (a)First Name (b)Second Name	Verma Rattan Lal
2	Sex (Male/Female)	Male
3	Date of Birth/Age	18-10-1940
4	Place of Birth (if known)	Bijhari, Hamirpur Himachal Pradesh
5	Nationality	Indian
6	Postal Address with Telephone/email etc.	Ward No.5, Opposite Zonal Hospital Hamirpur 177001 (HP) Mob-94180-23684
7	Religion	Hindu
8	Category (SC/ST/OBC/General)	General
9	Profession or Occupation (with designation /office held)	Retired.
10	Field Activity * Viz.,Art,Sports,Social Work,etc.	Social Work
11	Padma Award for which name is recommended, viz. 'Padma Bhushan' or 'Padma Vibhushan', Padma Bhushan' or 'Padma Shri'	Padam Shree
12	Padma Award conferred, if any, in the past.	NA
13	Citation	As per Annexure-A attached with this format, report of revenue department & File containing pages 1 to 255.

Attested.

25/8/15

Assistant Commissioner to
Deputy Commissioner
District Hamirpur (H.P.)

Issued Information u/RTI Act 2005
to Sh. Vipat Raj
Attested

Public Information Officer-cum-
Addl. Distt. Magistrate
Hamirpur (H.P.)

कार्यालय हि॰ प्र॰ भाषा एवं संस्कृति विभाग हमीरपुर

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि आचार्य रत्न लाल वर्मा, निवासी हमीरपुर (हि॰प्र॰) पिछले 12 वर्षों से भी अधिक समय से पर्यावरण संरक्षण हेतु कार्य करते आ रहे हैं। इन्होंने बंजर होती हाऊसिंग बोर्ड कालौनियों में वृक्ष लगाने, पहाड़ी क्षेत्रों में बहुमंजिले भवन निर्माण के रूझान को कम करने, भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रदूषण को कम करने व ग्लेशियारों के एकाएक पिघलने के कारणों को बताने, भू-गर्भ के गिरते जल स्तर को बचाने, हिमालय पर्वत के स्वास्थ्य पर मंडराते खतरे के प्रति जन-मानस को सावधान करने तथा बढ़ते वाहनों से उपजती समस्याओं की ओर ध्यान दिलाने हेतु लोगों की अच्छी खासी संख्या में महत्वपूर्ण जागरूकता उत्पन्न की है। "इनका पर्यावरण की समस्या तथा प्रदूषण पर नियन्त्रण सम्बन्धी सुझावों का एक विस्तुत लेख इंटरनैट पर भी ही है जिसमें विज्ञान जगत से सुझावों पर कार्यवाही करने की अपील और बढ़ते प्रदूषण के साथ प्रभावशाली ढंग से निपटने हेतु एक सशक्त विश्व पर्यावरण परिषद् के गठन का सुझाव भी दिया गया है। इस जनपद में 1993-94, 1994-95 में चले पूर्ण साक्षरता अभियान में भी इन्होंने हजारों किलोमीटर पैदल यात्रा कर इस पुनीत कार्य में सर्वाधिक योगदान देने का कीर्तिमान स्थापित किया है। पर्यावरण की स्वच्छता हेतु भिन्न-भिन्न मंचों तथा व्यक्तिगत सर्म्पक का सहारा ले रहे हैं। इनके सुझावों पर सरकारी विभाग भी ध्यान देते तथा अमल में लाते हैं।

मैं पर्यावरण के क्षेत्र में इनकी बहुमुल्य मानवीय सेवा की प्रशंसा करता हूँ तथा इस ओर इनके भावी प्रयासों की सफलता की भी कामना करता हूँ।

9/x/03

दिनांक:---------

जिला भाषा अधिकारी
हमीरपुर

ROTARY CLUB HAMIRPUR

RI Dist. 3070

Service Above Self

2002 -2003

Rotary Service Award For Community Concerns .

Presented to

Sh./~~Smt~~. : RATTAN LAL VERMA

In recognition of significant contribution for HIS SINCERE EFFORTS TO HIGHLIGHT DANGERS OF POLLUTION AND ENVIRONMENTAL DEGRADATION.

Dist. Governor **Rotary President**

जिला हमीरपुर लोक साहित्य एवं कला परिषद् (पंजीकृत)

सम्मान – पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री आचार्य रतन लाल वर्मा ने ~~संगीत~~/~~साहित्य~~/पर्यावरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है ।

परिषद् उनके इस सराहनीय कार्य के लिए आज दिनांक 20.03.2005 को हमीरपुर में आयोजित वार्षिक समारोह में उन्हें सम्मानित करती है ।

प्रधान/महासचिव जिला हमीरपुर लोक साहित्य एवं कला परिषद् पंजीकृत ।	जिला भाषा एवं संस्कृति अधिकारी, हमीरपुर हि0 प्र0	जिलाधीश हमीरपुर जिला हमीरपुर हि0 प्र0

दिनांक 12.2.2002

DIRECTOR EDUCATION
12 FEB 2002
H.P. SHIMLA-1

मान्यवर,

आचार्य रत्न लाल वर्मा
अध्यक्ष,
जैमिनी अकादमी, हिमाचल प्रदेश शाखा,
जिला लोक साहित्य एवं कला परिषद
हमीरपुर - 177001

विषय:- संपादकीय पृष्ठों पर सामग्री संबंधी।

श्रीमान जी,

आपके द्वारा 14 दिसंबर व 21 दिसंबर, 2001 को दिव्य हिमाचल में लिखे संपादकीय पृष्ठों पर प्रकाशित लेख प्रबुद्ध नागरिकों को समाज में व्याप्त ज्वलन्त समस्याओं के प्रति सचेत करने वाले विषय हैं। न्याय तथा समानता की शपथ लेने वाले स्वयं असमानता और अन्याय से क्यों आक्रांत हो जाते हैं? मनुष्य की कथनी और करनी में अंतर आता जा रहा है।

मनुष्य आधुनिकीकरण की होड़ में समृद्ध पर्यावरण को प्रदूषित करने में लगा है। समाज के सही विकास के लिए यह जरूरी है कि इन विषय पर मंथन हो। शिक्षा इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। उभरते हुए नन्हें बच्चों के लिए भी ऐसे लेख समाज में व्याप्त बुराइयों के प्रति संवेदनशील बनाने के लिए भूमिका निभा सकते हैं। आशा है भविष्य में भी आप इसी प्रकार अपनी लेखनी द्वारा समाज के प्रति लोगों को जागरूक करते हुए अपनी जिम्मेदारी निभाते रहेंगे।

Attested
Assistant Controller (Audit)
Urban Local Bodies H.P. Shimla-2
Camp at Shimla Pin Code: 171002

(राजेन्द्र सिंह)
निदेशक, प्राथमिक शिक्षा
हिमाचल प्रदेश, शिमला 1

कृपया मादक पदार्थों से सावधान — रजिस्ट्रेशन न० 2/96

सर्वहित सुधार सभा हमीरपुर
(हिमाचल प्रदेश)

सन्दर्भ.................................. दिनांक...............................

प्रमाणित किया जाता है। किशोरी रतन लाल वर्मा निवासी हमीरपुर ने मानव सेवा में संचालन हमीरपुर (हि०प्र०) का प्रधान होने के नाते 1978-1979-1980 में रक्तदान शिविर तथा बिगड़ी में आँखों के निःशुल्क ऑपरेशन शिविर का आयोजन किया था। उस समय हमीरपुर में ब्लड बैंक की सुविधा नहीं होने के कारण स्वयं मेडिकल कॉलेज शिमला से डाक्टरों की टीम लाये थे। महासचिव श्री विनोद गौतम तथा दूसरे युवाओं ने इसमें सक्रिय भाग लिया। उन में से कुछ इस समय सभा के सदस्य हैं। इस के बाद इन्होंने अन्य सामाजिक कार्य भी किए तथा जिला लोक कला संगम साहित्य परिषद हमीरपुर के प्रधान के रूप में भी अपनी सेवायें दी।

अध्यक्ष
सर्वहित सुधार सभा
हमीरपुर (हि०प्र०)

दूरभाष : 01972-72050

लोक विकास मण्डल (रजि०)

(सोसायटी पंजीकरण अधिनियम 21, 1860 के अन्तर्गत पंजीकृत)

सुजानपुर टीरा, जिला हमीरपुर (हि.प्र.) – 176110

क्रमांक.............................. दिनांक..................................

<u>प्रशस्ति प्रमाण पत्र</u>

प्रमाणित किया जाता है के श्री रतन लाल वर्मा निवासी हमीरपुर हिमाचल प्रदेश पिछले 20 वर्षों से लगातार विश्व के बिगड़ते मौसम के मिजाज, पर्यावरण के संरक्षण हेतु एवं जल-जंगल और जमीन के प्रति इस क्षेत्र में अपनी लेखनी द्वारा और जन जागृति द्वारा जन साधारण को पर्यावरण के संरक्षण हेतु काफी सक्रियताऔर तन-मन-धन से उल्लेखनीय कार्य किया है ।

संस्था द्वारा इस क्षेत्र में लगातार आयोजित किए गए पर्यावरण जागरूकता प्रसार शिविरों में इन्होंने बतौर स्रोत व्यक्ति के रूप में जन साधारण में अप[नी] अमिट छाप छोड़ी है । जिसके लिए संस्था इन्हें पर्यावरण विद मानती है । भविष्य में भी यह इसी प्रकार के उल्लेखनीय कार्य जनता के प्रति समर्पण की भावना से करेंगे यही संस्था की कामना है ।

संस्था इनके उज्जवल भविष्य की कामना करती है ।

Lok Vikas Mandal Sujanpur Tira-176110

सचिव 16/4/08.

दैनिक भास्कर (हिमाचल भास्कर)

बाहर न जाना पड़े।"

डॉ. डीएस चंदेल, सीएमओ हमीरपुर

दै. भास्कर 23-11-2010

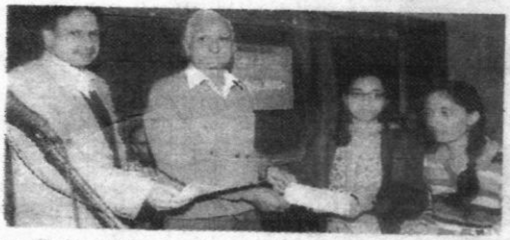

सम्मानित किया: हमीरपुर: नेताजी सुभाषचंद्र बोस स्मारक राजकीय पीजी कॉलेज में आयोजित एक कार्यक्रम में पर्यावरणविद आचार्य रतनलाल वर्मा ने बतौर मुख्यातिथि शिरकत कर विजेता स्टूडेंट्स को सम्मानित किया।

ऊर्जा एवं पर्यावरण पर समारोह

Piare Lal Sharma
Chairman,
Zila Parishad, Hamirpur (HP) 177 001

Ph. : 24681 (Office)
58394 (Residence)
Vill. Broha, P.O. Dugha
Teh. & Distt. Hamirpur (H.P.)
No.....................................

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि आचार्य रत्न लाल वर्मा, निवासी हमीरपुर (हि॰प्र॰) पिछले 15 वर्षों से लगातार पर्यावरण की जागरूकता पैदा करने के लिए कार्य करते आ रहे हैं । इन्होंने कई मंचों, सेमिनारों, सम्मेलनों, गोष्ठियों, साहित्य लेखन तथा अभियानों द्वारा हिमाचल के साथ–साथ दूसरे राज्यों की जनता में भी पर्यावरण के प्रति जागरूकता उत्पन्न की हे । इन्होंने हमीरपुर जिलें में 1993–94 तथा 1994–95 में चलाये पूर्ण साक्षरता अभियान में भी हजारों किलोमीटर की यात्रा की तथा इस पुनीत कार्य की सफलता के लिए सबसे अधिक योगदान देने का कीर्तिमान स्थापित किया । पहाड़ों में बहुत ऊंचे मकानों के निर्माण को कम करने, पॉलीथीन के प्रयोग को घटाने, हाऊसिंग बोर्डो द्वारा बनाई अवावासीय कालोनियों में पेड़ लगाने, आधुनिकता के कारण पर्वतों की कम होती शक्ति के कारणों को समझने के लिए इन्होंने बहुत ही महत्वपूर्ण तथा प्रभावशाली कार्य किया है पर्यावरण सरंक्षण तथा प्रदूषण पर नियन्त्रण हेतु इनके लेख एवं शोध लेख बहुत से दैनिक तथा अन्य समाचार पत्रों में हिमाचल के साथ–साथ पड़ोसी राज्यों, पंजाब, हरियाणा, जम्मू कशमीर, उत्तरांचल तथा उत्तर प्रदेश में भी लगातार प्रकाशित होते रहते हैं । श्री वर्मा जी पर्यावरण सम्बन्धी कार्य के लिए जिले के भीतर तथा बाहर भी निरन्तर जाते रहे हैं । जुलाई 2000 की रात्रि को सतलुज नदी में आई विनाशकारी बाढ़ के सही कारण बताकर तो इन्होंने अभूतपूर्व कार्य किया है । तथा जनता में बाढ़ की सही जानकारी देकर भारत तथा चीन के सम्बन्धों के बीच आने वाली कड़वाहट की सम्भावना को समाप्त कर दिया । हिमाचल प्रदेश सरकार ने अब पॉलीथीन के लिफाफों की बिक्री पर प्रतिबन्ध की घोषणा कर दी । श्री वर्मा अपने बढ़ी आयु तथा आय के सीमित साधनों के रहते हुऐ यह सारा कार्य अपने नीजि व्यय पर करते रहे हैं ।

मैं पर्यावरण बचाने के पुनीत कार्य के लिए भविष्य में भी किये जाने वाले इनके प्रयत्नों की सफलता की कामना करता हूँ ।

अध्यक्ष

10-8-2003

प्यारेलाल शर्मा
अध्यक्ष जिला परिषद
हमीरपुर

कार्यालय प्रौजेक्ट ऑफिसर प्रौढ़ शिक्षा हमीरपुर (हि॰प्र॰)

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री रत्न लाल वर्मा निवासी वार्ड न॰ 5 हमीरपुर (हि॰प्र॰) को मैं पिछले 12 वर्षों से जानता हूँ। श्री वर्मा जी तबसे लगातार समाज में पर्यावरण जागरूकता को बढ़ाने के लिए कार्य कर रहे हैं। इन्होने इस काम के लिए जिले के भीतर तथा वाहर कई सेमीनारों , सम्मेलनों आदि में भाग लिया है। इन्होने पर्यावरण को बचाने के लिए पॉलीथीन के लिफाफों के प्रयोग को बन्द करने, ऊंच भवनों के निर्माण के प्रति लोगों की रूची को घटाने, आबासीय कॉलोनी के घरों निकट वृक्ष लगाने हेतु भी अभियान चलाया तथा इन बातों को बड़े जोर शोर के साथ प्रदेश संरकार के साथ भी उठाया। हिमाचल प्रदेश सरकार ने भी अब पॉलीथीन के थैलों या लिफाफों की बिक्री पर पूर्ण प्रतिबन्ध की घोषणा कर दी है। इस प्रदेश में जुलाई 2000 की रात्रि को सतलुज नदी में भीषण एवं विनाशकारी वाढ़ आई थी जिसमें सैंकड़ों लोग तथा हजारों पशु मारे गए थे। इस बाढ़ के कारणों पर रहस्य का पर्दा था तथा पड़ोसी देश पर भी शक किया जा रहा था। परन्तु श्री वर्मा जी ने इस बाढ़ के सही कारणों को अपने एक विस्तृत शोधपत्र द्वारा बताकर जनता को सही जानकारी दी और उनके इन प्रयासों से भारत तथा चीन के सम्बन्धों में आने वाली कड़वाहट की सम्भावना समाप्त हो गई। इनका यह शोधलेख हिमाचल के साथ अन्य राज्यों के कई दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित होता रहा। पर्यावरण संरक्षण के लिए इनके द्वारा किया जा रहा कार्य वैज्ञानिकों द्वारा सराहा तथा अमल में लाया जाता रहा। इस जिले में चलाए गए पूर्ण साक्षरता अभियान में भी श्री वर्मा ने हजारों किलोमीटर पैदल यात्रा कर अभियान के सफलता के लिए सर्वाधिक कार्य कर एक कीर्तिमान स्थापित किया। श्री वर्मा जी के इन कार्यों के अपनी बड़ी हुई आयु तथा आय सीमित साधनों के होते हुए भी अपने निजी व्यय पर कर रहे हैं जो कि वहुत ही प्रशंसनीय काम है। पर्यावरण सम्बन्धी समस्यायों तथा उनके निदान एवं सुझावों पर इनका लेखन निरन्तर कई दैनिक तथा दूसरे समाचार पत्रों में इस प्रदेश के साथ–साथ पंजाब, हरियाणा, जम्मू कश्मीर, उत्तरांचल तथा उत्तर प्रदेश में प्रकाशित होता रहा और हो रहा है। जिसके कारण भारी संख्या में जनता में पर्यावरण सम्बन्धी जागरूकता बढ़ी है।

मैं इनके उज्जबल भविष्य तथा पर्यावरण सम्बन्धी इनके भावी प्रयत्नों की सफलता की कामना करता हूँ।

Attested–

27/08/2003

प्रौजेक्ट ऑफिसर
Project Officer
(Adult Edu.)
Hamirpur (H.P.)

AGAO (Cash)
BSNL o/o GMTD
Hamirpur (H.P.)
8/10/03

...on and vice president ... HP Branch of Nima as well ... the Dayanand DAV ... on his young shoulders.

Himachal Reporter Palampur (HP) Mar. 95
मार्च 95 3/95

Star campaigner of literacy programme in Hamirpur district

By K.C.Sharma

Hamirpur district is the first district of Himachal Pradesh for having achieved the distinction of 100 per cent literacy about six months back.

Although it was the endeavour of various departments of the district and other agencies like Gram Panchayats and voluntary organisations, yet the outstanding work done by certain officers and the Pradhans of the Gram Panchayats cannot be ignored and deserves to be highlighted.

MR. R.L. VERMA

One such officer namely Mr. Rattan Lal Verma, District Manager HP Handicrafts and Handloom Corporation, Hamirpur can justifiably be called the Star Campaigner under the literacy programme in Hamir pur district.

He has not only been running day and night in his own allotted block Hamirpur including the Municipal Committee Area, Hamirpur but has been extensively touring the whole district to enthuse, motivate and encourage all those who were engaged in this noble cause.

To crown this all it goes to the credit of Mr. Verma that he has not charged a single paise as TA, DA and instead at times he has even provided free electric bulbs to some Saksharta Ghars out of his own pocket. He has also undertaken journeys on foot for thousands of kilometers.

This shows his zeal and zest to excellerate this national and novel programme in addition to his normal duties. As such he deserves to be suitably rewarded for his contribution and merito rious services under this programme.

HP IPH TENDER

Sealed Item rate tender on PWD form 8 for the following work is herebyinvited from the contractor/firm of the appropriate class enlisted with Himachal Pradesh dealing in such type of job so as to reach in the office of the Executive Engineer, I and PH divi sion No. II Una on or before 27.3.95. The tender will be received upto 3 p.m. and will be opened at 3.30 p.m. on 27.3.1995. The tender form can be had on any working day upto 27.3.95 at 12 noon but the same can also be supplied to the respective tenderers by post if they send the cost of tender form in cash or by postal money order. The nearest money shall accompany the tender in the shape of post office saving account duly pledged in the name of the executive engineer, in any of the post office in HP the contractor who do not deposit the earnest money in the prescribed form their tender shall not be accepted. The offer of the tender shall be kept for 90 days.

Sr. No.	Name of work	Estd. cost (Rs.)	Earnest money (Rs.)	Time limit	Cost of form	Form no.
1.	Providing one no-submersible standby pump for use on various lift irrigation scheme/ tubewells discharge 22.06 LPS Total head -58 mtr per second	42,875/-	1015/-	Two months	15/-	8

Advt No.1740/94-95

-- HIM LOK SAMPARK --

Dr Amardeep elected HMAI Prez.

DEHRADUN, Mar.15 (HTNS)

A meeting of the Homoeopathic Medical Association of India, Dehradun unit was held here today under the presidentship of Dr MMS Chaudhary in which following office-bearers were elected.

President - Dr. Amardeep, Vice President - Dr. Rajiv Chopra, Secretary - Dr. B B Kumar, Treasurer - Dr. P C Banerjee, Cultural Secretary - Dr. Raman Nakara and Publicity Secretary - Dr. M P Singh.

The meeting was attended among others by Dr Akhil Shah, Dr Sanjay Sharma, Dr. Arvind Malhotra, Dr. Sanjeev Jain, Dr. Aparna, Dr Mukesh Goyal and Dr. B M Rawat

Attested
16-3-95

ACAO (Cash)
BSNL o/o GMTD
Hamirpur (H.P.)

Ph. : Offi. 22313
Resi 22830

MUNICIPAL COUNCIL HAMIRPUR

R. K. Sharma
Executive Officer,

Ref. No.........................
Dated...........................

प्रमाण पत्र

प्रमाणित कियाजाता है कि श्री रत्न लाल वर्मा जिला प्रबन्धक, हि० प्र० राज्य हस्तकला एवं हथकरघा निगम, हमीरपुर ने नगर परिषद क्षेत्र हमीरपुर को जिले में सर्वप्रथम पूर्ण साक्षर बनाने का गौरव दिलाने के लिए सर्वाधिक ~~अधिक~~ कार्य किया और स्वयं इस अभियान का संचालन किया। 1993-94, 1994-95 में इन्होंने अपने गहन एवं हृदयगत प्रयत्नों से सर्वप्रथम साक्षरता की ज्योति जला कर झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले, दुकानदारों के पास काम करने वाले और निर्धन परिवारों में रहने वाले निरक्षरों में नई चेतना भरकर नवीन उत्साह का संचार कर सम्पूर्ण हमीरपुर जिले को हिमाचल प्रदेश का प्रथम साक्षर जिला बनाने का मार्ग प्रशस्त किया।

मैं नगर परिषद हमीरपुर की ओर से इनके चिरस्मणीय कार्य की प्रशंसा करता हूं।

Executive Officer
Municipal Council
Hamirpur (H.P.)

॥ कृपया मादक पदार्थों से सावधान ॥ रजि० नं० 2/96

सर्व हित सुधार सभा

मेन बाजार, हमीरपुर (हि० प्र०)

क्रमांक.............

दिनांक 7/6/96

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री रत्न लाल वर्मा वार्ड० नं० 5, हमीरपुर हिमाचल प्रदेश (भूतपूर्व प्रबन्धक हि०प्र० राज्य हस्तकला एवं हथकरघा निगम) साक्षरता अभियान में जिला भर में सबसे अधिक कार्य किया है। इन्होंने अपने विभागीय कार्य के साथ-साथ पूर्ण निष्ठा, समर्पण नि:स्वार्थ भाव एवं देश भक्ति की भावना से दिन-रात कार्य कर हमीरपुर को पूर्ण साक्षरता तक पहुंचाने के लिए हजारों कि० मी० पैदल चल कर अथक परिश्रम किया है। जहां तक सभा जानती है इस अभियान की सफलता का सार्वाधिक श्रेय श्री वर्मा जी को ही जाता है। इनकी अन्य सामाजिक और साहित्यक कार्य में भागीदारी एवं रूचि भी वर्णन करने योग्य है।

सभा इनके इस पुनीत सामाजिक कार्य की भरपूर प्रशंसा करती है।

7/6/96

क्रमांक:हमीर/सा0-समीतियां-उप स0/92-

प्रेषक	उपायुक्त एवम् अध्यक्ष,
हमीरपुर साक्षरता अभियान समिति,
जिला हमीरपुर (हि0प्र0) ।

प्रेषित	प्रबन्धक, निदेशक
हि0प्र0 स्टेट हैण्डीक्राफटस एण्ड हैण्डलूम कारपो0,
कसुम्पटी, शिमला-9

दिनांक,हमीरपुर-177001 20 अगस्त,1994

विषय :-	जिलाधीश हमीरपुर द्वारा दिये गये साक्षरता सम्बन्धी आदेश बारे ।

ज्ञापन:

उपरोक्त विषय के सम्बन्ध में लिखा जाता है कि श्री रतन [illegible] वर्मा, प्रबन्धक हमीरपुर परिसर को जिला साक्षरता अभियान समिति ने उनकी योग्यता को मध्यनजर रखते हुए हमीरपुर खण्ड साक्षरता समिति का संयोजक नियुक्त किया गया था । श्री वर्मा जी ने इस राष्ट्रीय महत्व के कार्यक्रम में अपने कार्य के साथ-साथ प्रशंसनीय कार्य किया है । जिसके लिए श्री वर्मा वास्तव में प्रशंसा के पात्र हैं ।

उक्त अधिकारी को जिला साक्षरता अभियान समिति द्वारा कोई यात्रा भत्ता इत्यादि अदा नहीं किया है ।

उपायुक्त एवम् अध्यक्ष,
हमीरपुर साक्षरता अभियान समिति,
जिला हमीरपुर (हि0प्र0) ।

-2-

पत्रांक:हमीर/साक्षरता/पुरस्कार/

कार्यालय उपायुक्त एवं अध्यक्ष,
जिला साक्षरता समिति, हमीरपुर{हि0प्र0}

सेवा में

निदेशक प्रौढ़ शिक्षा,
शिक्षा निदेशालय, हि0प्र0 शिमला-171001

दिनांक: हमीरपुर अगस्त ________, 2000

विषय:- सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के दौरान प्रशंसनीय कार्य करने हेतु श्री रत्न लाल शर्मा को सम्मानित करने बारे।

महोदय,

अधोहस्ताक्षरी के ध्यान में लाया गया है कि श्री रत्न लाल शर्मा, पूर्व जिला प्रबन्धक, हि0प्र0 राज्य हस्तकला एवं हथकरघा निगम, हमीरपुर {हि0प्र0} ने वर्ष 1993-94 व 1994-95 में जिला हमीरपुर{हि0प्र0} में संचालित सम्पूर्ण साक्षरता अभियान को विकास खण्ड हमीरपुर में सफल बनाने में प्रशंसनीय योगदान दिया है। इस अवधि के अनन्तर उनके द्वारा किए गए सराहनीय कार्य की पुष्टि निम्नोक्त संलग्न दस्तावेजों से भी होती है:-

1. पत्रांक:हमीर/सा0समितियाँ-उप. स0/92-93 दिनांक 20.8.1994
2. विभिन्न समाचार-पत्रों की कतरनें{चार}
3. नगर पालिका परिषद, हमीरपुर द्वारा जारी प्रमाण-पत्र दिनांक 03.02.1997.
4. सर्वहित सुधार सभा हमीरपुर द्वारा प्रदत्र प्रमाण- पत्र दिनांक 07.06.1996.

अतः उपरोक्त व्यक्ति द्वारा राष्ट्रीय महत्व के इस पुनीत कार्य को सफल बनाने हेतु किए गए सराहनीय कार्य के लिए मैं, इन्हें राज्य स्तरीय उचित सम्मान से सम्मानित करने की सिफारिश करती हूं।

भवदीया,
हस्ता/-
उपायुक्त एवम् अध्यक्ष,
जिला साक्षरता समिति, हमीरपुर
जिला हमीरपुर {हि0प्र0}

धर्मशाला (हि०प्र०)

हिमाचल केसरी 01 से 07 सितम्बर 2006

पर्यावरण बचाना ही जीवन का लक्ष्य है रत्न लाल वर्मा का

रिर्पोट विजय हीर

हि०प्र० सहित समूचे उत्तर भारत में पिछले तीन दशकों से पर्यावरण जागरूकता की मुहिम छेड़ने वाले विख्यात पर्यावरणविद् रत्न लाल वर्मा हिमाचल की शान कहे जा सकते हैं। पिछले अठारह सालों से लगातार उनके लेखों ने पर्यावरण वैज्ञानिकों को भी सोचने पर विवश कर डाला है कि वाकई पृथ्वी का अस्तित्व खतरे में है। 1940 में बिझड़ी (हमीरपुर) कस्बे में जन्मे रत्न लाल वर्मा ने जिला हमीरपुर में न केवल प्रौढ़ शिक्षा व राष्ट्रीय शिक्षा मिशन को सफल बनाने में सराहनीय भूमिका अदा करके चर्चा में जगह बनाई अपितु बहुमंजिला भवनों के ट्रेंड पर रोक लगाने खातिर उन्होंने जो जंग पांच वर्ष तक जारी रखी उसमें वे सरकार व विभाग के मुख्य सलाहकार भी साबित हुए। 2001 में उन्होंने इस मामले में जब बुलंद आवाज उठाई तो कई बहुमंजिला मकान निर्माण करने वालों ने उनके इस मिशन पर एतराज जताया। मगर भूकम्प के समय इनके ढह जाने से होने वाली मौतों के मामले में वे अडिग रहे। आखिरकार एक बार इन पर प्रतिबंध लगा, फिर हटा व फिर लगा यानि उनका संघर्ष रंग लाया। 11 जनवरी 2005 को नेशनल सेंसिग रिर्पोट ने पारछू व सुनामी के मामले में जो रिर्पोट पेश की थी उसके अंदर जो तथ्य पेश किए गए थे उनकी भविष्यवाणी तो आचार्य रत्न लाल वर्मा ने 19 जुलाई 2004 को अपने एक लेख में कर दी थी। 31 जुलाई 2000 रात्रि 12.30 पर सतलुज नदी का पानी 70 फुट उपर उठा व बाढ़ आ गई। अचानक बढ़े इस पानी के स्त्रोत की धारा का अनुमान वर्मा ने

सप्ताह का व्यक्तित्व

अपने लेखों में पेश कर संभावना जताई पारछू की मगर जब रिमोट सेंसिग हैदराबाद ने 28, 29 नंवबर 2006 को विदेश मंत्रालय के आह्वान पर जाँच की तो वर्मा द्वारा बताए तथ्य सच हुए जबकि पारछू को चीन की शरारत मानने की भ्रांतियां आखिर खत्म हो गई। 16 फरवरी 2001 के लेख में उन्होंने लिखा था कि पानी ही पुनः तबाही मचाएगा। हिमाचल में जो कि पारछू के द्वितीय चरण में बाढ़ में साबित कर दिया। 24 दिसम्बर 2003 के लेख में वर्मा ने दालों व तिलहन के भविष्य में भारी संकट व मंहगे दामों की जो तस्वीर पेश की थी आज वह साफ नजर आ रही है। सुनामी लहरें जिन्होंने दिसम्बर 2005 में अपने लेख में इंगित किया था ध्रुव हिलने पर जल कहर शीघ्र ही ढाएगा व आपार क्षति होगी। पर्यावरण संबंधी विविध भविष्यवाणियां करके वे लोगों को जागरूक कर रहे हैं। बेशक वे पर्यावरण में कोई पीएचडी डिग्री प्राप्त नहीं, मगर अनुभव के आधार पर उन्होंने जितनी भी भविष्यवाणियां की है उनमें से अधिकांश सच हुई हैं। कई पुरस्कारों से नवाजे जा चुके रत्न लाल वर्मा सादे व्यक्तित्व के प्रतिभावन व्यक्ति हैं जो कन्या भ्रूण के लिए जिम्मेदार खोखली व गलत विवाह प्रथाओं का काफी समय से विरोध करते आ रहे हैं। बंदरों व जंगलों की आग से किसानों को राहत दिलवाने के विशेष उपाय उन्होंने खोजकर हाल ही में प्रदेश व उत्तरांचल सरकार को भेजे हैं। राजनीति के भंवर से दूर रहने वाले वर्मा ने भूंकपरोधी मकान निर्माण चेतना का भी मिशन चला रखा है। हिमाचल के बहुगुणा आचार्य रत्न लाल वर्मा वाकई एक व्यक्ति नहीं, एक टीम हैं पर्यावरण रक्षा की।

Department of Geography
Kirori Mal College, University of Delhi
and
District Administration, Mandi, H.P.

National Workshop on
"Environmental Geo-Hazards (Earthquakes, Landslides, Floods etc.)-
Management and Mitigation Strategy for Himachal Pradesh"
District- Mandi, Himachal Pradesh, India, June 4 - 5, 2007

CERTIFICATE

This is to certify that Mr./Ms./Dr. Acharya Ratan Lal Verma

of Hamirpur

Participated as Speaker in the technical

session on Landslides & Earthquakes

He/She presented a paper titled Reasons for floods & mitigation of loosing earth productivity, Forest Fire e[illegible]

Dr. Bhim Sen Singh	Subhashish Panda ,IAS	Dr. Kaushal K. Sharma	Dr. S. K. Bandooni
Principal	Deputy Commissioner, Mandi	Chief Coordinator	Coordinator

© : 01972-86306

बाबा बालक नाथ महाविद्यालय

चकमोह - हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश-176039

मुख्य संरक्षक :

प्रो० प्रेम कुमार धूमल
मुख्यमंत्री (हि. प्र.)

संरक्षक-मण्डल :

जन० विश्वनाथ शर्मा (नई दिल्ली)
पूर्व सेनाध्यक्ष भारत

प्रो० सामदौंग रिम्पोछे
प्रधानमंत्री, केन्द्रीय तिब्बती प्रशासन

श्री इन्द्रेश कुमार
संरक्षक: भारत तिब्बत सहयोग मंच
संरक्षक: जम्मू-कश्मीर पीस फाऊंडेशन

जस्टिस गुमान मल लोढ़ा
पूर्व मुख्य न्यायधीश
(असम उच्चन्यायालय)

श्री महन्त अशोक प्रपन्नाचार्य
हृषिकेष

डॉ० नित्यानंद (देहरादून)
अध्यक्ष : उत्तरांचल विकास परिषद्

डॉ० शशि कुमार थापा
काठमांडू (नेपाल)

श्री पी. टी. जाम्याछो
सदस्य राज्य सभा (सिक्किम)

संचालन समिति :

अध्यक्ष
श्री ईश्वर दास धीमान
शिक्षा मंत्री (हि. प्र.)

महासचिव
डॉ. सुरेन्द्र कुमार गुप्ता
कुलपति (हि. प्र. विश्व., शिमला)

स्वागत समिति :

अध्यक्ष
श्री सुरेश चन्देल
सदस्य लोक सभा

समन्वयक
डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री
प्रिंसीपल

राष्ट्रीय सेमिनार

युग-युगीन हिमालय और वर्तमान चुनौतियां
15-16-17 कार्तिक 2058
(31 अक्तूबर, 1, 2, नवम्बर, 2001)

क्रमांक : 1633   दिनांक : 2-11-2001

बाबा बालक नाथ महाविद्यालय चकमोह में आयोजित राष्ट्रीय सेमिनार "युग युगीन हिमालय और वर्तमान चुनौतियां" विषय में श्री/डा० आचार्य रत्न लाल वर्मा पद समाज सेवी अध्यक्ष जिला लोक साहित्य परिषद हमीरपुर प्रान्तीय अध्यक्ष जैमिनी अकादमी हिमाचल शाखा महाविद्यालय राज्य हि.प्र. ने दिनांक 31-10-2001 से 2-11-2001 तक भाग लिया और अपना शोध पत्र 'हिमालयी पर्यावरण'

प्रस्तुत किया।

प्राचार्य
डा० कुलदीप चन्द अग्निहोत्री
प्राचार्य बाबा बालक नाथ महाविद्यालय
चकमोह, जिला हमीरपुर (हि. प्र.)

प्राचार्य
बा० बा० ना० महाविद्यालय
चकमोह-हमीरपुर। हि० प्र०।

Regional Engineering College

HAMIRPUR(H.P.)-177005

Department Of Civil Engineering

CERTIFICATE

This is to certify that **Acharya Rattan Lal Verma** **Of** **Hamirpur, Distt. Hamirpur (HP)**

has delivered an expert lecture on **"Issues of Sustainable Development"**

During One Day workshop on **"SUSTAINABLE DEVELOPMENT"** under National Environment awareness Campaign (NEAC) on June 5th, 2002 (World Environment Day).

Dr.R.L.Sharma)
Co-ordinator
Proff.& Head
Deptt. of Civil Engg.
REC Hamirpur (HP)

मुख्य मंत्री
राजस्थान

अ॰शा॰पत्र सं॰:मुमं/जसप्र/2002/
जयपुर, दिनांक :

5 FEB 2002

प्रिय श्री वर्मा जी,

आपका 31 दिसम्बर, 2001 का पत्र प्राप्त हुआ।

पत्र के साथ दैनिक दिव्य हिमाचल में प्रकाशित आपके दो आलेखों की छाया प्रतियां भी प्राप्त हुई। इसके लिए धन्यवाद। मैंने इनका अवलोकन किया है।

आलेखों में आपने राष्ट्रीय समारोहों में घटती जन भागीदारी, बढ़ते क्षेत्रवाद, गठबंधन सरकारों के कारण राजनीतिक क्षेत्र में आये परिवर्तन और पर्यावरण संरक्षण के बारे में अपने मुक्त विचार प्रकट किये हैं। इसके लिए आपको साधुवाद देता हूं।

समय–समय पर आपके विचार जानकर मुझे प्रसन्नता होगी।

शुभकामनाओं सहित,

सद्भावी,

(अशोक गहलोत)

आचार्य रत्न लाल वर्मा,
वार्ड नं. 5,
क्षेत्रीय अस्पताल के पास,
हमीरपुर 177 001

भूकंप की पूर्व सूचना देना फिलहाल नामुमकिन : वर्मा

Daily News Paper Dainik Jagran Dharamshala

जागरण प्रतिनिधि, हमीरपुर : अभी क ऐसी कोई तकनीक विकसित नहीं हुई है ो भूकंप आने की सही अग्रिम सूचना दे के। भूकंप के बारे में पहले ही जानकारी हैया करवाने का ऐसा झूठा प्रचार मात्र कुछ प्रनियां उनके द्वारा बनाए गए उपकरणों से सा कमाने के लिए कर रही हैं। यह बात

पैसे कमाने के लिए झूठा प्रचार कर रही कंपनियां

भीषण गर्मी के लिए कंक्रीट के जंगल जिम्मेवार

ख्यात पर्यावरण विद आचार्य रतन लाल र्मा ने होटल ताज में पत्रकार वार्ता को बोधित करते हुए कही।

वर्मा ने कहा कि भूकंप के विनाश के प्रति नता संवेदनशील हों और सरकारें भी इस ोर ध्यान दें ताकि अबकी बार होने वाले ूकंप से जो पृथ्वी पर विनाश होगा, उससे चा जा सके। आज के दौर में जो भीषण र्मी पड़ रही है उसके लिए कंकरीट के दिन प्रतिदिन बढ़ते जंगल जिम्मेवार हैं। उन्होंने कहा कि तीन चार मंजिला बनाई गई इमारतें भूकंप के दौरान प्राणघातक सिद्ध होंगी। कांगड़ा, हमीरपुर व मंडी का 32 प्रतिशत भाग इस समय भूकंप की दृष्टि से अतिसंवेदनशील है और इन्हें जोन-5 में रखा गया है। चंबा, ऊना व बिलासपुर का भी अधिकतर भाग भूकंप की दृष्टि से संवेदनशील है और उसे जोन-4 में रखा गया है जिन्हें भी जोन-5 में रखा जाना चाहिए। वर्मा ने कहा कि भूकंप के उपर किसी भी मंच से वह बातचीत करने के लिए तैयार हैं। इस अवसर पर उनके साथ सूचना एवं जनसंपर्क विभाग के सेवानिवृत इंजीनियर जेके मेनन व सेवानिवृत डीएसपी एचआर चड्डा भी उपस्थित थे।

हमीरपुर में पत्रकारों से बातचीत करते हुए प्रसिद्ध पर्यावरणविद आचार्य रतन लाल वर्मा।

कन्या भ्रूण हत्याओं के लिए गलत प्रथाएं जिम्मेदार : वर्मा

हमारे प्रतिनिधि, हमीरपुर

कन्या भ्रूण हत्याएं मानवीय संतुलनात्मक पर्यावरण के लिए भयंकर खतरा है। इसे यदि तुरंत रोका नहीं गया तो समूचे सामाजिक ढांचे पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा। यह शब्द पत्रकार वार्ता को संबोधित करते हुए पर्यावरणविद आचार्य रत्न लाल वर्मा ने कहे। उन्होंने कहा कि इसके साथ ही महिलाओं तथा कन्याओं की सुरक्षा भी बहुत खतरे में पड़ जाएगी। वर्मा ने कहा कि 2001 की जनगणना के अनुसार पूरे देश में 1000 पुरुषों के पीछे 933 महिलाएं रह गई थीं।

हिमाचल प्रदेश में 100 पुरुषों के पीछे इनकी संख्या 968 थी, परंतु इस प्रदेश के शहरी क्षेत्रों में तो स्थिति और भी बुरी है। यहां एक हजार पुरुषों के पीछे केवल 795 महिलाएं रह गई है। पंजाब में 1000 पुरुषों के पीछे 798 महिलाएं हैं। पुरानी गणना के आंकड़े बताते हैं कि आगे से आगे इनकी संख्या घटती ही जा रही है।

हमीरपुर में बुधवार को पत्रकारों को संबोधित करते हुए आचार्य रतनलाल वर्मा। जागरण

ऐसा लोगों द्वारा कन्या की गर्भ में ही हत्या करने या करवाए जाने के कारण हो रहा है। उन्होंने कहा कि जब तक माता पिता में लड़की के जन्म के प्रति पनपती अनिच्छा के कारणों का पता नहीं लगाया जाता तब तक इन हत्याओं को पूरी तरह से रोकना संभव नहीं हो पाएगा।

यही सामाजिक कारण माता पिता को कन्या भ्रूण हत्या की ओर प्रेरित करते हैं। इन कारणों में समाज में व्याप्त नई पुरानी कुछ प्रथाएं भी हैं जो माता पिता पर अधिक आर्थिक बोझ लाद देती हैं और उनके मन में भविष्य के प्रति असुरक्षा की भावना भी पैदा करती हैं। वर्मा ने कहा कि वह इन कारणों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए 23 फरवरी को गांधी चौक हमीरपुर से पद यात्रा करेंगे। कन्या बचाओ यात्रा के नाम से यह यात्रा प्रथम चरण में हमीरपुर से भोटा तक की जाएगी।

जागरण सु-डो-कू 1

दिमागी कसरत का प्राचीन जापानी खेल सु-डो-कू अब नए अवतार में दुनिया भर में धूम मचा

बाएं से दाएं

10. विद्यमान, मौजूद, चलता हुआ, जो

24 FEBRUARY 2006

हमीरपुर : कन्या भ्रूण हत्या के विरोध में पदयात्रा करते हुए लोग। साथ में हैं आचार्य रतन लाल वर्मा (सतीश)

9-6-07

पंजाब केसरी 9-6-2007

पर्यावरण सुरक्षा के लिए बने अलग पैमाना

ग्लोबल वार्मिंग पर पर्यावरणविद् रत्न लाल वर्मा ने जताई चिंता

हमीरपुर : ताज होटल में पत्रकारों को संबोधित करते पर्यावरण विशेषज्ञ आचार्य रत्न लाल वर्मा। .... ठाकुर

हमीरपुर, 8 जून (पुनीत): अगर म अब भी सचेत नहीं हुए और यू अपनी स्वार्थ सिद्धि, लाभ व दिखावे लिए पर्यावरण को ताक पर रखकर त साधने में लगे रहे तो वह दिन र नहीं, जब पर्यावरण प्रदूषण व लोबल वार्मिंग के बुरे नतीजों पर छताने के सिवाय कुछ नहीं हासिल गा। वैसे भी प्राकृतिक आपदाओं की दृष्टि से हिमाचल काफी संवेदनशील बन चुका है। पर्यावरण संतुलन का बुरा असर भू-स्खलन भूकंप जैसी आपदाओं के रूप में खने भी लगा है, यह कहना है हमीरपुर निवासी प्रसिद्ध पर्यावरणविद् आचार्य रत्न लाल वर्मा का। शुक्रवार को ताज होटल में आयोजित पत्रकार सम्मेलन में आचार्य वर्मा ने कहा कि पर्यावरण को बिगाड़ने में प्रदेश में वाहनों के बढ़ते सैलाब, अवैध खनन व आवश्यकता से अधिक भवन निर्माण ने अपना पूरा योगदान दिया है। उन्होंने चिंता जताई कि अनावश्यक कार्यों गाड़ियां व कंकरीट के मकानों के कारण भी ग्लोबल वार्मिंग बढ़ी है और भूमि में जलस्तर गिरने के कारण पेयजल समस्या गहराती जा रही है। उन्होंने कहा कि अब पीपल व बरगद जैसे परंपरागत वृक्ष खत्म होने की कगार पर हैं व इन्हें लगाने की ओर भी लोगों का रुझान कम हुआ है जबकि सफेदा, चीड़ व पापुलर के रोपण पर बल दिया जा रहा है। ये वृक्ष खासकर सफेदा जमीन के अन्दर से पानी सोख लेता है व इनके आसपास घास भी कम उगती है। वर्मा ने बताया कि ऐसी वृक्षों की बजाय हमें चारा-पत्ती, रेशा, खाद व दवाई देने वाले पेड़ उगाने पर बल देना चाहिए ताकि पशुचारे की समस्या कम हो व छायादार वृक्ष भी मिलें। उन्होंने कहा कि अब समय आ गया है कि पर्यावरण की सुरक्षा के लिए उपयुक्त कदम उठाने होंगे व इसके लिए अलग पैमाना बनाना होगा। इस अवसर पर उनके साथ रिटायर्ड प्रिंसीपल देवदत्त शर्मा, रणजीत सिंह

CERTIFICATE

It is certified that Acharya Rattan Lal Verma, an Environmentalist has been addressing audience during the Deliberations/Seminars organized by the Town & Country Planning Department under the NORAD Project during last three years. His views pertaining to various concerns of environment were use to be highly appreciated by the audience.

I wish all success for untiring efforts of Acharya for the cause of preservation of environment.

Date: 7.10.2003

7/10/03.

State Town Planner,
Town & Country Planning Deptt.,
Himachal Pradesh, Shimla-9.

Attested
AC.....(Cash)
.....o/o GMTD
....irpur (H.P.)

travelindia.com

Letter of Appreciation

Shri Acharya Ratan Lal Verma, who is a crusader on Environment and has published many a paper on the subject, is doing a splendid Job for creating awareness and protection of environment.

Vikas Puri
COO
TravelIndia.com

411 JOP Plaza Sector 18 NOIDA - 201301 Tele: 91-120-4591671, 4591672, 4591673 Telefax: 91-120-45
E-Mail: helpdesk@travelindia.com

NATIONAL SEMINAR

ON

ENVIRONMENTAL HAZARDS AND SUSTAINABLE DEVELOPMENT

(Regional Engg. College, Hamirpur (H.P.)

Nov. 22-23, 1999

CERTIFICATE

In appreciation of participation and presentation of a technical paper

By

Sh. Rattan Lal Verma

(Hamirpur)

(Title of the paper : Science and Environment)

Organising Secretary

Chairperson

राज्य विज्ञान प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद हिमाचल प्रदेश
34 एस . डी. ए . काम्पलैक्स कसुम्पटी शिमला 171009

सं. एस.सी.एस.टी.इ/- 1466 दिनाक 18/3/2002

प्रेषक

संयुक्त सदस्य सचिव
हिमाचल प्रदेश राज्य विज्ञान
प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद
कसुम्पटी शिमला - 171009

प्रेषित आचार्य श्री रत्न लाल वर्मा
प्रधान.
जिला लोक साहित्य एवं कला परिषद
समीप क्षेत्रीय अस्पताल, वार्ड न. 5
हमीरपुर - 177001

विषय पठन हेतु समाचार पत्रों के पृष्ठों पर प्रकाशित सामग्री ।

महोदय ,

आपके द्वारा दिव्य हिमाचल , अजीत समाचार , दैनिक समाचार पत्रों के सम्पादकीय पृष्ठों पर प्रकाशित लेख, हमने सभी विज्ञानिकों को भेज दिये है । आपके द्वारा पर्यावरण के हित के लिए जो सुझाव दिये गये है , हम उनपर अवश्य ध्यान देगें ।

धन्यवाद ।

भवदीय,
आर. के. साहू
संयुक्त सदस्य सचिव,
वि.प्रौ.एवं पर्या. परिषद

राज्य विज्ञान, प्रौद्योगिक एवम्
पर्यावरण परिषद्, हिमाचल प्रदेश
34 एस0 डी0 ए0 काम्पलैक्स, कसुम्पटी,
शिमला-171009.

STATE COUNCIL FOR SCIENCE
TECHNOLOGY AND ENVIRONMENT
HIMACHAL PRADESH
34 SDA Complex, Kasumpti,
Shimla-171009.

H.P. SCSTAE | F(1)-1 (Sock) 202.

ड़ा0 आर0 के सूद
संयुक्त सदस्य सचिव

अर्ध0शा0 पत्र संख्याः · 12639
दिनांक; अक्टूबर 2005 - 21/10/05

आरदणीय आचार्य जी,

मुझे आपके अनेक पत्र मिले तथा लगता है कि आपने पर्यावरण सम्बन्धी विभिन्न मुद्दों पर समय समय पर अपनी टिप्पणियॉं दी हैं । अतः मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इन पर विस्तृत लेख लिखें जिसमें जनता की चिन्ताओं के बारें में चर्चा हो । यह लेख हम अपनी **स्टेट ऑफ एन्वायनमैंट रिपोर्ट** में सम्मलित करना चाहेंगें । आपने पर्यावरण सम्बन्धी कई मुददें उठाए हैं अतः मैं आपको अपने कार्यालय में आमन्त्रित करता हूँ कि आप अपनी सुविधानुसार हमारे कार्यालय में आने की कृपा करें ताकि आप द्धारा सुझाए गए मुद्दों पर अन्य वैज्ञानिकों के साथ भी चर्चा की जाए । कृप्या आने की दिनांक तथा समय सूचित करें । आपके आने जाने का खर्चा यह कार्यालय वहन करेगा ।

सधन्यावाद !

भवदीय,
आर. के. सूद
आर0 के सूद

आचार्य रत्न लाल वर्मा
क्षेत्रीय अस्तपताल के सामने
बार्ड0 न0 5 हमीरपुर
फैक्स न0 951972 225075

परिषद ने अन्य मुद्दों के साथ साथ लोगों की फसल नष्ट करने वाले जंगली पशुओं से निपटने हेतु उपयुक्त नियम बनाने के लिए लेखक का परामर्श लिया।

तदनुसार कार्यवाही हुई ।

Tel. Nos. ~~222489-90~~, ~~221223~~, Gram : HICOSTEN, Fax : 0177-~~220998~~ e. mail. ravinder sood 55 @ Hotmail. com.

ब्रह्म प्रकृति अभेद असीम ऊर्जावान
बिझाड़ी डुगाड़ मडियारी में भी विद्यामान